ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, शृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। **शृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान**

१ 13 08 1988 अनुशासन

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का पठन पाठन कर रहे थे ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहा हैं, जिस पवित्र वेदवाणी में, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा के नाना स्वरूप माने गएं, मानो नामोकरण के आधार पर उसका नामोकरण एकोकी भी आभा में सदैव निहित रहा हैं। परन्तु जहाँ उसके गुणों का गुणवादन किया जाता हैं, मानो वह प्रकृति के एक एक, कण कण में व्याप्त रहने वाले हैं। और वह व्याप रहा है, मानो उस परमपिता परमात्मा जो शिवत्रा है, जिसे हमारे यहाँ शिव कहते हैं। प्रायः वास्तव में तो भिन्न भिन्न प्रकार के पर्यायवाची शब्दों की, हमारे यहाँ विवेचना की जाती हैं। और नाना पर्यायवाची शब्दों का स्वरूप हमारे समीप आता रहा है, परन्तु यदि ये विचारने लगते हैं कि यह जो नाना पर्यायवाची शब्द है, ये अपने में ही मानो नृत्त करते रहे, और मानो परम्परागतों से इसके ऊपर अन्वेषण और अनुसन्धान भी करते रहे हैं। हमारे यहाँ नाना ऋषि मुनियों का, समाज एकत्रित होता रहा हैं, और वेद के प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर अनुसन्धान और विचार विनिमय होता रहा है। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, एक ऐसी विचित्रधारा रची गई, मानों जिस धारा के ऊपर मानव अपने मैं अनुसन्धान, परमपिता परमात्मा का नामोकरण, एक महादेव कहा जाता है, जो देवताओं का भी महादेव है, मानो वो परमपिता परमात्मा का एक गौणिक नामों से वर्णन किया गया है, उस परमात्मा का नाम महादेव है। जो देवताओं का भी देव कहा गया हैं। वह महादेव कहा जाता हैं, हमारे यहाँ देवता के सम्बन्ध में, भिन्न भिन्न प्रकार के पर्यायवाची शब्द आते रहें हैं तो देवता किसे कहते हैं? देवता कहते हैं, जो देता है, और प्रत्येक मानव यह चाहता है कि मैं देवता की पूजा करूं, मानो देवताओं की पूजा का अभिप्रायः तो प्रायः यह आता रहा है, गुणाधानम् ब्रह्मे व्रताः जो जिसमें गुण होता है, उसके गुणों को धारण अपने में करने का नाम, प्रायः यह उसकी पूजा कहलाती हैं। परन्तु पूजा के भिन्न भिन्न स्वरूप,

प्रायः हमारे समीप आते रहे हैं। प्रत्येक वेदमन्त्र मानो देखो, उस अग्नि की धारा पर विद्यमान हो जाता है, और जब वह मानो विशुद्ध हृदय से, वेद का उद्गीत गाता है, तो हृदय से गा रहा है, और जो उसमें गुण है, वेदमन्त्र में, उसको अपना करके, उसे क्रियात्मक बनाने का नाम ही उसकी पूजा कही गई हैं। तो पूजा का अभिप्रायः क्या है? क्या मानो देखो, जो हम उसके गुणों को धारण करें प्रत्येक मानव अग्नि की पूजा करना चाहता हैं, अग्नि को अग्न्याध्यान करके उसकी पूजा कर रहा है। तो पूजा का अभिप्रायः यह है जैसे हमारे यहाँ अग्नि हैं, अग्नि की हमें पूजा करनी है, अग्नि तेजोमयी कहलाती हैं। इसीलिए जितने भी साधकजन होते हैं, वह अग्नि के गुणों को अपने में धारण करने लगते हैं अन्तर्हृदय में, जब वह प्रकाश और अग्नि अपने में जागरूक होती हैं, अग्नि के गुण मानो तेजोमयी मानो उसमें आने प्रारम्भ हो जाते हैं। तो वह उसकी पूजा का अभिप्रायः बना परन्तु अग्नि के और भी नाना गुण माने गएं, हमारे यहाँ, जैसे शब्द हैं, वह तेजोमयी कहलाता हैं, परन्तु शब्द भी जब द्यौ लोक में प्रवेश कर जाता हैं। हमारे आचार्यों ने ऋषि मुनियों ने यह कहा कि वाणी शब्द इतना महान गम्भीर और इतना सुसज्जित होना चाहिए, इतना सजातीय होना चाहिए, वह अग्नि की धारा पर, विद्यमान हो करके वह शब्द द्यौ लोक मे प्रवेश कर जाएं, और द्यौ लोक में मानो उसी से, विद्युत धाराओं का जन्म होता हैं। उसी से तो धाराओं का जन्म होता है जिस धाराओं को, अपने में धारण करते हुए, धारयामि बन जाते हैं। तो मुनिवरों! देखो, यह बड़ा गम्भीर एक विषय बन जाता है। आज मैं तुम्हें गम्भीरता में नहीं ले जाऊंगा, केवल विचार विनिमय यह, कि हम प्रत्येक स्थलियों में, एक पूजा का एक बड़ा महत्व माना गया हैं।

हृदय से पूजा

परम्परागतों में बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जहाँ बेटा! देखो, महर्षि उद्दालक और उद्दालक गोत्र में भी एक ऋषि थे, जिनको हम वाजश्रवा कहा जाता था, और वाजश्रवा के जो पिता थे, वह श्वेति वर्णनं उद्दालक कहलाते थे। एक समय श्वाति

उद्दालक ने ऋषि ने यह कहा क्या महाराज! हम साधक हैं, और साधना में परिणित होना चाहते हैं। उन्होंने कहा विराजो। वह विराजमान हो गएं। विराजमान हो करके, उद्दालक ने कहा कि हृदय में, तुम्हारे में यह कैसे समाहित हो रही है कि पूजा करें उन्होंने कहा कि वेद का अध्ययन करते रहते हैं, विचार आते रहते हैं, आचार्य जन भी कहते हैं, कि पूजा करो। मेरे प्यारे! देखो, वेदमन्त्र भी पूजा के लिए पुकार रहा हैं। तो उद्दालक ने कहा क्या हे ऋषिवर! पूजा का केवल एक ही अभिप्रायः माना गया है, कि उसके गुणों को अपने में धारण करो। हमारे जो पितरजन हैं, मानो वह उनके गुणों को अपने में धारण करो, जैसे हमारे यहाँ शिव की हमें पूजा करनी हैं, प्रत्येक मानव शिव की पूजा कर रहा है, और शिव को अपने में धारण करना चाहता है। परन्तु विचार आता है, कि शिव किसे कहते हैं? शिव के हमारे वैदिक साहित्य में भिन्न प्रकार के पर्यायवाची शब्द माने गएं हैं। परन्तु मूल में यह जो रक्षा करने वाला है। उसका नाम शिव है। रक्षा करने वाला बेटा! कौन है? जो रक्षा कर रहा है, वे परमपिता परमात्मा हैं। जो यत्र बन करके हमारे को उल्लास में परिणित कर रहा हैं। तो मानो वे परमपिता परमात्मा जो शिव है, वह हमारा कल्याण करने वाले हैं, और वह उसकी पूजा का एक महान द्यौतक कहलाता है, एक महान ब्रह्मणे जो मानो जिसके गुणों की आभा में रत्त हो करके, उसके गुणाधानम अपने में ग्रहण करने लगता है, वह देवता कहलाता हैं। तो मेरे प्यारे! विचार आता रहता है, कि मैंने कई काल में, तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था, क्या संसार में जितना भी, संसार में पूजा स्थली है, वह केवल मानव के अन्तर्हृदय से उसका समन्वय रहता हैं। हमारे ऋषि मुनियों की, एक बड़ी विचित्र देन रही है, इस सम्बन्ध में, क्या पिण्ड और ब्रह्माण्ड को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया, जो ब्रह्माण्ड में हो रहा है, वह पिण्ड में हो रहा है, जो गति समुद्र में हो रही है, मानव के रक्त में गति हो रही हैं, जो मानो पर्वतीय अस्तो मानो जो गति उनमें हो रही है, वह हमारी अस्थियों में हो रही हैं, तो भिन्न भिन्न प्रकार क्या ऋषि मुनियों की बड़ी एक विचित्र देन रही हैं क्या उन्हें व्यष्टि से समष्टि में, जाने के लिए परम्परागतों से अनुसन्धान करते रहे हैं। और यह विचारते रहे हैं, कि हम समष्टि से व्यष्टि में, जाने के लिए परम्परागतों से

अनुसन्धान करते रहे हैं। और यह विचारते रहे हैं, कि हम समष्टि से व्यष्टि में, प्रवेश हो जाएं। जैसे हमारे नेत्र हैं व्यष्टि और समष्टि में कैसे प्रवेश होते हैं? मानो जैसे हमारे नेत्र हैं हमारे नेत्रों में जो प्रकाश आ रहा हैं, वह प्रकाश कैसे आ रहा हैं? कहाँ से आ रहा है? तो यह प्रश्न उत्पन्न होता है। परन्तु स्वरूप उसका वर्णन करते हुए ऋषियों ने कहा, क्या अग्नं ब्रह्मे क्या अग्नि की ज्योति, नेत्रों से आती है, नेत्रों के पिछले विभाग में पीला पटल है, पीले पटल के पिछले भाग में, मानो देखो, एक आकार बना हुआ है, सूर्य जैसा, उसके पश्चात जब वह जाता है, तो वह ज्ञान जो प्रकाश ज्ञानमयी प्रकाश आ रहा हैं, तो आत्मा से आ रहा है। तो आत्मा को उसका द्यौतक हमे स्वीकार कर लेना चाहिए। परन्तु देखो, यह हमारी व्यष्टि से, हम समष्टि में पंहुच गए, आत्मा के द्वार पर। मेरे प्यारे! देखो, यह व्यष्टि समष्टि और व्यष्टि से समष्टि में जाना ही, हमारे लिए एक ज्ञान और प्रयत्न की प्रतिभा पराकाष्ठा है। और ज्ञान को त्यागना, ज्ञान में प्रवेश होना हैं। तो मानो देखो, इस प्रकार जब नेत्रों से स्वीकार करते हैं, क्योंकि ये ज्योतिवान है, और ज्योति आ रही हैं, और हमें ज्योतिवान बनना है, तो ऋषि मुनियों की यही विचित्र देन रही है, कि व्यष्टि से समष्टि में, मानो प्रवेश हो जाना है, और वही हमारा ज्ञानां ब्रहे पूजं गणात्वां मानो देखो, यह उसको धारण करता है, अपने में ग्रहण करने का नाम, वह गुणाधानम कहलाता हैं।

वाणी की अग्नि

तो इसी प्रकार मानो देखो, ये हमारे यहाँ, विचार आता है, कि हम एक स्थली में प्रवेश हो जाएं, और ऋषि मुनियों के अपने अनुपम विचार दे करके और अग्नि मानो नेत्रों को कहा गया है और दूसरे रूप में अग्नि देखो, वाणी को कहा गया हैं, यह वाणी ऐसी विचित्र है क्या मानो देखो, पूजा स्वर्ग स्थली बना देती हैं, यही वाणी पाण्डितव बना देती हैं, यही वाणी है, जो हमारी याचना का केन्द्र बना देती हैं। मुझे वह काल स्मरण है पुत्रों! जिस काल में वाणी के कारण, मानव कितनी यातनाओं में परणित हो जाता हैं। बेटा! त्रेता के काल में जब मैं प्रवेश करता हूँ तो मानो देखो, एक शब्द के कारण

कितना भंयकर कितना मानो विशाल संग्राम हो गया था। जब मैं त्रेता के काल में प्रवेश होता हूँ तो मानो देखो, सीता ने एक ही शब्द कहा था जब राम मानो देखो, एक मायावी एक क्रिया असुतो में रत्त होने वाले मृगराज के पिछले भाग में चले गएं, तो मानो देखो, वह समय लक्ष्मण को वह सीता की आभा में रत्त कर गएं, और यह कहा कि तुम रक्षक हो, और रक्षा में तुम्हें रहना है। तो मानो देखो, वह जो बड़े, जब वहाँ से शब्द आया उस शब्द कारण सीता ने अपनी लक्ष्मण से कहा, लक्ष्मण जाओ देखो, अपने विधाता के लिए जाओ, पुकार आई है। तो उन्होंने स्वीकार नही किया। वे ये चाहते थे हूँ कि ब्रह्मणां ब्रहे मानो देखो, मैं तुम्हारी सेवा करूंगा। उन्होंने कहा नही, तो उन्होंने एक शब्द अशुद्ध उच्चारण कर दिया उसके कारण वे यातना में देखो, रावण के वाटिका में यातना ग्रहण करती रही अपने में ग्रहण करती रहीं। तो यह जो शब्द है, यही तो अग्नि का स्वरूप बन जाता हैं। यह शब्द यही शब्द मानव को पाण्डितव बना देता हैं। जब मैं शब्द की विवेचना में प्रवेश करता हूँ, तो मानो वह भी तो शब्द है, जब पाण्डितव विराजमान हो करके, वेद की विवेचना कर रहा है, परमात्मा के गुणों का ध्यान कर रहा है, गुणों में प्रवेश हो रहा है, तो मानो देखो, वह भी तो एक आभा कहलाती हैं, वह भी कोई शब्दायमान हैं, पाण्डितव, वेद का अध्ययन करता है, उसकी विवेचना कर रहा हैं। देवता बन रहा है, ब्रह्मचारी उसी से बन जाता हैं, क्योंकि बिना ब्रह्म ज्ञान के ब्रह्मवर्चोसि नही बनता, तो ये शब्द मानो देखो, बाह्य जगत और आन्तरिक जगत में, जब शब्द प्रवेश करता है, तो अन्तर्हृदय में क्योंकि अग्नि प्रदीप्त हो गई हैं, वह ज्ञान रूपी अग्नि को प्रदीप्त करता हुआ, मानो योग साधना में प्रवेश हो करके वह अपने में अपनेपन का ही भान कर रहा हैं। अपनेपन को ही दृष्टिपात कर रहा हैं। तो वह अग्नि कहलाती है, मानो एक एक स्वरूप में दो दो रूपों में अग्नि का हमें भान होता हैं मानो देखो, इसी प्रकार वह भाना ब्रहे वह जो शब्द हैं। वह कहीं पाण्डितव के हृदयों में अग्नि बन करके रहता हैं। कहीं ब्रह्म ज्ञान बन करके रहता है। वही राजा के राष्ट्र में देखो, शुद्ध और अशुद्धियों में, मानो अमृतात् होने लगता है, उसके ऊपर जब विचार विनिमय किया जाता हैं, तो शब्द अपने में ऐसी भंयकर अग्नि है, कि राष्ट्र के राष्ट्र अग्नि

के मुखारबिन्दु में चले जाते हैं। मानो देखो, द्वापर के काल में, वह भी तो शब्द ही था, जब इन्द्रप्रस्थ की राजस्थलियों में देखो, राष्ट्र गृह में जो ऐसा निर्माण किया गया था कि जहाँ जलाशय था वहाँ मानो देखो, ऐसा प्रतीत होता था, कि यहाँ जलाशय नही हैं, और जहाँ जलाशय नही था, वहाँ ऐसा प्रतीत होता था कि यहाँ जलाशय हैं। जहाँ जल हैं, वहाँ सुकृतियों में दृष्टिपात आता रहता हैं। देखो, यहीं तो दुर्योधन अवृत हो गया, अपभ्रंश हो गया। तो उसी काल में, द्रौपदी ने कहा था कि अन्धे की सन्तान मानो नेत्रहीन ही रही हैं, ये शब्द के कारण यह बना कि देखो, विधाताओं में विनाश का एक मूल बन गया।

शब्द की अग्नि

ये शब्द है यही शब्द मानो देखो, द्रोणाचार्य के शब्दों में परणित होता हुआ, मानो देखो, जब द्रुपद के यहाँ से देखो, हस्तिनापुर की स्थली पर आ गए तो शब्दों के कारण से ही एक क्रान्ति आई, और वह शब्द ही एक दूसरे के मृत्यु के मूल में प्रवेश हो गए। देखो, जब हस्तिनापुर में विद्या का क्षेत्र बना, तो पितामह भीष्म ने कहा कि हे द्रोण! इस राष्ट्र में जो पुत्र बणे हैं, यह राज वृत्तियों में है, राजकुमार है इन्हें आप शिक्षा प्रदान कीजिए, धनुर्विद्या की बेटा! मुझे स्मरण हैं, कि देखो, उन्होंने कहा कि विद्या तो जब मैं इनका निर्णय करूंगा, जो निर्णय में यह आया कि सब अधिकारी तो नही हैं, परन्तु जो प्रतिज्ञाबद्ध हो करके, शब्दों की जो द्रुपद से आए थे, उसकी पूर्णता करनी थी। इसीलिए उन्होंने यह स्वीकार नही किया। क्या यह नही विचारा द्रोण ने कि इसका अन्तिम परिणाम क्या होगा, इस मानो राष्ट्र गृहों का क्या होगा। मेरे प्यारे! देखो, मुझे ऐसा स्मरण है कि उनको शिक्षा देना प्रारम्भ कर दिया। इस अपनाति अप्रो में अपमान मे आकर के शिक्षा दी, क्योंकि उसकी मुस्तिका को लाना हैं। परिणाम यह हुआ, कि वह विद्या दी गई अनाधिकारियों को, जो अधिकारी न थे, अनधिकार चेष्टा हुई। उसका परिणाम यह हुआ, कि एक ही गृह में हस्तिनापुर का राष्ट्र का राष्ट्र अग्नि के मुखारबिन्दु में चला गया। बेटा! आज मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नही आया हूँ। विचार यह देने

के लिए आया हूँ गुणाधानम् हमें अपनी वाणी और देखो, जो यह अग्नि है अग्नि के स्वरूप को अपने में धारण करना है, क्योंकि यह शब्द, अग्नि के रूप में विद्यमान हैं। यह शब्द ही देखो, वृत्त कहलाता है, मानो प्रत्येक इन्द्रियों के ऊपर, जब साधक अपने में संयम कर लेता है अपने में संयमी बन जाता हैं, तो यह संयम आभा में प्रवेश हो करके, उसके गुणों को अपने में धारण करने लगता हैं, और गुणाधानम् बन करके वह मानव देखो, अग्निस्वरूप बन जाता हैं। वह साधना में प्रवेश हो गया हैं।

तो मानो देखो विचार आता रहता है आज हम शिव और महादेव की उपासना कर रहे थे शिव कहते हैं, जो मानो देखो, उसके गुणों की वृत्तियों में रत्त रहता हो, शिव कहते हैं, मेरे प्यारे! पर्यायवाची शब्दों में, शिव नाम राजा का भी है। शिव नाम परमपिता परमात्मा का भी है शिव नाम रजोगुण, मानो शासन करने का नाम भी शिव कहा गया हैं, शिव के बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं।

महादेव

परन्तु देखो, महादेव के पर्यायवाची बहुत से शब्द हैं, महादेव कहते है। परमपिता परमात्मा को, जो सब देवताओं का देवता हैं। महादेव आत्मा को भी कहते हैं, क्योंकि महादेव है। उसी के कारण पंचाग्नि अपने में प्रकाश देती रहती हैं, शरीर में आत्मा, महादेव विद्यमान है, एक यज्ञ को भी महादेव कहते हैं। मानो देखो, ऐसा देव तुम्हारे मध्य में उत्पन्न हो गया हैं। आचार्यों ने वर्णन करते हुए कहा हैं।

एक समय मुझे स्मरण आ रहा हैं कि जब एक समय महर्षि शिकामकेतु उद्दालक याग कर रहे थे, तो कहीं से भ्रमण करते हुए, महर्षि शोभनी मुनि महाराज आ पंहुचे, शोभनी मुनि ने कहा कि हे देवतम्! हे उद्दालक! तुम्हारे गृह में, तुम्हारे मध्य में ऐसे एक देवता ने जन्म ले लिया है, ऐसे महादेव का जन्म हुआ हैं, जिसको विचारते विचारते थकित हो जाओगे। मेरे प्यारे! महर्षि शिकामकेतु ने कहा प्रभु! वह देवता कौन सा हैं, जो हमारे मध्य में उत्पन्न हो गया हैं? उन्होंने कहा वह देवता है याग है, वह यज्ञ हैं।

मानो देखो, वह ऐसा याग है वह यह ऐसा महादेव है, जिसके रूप में मानो चार सिंग

कहलाते हैं मानो देखो, चार सिंग कहलाते हैं सप्त मानो देखो, हस्तवाला है, सप्त हस्तवाला कहलाता हैं, और उसके मानो देखो, चार सिर कहलाते हैं। तो मेरे प्यारे! ऋषि ने कहा प्रभु! यह कैसे? वेद का मन्त्र कहता हैं चारे शृंग जिमि कृतां सप्त होतां ब्रह्मे महादेवः ऐसा वो महादेव हैं, जो सप्त होताओं वाला हैं, मानो देखो, सप्त होता कहते हैं तो सात आहुति देने वाले हैं, उनको मानो होता कहते हैं, और वो कौन सा देव हैं? मानो देखो, चारम्ब्रह्मणे देवं ब्रव्हा सप्त होता कौन से हैं? बेटा! देखो, यह देवता हैं, जैसे जमदग्नि, वशिष्ठ, आदि ये सर्वत्र देवता कहलाते हैं। यह ऋतुओं का ग्रह विधान कहलाया गया हैं। मानो देखो, ऐसा महादेव हैं, जो तुम्हारे मध्यम में विद्यमान हो गया है। चार सिंग है उसके मानो देखो, यज्ञमान, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा बन करके यह चार उसके सिंग कहलाते हैं, जो सिर है वह उस महादेव की प्रतिभा में निहित रहते हैं, रहा यह कि कृणा ब्रह्मेः मानो ऐसा कौन सा देवता है बेटा! वह याग है जो यागां ब्रह्मणे मानो वेद का मन्त्र कहता हैं ऐसा एक महादेव तुम्हारे मध्य में विद्यमान हो गया हैं, जो देवताओं का भी देवता हैं, जो अग्नि प्रदीप्त हो रही हैं। वह उसका याग का मुख कहलाता हैं और वो देवताओं का चरी प्रदान करने वाला हैं। इसीलिए पञ्च हस्त हैं, उसके पांच हस्त कहलाते हैं। मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या? आलांकारिक विचारों को देते हुए ऋषि ने कहा कि ऐसे महादेव की हमें पूजा करनी हैं। ऐसे महादेव को हमें नमः होना हैं, मेरे प्यारे! देखो, इसीलिए शिवत्रं ब्रह्मः शिव नाम बेटा! परमात्मा का, शिव नाम आत्मा का है, और शिव नाम राजा का हैं, जो अपना शासन कर रहा है, और शासन प्रणाली में विद्यमान हो करके, मानो देखो, वह अपने में रत्त हो रहा हैं। रहा ये शासनं ब्रहे मानो देखो, शिव नाम जब रजोगुण में प्रधीः अर्पणाकृतेः जब हम रजोगुण में अपने में समाहित हो जाते हैं, तो अपने में अपनेपन को ही शासन में अनुशासन में परणित होते हुए मानो देखो, वहाँ योग की अवस्था आ जाती हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ को जो संयम में लाने वाला हैं वह महादेव कहलाता है वह मानो देखो, शिव कहलाता हैं। जो अपने को संयम करता है प्रत्येक इन्द्रियों को वह शिव बन करके अपने में अपनेपन को अपने में ही दृष्टिपात करके मानव मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता

हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार जब वेद का वाक्य, हमे स्पष्टीकरण करता है, उसके ऊपर हमें बारम्बार विचार विनिमय करना चाहिए। विचारना चाहिए कि हमे देखो, अपने में राजा को भी शिव कहा जाता हैं, कौन सा राजा शिव हैं? इस सम्बन्ध में मैंने बहुत पुरातन काल में एक विवेचना की हैं बेटा! देखो, उस राजा का नाम शिव कहलाता हैं, जो अपने मे मन, वचन, कर्म को एकाग्र करके देखो, राष्ट्र को ब्रह्मज्ञान का अध्ययन करने वाला हैं और राष्ट्र का पालन करने वाला हैं। जो राजा और प्रजा में अपने में और प्रजा में कोई अन्तर्द्वन्द्व स्वीकार नही करता हैं, वह एकोकीकरण लाने के लिए तत्पर रहता हैं, उस राजा का नाम, शिव कहलाता हैं। जिस राजा के राष्ट्र में प्रजा ऊर्ध्वा विचारों वाली हो, संकीर्णता का मानो देखो, नामोकरण वहाँ नही होना चाहिए। ऐसा जो शिव है वह मंगलं ब्रह्मे वह राजा कहलाता हैं। जिस राजा के राष्ट्र में, देखो, वेदमन्त्रों का उद्घोष हो, और राजा स्वयं उद्घोष करने वाला हो, देखो, ऐसा राष्ट्र महादेव और ऐसा राजा शिव कहलाता हैं। तो हम उस शिव की पूजा करें। पूजा का अभिप्रायः यह कि गुणों को अपने में धारण करें।

परमात्मा के गुण

मेरे प्यारे! परमपिता परमात्मा निरभिमानी हैं, इसीलिए मानव को भी निरभिमानी बन जाना चाहिए। परमपिता परमात्मा मानो, देखो, अमृतं अकाय वह काया में नही हैं वह अकाय है इसीलिए मानव जब चिन्तन की गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो जाएं। तो अन्तःकरण में, आत्मा के क्षेत्र में वह अपने में विचार विनिमय करने लगे, तो मानो देखो, वह तार्किक बन जाता हैं।

परमात्मा सर्वव्यापक है, कण कण में व्याप्त हैं, इसीलिए देखो, सर्व भूतेषु मानो सर्वत्रता में उसको दृष्टिपात करता रहे। सब कर्तव्यों में जब परमपिता परमात्मा को जो दृष्टिपात करने वाला हैं, वह निष्काम कर्मयोगी कहलाता हैं। वह ब्रह्म में समाधिस्थ हो जाता हैं, और ब्रह्म निष्ठ हो करके, परमपिता परमात्मा की प्रतिभा को सर्वतत्रा में दृष्टिपात करता

हुआ, अपने में अपनेपन में ही दृष्टिपात करता रहता हैं। मेरे प्यारे! यह एक बड़ा विचित्र विचार है कि जिसको मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था, आज का एक विषय बन गया है, कि विचार बन गया है कि विचार आ गया है कि वेदमन्त्रों ऐसे ही आज मैं बेटा! उन उद्गारों को उद्गीत रूप में गाना चाहता हूँ।

अनुशासन का महत्व

विचार विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, हम यह विचारे कि हमारे यहाँ प्रत्येक इन्द्रियों में जो देवताओं का वास हो रहा हैं, उसे अपने में धारयामि बनाएं और अपने में जैसे हमारे यहाँ अग्नि के स्वरूप है, अग्नि ही तो है जो कहीं शब्द बन करके रहती हैं, वही अग्नि मानो आचार संहिता के रूप में परणित रहती हैं, जिसे हम अनुशासन कहते हैं, देखो, जब तब अनुशासन नही आता, तब तक मुनिवरों! देखो, हम साधना में भी ऊर्ध्वा को प्राप्त नही होते। हमारे यहाँ विचार आता है कि अप्रतिं ब्रह्मणां ब्रहे मानो ये विचार आता है कि कैसे हम अपने को अपनेपन में प्रवेश कराते रहें? कैसे विचारे? मानो देखो, साधनं अनुशासनम् वेद का ऋषि तो मानो यह कहता है कि अनुशासन होना चाहिए। जो भी इस प्रतिक्रियाओं को, साधना का क्षेत्र है साधना को जो अनुशासन है वह क्या है? बेटा! वहाँ प्रत्येक इन्द्रियों को मानो संयम में लाना, इन्द्रियों के विषयों को जान करके, संयम में लाने का नाम मेरे पुत्रों! देखो, अनुशासन कहलाता हैं। अनुशासन की विवेचना, यौगिक विवेचना तो यही कहलाती है।

गृह का अनुशासन

गृह में जो प्रवेश होने वाला, गृह स्वामी हैं, और गृह स्वामिनी है वह मानो बाल्य को स्वर्ग मे लाना चाहता हैं साधक, साधना में परणित होना चाहते हैं, तो बाल्य बालिकाओं के मध्य में वह मानो दर्शनों का अभ्यास करते हुए, अपने में अनुशासित बनते रहें। और बाह्य सांसारिक जगत में भी इसी प्रकार मानो रमण करते रहें।

परमात्मा का परोक्ष व प्रत्यक्ष रूप

जैसे ब्रह्मणां राजा है वह द्वितीय राष्ट्र में गमन करता है और गमन करता हुआ जब रक्षा

की सामग्री हैं एक दूसरा उससे प्रश्न करता है तो वह मौन हो जाता है। यदि वह मौन नही होता है, और अपने साकल्य या सामग्री को सबको उद्गीत रूप में गाता हैं, तो राष्ट्र का जो परोक्ष क्रियाकलाप है, वह अपरोक्ष में बन गया, तो राजा उस पर आक्रमण कर सकता हैं। तो इस प्रकार देखो, अपने विचारों को, गोपनीय बनाना हैं ऐसे ही परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में, हम रहते हैं, परमात्मा का जितना भी ज्ञान और विज्ञान है, वह परोक्ष रूप में और कुछ प्रत्यक्ष रूप में विद्यमान है। जो परोक्ष है, वह गोपनीय विषय कहलाता हैं, और जो मानो प्रत्यक्ष है, वह सर्व दृष्टिपात आ रहा है। परन्तु जब अपनी अन्तरात्मा के समीप, इन्द्रियों पर अनुशासन करके, जब तुम प्रवेश हो जाओगे, वे परमपिता परमात्मा का जो सूक्ष्म तरंगों का जन्म होता है, जन्म जन्मान्तरों की प्रतिभा को ले करके वह उद्गीत रूप में गाता हैं तो मानो वह उसका परोक्ष रूप बन जाता हैं।

प्रत्यक्षं ब्रह्मेः परोक्ष रूपम् मेरे प्यारे! परोक्ष में ही सर्वत्र विज्ञान है। जैसे, मुझे स्मरण आ रहा है कुछ ऋषि मुनि एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके ये विचारने लगे, उनमें कुछ विज्ञानवेत्ता भी थे, उन्होंने यह विचारा कि परोक्ष रूप क्या हैं? परमात्मा का मानो परोक्ष रूप और प्रत्यक्ष रूप क्या है? प्रत्यक्ष तो प्रायः दृष्टिपात आ रहा है, मानो देखो, मनुष्य उसकी रचना हैं, जगत की रचना है, मानो देखो, चारों प्रकार की सृष्टि की रचना हैं जैसे उद्भिज, स्थावर, जंगम, और अण्डज इत्यादि यह सृष्टि है। और यदि परोक्ष रूप में आता हैं, तो कहाँ पंहुचेगा? वे मानो कहीं योग के द्वारा अग्नि को जानेगा, अग्नि के परमाणुओं को लेने के लिए तत्पर होगा और परमाणु का जब वह विभाजन करता हैं एक दूसरे परमाणु को सहकारिता में ला करके, तो उस परमाणु का जब विकृत रूप बनाता है, तो उसमें से सर्वत्र ब्रह्माण्ड का जन्म होता हैं। उस एक ही परमाणु में ब्रह्माण्ड का जन्म हो रहा हैं, वह ब्रह्माण्ड ही दृष्टिपात आ रहा है। इसी प्रकार, वह इस परमपिता परमात्मा का परोक्ष रूप है। एक एक मानो देखो, परमाणु में ब्रह्माण्ड सर्वत्र विद्यमान रहता हैं, इसी प्रकार उसका परोक्ष जो रूप है परमपिता परमात्मा का वह गोपनीय हैं। और गोपनीय विषय को मानो देखो, अपनी अन्तरात्मा के, अन्तिम सूत्र, क्षेत्र में ले

जाओ। जहाँ आत्म चिन्तन बन सकें।

आत्म चिन्तन

आत्म चिन्तन क्या है, जहाँ परमात्मा को यह सर्वत्रता में, अनुशासन में कटिबद्ध हो करके दृष्टिपात करता है, उसी पर स्थिर हो जाता हैं उसका नाम अनुशासन कहलाता हैं। प्रत्येक इन्द्रिय, जैसे हमारे यहाँ धिक्कारने लगी, कुदृष्टिपात किया, धिक्कारने लगा हैं अन्तःकरण सुदृष्टिपात करने लगा है तो पूजा का एक और स्थल उसे प्राप्त हो गया है। मानो देखो, ऐसे स्वरूप में जब हम अपने को दृष्टिपात करते हैं, तो अपने में अपनेपन का भान अप्रत्यक्ष में हम दृष्टिपात करने लगते है। उस अन्तःकरण में जो जन्म जन्मान्तरों के संस्कार विद्यमान हैं, उन संस्कारों को साक्षात्कार करने वाले उसमे जो अमृतं ब्रह्मे वह जो गम्भीर संस्कार विद्यमान हैं जन्म जन्मान्तरों में ले जाने वाले मानो देखो, उनको हमें दग्ध करना हैं उन्हें दूरी करना है तो उसमें पुरूषार्थ की आवश्यकता है।

मुझे एक वाक्य स्मरण आ गया है वह वाक्य मैंने कई काल में तुम्हें प्रगट कराया था कि एक समय महर्षि भारद्वाज गोत्र में एक ऋषि हुए, जिन ऋषि का नाम स्वांगकृति भारद्वाज था, तो स्वांगकृति ने सर्वप्रथम जैसे स्वांग वाली अपनी निद्रा को निन्द्रित किया उन्हें इसीलिए स्वांग कहते थे, परन्तु गति भी उनकी बड़ी विचित्र थी, तो वह अपने आचार्य से एक समय विद्यालय में उद्गीत गाने लगे, कि हे प्रभु! मेरी इच्छा यह है कि मैं भंयकर वनों में जा करके, अपने अन्तःकरण के संस्कारों को नष्ट करना चाहता हूँ। जिससे मैं केवल बन जाऊं। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। विचार प्रिय हैं।

संस्कारो को दग्ध करना

मानो देखो, ऋषि स्वांगकृति ने आज्ञा पा करके, वहाँ से उन्होंने गमन किया और अध्ययन करते हुए सर्वत्रता में विचरने लगे। उन्होंने सबसे प्रथम अहिंसा का पालन किया, सु अध्याय किया और तप किया। मानो देखो, इस प्रकार उन्होंने नाना प्रकार के दक्षो दक्षिणां ब्रह्मे वृतं यह सर्वत्र करने के पश्चात मुनिवरों! देखो, एक समय उन्होंने संकल्प किया, कि मैं अस्सी वर्ष तक मौन रहूँगा। कोई वाक् नही उच्चारण करूंगा,

वार्त्ता करनी हैं तो प्रभु से करूंगा। जब इस प्रकार देखो, ऋषि स्वांगकेतु महाराज ने इस प्रकार अपना संकल्प किया। भयंकर वनों में विद्यमान हैं, और विचार कर रहे हैं वार्त्ता कर रहे हैं प्रभु के गुणों से, प्रभु की सृष्टि को अपने में भान कर रहे हैं, परन्तु अनुशासन में रहते हुए अनुवृत्तियों में गमन करते हुए उन्होंने अस्सी वर्ष तक जब तक मौन धारण किया, तो मौन से वह अन्तरात्मा में चले जाते थे, प्रभु के चिन्तन में तो मानो देखो, वह अन्तर्मुखी बन गए, बाह्य जगत उनसे दूरी हो गया। तो बेटा! उन्होने अपने अनुभव को एक समय हमारे विद्यालयों में प्रगट कराया। उन्होंने यह कहा था कि मुझे तीन हजार पांच सौ इक्कसठ जन्मों का स्मरण मानो देखो, उनकी साक्षात्कार मेरे समीप है, और मैं उनको दग्ध करने वाला हूँ, तपस्या के द्वारा, अनुशासन के द्वारा।

तो मुनिवरों! देखो, अनुशासन की बड़ी विचित्र विवेचना हमारे आचार्यों ने वर्णन की हैं, अनुशासन उसे कहते हैं जो जगत बाह्य और आन्तरिक जगत दोनों को जान करके, अन्तर्मुखी बन जाए। मानो देखो, अपने चित्त के मण्डल में जो नाना जन्म जन्मान्तरों के संस्कार है उन्हें चित्त पटलों पर दृष्टिपात करने लगे। तो मानो देखा यह वाक्य ऋषि ने वर्णनं ब्रहे मेरे प्यारे! देखो, मुझे ऐसा स्मरण है, ऋषि का यह वाक्य जैसे हमारे समीप आज भी विद्यमान हो। परन्तु देखो, स्वांगकृति ऋषि महाराज ने उदयालकम् व्रणं ब्रहे वृतम् मेरे प्यारे! देखो, भारद्वाज गोत्रीय ऋषि भी बड़े विचित्र रहे हैं। तो विचार विनिमय क्या? बेटा! ऋषि बड़े अनुसन्धान करता रहता है, अपने को अनुशासन में लाता हैं। मानो वेदों का उद्गीत गाता है और वेद प्रभु का जो गुणवादन हो रहा है उन गुणवादनों को अपने में ग्रहण करने वाला है तो ऐसा मानो जो साधक होता है वह साधक परमपिता परमात्मा को प्राप्त होता हुआ मुनिवरों! देखो, संसार सागर से पार हो जाता है बेटा! आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नही आया हूँ। मानो उसका गुणाधानम् करता रहता हैं बेटा! मैं तो परिचय देने आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नही हूँ केवल आज सूक्ष्म सा परिचय देकर हम चले जाते हैं।

आज मैं तुम्हें एक परिचय दे रहा हूँ इसके ऊपर हमें विचार विनिमय करना है मेरे पुत्रों! देखो, ऐसे महादेव की हमें पूजा करनी है ऐसे शिव को अपने में गुणाधानम् बना

करके शिव के आचरणों को अपने में ग्रहण करते हुए इन्द्रियों पर अनुशासन करना हैं जिससे हम परमपिता परमात्मा की आनन्दमयी पगडण्डी को ग्रहण कर सकें। हमारे जन्म जन्मानतरों के जो संस्कार हैं। उन संस्कारों के आधार पर हमारी जीवन चर्या बनती रहती है और भ्रष्ट भी होती रहती है। तो इसीलिए उससे हम उपराम हो करके व्यष्टि से समष्टि में प्रवेश हो जाएं।

शब्द समष्टि से व्यष्टि में प्रवेश

समष्टि किसे कहते हैं? व्यष्टि किसे कहते हैं? वह इन्द्रियों में समाहित रहती है, जैसे एक मानव देखो, मानवीयता के रूप में एक शब्द का उद्गीत गा रहा हैं, वह मानव शब्द का उद्गीत गाता हुआ, अपने में उदघृत हो रहा है, और वह शब्द अपने में मनोवृत्तियों में रत्त हो रहा हैं। वही शब्द जब अन्तर्हृदय में प्रवेश होता है, वही मानो शब्द समष्टि से व्यष्टि में प्रवेश हो जाता हैं। व्यष्टि से समष्टि में, जैसे नेत्रों की ज्योति हैं, वह संसार को दृष्टिपात कर रहा है, और जब वह समाहित हो जाता हैं, तो यह प्रभु का राष्ट्र है, और प्रभु के राष्ट्र में ही मैं यह दृष्टिपात कर रहा हूँ, तो वह संकीर्णता को त्याग करके व्यापकवाद में प्रवृत्ति प्रवेश हो जाती हैं तो इसीलिए व्यष्टि से समष्टि में चला जाता हैं, और समष्टि में इन्द्रियों के साकल्य को एकत्रित करता हुआ वह एकोकी सूत्र और अपने को उसके साथ दृष्टिपात करता हुआ अपने को प्रभु को समर्पित कर देना हैं, मानो देखो, साधक बन करके अपने अन्तर्हृदय में प्रत्येक इन्द्रियों के साकल्य को एकत्रित करता हुआ वह एकोकी रूप बना करके अन्तःकरण में हवि प्रदान करता हैं मानो देखो, अन्तःकरण मे जो संस्कार हैं वे कहीं कहीं प्रबलता में दग्ध हो जाते हैं, प्रभु की गोद में चले जाने से।

बेटा! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ आज का वाक् हमारा क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए अनुशासन में रत्त होकर परमात्मा की पूजा में रत्त हो जाएं परमात्मा के गुणों को अपने में धारण करें। क्योंकि परमात्मा निरभिमानी हैं तो निरभिमानी बन जाना चाहिए। साधक को। परमात्मा मानो अकाय है इसीलिए

काया का अभिमान नही होना चाहिए। मेरे प्यारे! परमपिता परमात्मा रचयिता हैं इसीलिए परमात्मा के साथ मे मानो देखो, अपना सहयोग हो रचनं ब्रह्म देखो, रचयिता है हम रचे हुए हैं वह अपने में परिणत्व हो रहा हैं मानो देखो, तो देखो, इस प्रकार से जो परमात्मा के प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर अन्वेषण करता है अनुसन्धान करता है परमात्मा को उसमें दृष्टिपात करता है उसके गुणों को उसका ज्ञान और विज्ञान उनके समीप आता है तो वह पार हो जाता है।

यह है बेटा! आज के वाक् आज का वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि हम परमपिता परमात्मा की उपासना करें। जो परमात्मा के नाना पर्यायवाची शब्द हैं और उन पर्यायवाची शब्दों की विवेचना करते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं यह आज का हमारा वाक्य समाप्त होने जा रहा हैं। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि उस देव की उपासना करके संसार सागर से पार हो जाएं। ओ३म् रथाः माणां वायु गतं रथा वायाः ओ३म् मनु ब्रा यशश्चां देवं गताः वाचन्नमा ओ३म् पृ वरुणा रथं आभ्यां देवाः यम सर्वा यम रथा।

२ 05 11 1988 दान में याग

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, वह जो परमपिता परमात्मा है जो अनन्तमयी है उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप हैं, और उसी में निहित रहने वाले हैं। तो वे परमपिता परमात्मा इस प्रकृति के कण कण में व्याप्त हैं। क्योंकि यह ब्रह्माण्ड का नियमन कर रहा है, इस प्रकार मानव के शरीर में, इन्द्रियों का नियमन करने वाला कोई दृष्टिपात, इसी प्रकार परमपिता परमात्मा इस संसार का नियमन कर रहे हैं। मानो वह उसके मूल में विद्यमान रहते हैं। तो वेद का मन्त्र यह कहता है, कि वे परमपिता परमात्मा त्रिवर्धा है, वह त्रिवर्णा, त्रिवर्ध चतस्प्रमाणा त्रि वस्ता मानो वे परमपिता

परमात्मा त्रिवर्धा है, और त्रि में रमण कर रहा है। इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महती और उसकी अनन्तता के ऊपर, हम सदैव विचार विनिमय करते चले जाएं। आज का हमारा वाक्, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाने के लिए, सदैव विचार और मानवीयता का दर्शन, प्रायः हमारे हृदयों में रमण गमन वाली प्रवृत्तियां, वह सब इस परमपिता परमात्मा की प्रेरणा और उसकी महती, इन्हीं में दृष्टिपात आती रहती है। तो मेरे प्यारे! हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने, नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान का, उन्होंने चयन किया है, और जानने का प्रयास किया है। तो हम उस परमपिता परमात्मा, जो यज्ञोमयी स्वरूप है, मानो उसकी महिमा का गुणगान गाते हुए, अपने में बेटा! अपनेपन का भान करते रहें, परमपिता परमात्मा तो अनन्त और महिमावादी हैं। तो आज का हमारा वेदमन्त्र यहाँ परमात्मा का उद्गीत गाने के लिए, सदैव हमें बाध्य करता रहता है, उसमें हम अपनी अपनी कृतियों में रत्त होते हुए और अपनेपन की आभा को जानने का प्रयास करें, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा को अनन्त और आनन्दमयी कहलाते हैं। और हम उस आनन्दमयी प्रभु की महिमा का, सदैव गुणगान गाते रहे।

वेद मन्त्र की याग प्रेरणा

आओ, मेरे पुत्रों! हमारा वेद का मन्त्र क्या कह रहा है, हमारे यहाँ आचार्यों ने बेटा! जैसे आज का वेद का मन्त्र आया, याग के सम्बन्ध में बड़ी, तो हमारे यहां ऋषि मुनियों ने बेटा! विचित्र उड़ाने उड़ी हैं, और उडान उडने से बड़ी ऊर्ध्वा में गमन करने वाला, प्रायः अपने में चयन करता रहा है। तो इसीलिए हमारा वेद का मन्त्र, वेद का जो अभ्योदय होना है, तो उसके ऊपर बेटा! ऋषि मुनियों ने बड़ा अनुसन्धान और विवेचन किया। आओ, मेरे प्यारे! आज हम, उस अन्वेषण प्रवृत्ति को अपनाते हुए, अपनी मानवीयता को और मानवता का, अपने में दर्शन करते चले जाएं, यही हमारे यहा एक आशय रहा है। विचार विनिमय करने का भी, यही मन्तव्य रहा है, और यौगिक क्षेत्र में

जाने का भी हमारा यही मन्तव्य रहा है।

याग का सृष्टि रूप

आओ, मेरे प्यारे! हमारा वेद का मन्त्र, हमारे वेद के मन्त्रों में बड़ी विचित्र वार्त्ताएं आती रहती हैं और मानव को भिन्न भिन्न प्रकार का संकेत भी प्रायः उनमें प्राप्त होता रहता है। तो इसीलिए हम वेद रूपी प्रकाश को अपनाते हुए, और अपने में ही, उस प्रभु का दर्शन करते चले जाएं, क्योंकि वेदमन्त्र यही कहता है। तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक् क्या कह रहा है, कि हम देव के द्वार पर जाने का प्रयास करें, और देवतव को प्राप्त करें। तो आओ, मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ, ऋषि मुनियों ने बेटा! याग के सम्बन्ध में बड़ी ऊर्ध्वा में उड़ाने उड़ी हैं, हमारे यहाँ याग के सम्बन्ध में, बहुत गम्भीर विचार विनिमय होते रहे हैं। परन्तु ऋषि मुनियों ने यही कहा है, कि यह याग तो सृष्टि की एक कल्पना है, जैसे याग करते हैं, यज्ञशाला का निर्माण है वह मानो सृष्टि के प्रारम्भ में, जैसे परमपिता परमात्मा ने, मानो ब्रह्माण्ड की रचना की है, इसी प्रकार याज्ञिक पुरूषों ने, ऋषि मुनियों ने, वेद के मन्त्रों को जानते हुए, मानो उसी प्रकार का यह आकार बनाया है और उस आकार के बनाने के पश्चात, उसमें जो क्रियाकलाप आया है, वह क्रियाकलाप बड़ा विचित्र है।

याग से वायुमण्डल को शोधन

बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय बेटा! महर्षि कागभुषुण्ड जी, अपने एकान्त स्थलियों में विराजमान हुए, और वह एक मानो उन्होंने एक अनुष्ठान किया और अनुष्ठान यह किया कि हम याज्ञिक बनें और याग करने वाले बनें और यह याग का, बेटा! उन्होंने अनुष्ठान किया। उस अनुष्ठान का परिणाम ब्रहे यह कि उस वायुमण्डल का शोधन करना चाहा, ऋषि को तपस्या करनी है, वहाँ के परमाणुवाद को, उसे शुद्ध और विचित्र बनाना है।

समुद्र से वायु शोधन

तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि कागभुषुण्ड जी अपनी स्थली पर विद्यमान हो करके, याग

कर रहे थे। जब उनका याग हो रहा था, तो उन्होंने क्रियाओं से, परोक्षण ले करके, वह जल का सञ्चार कर रहे थे, मेखला में जल का सञ्चार कर रहे थे। बेटा! महर्षि श्वेताश्वेतर कहीं से भ्रमण करते हुए आ पंहुचे, और श्वेताश्वेतर भारद्वाज मुनि ने यह कहा कि हे प्रभु! यह क्या कर रहे हो? तो ऋषि ने यह उत्तर दिया कि मैं समुद्र की क्रिया कर रहा हूँ। इतना उच्चारण करके, वह मौन हो गएं। पुनः यह प्रश्न किया, कि महाराज! यह समुद्र की क्रियाओं का क्या मन्तव्य है याग में? उन्होंने कहा परमपिता परमात्मा ने, यह पृथ्वी रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया और उस निर्माणवेत्ता ने मानो देखो, उसके अन्तर्गत धुम्रग्राहा मानो एक मेखला का निर्माण किया है, जिसको हम समुद्र कहते हैं। यदि यह मेखला नही होगी, तो यह पृथ्वी, जो विष उगलती है, ये प्राणी, जो विष उगलता है, विष पृथ्वी में जाता है, उसका मिलन समुद्रों से होता है। मानो देखो, यदि यह समुद्र नही होगा, तो यह प्राणी, यहाँ एक श्वास भी नही प्राप्त कर सकेगा। तो मेरे प्यारे प्रभु की महिमा का, उन्होंने वर्णन करते हुए कहा, क्या प्रभु ने यह संसार रूपी मेखला, संसार रूपी यज्ञशाला, इसके अन्तर्गत एक मेखला, जब समुद्रों में मानो जलाशय रहता है, तो जल की प्रतिक्रियाओं में देखो, मानो उसी की आभा ले करके यज्ञमान अपने में जल का प्रोक्षण करता है, उस मानो देखो, अब्रहा मेरे प्यारे! देखो, मेखला में जब जल का सञ्चार कर रहा है, तो वह इसका यही उत्तर देता है, कि जैसे जैसे प्रभु ने समुद्र की जो मेखला है, उसी मेखला में जलाशय विद्यमान रहता है। मुनिवरों! देखो, वह वाक् मेरे हृदय में प्रायः समाहित होता रहता है, वह कहते हैं, कि याग तो बड़ा प्रियतम है, परन्तु यह ब्रहा सम्भव ब्रहा मेरे प्यारे! यह अग्नि जो अपने में विष उगलती है, उसको यह पृथ्वी में, जो मेखला में, जो जल होता है, और कलशं कलश का ब्रहे जो जल होता है वह उसको अपने में, विष को शोधन करता है, और पवित्रता दे देता है। इसका यह एक स्वरूप माना गया है।

ब्रह्माग्नि

एक मानो देखो, दूसरा स्वरूप यह माना गया, कि जब मानव ये परमपिता परमात्मा

के नियमानुसार, माता के गर्भस्थल में होता है, तो मानो देखो, यह जल में ही देखो, यह ओत प्रोत रहता है, और जल ही उसके पांशे बने रहते हैं, और आपो जल उसका ओढ़न होता है, जब यह जल उसका ओढ़न हो गया, तो मानो देखो, यह उसमें ओत प्रोत हो गया है। उसमें कटिबद्ध हो गया है तो मानो देखो, परमपिता परमात्मा के नियमानुसार, वह जो माता के गर्भ में अग्नि प्रदीप्त हो रही है, वह अग्नि मानो देखो, मानो उसे ब्रह्माग्नि कहते हैं, वह अग्नि मानो देखो, वह कैसी प्रदीप्त हो रही है, जिस अग्नि में, अग्नि के रूप में विद्यमान हो करके बेटा! उष्णता प्राप्त हो रही है।

विज्ञान का स्रोत

तो मेरे प्यारे प्रभु का यह मेखलामयी रूप बना हुआ है, आपो बनें हुए हैं। मेरे प्यारे! वह मेखला बन करके कृतं ब्रह्मा जलाशयों के रूप में विद्यमान रहता है। मेरा प्रभु कितना विज्ञानवेत्ता है, बेटा! कितनी विज्ञानता है उसमें, मानो वही तो विज्ञान का एक स्रोत माना गया है। तो मुनिवरों! देखो, माता के गर्भस्थल में जो मेखला का निर्माण किया, वहीं यज्ञमान ने, पुरोहित ने देखो, बाह्य जगत में भी, उसी प्रकार की मेखला का निर्माण किया। अग्नि मानो प्रसन्न हो रही है, चितां ब्रह्मा चित्त की अग्नि का और बाह्य जगत की अग्नि का, एक समावेश हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह कैसी भव्य अग्नि है, इसी प्रकार कर्मकाण्ड के महापुरूषों ने, बेटा! देखो, याग में स्थलियों के ऊपर देखो, अपना स्थान दिया है। दक्षिणाय नमं ब्रह्मा दक्षिण में देखो, ब्रह्मा का स्थान है, और देखा वह उत्तरायण में, मेरे पुत्रों! देखो, उद्गाता का स्थान माना गया है, जो उद्गीत गाता है। तो मेरे प्यारे! ब्राह्मण दक्षिणाय वो पितर जनं ब्रह्मे क्योंकि पितरों का जो स्थान होता है, वह दक्षिणाय कहलाता है। मेरे प्यारे! वह पितर कहलाते हैं और वह पितरों का स्थान होने से, मुनिवरों! देखो, उसका अपना एक महत्व है, ब्रह्मा को वेद के पठन पाठन करने वाला, वह यज्ञशाला के दक्षिण भाग में विद्यमान होता है, और वह विराजमान हो करके, उद्गाता से कहता है, उद्गीत गाईए। वह उद्गीत गाने लगता है। तो मानो देखो, वही उसके जो शब्द हैं, जो मनोवृत्तियाँ हैं, वह सब मुनिवरों! देखो,

अन्तरिक्ष में प्रवेश कर जाते हैं, द्यौ की आभा में प्रवेश हो जाती हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, याग के सम्बन्ध में, ऋषि मुनियों ने बड़ा भव्यता से विचारा, बड़ी उज्ज्वलता से विचारा, बेटा! मेखला को ले करके और कलशं जलं ब्रह्मा ब्रहे मेरे प्यारे! देखो, यह कलश भी अपनी आभा में निहित रहता है।

महाभारत के बाद कर्मकाण्ड में दोष

परन्तु देखो, मुझे एक समय मेरे प्यारे महानन्द जी ने यह प्रगट कराया, कि महाभारत काल के पश्चात याग का कर्मकाण्ड का तो मानो कुछ समीप रहा नही, क्योंकि देखो, वह उनमें अध्ययन करना समाप्त कर दिया। और प्रणाली मानो देखो, अप्रणाली बन गई, और अप्रणाली बन करके मानो देखो, उसमें धृष्टता आ गई, अज्ञान आ गया। उस अज्ञान के आने से, मेरे पुत्र ने मुझे कुछ ऐसा वर्णन कराया, आज मैं अज्ञान के स्वरूप में या अज्ञान के राष्ट्र में, जाना नही चाहता हूँ।

यज्ञ में मेखला

विचार केवल यह कि आज का वेदमन्त्र कह रहा है, मेरे प्यारे! देखो, जब यज्ञमान यज्ञशाला का निर्माण करता है, तो यह मेखला का निर्माण करता है। तो मेरे प्यारे! देखो, तीनं ब्रह्मा मानव के शरीर के अंग संग, वह तीन पेड़ियों का निर्माण करता है। मानो बेटा! देखो, जैसे मानव के शरीर में, बेटा! रजोगुण, सतोगुण, तमोगुण कहलाते हैं, वह तीनों वृत्तियाँ विद्यमान रहती है, जहाँ अग्नि अपना प्रकाश देती है। बेटा! तीन मात्राओं की, ओ३म् की अ उ और म मानो ये तीन मात्रा है। तीनों में यह त्रिवर्धा कहलाता है। इस त्रिवर्धा को विचारना है, कि बेटा! कि हम इस त्रिवर्धा को ले करके, अपने जीवन को ऊँचा बनाएं, अपनी मानवीयता को, मानो क्षेत्र में ले जाएं, और उसका हम अन्वेषण करना प्रारम्भ करें।

पुरूषार्थी बनने की प्रेरणा

तो मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, आज मैं यज्ञशाला के उस क्षेत्र में चला गया हूँ, जहाँ कर्मकाण्ड की एक पद्धति महान बन करके रहती है। बेटा! देखो, कहीं

यज्ञमान के लिए, यह प्रेरणा दी है, कि तू, पुरूषार्थी बन, मानो अपने में निष्क्रिय न हो। हे यज्ञमान! तू मानो अपने में अपनेपन का विचार विनिमय करता हुआ, तू अपने गृह को ऊँचा बना करके, और अपनी यज्ञशाला को भव्य बना करके, देवताओं का मुख बना करके, उसे देवताओं को प्रदान करता रहे । तो मुनिवरों! देखो, ऐसा आचार्यों ने वर्णन किया है। आचार्यों का इतना विचार विनिमय करने का बड़ा पवित्र एक माध्यम रहा है, बडा उनका सहयोग भी रहा है यह कृतियों में भी रहा है। तो मुनिवरों! देखो, इसमें भी मैं विशेषता में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, विचार क्या मुनिवरों! देखो, मैं उसी क्षेत्र में जाना चाहता हूँ, जहाँ यज्ञशाला में देखो, जहाँ यज्ञशाला में मुनिवरों! देखो, याग के अमृतो ब्रह्मा कृतो।

दान के प्रकार

मेरे प्यारे! देखो, जहाँ संगतिकरण ही, वहीं दानेषु कहलाता है, और जहाँ दानेषु कहलाता है, वहीं बेटा! देखो, उसमें देवपूजा में लगा हुआ है। तो मानो देखो, मैं दान की चर्चा कर रहा था, दान बेटा! कितने प्रकार का होता है? सबसे प्रथम तो वह दानी है, वह मेरा प्यारा प्रभु है, जो संसार का नियन्ता है, उसके ऊर्ध्वा में कोई दानी नहीं कहलाता। वह ऐसा दानी है, क्या, उस जैसा मेरे प्यारे! देखो, सृष्टि की रचना कर दी, वह दानं ब्रह्मण ब्रहा, मेरे प्यारे! मानव उसी के अन्तर्गत गमन करता रहता है। कहीं दान दे रहा है, कहीं संगतिकरण में वृत्तियों में ले गया है। कहीं देवपूजा में ले गया है। तो बेटा! ये सब क्या वस्तु है, इसके ऊपर भी तो चिन्तन करना है।

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनियों ने तो बड़ी ऊँची उड़ाने उड़ी हैं, बड़ा विचित्र एक मन्तव्य दिया है, परन्तु यहां मैं, हम दान की चर्चा करें, मेरे प्यारे! देखो, दान, देने वालों ने, मुनिवरों! देखो, अपनी अस्थियों को भी दानेषु बनाया और अस्थियों को प्रदान कर दिया है, यदि मेरी अस्थियों से इस मेरे राष्ट्र का, समाज का कल्याण होता हो, तो मेरी अस्थियां भी, तुम्हारे क्रिया में आने वाली हों। तो मानो देखो, उन्हें भी मैं उसे समर्पित

कर दूं।

तो मेरे प्यारे! देखो, कितना ऊर्ध्वा में दान है, ये दानेषु की चर्चा चल रही है, बेटा! मैंने तुम्हें कई कालों में, तुम्हें वर्णन, परन्तु दान का रूप नही दिया है, तो आज मेरे प्यारे! देखो, दानेषु बनना चाहिए प्राणी को, दान की प्रवृत्ति होनी चाहिए, जिससे उसका हृदय निर्मल और स्वच्छ बन करके और त्याग की प्रवृत्ति बन जाएं, त्यागा प्रवृत्ति जब बन जाती है, तो बेटा! मानव अपने को मानो दानेषु स्वीकार करता है। मेरे पुत्रों! देखो, मुझे बहुत सा काल स्मरण आता रहता है, इस दानेषु के सम्बन्ध में, मेरे पुत्रों! देखो, रहा मानव, तो अपने प्राणों को प्रदान कर रहा है दान में।

कर्ण का दान

मेरे पुत्रों! देखो, यहाँ महाभारत काल में भी, बहुत सी चर्चाएं आती रहती है, बेटा! देखो, जब माता कुन्ती इन्द्र से, दान के लिए पंहुची, तो उन्होंने अपने अस्त्रों शस्त्रों का सर्वत्र दान अपनी वर्णो ब्रहे बेटा! देखो, वह मंगलं ब्रहे देखो, वह असुतं दिव्यां बेटा! वह अपने में प्रदान कर दिया। तो वह अपने में बड़ी प्रसन्न हुई, तो बेटा! इन्द्र ने भी अपने में दानेषु, अपने में जो पुरूषार्थ किया, उसका दान कर दिया था। तो मेरे प्यारे! दान की बड़ी विचित्र महिमा है, बड़े प्रसन्न होते हैं, जब मानव, अपने सु में, अपने दान में परणित कर देता है।

बेटा! देखो, कर्ण के सम्बन्ध में ऐसा कहा जाता ,है श्रवण भी किया गया है कि वह प्रातःकाल की स्वर्ण की मुद्रा देता रहता था, स्वर्णमयी बेटा! देखो, वह दानेषु बना हुआ था। तो विचार आता है, बेटा! जब मानव दान में प्रवृत्ति बन जाती है, तो दान मानो देखो, याग का सबसे प्रथम एक प्रतीक माना गया है।

महाराजा हरिश्चन्द्र का स्वप्न दान का पालन

तो मुनिवरों! देखो, मैंने तुम्हें इससे पूर्व काल में प्रगट किया, यहाँ राजाओं को स्वप्न में दान दे दिया, राष्ट्र को वह प्रदान कर दिया दिवस में, बेटा! तुम्हें प्रतीत होगा, यही रघुवंश प्रणालियों की चर्चा कर रहा था। बेटा! मेरे प्यारे देखो, महाराजा सगर के ही

निचले भागों में महाराजा हरिश्चन्द्र हुए हैं, उन्होंने बेटा! देखो, स्वप्न में विद्यमान हैं, और स्वप्न में एक महात्मा विद्यमान है, और महात्मा कहता है, स्वप्न में क्या तुम मुझे दान दे दो, मुझे याग करना है। मेरे प्यारे! देखो, वह नेत्र जब संसार में आ गएं, स्वप्नवत् को त्याग करके, तो उन्होंने कहा मैने यह राष्ट्र दान दे दिया। मैंने सर्वत्र द्रव्य दानेषु बनाया है। तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने ब्रह्मणे जब साधु ने कहा, कि जब श्रवण किया, यह कहते हैं कि महाराजा विश्वामित्र, जो अपने में जीवन मुक्त होने जा रहे थे, मेरे प्यारे! देखो, वह जब उनके द्वार पर, जब पंहुचे, क्या मुझे दानेषु, उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। आप महात्मा हैं, वह मुझे स्वप्न में दृष्टिपात आ रहे थे, भगवन! मानो आओ मैं आपको दान देना चाहता हूँ। तो मुनिवरों! सर्वत्र, द्रव्य जो राष्ट्र में था, कोष में था, वह सर्वत्र मानो देखो, उन्होंने दान में समर्पित कर दिया। तो बेटा! राजाओं ने अपने दानेषु, परन्तु इसमें एक सम्बन्ध कल्प का आता है। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे वर्णन किया था, कि वह राजा हैं, प्रजा को, दान में देने का, राजा को कोई अधिकार नही होता। मेरे प्यारे! देखो, यहाँ नियम यह भी बना हुआ है, क्या राजा मानो देखो, राजा होते हैं, अपने में इन्द्रियों पर सयंम करने वाले, वह अपनी प्रजा पर भी अनुसन्धान करने वाले हैं, और जो उन्होंने अपने मुखारबिन्दु से कहा, क्या इदन्नम राष्ट्र नही भोगूंगा, यह राष्ट्र मानो मेरा दायित्व, यह महात्मा बन करके रहेगा। तो मानो देखो, वह इस प्रकार की घोषणा करता है, अपने पदों की लोलुपता को त्यागता है, और उसे दूसरों को प्रदान कर रहा है। तो यह दानेषु कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, राजा हरिश्चन्द्र ने मानो ब्रह्मे कृति देवा अपना सर्वत्रतव दान में दे दिया, महात्मा को संकल्प मात्र से कर पाए।

याग के तीन पग

तो मुनिवरों! देखो, राष्ट्र में जा करके, वह अपने में, मानो देखो, सेवा करके, अपने अन्न को पान करने लगे। मेरे प्यारे! देखो, यह दान कहलाता है। मैं दान की चर्चा कर रहा हूँ, यज्ञ करने से, यज्ञ के तीन अंग होते है, तीन पग होते हैं याग के। बेटा! दानेषु,

संगतिकरण और देवपूजा। तो मुनिवरों! देखो, दानात्वं ब्रह्मणा ब्रहे मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने दान में प्रदान कर दिया। ऐसा मुझे स्मरण आता रहा है, महात्मा दधीचि के सम्बन्ध में भी ऐसा कहा गया है,क्या उन्होंने अपनी अस्थियों को, मानो देखो, प्राणियों को प्रदान कर दी, बेटा! यह दानेषु कहलाता है, यह दान कहलाता है, इसके करने से मानव का अन्तरात्मा प्रसन्न होता है, हृदय में प्रफुल्लता आती है, और उसका मानवीय संस्कार ऊर्ध्वा को गमन करने लगता है।

तो मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेषता में ले जाना नही चाहता हूँ, वास्तव में तो जब ऋषि मुनि विचारते हैं, कि प्रभु वह कितना महान है, दानी है, देवता ने कितना दान दिया है, प्रभु, सूर्य प्रातःकाल में उदय होता है, सायंकाल में अस्त हो जाता है। बेटा! ऊर्ज्वा देता ही रहता है, दानात्वा दानं ब्रह्मे लोकां बेटा! वह देता ही रहता है, उसी ऊर्ज्वा में, मानव अपने जीवन को ऊँचा बनाता है, शीतल बनाता है। तो शीतल प्रजा को बनाता है। तो बेटा! यह कैसा दानेषु चल रहा है, यह कैसा दानेषु है, जिसके ऊपर विचारने से, एक गम्भीरता से, उनके अन्तर्हृदय में, हृदय ग्राही बन जाते हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, हमें विचाना यह है, क्या मुनिवरों! देखो, हमें याग में, दान में जो प्राप्त होता है, दान होना चाहिए, धर्मं ब्रह्मे कृतां देवाः बेटा! द्रव्य क्या है? मुनिवरों! देखो, द्रव्य ही वह पदार्थ है, द्रव्य ही मुद्रा है, द्रव्य ही स्वर्ण है, दिव्यं जब ब्रह्मा द्रव्ये वह सर्वत्र मानो प्रभु की सम्पदा है। प्रभु की सम्पदा को जो करता हुआ, स्वीकार करके, बेटा! वह दानेषु बनता है। तो उसका अन्तरात्मा पवित्र हो जाता है। अन्तरात्मा में एक मनोनीतता छा जाती है।

तो मेरे प्यारे! देखो, विचार विनिमय क्या, कि हम दानी बनें, और दान करने से सृष्टि के प्रारम्भ से, दानेषु की प्रवृत्ति मानो देखो, राजा हो, प्रजा हो, सबमें एक दान की प्रवृत्ति चला करती है, जो दानेषु होते हैं, मानो देखो, अपने जीवन को ऊँचा बनाते हैं, ऊर्ध्वा में ले जाते हैं। तो विचार विनिमय क्या आज का हमारा वेदमन्त्र यह कहता है, कि सर्वत्र दानेषु, बेटा! देखो, वह माता के गर्भस्थल में, एक बाल्य पनप रहा है, और पनपता हुआ, माता उसे सुयोग्य बनाती है ।परन्तु जब वह बाह्य जगत में आता है,

बाह्य जगत में भी उसे माता पिता सुयोग्य बनाते हैं। तो बेटा! देखो, यदि वह, उस राष्ट्र का राष्ट्रवेत्ता बन गया है, राजा बन गया है तो बेटा! देखो, माता निरूतर बन गई है। तो माता के द्वारा देखो, वह जो कर्तव्य का पालन किया, वह जो दानेषु बनाया है, अपने पुत्र को, सर्वत्र गुण दे करके बेटा! उसे राष्ट्र को प्रदान कर दिया है। और राष्ट्रं ब्रह्मा वह राजा बन करके, कर्तव्य का पालन कर रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह माता का त्याग है, त्याग प्रवृत्ति को दानेषु कहते हैं, तो बेटा! देखो, राजं ब्रह्मा अपने में देखो, महान बन जाते हैं परन्तु दानेषु कई प्रकार के होते हैं।

मनु वंश के राजा

मैंने तुम्हें कई काल में वार्त्ता को प्रगट करते हुए कहा था, जैसे देखो, महाराजा विश्वामित्र ने वशिष्ठ मुनि महाराज से भी एक लोलुक्ति प्रगट कराई थी। मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ बहुत समय हुआ, जब अयोध्या में बेटा! जब मनु राष्ट्रवेत्ताओं का राज्य पनपता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, महाराजा एक श्रृंगेति नाम के मनु हुए हैं, श्रृंगेति नाम के मनु बेटा! वह अत्त्वा मनु के लगभग वह साढ़े तीन हजारवें पड़ पौत्र कहलाते थे। मेरे प्यारे! देखो, वह पड़पौत्र, वह मुनिवरों! देखो, वह मनु वंश में विद्यमान थे और वह अपने राष्ट्र की जो प्रवृत्ति बना रहे थे क्या मेरे राष्ट्र में कोई भी दीन द्रव्य से, हीन नही होना चाहिए, सब द्रव्यपति होने चाहिएं। राजा के हृदय में मनु वंश में, यह प्रवृत्ति बनी रही, जब बनी रही, तो बेटा! वह राष्ट्र में भ्रमण भी करते थे, समय समय पर।

उत्कल ऋषि महाराज

तो मुनिवरों! देखो, वह भ्रमण करते हुए, एक समय मानो गंगा के तट पर पंहुचे, तो वहाँ बेटा! मुनिवरों! देखो, उत्कल ऋषि महाराज तपस्या कर रहे थे और उत्कल ऋषि महाराज को वेद का अध्ययन करते करते, इतना विवेक बन गया, कि संसार की कोई इच्छा नही रही। वह विवेकी बन गएं, ब्रह्मज्ञान में, अपने को ले जाना, और ब्रह्मज्ञान को उद्गीत रूप में गाना, उनकी प्रवृत्ति बन गई। मेरे प्यारे! देखो, जब प्रवृत्ति बनी, ब्रह्मा ब्रहे राजा देखो, मनु वंश के राजा, अपने मन्त्रियों के सहित, बेटा! राष्ट्र में भ्रमण कर

रहे थे। उन्होंने दृष्टिपात किया, एक गंगा के तट पर देखो, यह वस्त्रों से विहीन या एक प्राणी उद्गीत रूप में गाया, यह कैसा मेरा राष्ट्र हैं, जहाँ गंगा के तटों पर वस्त्रों से विहीन प्राणी रहते हैं। राजा के हृदय में एक वेदना जागरूक हो गई, और वेदना जागरूक होते ही बेटा! उन्होंने अपने महा मन्त्री से कहा कि जाओ, तुम यह द्रव्य ले जाओ, और यह जो द्रव्यहीन है, जो दीन है, उसे प्रदान करो।

दीन को मुद्रा

मेरे प्यारे! देखो, मन्त्री जैसे उसके समीप पंहुचां, तो मन्त्री से उदं ऋषि ने यह ब्रहे मानो यह कहा ब्रह्मण कहो, आईए, मन्त्री जी! उन्होंने कहा भगवन! यह कैसे जाना? उन्होंने कहा मैं अभ्यास करता हूँ। अन्तरात्मा के सम्बन्ध में, उसके विज्ञान में, परन्तु देखो, अमिथ्या यह है, परमात्मा सम्भव मुद्राएं दी हैं राजा ने, इसको स्वीकार करो। बेटा! उन्होंने कहा कि यह तो मेरा कर्तव्य नही है, राजा की मुद्रा लूं, यह मुद्रा मानो किसी दीन व्यक्ति को प्रदान कर दो।

मेरे प्यारे! देखो, राजा, जब मन्त्री ने यह वाक् श्रवण किया ऋषि का, वह वहाँ से भ्रमण करते हुए राजा के समीप आए, राजा से कहा प्रभु! मेरे विचार में तो ऐसा आता है, प्रभु! यह मुद्रा सूक्ष्म प्रतीत है। मेरे पुत्रों! देखो, राजा ने और विशेष मुद्रा दी, वह जब उनके द्वार पर, जब द्वितीय पंहुचे, मन्त्री जी को, उन्होंने वही उत्तर दिया हे मन्त्री जी! किसी दीन को दे दो, यह द्रव्यहीन को प्रदान कर दो। मेरे प्यारे! उन्होंने ब्रह्मा राजा के समीप आए, तो उन्होंने कहा प्रभु! ये स्वीकार नही कर रहे हैं। तृतीय उन्होंने ओर विशेष मुद्रा दीं और वह मन्त्री जब तृतीय समय पर पंहुचे, तो उन्होंने कहा अरे, मन्त्री! मैंने कई समय कहा है, तुम ये किसी दीन को दे दो, द्रव्यहीन को प्रदान कर दो। मैं इसको स्वीकार नही करूंगा। उन्होंने कहा वह द्रव्य को ले करके। तो मुनिवरों! देखो, राजा स्वयं अपने रथ पर विद्यमान हो करके, वहाँ से ऋषि के सम्मुख आया। उन्होंने बेटा! सर्वत्र द्रव्य को प्रदान करने लगे, उन्होंने कहा राजन! मैंने कई काल में कहा है तुम्हारे

मन्त्री से, कि यह किसी दीन को प्रदान कर दो।

ऋषि का साम्राज्य

मेरे पुत्रों! राजा से कहा कि हे ऋषिवर! मेरे राष्ट्र में आपसे दीन कोई नही हैं, उन्होंने कहा राजन! मैं तो राजाओं का भी राजा हूँ। मुझे आप क्यों उच्चारण कर रहे हैं? उन्होंने कहा तो प्रभु! जब आप राजा हैं, तो आपके द्वारा द्रव्य कहाँ हैं? उन्होंने ब्रह्मणां ब्रह्मे कि मैं द्रव्य का क्या करूंगा। उन्होंने कहा तो प्रभु! सेना कहाँ है? उन्होंने कहा राजन तुम्हें प्रतीत होता है, जो परमात्मा के राष्ट्र में चला जाता है, जो परमात्मा के ज्ञान में, मानो देखो, लिप्त रहता है, परमात्मा के राष्ट्र में स्वीकार करता है, तो उसको सेना की आवश्यकता नही हैं, वह सेना क्या करेगी, जब उसका कोई शत्रु नही हैं, उसका सर्वत्र जगत एक मित्र है। उन्होंने कहा भगवन! यह भी चलों, मैंने ऋषिवर! स्वीकार किया है परन्तु जब आप राजा है, धिराज है, राजाओं के भी धिराज हैं, तो उन्होंने कहा प्रभु! द्रव्य कहाँ है? तो उन्होंने कहा राजन! तुम्हें यह प्रतीत है, कि द्रव्य क्या होता है? देखो, जब परमात्मा के राष्ट्र में, जब चला जाता है, तो परमात्मा की सृष्टि को जान करके, उसमें जो द्रव्य है, उसमें जो तरंगें गमन कर रही है द्रव्य की, वह अपने अन्तर्हृदय में कर रही हैं, परमात्मा के आन्तरिक और बाह्य जगत को जान करके, अन्तरात्मा में, जब उसका भान होने लगता है, तो उसको द्रव्य की आवश्यकता नही रहती। मेरे प्यारे! देखो, वह द्रव्य से दूरी चला जाता है, विचार आते हुए कहा, तो प्रभु! मैं जानना चाहता हूँ, द्रव्य कहाँ हैं? मानो राष्ट्र को संचालन करने के लिए। उन्होंने कहा हे भगवन! मेरा जो राष्ट्र है, वह अपना स्वतः साम्राज्य बना हुआ है, मेरा यह मानो शरीर ही साम्राज्य है, इसी में मानो देखो, एक आज्ञा दे रहा है, तो एक सूचना दे रहा है, एक मानो देखो, कृतियों में रत्त हो रहा है, तो कोई आक्रमण को शान्त कर रहा है। यह मानो शरीर एक साम्राज्य है, इसको जाने बिना, हम राष्ट्र को नही जान सकते, ऐसी हमारी मन्तव्य

नीति रही है।

राजा को धन निर्माण की लालसा

तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा, तो प्रभु! आपके द्वारा द्रव्य भी नहीं। उन्होंने कहा द्रव्य मेरा है, मेरे द्वारा एक निर्माण होता है, एक यन्त्र ऐसा है, मैं मानो देखो, उससे द्रव्य का निर्माण कर लेता हूँ। मेरे प्यारे! उन्होंने यह वाक् श्रवण करके, राजा ने नमः करते हुए, अपने वाहन को ले करके, बेटा! अयोध्या में आ गएं। और वह जब सब संसार, जब राष्ट्र निन्द्रा की गोद में चला गया, तो राजा को वही चिन्तन बना रहा, कि ऋषि के द्वारा अवश्य कोई यन्त्र हैं, कोई आसन है, अन्यथा वह मेरे इतने विशेष द्रव्य को क्यों नही स्वीकार कर लेते। तो जब यह विचार आया, तो बेटा! राजा अपने में चिन्तन करता हुआ मध्य रात्रि, मध्य रात्रि में यह विचार आया, कि यदि महात्मा से, हम अपने राष्ट्र में, स्वर्ण का निर्माण करा लें, तो हम द्रव्यपति और स्वर्णपति बन जाएंगें।

मानो देखो, मध्य रात्रि में वह राजा भ्रमण करते हुए, वह राजा, बेटा! वह गंगा के तट पर पंहुचें, तो महात्मा ने कहा कौन है मध्य रात्रि में? राजा ने कहा मैं राजा हूँ। उन्होंने कहा कहो मनु वंश के राजकुमार कैसे आना हुआ? कैसे कष्ट हुआ। उन्होंने कहा प्रभु! मैं इसीलिए आया हूँ, आपको कष्ट देने के लिए, कि आपने मुझे यह कहा था, कि मेरे द्वारा एक रसायन है, उस रसायन से मेरे राष्ट्र को स्वर्ण बना दीजिए। मेरे पुत्रों! महात्मा कहते हैं, हे राजन! बोलो, दीन तुम हो या मैं हूँ। तो मेरे यहाँ मांगने के लिए आए हो, ब्रह्मण द्रव्य कृते। और मेरे से मानो यहाँ नित्य प्रति आया करो, मैं तुम्हारा स्वर्ण अवश्य निर्माणित करूंगा।

त्रिविद्या से संसार

मेरे प्यारे! महात्मा ने स्वीकार कर लिया, राजा ने भी स्वीकार कर लिया बेटा! दोनों का विचार विनिमय होता रहता, और दोनों का अन्तरात्मा के ऊपर, हे राजन! यह जो संसार है यह त्रिविद्या में दृष्टिपात आ रहा है, यहाँ निर्माण करने वाला, निर्माण होने वाली वस्तु, देखो, उसको जानने वाले बनो, यह तीन वस्तुओं से संसार का निर्माण

होता है, संसार का निर्वाचन होता है, मानो देखो, परमपिता परमात्मा रचयिता है, और बनने वाली, दृष्टिपात आने वाला जगत है, और इस जगत को भोगवाद में लाने वाला जीवात्मा है। हे राजन! मानो देखो, इसके ऊपर विचार विनिमय करो, यह संसार, सर्वत्र इसी प्रकार गतिवान हो रहा है। मानो देखो, इस प्रकरण को जानना है, जो कण कण में व्याप्त है, उस परमात्मा को जानना है, जो संसार का विज्ञानवेत्ता है, जिससे विज्ञान का मानो सीमा नही हैं, वह हमारे शरीरों को, माता के गर्भस्थल में निर्माण करता है, यदि वह नही करता, तो माता का ज्ञान होना चाहिए था, कितनी नस नाड़ियां हैं, शरीर में माता उससे वंचित है। तो इससे यह सिद्ध होता है, कि निर्माण करने वाला कोई और ही है। जब माता से यह प्रश्न करता है, कि हे माता! तेरे गर्भ से हमने जन्म लिया है, और हमारे में मानो देखो, दर्शनों से बहत्तर करोड़ और बहत्तर लाख दस हजार दो सौ दो नाड़ियों का निर्माण होता है। निर्माण कौन कर रहा है? क्या तुम्हीं कर रही थी? तो माता को भान नही हैं, निर्माणवेत्ता वह प्रभु है, जब वह निर्माणवेत्ता है तो मानं ब्रह्मे जितना भी जगत है, यह प्रभु की एक सम्पदा है। इस सम्पदा को विचार में लाना चाहिए, इसको त्याग पूर्वक भोगतव्य प्राप्त करना है।

तीन अवस्थाएँ

तो मेरे पुत्रों! देखो, इस प्रकार का जब, ऋषि अमृतं ऋषि राजा का विचार विनिमय होता रहा, और ये विचारने लगे, कि आत्मा है, न आत्मा जाग्रत है, न स्वप्न है, और न सुषुप्ति है। हे राजन! यह आत्मा मानो देखो, जागरूक में, इस संसार का दृष्टा बनी रहती है, ये नेत्र के गोलक जब यह शान्त हो करके, आन्तरिक जगत बन जाता है, तो मानो न इसको निन्द्रा होती है और कुछ मानो जागरूक हो करके यह मध्य की एक अवस्था कहते हैं, सुषुप्ति कहते हैं। सुषुप्ति ब्रह्मणा यह स्वप्न कहलाता है। और वह जो स्वप्न अवस्था है, उसमें संसार में दृष्टिपात कर लेता, चित्त में जो संसार तरंगों के रूप में हैं, उन तरंगों का साकार रूप बनाने वाला, यह मनस्तव कहलाता है। आत्मा के प्रकाश में, क्योंकि यह मन भी जड़ है, जो भिन्न भिन्न वस्तुओं को देखो, यह उनमें

चलायमान है और यह प्राण सत्ता से गतिवान होता है, यह अपने में जड़ है, परन्तु देखो, वह चेतना है, वह प्रभु है, जलं ब्रह्मा देखो, जब यह सुषुप्ति में चला जाता है तो मन भी चला जाता है। अपने मानो चित्त के मण्डलों मानो चित्त के मण्डल में प्रवेश हो करके उसमें कौन जागरूक होता है? प्राण ही जागरूक है। आत्मा के प्रकाश में मानो यह गतिवान होने वाला प्राण में ही, मुनिवरों! यह प्राण ही तो कहलाता है। और यह प्राण ही है, जो अपने में अपनी आभा को रत्त करा रहा है।

तो मानो देखो, हे प्रभु! मानो सुषुप्ति अवस्था क्या है? जब मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार अपनी साम्यावस्था में परणित हो जाते हैं, तो उस समय मानो देखो, यह प्राण के साथ में, यह आत्मा जागरूक रहता है। हे राजन! तू आत्म स्वरूप, उस आत्मा को जानने का प्रयास कर, जो सुषुप्ति में भी जागरूक रहता है, प्रकाशमयी प्रकाश रहता है।

आत्मज्ञता से कल्याण

तो मेरे प्यारे! देखो, राजा को शान्ति की स्थापना होने लगी। उन्होंने कहा राजन! यह मानो देखो, शरीर क्या है? इस शरीर में से यदि आत्मा चला जाएं, तो शरीर शून्यवत को प्राप्त हो जाएगा। मानो देखो, इसीलिए हमें राजन! यह सिद्ध हो गया है, कि आत्मा को जानना ही हमारा कर्तव्य है, आत्मा को जाने बिना हम अपना कल्याण नही कर सकते। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह वर्णन कराया, कि आत्म तत्त्व ज्ञाता बनें। तो मेरे प्यारे! देखो, राजा कौन होता है? राजा वह होता है जो ब्रह्म ज्ञानी के चरणों में विद्यमान हो करके, अपने ब्रह्मवाद की वार्त्ताओं को ग्रहण करके, अपने राष्ट्र को संचालन कर रहा है। अपने राष्ट्र को ऊँचा बना रहा है, जो राजा देखो, महापुरूषों के चरणों में विद्यमान नही होते हैं, उन राजाओं के राष्ट्र में न जाने किस काल में क्रान्ति आ जाएं, रक्तोमयी, विचार आता रहता है। बेटा! मुझे बहुत सा काल स्मरण है, राष्ट्रीयता चर्चा तो बड़ी विचित्रता में गमन करती रही है, परन्तु आज मैं बेटा! आत्म ज्ञान की चर्चा कर रहा हूँ, आत्म ज्ञान क्या है? मुनिवरों! देखो, अपनी अन्तरात्मा को जानना ही, उसके प्रकाश में रत्त रहना ही, आत्म ज्ञान कहलाता है। अपने स्वरूप में ही प्रवेश हो

जाता है।

राजा का स्वर्ण निर्माण

तो मुनिवरों! देखो, जब ऋषि इस प्रकार के उपदेश दे रहा था, जो छह माह हो गए, छह माह में बेटा! देखो, राजा सन्यासी बन गया। राजा महापुरूष बन गया। एक समय, जब उन्होंने योग से, यह दृष्टिपात किया, कि इसका अन्तःकरण इतना दीन नही रहा है। उन्होंने कहा राजन! आप मुझे अवकाश देंगे, तो तुम्हारे राष्ट्र में स्वर्ण का निर्माण करने वाला हूँ। राजा ने नतमस्तिष्क हो करके कहा प्रभु! जो स्वर्ण आप मेरा बनाना चाहते थे, जो राष्ट्र का बनाना चाहते थे, वह स्वर्ण मेरा बन गया है। मानो मेरा अन्तरात्मा अज्ञान में न रहा है, अरे, अज्ञान में ही तो स्वर्णपति बनने की इच्छा होती है। ज्ञान में तो मुनिवरों! देखो, राजा अपनी राष्ट्रीयता को त्याग करके, भयंकर वन में चला जाता है। मेरे प्यारे! क्यों? आत्मा को शान्ति देने के लिए, परमात्मा के राष्ट्र में आए हैं, परमात्मा के राष्ट्र में हमें शान्ति को स्थापित करना है, महानता को लाना है, परमाणुवाद को जान करके, तरंगों में गमन करना है। मेरे प्यारे! देखो, श्रृंगों में, ऐसे ऋषि हुए है। आत्मवेत्ता, जो सूर्य की किरणों के साथ, बेटा! जो सूर्य लोक की यात्रा करने वाले हुए हैं, अपने में, क्योंकि प्रभु का जो विज्ञान है, वह इतना नितान्तर है कि मुनिवरों! देखो, उस विज्ञान के आगे वे शान्त हो जाते है। तो विचार विनिमय क्या बेटा! ये विचार तुम्हें मैं इसीलिए दे रहा हूँ क्या राजाओं ने, त्याग और तपस्या यह दान की प्रवृत्ति है। बेटा! ये दान की प्रवृत्ति है, दान को स्वीकार न करके, उन्होंने आत्मा ज्ञान दिया और ज्ञान में दान दिया।

अमरावती की प्राप्ति

मेरे प्यारे! देखो, राजा ब्रह्मवेत्ता बन गएं। राजा के ब्रह्मवेत्ता बनने के मूल में, मानो देखो, एक दान है, ऋषि का आत्मा का ज्ञान देना, राजा को प्रदान करना, राजा उसमें ब्रह्मवेत्ता बनना, यह सर्वोपरि दानी होता है। वास्तव में दान देने वाला वह ऋषि है, अपनी अस्थियों में, बेटा! देखो, ज्ञान को भरण करता है, इन्हीं अस्थियों में से, मानो

देखो, ज्ञान को बाह्य जगत में लाता है, अरे, संसार को समर्पित कर देता है। अपने जीवन को उससे ऊर्ध्वा में कौन दानवीर हो सकता है। मेरे प्यारे! देखो, मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराया, अपने ऐश्वर्यों को त्याग करके, भयंकर वन में, बेटा! तपस्या कर रहा है, तपस्वी बन रहा है, वह तपस्या में बेटा! देखो, अमृत दे रहा है, अरे, वही तो अमृत देता है, जिसको पान करके, मानो अपने में अमरावती को प्राप्त हो जाता है।

राजा का कर्तव्य

आओ, मेरे प्यारे! विचार क्या कि हमारे यहाँ दानेषु की बड़ी विवेचना है, यह संसार सर्वत्र ही तो दानी है, सर्वत्र दान कर रहा है, एक दूसरे रूप में, मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक प्राणी, अपने जीवन को समर्पित कर देता है, वह दानेषु है। विचार आता रहता है बेटा! एक राजा है, वह राजा कितना ऊर्ध्वा में, मानो देखो, वह दानी, अपने राष्ट्र में देखो, वह स्वतः क्रियाकलाप करता हुआ, कृषि उद्गम करके, अन्न को पान कर रहा है, और समाज को, मानो ऊँचा बनाने के लिए, मेरे पुत्रों! देखो, अनुशासन में लाने का प्रयास कर रहा है, अपने को समर्पित कर रहा है, अपने को, प्रजा को, दान दे करके, मुनिवरों! प्रजा को ऊँचा बना रहा है। मेरे प्यारे! देखो, वह प्राणी, वह राजा, जो मेरे पुत्रों! देखो, प्रजा को अपने पुत्र स्वीकार करते हैं, और अपने को पितर बन करके, बेटा! पितरों की विवेचना करते रहते हैं।

वेदों की नवीनता

तो मेरे प्यारे! ये बड़ा विचित्र एक जगत हैं, मैं विशेषता में तो तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, केवल हमारे विचारों का, एक ही मन्तव्य है, कि मानव को दानेषु बनना चाहिए, दानेषु जो प्रवृत्ति है, वह बड़ी विचित्र है। मेरे प्यारे! संगतिकरण के पश्चात, दानेषु आता है और वह दानेषु बन करके, मुनिवरों! देखो, अपने जीवन को ऊर्ध्वा में पंहुचाना है। ऊर्ध्वा में गमन कराना है। आज का मैं कोई विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ, विचार यह कि वह महापुरूष अपने में कुछ दे करके चले जाते हैं, दान दे करके चले जाते हैं, उससे समाज, आने वाला जो समाज है, उसी की ऊर्ध्वा में गमन करके बेटा!

जीवन को ऊँचा बना रहा है। परमपिता परमात्मा कितना दानेषु है, सृष्टि के प्रारम्भ में बेटा! यह वेदों का ज्ञान दिया, इस ज्ञान को प्राप्त करते करते बेटा! वेद को जानते जानते बेटा! समाज कहाँ चला गया, अरबों वर्षों में भी वह ज्ञान नवीन है, जो अरबों वर्षों पूर्व था, उतना नवीन उस काल में था, उतना ही नवीन आधुनिक जगत में हैं, मेरे प्यारे! आगे आने वाले समाज के लिए भी इतना ही नवीन है, और नवीनता को धारण करते चले जाओ, क्योंकि ज्ञान में वृद्धपन नही आता है, ज्ञान वृद्ध नही होता, ज्ञान सदैव युवा बना रहता है, ज्ञान सदैव नम्र बना रहता है, अरे, नम्रता को धारण करते हुए, तुम और देखो, अपने में नम्रता को धारण करो, दूरिता को त्याग करके, बेटा! दानेषु बन जाओ, बेटा! महान बनो, यह आज का हमारा वाक् क्या कह रहा है, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, दानेषु की चर्चा करते हुए जीवन में, अपने बेटा! शरीरों को, राष्ट्र को, प्रदान कर देते हैं, प्रजा को शिक्षा दी, राष्ट्र को महात्मा को प्रदान कर दिया। मैं इदन्नमम, मैं नही चाहता, इस वाक् को। मेरे प्यारे! समाज व्याकुल हो रहा है राजा त्याग में जा रहा है, समाज रूधन कर रहा है, वह दान दे रहा है। वह अपने ऐश्वर्य का दान देता है, राष्ट्र को कोई दान नही देता। राजा को, जो अपना ऐश्वर्य, जो उसकी मान मर्यादा हैं, सर्वत्र दानेषु बना देता है।

तो यह है बेटा! आज का वाक्, मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह, क्या मुनिवरों! देखो, याग में तीन वस्तु होती है, सर्वत्र जगत ही, तीन प्रकार याग से, देखो, तीन वस्तु प्राप्त होती हैं, उसे ब्रह्माण्ड से माप देते हैं। बेटा! सबसे प्रथम देव पूजा, देव पूजा में चैतन्य और जड़ दोनों देवता आ जाते हैं, संगतिकरण में मानो तारामण्डलों की चर्चा, तो मानो मेरी रह गई है। विवेचना करता रहूँगा बेटा! समय आता रहेगा, मानो देखो, यह तो विचारों का वन है, वन में जाने के पश्चात, मानव नवीन नवीन वस्तुओं को प्रदान करता रहता है। इसी प्रकार देखो, ब्रह्मणे देखो, जब एकत्रित होते हैं, तो वह संगतिकरण कहलाता है, साकल्य से ले करके, होता तक और होताओं से ले करके, बेटा! देखो, तारामण्डलों तक, ये सब संगतिकरण कहलाता है, यह मापने का है। मानो देखो, दानेषु ब्रह्मे अव्रतं

ब्रह्मे देखो, वह जो हमारा देवपूजा है, उसमें देखो, अपने पूर्वजों से ले करके, और मुनिवरों! देखो, वृक्षों तक में माप लेता है, कि यह सब देवता है, देवतव हैं, तारामण्डलों को भी माप लेता है। बेटा! दान में इस पृथ्वी को माप करके, और पृथ्वी को मानो देखो, पृथ्वी का राजा बनो, तपस्या करके, राजा बन करके दानेषु बन जाता है।

वामनावतार के तीन

मेरे प्यारे! देखो, जब यह तीन पगों में, यही तो मानो देखो, वामनावतार के तीन पग कहलाते हैं, तीन चरण हैं, जिन चरणों से बेटा! देखो, उन्होंने राजा बालि से राज को माप लिया था, बेटा! ब्रह्माण्ड को, उसमें सबसे प्रथम बेटा! द्यौ लोक में मापा और द्वितीय में भुवः लोक को माप करके बेटा! अन्त में पृथ्वी रह गई है, एक भाग में, मेरे पुत्रों! देखो, जैसे विज्ञानवेत्ता, मुनिवरों! देखो, ये तीन प्रकार के परमाणुओं को माप लेता है, गुरूतव, तरलतव और मुनिवरों! देखो, तेजोमयी, ये तीन पग हैं, मुनिवरों! देखो, मापने के जब तीन परमाणुओं को विज्ञानवेत्ता जान लेता है, तो वैज्ञानिक बन जाता है, रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण तीनों को जान लेता है। तो बेटा! विवेकी पुरूष बन जाता है। मेरे प्यारे! देखो, अ उ और म देखो, ओ३म् की तीन मात्रा को जान करके, वह वेद के अन्तिम मर्म को जान लेता है। यह परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाता है।

देवताओं का कर्तव्य

तो बेटा! यह संसार त्रिवर्धा कहलाता है, और त्रिवर्धा में ही, मुनिवरों! देखो, देवताजन, इस पृथ्वी को मापते रहे हैं, और माप करके इसको त्यागते रहे हैं, और दूरिता का विनाश करते रहे हैं, इसे प्रकाश में लाने का सदैव प्रयास होता रहा है। यह है बेटा! आज का वाक्, मैं विशेष चर्चा, तुम्हें प्रगट करने नही आया हूँ, व्याख्याता नही हूँ, परिचय देना, हमारा कर्तव्य है। बेटा! आज का विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है, कल समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगे । ओ३म् देवाः आभ्यां रथं वायाः। ओ३म् यशश्चं ग्राहणां त्वा यम वरुणा आपाम्। ओ३म् दधि प्रा आपो रथाः। अच्छा भगवन्!

आज्ञा। दिनांक 05 11 1988, स्थान श्री सहगल जी, 3 ई 31, लाजपत नगर, नई दिल्ली 110024।

३ 14 04 1989 पुष्प 60

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परगतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं और जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मरे देव दृष्टिपात आता रहता है क्योंकि वह अनुपम है महिमावादी है और इस ब्रह्माण्ड के पिण्ड रूप में वह विद्यमान है जितना भी यह चेतनामयी जगत है इसमें वह ओत प्रोत हो रहा है। आत्मा ब्रह्मणां ब्रहे कृतं देवाः वेद का मन्त्र कहता है वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है दो प्रकार का जगत हमारे यहां माना गया है। एक जगत है जिसे हम चैतन्य कहते हैं और दूसरा जगत जड़वत माना गया है दोनों के स्वरूप में वे परमपिता परमात्मा विद्यमान रहता है वह कैसा देव है कैसा अनुपम है? वह पिण्ड रूप और चैतन्यवत दोनों में विद्यमान है।

आओ मेरे पुत्रों! वेद का मन्त्र हमें क्या कह रहा है वेदमन्त्र कहता है कि हम दोनों प्रकार के जगत को जानने का प्रयास करें क्योंकि दोनों प्रकार के जगत में परमपिता परमात्मा की अनन्तमयी महिमा प्रायः दृष्टिपात आती रहती है जब हम इसके ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ करते हैं तो प्रायः एक अनूठा जगत, एक अनुपमता हमारे समीप आनी प्रारम्भ हो जाती है मेरे पुत्रों! मैं विशेषता में नही ले जा रहा हूँ तुम्हें इन वाक्यों में ले जाना चाहता हूँ यह तो अनन्तमयी एक प्रीति मानी गई है जहां उस परमपिता परमात्मा को हम पुरोहित और विष्णु के रूप मे वर्णन करते रहते हैं क्योंकि परमपिता परमात्मा का जो अनन्तमयी जगत है वह दो प्रकार की आभाओं में निहित हो रहा है। एक जड़म् ब्रह्मा एक वृत्यं दिव्यां उस परमपिता परमात्मा को विष्णु कहते हैं वह विष्णु के रूप में

विद्यमान रहता है जब हम विष्णु की विवेचना प्रारम्भ करते हैं हे विष्णु तू कल्याणकारी है हे विष्णु तू अनन्तमयी विद्यमान है हमारे यहां वैदिक साहित्य में वेद के मन्त्रों में विष्णु नाम परमपिता परमात्मा को माना है हमारे यहां प्रयार्यवाची जब शब्द आते हैं तो विष्णु की बहुत सी विवेचनाएं होती रहती हैं हमारे यहां कहते हैं विष्णुं ब्रह्मा मूल में एक वाक् आता रहता है परन्तु उसका जो वृक्ष बनता है वह अनन्तमयी कहलाता है जो एक एक कण कण में व्याप्त है आेर वह नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थों के द्वारा हमारा पालन कर रहा है, निर्माण कर रहा है वह निर्माणवेत्ता भी है पुत्र की जब रचना होती है तो माता से यह प्रश्न किया जाएं कि हे माता तू निर्माण कर रही है अथवा नही तो माता निरूत्तर हो जाती है कि मैं निर्माण नही कर रही हूँ निर्माण करने वाला कोई और ही द्वितीय कहलाता है वह परमात्मा विष्णु कहलाता है आेर वह निर्माण कर्त्ता आेर पालन करने वाला है।

मुनिवरों! हमारे यहां मूल में एक वाक् आया कि पालन करने वाला परन्तु देखो, ब्रह्मणां ब्रव्हा कृतं लोकाः वायु सम्भव ब्रह्मा माता का नाम भी विष्णु कहा जाता है हे माता तू पालन कर रही है तू अपनी लोरियों का पान कराती हुई उसका पालन कर रही है और पालना में जो रत्त रहने वाला है पालनामयी जो ज्योति है वह ममतव कहलाती है माता उसका पालन कर रही है लोरियों का पान कराती उसे ज्ञान देती है, विवेक में परणित करा देती है। वही ममतव को धारण करने वाली अभ्यं ब्रह्मणा अभप्रव्हे देवं ब्रह्माः मेरे पुत्रों! देखो, माता सतोगुण से उसका पालन कर रही है रजोगुण से शासन हो रहा है तमोगुण उत्पति का मूल कहलाता है विचार विनिमय क्या? वही सतोगुण है वही रजोगुण है वही तमोगुण कहलाता है यह जगत एक दूसरे का पूरक कहलाता है एक दूसरें में पिरोया हुआ सा दृष्टिपात आता है। सतोगुण में पालना है और यदि रजोगुण में भी सतोगुण मिश्रित नही होगा। और दोनों की तरंगें यदि तमोगुण में ही हांगी तो उत्पति का मूल भी नहीं बन पाएगा। विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, वही रजोगुण वही तमोगुण वही सतोगुण एक ही सूत्र के तीनों मनके कहलाते हैं। आेर उन मनकों कीमाला

बन जाती है।

मेरे पुत्रों! आओ मैं तुम्हें एक ऋषि के आश्रम पर ले जाना चाहता हूँ जहां ऋषिवर अपने में विचार विनिमय और अन्वेषण करते रहे हैं बाल्यं ब्रह्म आज का वह दिवस कहलाता है नानमम् ब्रह्म जहां महापुरूषों की उत्पति का मूल बन जाता है आज मैं तुम्हें ऐसे क्षेत्र में ले जाऊंगा जहां ऋषि मुनि अपने में बड़ा अन्वेषण ओर अनुसन्धान करते रहे हैं माता कौशल्या का जीवन मुझे स्मरण आता रहता है। उनके जीवन में कितनी प्रतिभा रही है कितनी विचित्रता रही है जिसके ऊपर हम प्रायः अपने में विचार विनिमय करते रहते हैं यहां मूल उत्पति का पालना करने की कितनी ऊर्ध्वा में सीमा होती है वास्तव में कोई सीमा नही होती कि कितनी पालनाकर सकता है प्राणी। आज मैं तुम्हें त्रेता के काल में ले जाना चाहता हूँ जिस काल में मानव अपने में बड़ा अन्वेषण ओर विचार विनिमय करता रहा है। माता कौशल्या ने एक नियम बनाया था। जब पुत्रेष्टि याग हुआ तो याग होते समय नियम बनाया कि मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूंगी क्योंकि जब यज्ञमान याग करता है तो यज्ञमान अपनी दक्षिणा प्रदान करता है जब पुत्रेष्टि याग हुआ तो उस समय कौशल्या दक्षिणा प्रदान करने लगी दक्षिणा जब प्रदान करने लगी तो ऋषि ने कहा हे दिव्या हम द्रव्य की दक्षिणा नही चाहते। हमें तो दक्षिणा दीजिए कि अब जो राष्ट्र है यह रसातल को जा रहा है। यहां आलस्य और प्रमाद बलवती होता जा रहा है रघुवंश ओर राजा रघु का जो राज था महाराजा दिलीप की जो उत्तम प्रणाली थी उसमें सूक्ष्मवाद आ गया है। माता कौशल्या बागली ऋषिवर पूज्यपाद जो तुम चाहते हो वर्णन करो। उन्होंने कहा तुम्हारे गर्भ से एक ऐसे बाल्य का जन्म होना चाहिए जो त्याग और तपस्या में ही परणित होने वाला हो। माता कौशल्या ने वह स्वीकार कर लि। ओर उन्होंने कहा कि भगवन! मैं तपस्या में ही अपने जीवन को व्यतीत करूंगी। मैं राष्ट्र का अन्न नही ग्रहण करूंगी। वह उन्होंने संकल्प किया। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है कि कैसे उन्होंने अपने में संकल्प किया और अपने गृह में वास करने लगी।

जब उस शरीर में आत्मा वृत्तियों में रत्त हो रहा था तो राजा को यह प्रतीत हुआ कि

कौशल्या राष्ट्र अन्न ग्रहण नही कर रही हैं और वह बड़ा एक पापाचार बन जाएगा यदि राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं किया। वे स्वयं कला कौशल करके उसके बदले जो द्रव्य आता उसी से अन्न इत्यादि ले ककरे अपने उदर की पूर्ति करती रहती। स्मरण आता रहता है कि राजा ने एक समय कौशल्या जी से कहा कि हे देवी! तुम राष्ट्र का जो अन्न होता है वह रजोगुण ओर तमोगुण से सना हुआ अन्न होता है इसीलिए मैं उसको ग्रहण करना नही चाहती। क्योंकि रजोगुण तमोगुण अन्न हमारे अन्तःकरण विचारों तरंगों के लिए पवित्र नहीं होता राजा ने बहुत नम्रता से भी कहा परन्तु कौशल्या ने यह स्वीकार नहीं किया। अन्तिम परिणाम यह हुआ ब्रह्मणां ब्रह्मा कृतं बेटा! सांयकाल का समय था राजा ने कहा कि मैं वशिष्ठ और माता अरूणधती से आग्रह करूंगा तो ये अन्न ग्रहण कर सकेंगीं। राजा दशरथ अपने वाहन में विद्यमान हो करके भयंकर वनों में जहां महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ओर माता अरूणधती अपने विद्यालय में वास करते थे वह उनके द्वार पर पंहुचें पूर्णिमा का चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त था माता अरूणधती और वशिष्ठ मुनि महाराज एक स्थली पर विद्यमान होकर कुछ चर्चा कर रहे थे। राजा दशरथ भी उन चर्चाओं को ग्रहण करने लगें।

माता अरूणधती ने कहा हे प्रभु! यह चन्द्रमा कैसा प्रकाशमयी है मानो अपने में प्रकाशमान है? वशिष्ठ मुनि बोले कि हे देवी! तुम्हें यह प्रतीत है कि आज पूर्णिमा का चन्द्रमा है ओर यह पूर्ण शौडस कलाओं से युक्त है यह समुद्रों से अमृत को लेता है ओर उसकी वृष्टि कर देता है चन्द्रमा समुद्रों का अधिपति कहलाता है यह चन्द्रमा अमृत को बहाने वाला है हे देवी! तुम्हें यह प्रतीत हो गया है कि यही तो पृथ्वी के गर्भ में साम बन करके अमृत को प्रदान कराता रहता है यही चन्द्रमा की कान्ति है जो माता के गर्भस्थल में जब शिशु होता है तो उसे अमृत प्रदान करता है यही सोम बन करके अमृत को बहाता रहता है यह अपनी शोडस कलाओं से युक्त है हे देवी! इनका समुद्रों से मिलान होता है समुद्रों से अमृत लेता है, नाना वनस्पतियों को सौम्य बनाता है माता अरूणधती बड़ी प्रसन्न हुई उन्होंने कहा प्रभु! धन्य है मैं यह जानना चाहती हूँ कि एक वशिष्ठ मण्डल है और एक अरूणधती मण्डल है और एक वशिष्ठ मण्डल है यह अन्तरिक्ष में

वास करने वाले हैं चन्द्रमा से ऊर्ध्वा गति गमन करने लगते हैं और यह मानो अपनी परिधि में भ्रमण करते रहते हैं जब भी कोई विज्ञान के वाङ्मय में प्रवेश करता रहा है, विज्ञान में रत्त होता रहा है उसी समय यह चन्द्रमा ब्रह्म देखो, वशिष्ठ और अरूणधती दोनों की कान्तियां पृथ्वी मण्डल पर ये बुद्ध के माध्यम से होती आती हैं और उसको वैज्ञानिकजन अपने में ग्रहण करते हैं और यन्त्रों का निर्माण करते हैं देवी! जब हम जैसे पुत्र माता के गर्भस्थल में होते हैं तो सप्त माह में दोनों मण्डलों की कान्तियां आती रहती हैं और उन कान्तियां को ग्रहण करते हुए अमृतं ब्रह्मणं ब्रव्हे कृतं गर्भ में विद्यमान बाल्य में बुद्धि का निर्माण करते हैं। बुद्धि का वृत्तिका का जन्म होता है। यदि उस माह में माता के गर्भ में यदि विद्या लं ब्रहे पृथक होता है तो उसे जीवन शक्ति प्राप्त नही होती। यह जीवन की आभा का निर्माण करने वाले हैं। प्रभु ने इस ब्रह्माण्ड को और पिण्ड को दोनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया है। विचार विनिमय करते उन्होंने कहा हे प्रभु! यह जो चन्द्रमा है इसका मूल क्या है? उन्होंने कहा हे प्रभु! यह जो चन्द्रमा है इसका मूल क्या है उन्होंने कहा चन्द्रमा का मूल सोम है उन्होंने कहा सोम का मूल क्या है? उन्होंने कहा सोम का मूल यह सूर्य कहलाता है क्योंकि सूर्य से जो कान्तियां आती हैं वे शीतल बन जाती हैं वे अमृतमयी बन जाती हैं इसकी उत्पति का मूल सूर्य कहलाता है। क्योंकि सूर्य से जो कान्तियां आती है वे शीतल बन जाती हैं अमृतमयी बन जाती हैं इसकी उत्पति का मूल सूर्य कहलाता है सूर्य से नाना प्रकार के किरणों आती रहती हैं। यही सोम बन करके कृषि को ऊर्ध्वा में गमन कराती रहती हैं और खनिज और खाद्य में भी यही विद्यमान रहत है। मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो माता अरूणधती मौन हो गई। इसी विचार में प्रातःकाल हो गया।

प्रातःकाल होते ही महर्षि वशिष्ठ और अरूणधती अपने आसन से पृथक हुए और अपनी क्रियाओं से निवृत्त हुए उससे पूर्व राजा दशरथ उनके समीप जा पंहुचें। महर्षि वशिष्ठ बोले कि हे राजन! तुम किस काल में पधारे हो? उन्होंने कहा प्रभु! मैं तो सांयकाल आ गया था परन्तु तुम्हारे विचार इतने गम्भीर हो रहे थे मैं उनसे इतना मग्न हो गया

कि मुझे कोई प्रतीत नही हुआ। वे बड़े मग्न हुए और मंगलम् ब्रव्हे राजा से कहा कहो भगवन! कैसे आगमन हुआ? उन्होंने कहा प्रभु! मैं इस समय बड़ा आपतकाल में हूँ। वशिष्ठ बोले कि क्या आपातकाल है? उन्होंने कहा कि माता ब्रह्मणे व्रतं देखो, माता अरूणधती और आप दोनों को मैं चाहता हूँ कि राष्ट्र गृह में जा करके कौशल्या जी को शिक्षा दो क्योंकि कौशल्या जी राष्ट्र का अन्न ग्रहण नही कर रही हैं। वे क्षुधा से पीड़ित रहती हैं अथवा नही इसको मैं जान नही पाया हूँ उन्होंने यह वाक् स्वीकार किया और अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके और वाहन में विद्यमान हो करके वहां से गमन किया। भ्रमण करते वे राष्ट्र गृह में आ पंहुचें पदार्पण हुआ तो एक आनन्दवत् छा गया। ब्रह्मवेत्ता का राष्ट्र में आगमन होना एक सौभाग्य था राष्ट्रगृह में आना और भी सौभाग्य था वे कौशल्या जी के समीप पंहुचें। माता कौशल्या जी ने उन्हें तीन आसन प्रदान किए एक राजा का, एक माता का और एक पितर का। जब वे आसन पर विद्यमान हो गएं तो उन्होंने बारी बारी चरणों वे आसन पर विद्यमान हो गएं और उन्होंने बारी बारी चरणों को स्पर्श किया और भगवन! आज कैसे मेरा सौभाग्य जागरूक हो गया है, मैं कितनी सौभाग्यशालीनि हूँ हे भगवन! आप उद्गीत गाईए कैसे आगमन हुआ है बिना सूचना के बिना कारण के? महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले देवी तुम शान्तमं ब्रव्हे कृतां वे शान्त विद्यमान हो गई। महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि हे दिव्या! हे पुत्री! तुमसे हम कुछ प्रश्न करना चाहते हैं। कौशल्या जी ने कहा भगवन! जो आप मुझे आज्ञा दोगे उसका मैं आदर उसको मैं अपने में धारण करूंगी। उन्होंने कहा तो हे दिव्या हमने यह श्रवण किया है कि तुम राष्ट्र का अन्न ग्रहण नही कर रही हो। उन्होंने कहा प्रभु! मैं नही कर पा रही हूँ। उन्होंने कहा क्यों? उन्होंने कहा इसीलिए कि मैं अपने गर्भ स्थली में ऐसी महापुरूष सन्तान को जन्म देना चाहती हूँ जिससे वह त्याग और तपस्या में अपने जीवन को व्यतीत करें। मेरी यह कामना है उसी कामना में मैं सदैव तत्पर रहती हूँ। प्रभु जब उन्होंने ऐसा कहा हे ब्रह्मणे वह हे पुत्री! हमारी इच्छा यह है कि तुम राष्ट्र के अन्न को ग्रहण करो। उन्होंने कहा प्रभु! मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नही करूंगी। यह मेरा संकल्प हो गया है और जो परमात्मा का जगत है यह संकल्पों में निहित रहता है। यदि

परमात्मा का यह संकल्प है जब परमात्मा ने तप किया था, तपस्या में बहुदा ब्रह्म एको बहुधा की इच्छा बनी तो यह ब्रह्माण्ड नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में परणित हो गया। हे प्रभु! यह प्रभु का संकल्प है। जितनी आयु उन्हें प्रदान की है वे उतनी आयु में रहेंगें उतने समय उनका पिण्ड बना रहेगा। प्राण सत्ता चली जाएगी प्राण छिन्न भिन्न हो जाएगा। प्रभु! संकल्पोमयी यह संसार है और मैं अपने संकल्प को नष्ट नहीं करूंगी। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने जब यह श्रवण किया तो वे निरूतर हो गये। मेरे प्यारे! देखो, माता अरूणधती ने कहा हे दिव्या! हे पुत्री हमारी इच्छा ऐसी है कि तुम राष्ट्र के अन्न को ग्रहण करो। क्योंकि राष्ट्र का अन्न ग्रहणा करना तुम्हारे लिए बहुत अनिवार्य है। उन्होंने कहा मातेश्वरी! कारण? क्यां अनिवार्य है उन्होंने कहा मातेश्वरी कारण? क्यों अनिवार्य है तुम राष्ट्र का अन्न इसीलिए ग्रहण करो ब्रह्मे वासस प्रहे, राजकुमार का जन्म होना चाहिए। उन्होंने कहा कि ममत्वाम् ब्रह्म माता की यह इच्छा नही हैं तस्यम् ब्रह्मणां वाचन नमः कृति लोकां जो इस प्रकार की सन्तान को जन्म दे। मेरी यह कामना है मेरी यह इच्छा है कि त्याग और तपस्या में पुत्र को जन्म देना चाहती हूँ। माता अरूणधती ने कहा नहीं तुम राष्ट्र के अन्न को ग्रहण करो। उन्होंने कहा मातेश्वरी। तुमने यह श्रवण नही किया कि प्रभु ने हमारे तुम्हारे शरीर का निर्माण किया है और यह माता पिता का संकल्प मात्र ही है। यदि हम यह उच्चारण करने लगेंगें कि यह माता की सम्पदा है या पितर की सम्पदा है यह सम्पदा है उसको जिसने निर्माण किया है और उस निर्माण करने वालों ने संस्कारों के आधार पर इसका निर्माण किया है और उन्हीं आधार पर य हजीवन का विपरीत होता रहेगा हे मातेश्वरी यदि यह विकृत हो जाएगा और यह भिन्न भिन्न हो जाएगा संकल्पों में ही मानो संसार समाप्त हो जाएगा। माता अरूणधती भी मौन हो गयी। वशिष्ठ पुनः बोले कि हे पुत्री! राष्ट्रीय अन्न कोई दोषारोपण नही होता। उन्होंने कहा प्रभु! मैं स्वयं कला कौशल् कर लेती हूँ और उसके बदले जो अन्न आता है उससे मैं अपने उदर की पूर्ति कर लेती हूँ। हे प्रभु! आप तो यह जानते हैं कि क्योंकि ब्रह्मवेत्ता हैं और ब्रह्मवेत्ताओं की बुद्धि बड़ी प्रखर होती है और बड़ी ऊँची वह उड़ान उड़ती रहती है इस उड़ान के साथ तुम्हारे लिए यह बहुत अनिवार्य हो जाएगा कि

प्रत्येक मानव एक संकल्प है। पुत्र का जन्म होता है आत्मा किसी का पुत्र नही होता है न पुत्री होती है। न यह शरीर किसी का पुत्र होता है परन्तु यह क्या है? यह माता पिता का संकल्पोंमयी पुत्र कहलाता है। पुत्र की संज्ञा केवल संकल्प मात्र से है यदि वह संकल्प समाप्त हो जाएं या विकृत हो जाएं तो एक प्रकार की एक विडम्बना ऐसी उत्पन्न हो जाएं जिसको हम जान नही पाते। कौशल्या जी ने कहा पुत्री इसी प्रकार का संकल्प है। राजा भी एक प्रकार का संकल्प है प्रजा का संकल्प मात्र है। इसी प्रकार माता भी संकल्प मात्र है पितर भी संकल्प है। यह सूर्य भी एक प्रकार का संकल्प है अरूणधती मण्डल भी एक प्रकार का संकल्प है ध्रुव भी संकल्प है हे भगवन! हे मातेश्वरी! हे पितर! हे आचार्य! हे ब्रह्मवेत्ता! तुम जानते हो कि यह सर्वत्र जगत केवल संकल्प मात्र कहलाता है। उन्होंने पुनः कहा हाँ एक वाक्य मैं स्वीकार कर सकती हूँ यदि हे पितर यदि आपका और माता का दोनों का संकल्प नष्ट हो जाएं तो मैं भी अपने संकल्प को नष्ट कर सकती हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज मौन हो गएं और मौन हो करके उन्होंने कहा कि तन्वनम ब्रह्म पुत्रों! सम्भवा उन्होंने कहा, तुम्हारा संकल्प पूर्ण हो पुत्री। उन्होंने कहा ब्रह्मणे व्रताः मुनिवरों! देखो, उन्होंने अपने आश्रम को गमन किया औरउन्हें जब राजा प्राप्त हुए तो उन्होंने राज से कहा हे राजन्! यह तो संकल्प है आचार्य के द्वारा उन्होंने संकल्प किया हुआ है औैर संकल्प उनका नष्ट नही होना चाहिए। यदि संकल्प चला गया तो प्राण चला गया। तो मानवता चली गई हे राजन! तुम संकल्प में देवी को रहने दो। तुम अपने क्रियाकलापों में परणित हो जाओ। उस समय राजा भी मौन हो गया।

कुछ समय के पश्चात, आज का वह चार तिथि और दिवस कहलाता है जहां राम जैसे महापुरूषों का जन्म हुआ। महापुरूषों के जीवन की गाथायें होती हैं, उसमें कोई विशेषताएं होती हैं। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे प्रेरणा दी और उस प्रेरणा के आधार पर वाक्म ब्रह्माः मेरे पुत्रों! देखो, यह रचना अपने में बड़ी विचित्र बन करके रहती है। हे मानव! तू अपने जीवन में महानता के लिए सदैव गमन करता रहे इसी में तेरे जीवन

की प्रतिभा बन करके रहे। विचार विनिमय क्या? रामम् ब्रह्मे कृतं माता कौशल्या के गर्भ से पुत्र का जन्म हुआ और जन्म होते ही उन्होंने अपने में ओ३म् का उद्गीत गाया। बाल्य जब जन्म लेता है माता के गर्भ से वह स्वरों में देव भाषा में देव का रूदन करना प्रारम्भ कर देता है मानो देखो, अपने में ब्रह्मणा सम्भवे बाल्य का जन्म हुआ। आज अपने विचारों को देता मैं बहुत दूरी चला गा हूँ। विचार यह दे रहा था कि वेद का मन्त्र हमें यह उद्गती गाता है कि हे मानव! तू संकल्पवादी बन करके उस प्रभु की रचना को विचारने वाला बन। प्रभु का यह ब्रह्माण्ड रचा हुआ है जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है तो परमपिता परमात्मा की उग्र क्रिया से क्योंकि उग्र क्रिया का नाम तप कहलाता है उग्र क्रिया का मानवीय तप कहलाता है। परमपिता परमात्मा ने जब सृष्टि की रचना की तो प्रभु! का संकल्प मात्र ही एक उग्र क्रिया बनी तो प्राण सत्ता गतिवान हो गई। जब रेतसः अपने में गतिवान हुआ तो प्राण ने उसका पिण्ड बना दिया और पिण्ड के रूप में ये लोक लोकान्तर दृष्टिपात आते रहते हैं।

आओ मेरे प्यारे! देखो, मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हम अपने में महान बनने का प्रयास करें संकल्पोंमयी जगत, संकलों में अपने में अपने में महान बनाने का प्रयास करें। विचार आता रहता है कि वेद का मन्त्र कहता है कि जितनी भी यह जड़ जगत और चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है। उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में वह मेरा प्रभु दृष्टिपात आता रहता है वह पुरोहित है वह धन्य कहलाता है। वह महान और पवित्रतं में रत्त रहने वाला है हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते हुए अपने में महानता में गमन करते रहें यह है बेटा! आज का वाक्, अब समय मिलेगा तो मैं तुम्हें शेष चर्चायें कल प्रगट करूंगा। अब वेद का पठन पाठन होगा। इसके पश्चात यह वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। ओ३म् दवा आभ्यां रुद्रा शा मामृहि तमत्वा वाचन्नमः ओ३म् देवं भद्राः वायु रथं आपाः ओ३म् संजना वायु गतं आपाः ऋषिः

४ 11 05 1989 पुष्प 61

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों

का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा आत्मा में वास करने वाला है। हम उस परमपिता परमात्मा को अपनी अन्तरात्मा में सदैव धारयामि बनायें रहें जिससे हमारा अन्तःकरण और मानवीयता पवित्रता की आभा में सदैव रत्त रहे उसी में रमण करती रहे।

मानव परम्परागतों से ही, नाना आश्चर्यों में रत्त रहा है और यह विचारता रहता है कि मेरी संसार में मृत्यु नही होनी चाहिए। आज मुझे कहीं से यह प्रेरणा प्राप्त हो रही है कि मृत्यु के सम्बन्ध में कुछ अपना विचार विनिमय दिया जाएं। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें यह निर्णय देते हुए कहा था कि जब मानव वेद रूप प्रकाश में रत्त हो जाता है तो वह मृत्युञ्जय ब्रह्मणां ब्रव्हा वृत्यं वेद का वाक्य कहता है कि वह मृत्यु क्या है परन्तु वेद का हमारा शब्द यह उत्तर देता है यम समम ब्रव्हो सभवप्रव्हा ब्रह्मे मानो वेद का द्वितीय मन्त्र उसकी आख्या में कहता है कि मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नही होती क्योंकि मृत्यु संसार में अभाव होता है। और मानव को अपने में यह विचारता रहता है कि मेरी मृत्यु नही होनी चाहिए। यह एक बड़ा आश्चर्य वृत है क्योंकि मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नही होती सईराम भवतं भविताः ब्रह्मणो लोकाः वायु मानो वह अपने में महान पवित्रता में रत्त होता हुआ मेरे प्यारे! देखो, अपने भोगवाद में वह रत्त रहता है। तो विचारना यह है कि संसार में मृत्यु नही होती। एक माता रूदन कर रही हे और वह कहती है कि मेरा पुत्र नही रहा संसार में। वह रूदन कर रहा है और एक दार्शनिक महापुरूष पंहुचता है और वह कहता है कि हे दिव्या! तू व्याकुल क्यों हो रही है? माता कहती है कि मेरा पुत्र मृत्यु को प्राप्त हो गया हैं परन्तु वेद का ऋषि यह कहता है कि आत्मां ब्रह्मणो शरीराणां ब्रह्वी कृतं लोकां कि क्या यह जो मानव का शरीर शव है यह तेरा पुत्र है या आत्मा तेरा पुत्र है इन दोनों को माता एक स्वरूप में जान नहीं पाती और अन्त में मौन हो जाती है। दार्शनिक कहता है कि देवी! तुम मौन क्यां हो गई हो? उन्होंने

कहा मैं मौन इसीलिए हूँ कि मैं जानती नही आत्मा को आत्मा कितने आकार वाला है कितना संस्कार उसके साथ कटिबद्ध हो रहा है? और शरीर मेरे समीप विद्यमान है वह शव के रूप में हैं इसीलिए मेरा रूदन करना व्यर्थ बन जाता है। परन्तु ब्रह्मणा कृतं लोकां अपने में अपनेपन का भान होना चाहिए। जिससे मानव अपनी मानवीयता में सदैव रत्त होता रहे।

आज का विचार हम विशेषता में तो ले जाना नही चाहते हैं केवल विचार विनिमय यह कि संसार में से आत्मा इस शरीर को त्याग करके कहां चला जाता है? यह प्रसंग प्रत्येक मानव के समीप रहता है परन्तु वेद ने एक उत्तर दिया बड़े ऊर्ध्वा में गमनं ब्रह्मे ऊर्ध्वा रुद्र भागाः प्रमाणां ब्रहे संसमवृत्ति वेद का वाक्य कहता है कि मानव के जो भी किए हुए कर्म हैं। मानो पाप और पुण्य की प्रतिभा में वह उसके चित्त के मण्डल में विद्यमान हो जाते हैं उनको ले करके आत्मा अपने चित्त के मण्डल में प्रवेश कर जाता है वेद का वाक्य बेटा! यह भी कहता है सम्भूतो ब्रह्माः कुछ आत्माएं ऐसी होती हैं जो ब्रह्म मण्डल में ब्रह्म लोक को चली जाती हैं कुछ आत्माएं ऐसी होती है जो विष्णु लोक में चली जाती हैं कुछ आत्माएं ऐसी होती है जो पुनःरपि मरणं पुनरपि जन्मं मानो वे वहीं अपने घेरे में रमण करती रहती हैं इस प्रकार की आत्माओं का उद्बुद्ध ब्रहे वह अपने ही संस्कारों को अपने में रत्त होती रहती हैं। आज मेरे प्यारे महानन्द जी अपने कुछ विचार व्यक्त करेंगें इस सम्बन्ध में मेरा तो इतना ही कथन है, इतने ही विचार हैं कि मानव को अपनी अन्तरात्मा को जानना और उसको जान कर ऊर्ध्वा को प्राप्त होना है परन्तु यह संसार परम्परागतों से ही, इसी प्रकार गमन कर रहा है। चित्त के मण्डल में आत्मा सदैव आत्मा स्वरूप अपने में रत्त होता रहा है।

आज का हमारा विचार केवल यह है कि हम अपने में उस परमपिता परमात्मा के इस अमूल्य जगत को जानते हुए और उसकी प्रतिभा को जानते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। हम अपने में अपनेपन का भान करते हुए, अपनी अन्तरात्मा को जानते रहें। अन्तरात्मा को ही जो जानना है। इस संसार में त्यागां भूतं ब्रह्मणे जैसे महर्षि शाकल्य मुनि ने यह कहा कि मोक्ष के निकट होता हुआ भी मानव ममता के कारण

इस संसार में पुनः प्रवेश कर जाता है। माता के गर्भ में आ जाता है अग्नेयं मंगलं ब्रहे वहां अपने में नार्किकतता को प्राप्त होता रहता है इस मानव को उन क्रियाकलापों में परणित होना चाहिए। जिनमें परणित होने सक अन्तरात्मा पवित्र होता हुआ, चित्त के मण्डल में प्रवेश होता हुआ उस परमपिता परमात्मा की महती को सदैव प्राप्त होता चला जाएं। विचारना यह है कि अमृतं ब्रह्मणे आज के वेदमन्त्रों में यह विचार आ रहा था कि सूर्याणि गच्छतम् ब्रह्मणे लोकाम् मानो सूर्य लोकों में भी आत्मा जाती है इन्द्र लोकों में भी प्रवेश कर जाती है। परन्तु यह लोक लोकान्तरों का चक्र भी एक सृष्टि का एक अदभुत नृत्त माना गया है जिसके ऊपर हमारे यहां परम्परागतों से ही, विचार विनिमय होता रहा है।

मुझे स्मरण आता रहता है कि जब महर्षि शाकल्य मुनि महाराज से यह कहा गया कि महाराज! आप जन्म जन्मान्तरों में किस आभा में परणित रहे हैं? जब उनके शिष्यों ने यह कहा तो उन्होंने कहा कि मैं सम्भूति सूर्याणि गच्छतम् मानो सूर्य मण्डल में भी मेरा गमन रहा है और चन्द्र मण्डल में भी मंगल मण्डल में भी रहा है परन्तु मैं लोक लोकान्तरों की प्रतिभा में रत्त होता हुआ मानवीयतव में प्रवेश करता हुआ अपने चित्त के मण्डल में जब सिमट गया तो सिमट जाने से मेरा अन्तरात्मा इस गति को प्राप्त हो गया। कि मोक्ष की पगडण्डी को मैंने ग्रहण कर लिया परन्तु एक ममता के कारण मैंनें एक हिरण ब्रह्माः एक हिरणी के बाल्य से मोह किया और मोह करने से मेरी यह गति बन गई कि माता के गर्भ में मेरा वास हुआ और राजा ने मुझे पामर कहा और पामर करने से ही जड़ भरत के नाम से मरा नामोकरण रहा है। मैं उसी में रत्त हूँ और मैं यही कह रहा हूँ कि जब महाराजा नहुष ने उस पर आक्रमण किया तो उसने यही कहा कि हे प्रभु! तेरे द्वारा जब ये महापुरूष पंहुचेंगें तो क्या गति होगी इनकी, हे प्रभु! मैंने तो मोह ही किया था। ममता में परणित न रहना, परमात्मा का स्मरण करना, अपनी मानवीयता को सुसज्जित बनाना यही मानव का कर्तव्य है यह महाराजा नहुष को जड़ भरत नने वर्णन किया था, बहुत पुरातन काल हो गया जब यह उन्होंने वर्णन किया। अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें। परन्तु देखो, अपनी आभा में

अप्रतमः

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् अमृतां देवम सम्भवत्यं ब्रह्म वाचन नमः सर्वाणी गच्छतम ब्रह्मणो लोकाः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मेरे भद्र ऋषि मण्डल, अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मृत्यु के सम्बन्ध में ज्ञान और विवेक में परणित हो रहे थे। मेरा भी सदैव यही मन्तव्य रहता है कि मानव को अज्ञान में परणित नही रहना चाहिए। महात्मा सुखदेव जी ने द्वापर के काल में महाराजा परीक्षत को बड़ा अदभुत ज्ञान दिया ओर उन्होंने कहा सप्तममय यह संसार समाप्त हो जाता है पन्द्रह पन्द्रह दिवस जो हमारे यहां कृष्णा ओर शुक्ल पक्ष के हैं उसमें में द्विपदा, चतुष्पदा इसी में सर्वत्र वर्ष और माह और देव मानव की आयु समाप्त हो जाती है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी बहुत सी वार्त्ताएं वर्णन की हैं महात्मा सुखदेव की मैं चर्चा कर रहा था महात्मा सुखदेव ने राजा परीक्षत को यह ज्ञान दिया कि यह संसार में जो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी उच्चारण कर रहे थे कि मृत्यु का अभाव है अन्धकार तो अन्धकार है उसका अभाव है परन्तु प्रकाश का अभाव कदापि नही होता। वह सदैव एक रस बन रहता है। रहा है यह कि आत्मा कहां चला जाता है?

हमारी आकाशवाणी जिस गृह में जा रही है वहां सन्ताप का एक सयम व्यतीत हो रहा है मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव बहुत सी गाथाएं वर्णन की हैं। परन्तु उन गाथाओं में विचारों में आज प्रवेश न करता हुआ कि जो आत्मा गृह में अपनी आभा में परणित हो गई है उसकी अपने में देखो, सत्यं ब्रह्मा क्योंकि उनके क्रियाकलाप बड़े विचित्र कहीं कहीं देखो, त्रुटियों को भी त्याग करके उनके विचार बड़े भव्य और मानवीयता में परणित रहे हैं परन्तु उनकी आभा बड़ी विचित्रता में परणित रही है मेरा अन्तरात्मा सदैव दृष्टिपात करता रहता है ओर यह विचारता रहता है कि आत्मा से आत्मा का सम्मिलान होता रहता है। जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों की प्रतिभा मानव के अन्तरात्मा उसे संस्कारों की प्रतिभा मानव के अन्तरात्मा से उसके संस्कारों से जैसे एक सूत्र में पिरोया हुआ जगत दृष्टिपात होता रहता है ऐसे ही मानव के संस्कार भी एक सूत्र में पिरोएं हुए रहते हैं। ओर उन सूत्रों को कटिबद्ध हो जाना या उन सूत्रों का एक

दूसरे में सम्मिलन हो करके उसका विच्छेद हो जाना यह तो मानव के भोगवान की चर्चायें हैं वह भोगवाद का एक विषय रह जाता है। परन्तु जो आत्म हमारे मध्य से या इस गृह के मध्य में चला गया तो आत्मा अपनी उत्तम गति और मानवीयता को प्राप्त हो गया है।

मेरा अन्तरात्मा पहले से ही परम्परागतों से ही, यह वार्त्ता प्रगट करता रहा है मंगलं ब्रह्मणो लोकां क्योंकि जिस समय मानव का अन्तरात्मा जाता है इस शरीर को त्याग करके उसकी जो गति होती है उसी गति को वह प्राप्त होता रहता है। परन्तु देखो, उसका मंगलं ब्रह्मे शरीरों त्यागां भूषणं ब्रहे जब शरीर को त्यागा तो ममता उसमें नही रहीं ममता न रहने से उसका अन्तरात्मा अमृतं वह सूर्याणि गच्छतं वह मण्डलों में भ्रमण करने के पश्चात सदगति को प्राप्त हो गया है क्योंकि वह अपने में सूर्य मण्डल की कल्पना करता हुआ, प्रकाश की कल्पना करता हुआ आचार्यों का स्मरण करता हुआ जो शरीर को त्यागता है वह आत्मा सूर्य लोक को प्राप्त होता है जो आत्मा ममता में ही रत्त रहता है वह चन्द्र लोकों मानों तमो वृत्तियों में रत्त होता रहता है मैं इस सन्दर्भ में नही जाता। यह तो मेरे पूज्यपाद गुरुदवे ने बहुत सी इस प्रकार की शिक्षायें और दर्शनों की आभा में अपने में अभ्योदय होती रही हैं परम्परागतों से ही, मानव के संस्कार एक दूसरे में कटिबद्ध रहे हैं और उन संस्कारों को ही अपने में मानव रत्त करता रहा है। मैं अज्ञान में या वृत्तियों में जाना नही चाहता हूँ। परन्तु मेरा अन्तरात्मा तो सदैव इसमें है कि मानव के स्वार्थवाद तो मानव के साथ में ही स्मरण आते रहते हैं परन्तु उसका जो अन्तरात्मा है वह अपनी सदगति को प्राप्त हो गया है।

अपने में अपनेपन को ही भान करता हुआ चला गया आत्मा सूर्य मण्डल को प्राप्त हो जाता है। एक आत्मा जो तमोगुण में जाता है हमारे शरीर में दस इन्द्रियां हैं मुखारबिन्दु से जाता है तो वह विषैले जन्तु पक्षी की योनि को प्राप्त होता है और जो आत्मा घ्राण के द्वारा से जाता है वह सूर्य लोक को जाता है। इसी प्रकार जो आत्मा गुदा स्थान से जाता है वह तमोगुणों कीड़े अर्वितियों को प्राप्त होता रहता है और जो आत्मा लिंगं ब्रहे वृत्तियों को प्राप्त होता काम वासना को प्राप्त करता है वह कामी प्राणी बन करके भोगत्व

को प्राप्त होता रहता है इसी प्रकार मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से बहुत सी विद्याओं को पाया है और जो नेत्रों से जाता है वह अग्निमयी प्राणियों को प्राप्त होता रहता है, जो श्रोत्रों से जाता है वह दिशा वृत्तियों में ब्रह्मणा वाची कुलों को प्राप्त होता रहता है। इसी प्रकार मैं यह कहता रहता हूँ कि वे अस्वतम यह जो आत्मा जहां हमारी आकाशवाणी जा रही है इस गृह से इसका उत्थान हो गया है, वह ममता से रहित हो करके अपने शरीर को तयग करके सूर्य लोक को प्राप्त हो गया है। सदगति अपने में वृत है यू तों संसार में स्वार्थवाद मानव के स्मरण आता रहता है मानव की प्रतिभा में रत्त होता रहता है तो इसीलिए मैं अपने विचारों में जो मुझे स्मरण आ रहे हैं मुझे भान हो रहा है वे उद्गीत रूप में गा रहा हूँ।

हे ब्रह्मणे आत्मा ब्रह्मे देखो, गृह को सदगति दे और गृह को शान्ति की स्िावना अपने में रत्त होती रहे। परन्तु रहा यह कि जन्म जन्मान्तरों के संस्कार सदैव अपने में और देखो, हमारे में भी उस आत्मा के सदैव रत्त रहे हैं। ये चर्चायें हम विशेषता में ले जाना नही चाहते हैं यह तो मानव की अमृतियां हैं। मैं सन्ताप प्राणियों को यह कहता हूँ कि तुम अपने में संताप से रहित हो करके अपने क्रियाकलापों में अपनी मानवीयता में सदैव रत्त होते, अपनी आभ्आ में सदैव रत्त हो जाओ। इसके साथ मैं अपने विचारों को विराम दे रहा हूँ क्योंकि आज का विचार केवल यह कि इसी विचार में मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को भी प्रेरित किया कि प्रभु आप आत्मा और मृत्यु के सम्बन्ध में अपने विचार दीजिए।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन किया कि मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नही होती, प्रकाश का अभाव नही होता, अन्धकार का सदैव छोर होता है सूर्य उदय होता है प्रकाशमान और रात्रि में भी प्रकाश का अभाव नही होता उसमें भी रत्त रहता है इसके साथ मैं प्रभु से यह प्रार्थना कर रहा हूँ कि जो आत्मा इस मध्य में गमन कर गई है उनके सहयोगी उनके सूत्र में बंधे हुए जितने प्राणी है उनको प्रभु आनन्दम ब्रह्मणे मानो शान्ति की स्थापना करे इसके साथ मेरा यह विचार समाप्त होने जा रहा है।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी अभी मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपनी बड़ी

विचित्र एक वार्त्ता प्रगट की हैं कि मृत्यु के सम्बन्ध में। जो आत्मा संस्कारों से कटिबद्ध रहते हैं वे सदैव चित्त के मण्डलों में प्रवेश हो करके अपनी अपनी गतियों को प्राप्त होते रहते हैं। रहा सूर्य मण्डल की चर्चायें, मानो देखो, वहां अग्निमयी शरीर वाले प्राणी रहते हैं चन्द्रमा में तमोगुणी प्राणी रहते हैं मंगल में पार्थिव तत्त्व वाले प्राणी रहते हैं आज मैं लोक लोकान्तरों की चर्चायें या उनके रहन सहन की चर्चायें प्रगट करने नही आया। मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने बड़े विचित्र विचार दिए ओर संताप नही रहना चाहिए। प्रकाश रहना चाहिए, अपने क्रियाकलापों में सदैव रत्त रहने चाहिएं एक वाक्य इन्होंने बहुत प्रियतम में दिया कि मानव स्वार्थवाद के एक सूत्र में बंधा हुआ रहता है, कटिबअद्ध रहता है तो उस सूय को अपने में विच्छेदां वह विच्छेद हो जाता है तो मानो देखो, प्रकाशाम भवितं ज्ञान में वैदिकता में अपने को परणित करना चाहिए आज का विचार अब समाप्त अब हमारे यहां वेदों का पठन पाठनह होगा वेद पाठ

५ 08 10 1989 पुष्प 60

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गान गाया जाता है क्योंकि वह महिमावादी हैं और वह यज्ञोमयी स्वरूप माने गएं हैं क्योंकि याग उसका आयतन है उसका गृह है, उसका सदन है, और वह उसी में वास कर रहा है इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा और उसकी अनन्तता के ऊपर सदैव विचार विनिमय करते रहते हैं ओर यह उद्गीत गातते रहते हैं कि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है ओर वह पुरोहित है पुरोहित उसे कहा जाता है जो पराविद्या को प्रदान करने वाला है परा विद्या कौन सी है जिसे वह प्रदान करता है मानव के आत्म उत्थान के लिए जो कोई ज्ञान है उसी को ऊर्ध्वा में गमन कराने का नामोकरण पुरोहित प्रदान करता रहता है। हम यह विचार विनिमय करते रहें कि वे परमपिता परमात्मा पुरोहित है अनन्तमयी है ओर उसकी अनन्तता एक एक परमाणु में

एक एक कण कण में निहित रहती है इसीलि हम परमपिता परमात्मा की सदैव उपासना करते रहें और वह जो पुरोहित है पराविद्या को प्रदान करने वाला है जिस पराविद्या से मानव के अन्तरात्मा का उत्थान होता है। और मनुष्यतव प्राणातव को आत्मा में निहित किया जाता है। तो ज्ञान और विज्ञान का नामोकरण हमारे यहां पुरोहित के द्वारा ही प्राप्त होता रहता है।

मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! ऋषि मुनियों ने बहुत पुरातन काल में एक पद्धति का निर्माण किया था कि वे उस पद्धति से प्रत्येक गृह में पुरोहित होना चाहिए क्योंकि हमारे यहां राष्ट्र में पुरोहित होना चाहिए क्योंकि हमारे यहां राष्ट्र में पुरोहित होते हैं और वह पुरोहित इसीलिए होते हैं कि मानव उल्टे मार्ग पर न चला जावें। वे सदैव सु मार्ग पर गमनकरते व विचार देते रहते हैं और राजा को भी उपदेश देते रहते हैं कि वह ऐसे कलिष्ट मार्ग पर न चला जाए, और रक्तमयी मानव का समाज बन जाए। इसीलिए हमारे यहां पुरोहित की बड़ी विवेचना मानी गई हैं, क्योंकि पुरोहित ही राष्ट्र का निर्वाचन करते रहते हैं हमारे यहां सृष्टि के प्रारम्भ से क्या जब से राष्ट्रवाद का निर्माण हुआ, क्योंकि यहां भगवान मनु ने राष्ट्र का निर्माण किया था और भगवान मनु ने यह कहा कि पुरोहित होने चाहिए। राष्ट्र में और मानव समाज में यदि पुरोहित नही हैं पराविद्या देने वाले नही हैं तो यह समाज ऊँचा नही बन सकेगा। विद्यालयों में भी जब हम प्रवेश करते रहे हैं। तो वहां भी एक महान पुरोहित कहलाता है वहां आचार्यों के अंगरक्षक का और उनकी आध्यात्मिक प्रतिभा का वह स्रोत कहलाता है तो इसीलिए बेटा! हमारे आचार्यों ने बड़ी तत्परता से यह कहा कि हमारे यहां पुरोहित होने चाहिए। प्रत्येक गृहों में पुरोहित की जो परम्परा मानी गई है। कि वे पुरोहित ही ज्ञान से गृह को ऊँचा बनाते हैं और वे आशीर्वाद की प्रतिभा में सदैव निहित रहते हैं हमारे यहां जब भी क्रियाकलाप होते हैं। वे बाल्यकाल से लेकर और वृद्धतक उनको मानवीय शिक्षा दी जाती है। वे मानवीय शिक्षा प्रणाली में इतना प्रवीणतम् आता रहता है, द्वापर के काल में वशिष्ठ मुनि महाराज अयोध्या में राष्ट्र पुरोहित कहलाते थे वे ब्रह्मवेत्ता थे ब्रह्मनिष्ठ ज्ञान विज्ञान की उड़ाने उड़ने वाले थे। ब्रह्मवेत्ता वह कहलाता है जो ज्ञान में विज्ञान मे और यौगिकवाद

में ब्रह्म में निष्ठ पारायण हो। जो ब्रह्म का निर्णय करने वाला उसका विश्वासीय हो, वही उसके द्वारा वह राजपुरोहित बना हुआ है। परमपिता परमात्मा के जानने वाला ही परा विद्या में अग्रणीय कहलाता है परा विद्या किसे कहते हैं बेटा! परा विद्या उसे कहते हैं बेटा! जो आत्मा ओर परमात्मा का एक मौलिक विषय है मौलिक चर्चायें हैं आत्मवेत्ता अपने में चिन्तन कर रहा है मनन कर रहा है और मनन करता हुआ वे परमपिता परमात्मा की महती को जानने के लिए तत्पर हो जाता है वह शंका में नही हैं अन्धकार में नहीं, क्रियात्मक अपने जीवन को लाता है तो वह पुरोहिताम् ब्रह्मणो वेत्ताः वे परमपिता परमात्मा के ज्ञान विज्ञान को जानता हुआ पुरोहित कहलाता है तो विचार आता रहता है कि वशिष्ठ मुनि महाराज पुरोहित थे। पुरोहित राष्ट्रवाद को भी विचारते हैं ओर वे पराविद्या को प्रदान करने वाले आध्यात्मिक विज्ञान में बड़े पारायण रहे हैं। ओर उस आध्यात्मिकवाद को जानते हुए वे महानता का सदैव प्रदर्शन करते रहे हैं। हमारा जीवन वास्तव में पराविद्या में सुशोभित होना चाहिए। जिससे हम पराविद्या को पान करते हुए वह जो मान ओर अपमान वाला समाज हमें दृष्टिपात आ रहा है। इस सागर से पार हो जाएं

मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना न करता हुआ वेद का मन्त्र क्या कह रहा है वेदमन्त्र यही तो कहता है कि परो वरुणास्त्थ्थम यज्ञे देवतव ब्रह्मणे सम्भव वेद का वाक्य कहता है कि हम अपने में उस महान देवतव को जाननेवाले बने जिस देवतव को जानने के पश्चात मानव के शरीर में ऐसा कोई क्रियाकलाप नही रहता है जिस में वह न पंहुच पाए। ओर अमृत को प्राप्त न हो जाएं। बेटा! वेदमन्त्र यही कहता है कि हम अपने में महानता का दर्शन करते हुए महानता की ज्योति में सदैव रत्त हो जाएं ओर महान वृत्तियां को प्राप्त करते हुए इस पुरोहितपन को विचारें कि यह क्या है पुरोहित राष्ट्रवाद में भी होता है, ओर विद्यालयों में भी, ओर जन समूह में भी पुरोहित अपनी पराविद्या से कहलाता है मुझे स्मरण आता रहता है, कि महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज अपने आसन पर विद्यमान थे महर्षि विश्वामित्र उनके चरणों की वन्दना करके अपनी स्थली पर विद्यमान हो गएं महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज बोले कहो विश्वामित्र कैसे आगमन हुआ?

उन्होंने कहा कि आज वेदमन्त्रों में अध्ययन कर रहा था परा विज्ञानमतः प्राः वर्णानं ब्रवी कृतः देवाः हे प्रभु! पराविद्या का और पुरोहितों का वर्णन आ रहा था हे प्रभु! मैं पुरोहित को जानना चाहता हूँ महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले हे विश्वामित्र पुरोहित वह कहलाता है जो पराविद्या को जानने वाला है। मानो जो पराविद्या में निष्ठावान रहता है उसी का नाम पुरोहित है ऋषि ने विवेचना करते हुए कहा कि पुरोहित कौन होता है? पुरोहित वह होता है जो भू से लेकर के और अन्तरिक्ष के विज्ञान को जानने वाला हो, वह जो पराविद्या को प्रदान करने वालाहो वह पुरोहित कहलाता है। क्योंकि पराविद्या बड़ी सार्थक मानी गई है। वेद के आचार्य ने पुनः यह प्रश्न किया कि महाराज! पराविद्या कौन है? उन्होंने कहा कि पराविद्या में परमपिता परमात्मा निहित रहते हैं परन्तु पराविद्या ब्रह्मे जो पुरोहितजन हैं, हम उन पुरोहितों की विद्या को पान करते हुए संसार सागर से पार हो जाएं।

मेरे प्यारे! महर्षि विश्वामित्र ने जब यह वाक्य कहा तो ऋषि ने उनके प्रश्नों का उत्तर दिया और उनकी जिज्ञासा को पूर्ण किया। उन्होंने कहा कि ऐसा कदापि नही होना चाहिए। सम्भवं ब्रह्मणे वेदतं देवतां देवाः ब्रहे कृत विक्करा यश्चतं निर्णायं पुरोहित बेटा! पुरोहित तो वास्तव में परमपिता परमात्मा है। जो निष्पक्ष है। परन्तु समाज में भी पुरोहित की आवश्यकता है यदि वह ममता और घृणा से रहित हो तो ऐसा जो ब्रह्म को जानने वाला, ब्रह्मवर्चोसि के रूप में वर्णित किया गया है। पुरोहिताम् ब्रह्मणे लोकाम् हमारे यहां वह पुरोहित प्रणाली सर्वश्रेष्ठ मानी गई है। महर्षि विश्वामित्र से यह कहा कि हे विश्वामित्र, मेरी इच्छा यह है कि जाओ तुम पुरोहितों के क्रियाकलापों को करो। उन्होंने कहा कि प्रभु पुरोहित तो आप है आप ब्रह्मवेत्ता भी हैं सर्वत्र विद्याओं को जानते हैं। महर्षि वशिष्ठ ने कहा यह वाक्य तो आपका यथार्थ है, परन्तु पराविद्या वह भी प्रदान करता रहता है जो उसकी विवेचना करता है। पुरोहितां ब्रह यंजनं ब्रही पुरोहित कहलाता है उन्होंने कहा प्रभु! पुरोहितां भूषणं ब्रहे मैं इस वाक्य को ही जानता कौन पुरोहित होता है और किसे पुरोहित कहते हैं महर्षि वशिष्ठ ने कहा जो पराविद्या को जानने वाला, जो आत्मा और परमात्मा प्राण और मन को जानने वाला, जो आत्मा और

परमात्मा प्राण और मन को जानने वाला है उसका नाम पुरोहित होता है। यह स्वीकार करो। उन्होंने कहा कि आप आज्ञा दीजिए। महात्मा विश्वामित्र ने जब ऐसा कहा तो वशिष्ठ मुनि ने कहा कि जाओ तुम भयंकर वनों में चले जाओ और वहां पुरोहितां यं ब्रह्मे वहां याग करो। जब उन्होंने याग का नामोकरण श्रवण किया तो कहा प्रभु! हम याग किसे कहते हैं उन्होंने याग की मीमांसा करते हुए कहा कि याग वह कहलाता है जिसमें विद्यमान हो करके अपनी आभा में सदैव निहित रहें, आनन्दवत हो जाए, वही तो हमारे यहां वृत्तिवत चला है पुत्रों! महात्मा विश्वामित्र ने जब पुरोहित की विवेचना श्रवण की तो उन्होंने कहा समभवति वायु सम्भवाः कृतं भूतं वृतं आमरूताम् प्रवाह व्रेश्यं जन्मे ब्रीगतः जब ऋषि ने यह वाक्य कहा तो वह वाक्य उनके हृदय में समाहित हो गया और यह कहा जाओ तुम भयंकर वन में याग का आयोजन करो और उसमें राष्ट्रीय विद्या का योग होना चाहिए। जिससे राष्ट्र में प्रतिभा हो और राष्ट्र उसको जानने वाला हो।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है। उन्होंने कहा कि जब याग में क्रियाकलाप का आयोजन होता है, याग अपनी आभा में विचित्र बना रहता है, पवित्रतम बना रहता है। उन्होंने याग के लिए जो आज्ञा दी, तो महर्षि विश्वामित्र ने वहां से गमन किया । और विचारा मेरे समीप ब्रह्मचारीजन इस विद्या का अध्ययनकरने वाले हों। महर्षि विश्वामित्र वहां से भ्रमण करते हुए उस स्थली तक पंहुचें जहां दशरथ विद्यमान थे। राजा दशरथ ने ऋषि को दृष्टिपात किया, अपने आसन को त्याग करके ऋषि के चरणों की वन्दना की और वन्दना के पश्चात उन्होंने कहा ऋषिवर! यह मेरा कैसा सौभाग्य है कि आप यहां गमन कर रहे हो, हमारे यहां वास हो रहा है, प्रभु यह कैसा आपका नृत्त है उन्होंने भगवन! ऐसा विचार मन में आता रहता है तो राजा ने कहा प्रभु! आज आपका आमन कैसे हुआ, जब ऋषि बोले मैं दण्डक वनों में याग कर रहा हूँ। सब ऋषि मुनियों की एक यौगिकता उनके हृदय में समाई है कि दण्डक वनों में याग ब्रह्मशाला, धनुर्विद्या का अभ्यास किया जाएं। मेरे प्यारे! रारजा ने कहा सम्भवः याग की रक्षा होनी चाहिए, रक्षा बहुत अनिवार्य है यदि याग की रक्षा नही होती तो याग अपने में अधूरेपन में परणित

हो जाता है। बेटा! याग की रक्षा क्या है याग की रक्षा याग वह है जिसे प्राणी अपने में समाधिस्थ कर लेता है तो वह याग का अधिकृत बन जाता है।
याग हमारे यहां दे प्रकार के माने गए हैं। एक याग विशुद्धि याग कहलाता है वास्तव में याग बहुत प्रकार के हैं परन्तु संक्षिप्त में दो प्रकार के याग एक दूसरे में संगठित रहता हुआ, विचारवान बनता हुआ जो अपनी आत्मा को प्रसन्न कर रहा है वह प्रथम याग की प्रतिभा कहलाती है, उन्होंने धनुर्याग के लिए बड़ा बल दिया, और यह कहा है, हे विश्वामित्र तुम धनुर्याग में पारायण हो जाओ, उन्होंने इस वाक् को स्वीकार कर लिया और स्वीकार करने के पश्चात विचार में आता रहा, वेद का आचार्य यह कहता है कि जब वे अमृतमान राजा ने यह कहा प्रभु! मैं आपके याग को पूर्ण कराऊंगा मुझे आप आज्ञा दीजिए। महर्षि विश्वामित्र ने कहा राजन् यह याग तो राजकुमारों का है। राजा दशरथ और विश्वामित्र की चर्चाएं हो रही थीं हमारे यहां यह नियमावली पुरातनकाल से ही बनी हुई है जैसे न्यायालय में पुरूष न्याय करता है उसी प्रकार देवियां भी न्यायालय में न्याय करती रही हैं। और उन सबका बड़ा सहयोग रहा है। वे अपने में अपनेपन का भान करती हुईं नाना प्रकार के यागों का विश्लेषण करती और विचार भी देती रही हैं मैं कुछ विशेष विवेचना नही देना चाहता हूँ विचार यह है याग अपने में बड़ा उत्तम क्रियाकलाप है यह श्रेष्ठतम कहलाता है। जब विश्वामित्र ने यह उपदेश याग को सम्पन्न करो का अपना यह क्रियाकलाप बनाया तब बेटा! देवियों ने जब यह श्रवण किया तो कि आज तो महर्षि विश्वामित्र का आगमन हो रहा है तो बारी बारी से ऋषि के चरणों की वन्दना की। सबको आशीर्वाद देते हुए आचार्य अपने आसन पर विद्यमान हो गए, देवियों ने कहा भगवन! यह हमारा कैसा सौभाग्य है भगवन! आप भयंकर वनों से आए हैं और आने की सूचना नहीं दी। उन्होंने कहा हे दिव्या हमारा यह सौभाग्य है जो हम इस प्रकार से भ्रमण करते है। उन्होंने कहा प्रभु! आज्ञा दीजिए, क्या आज्ञा है?
अमृतां भूः अस्तां वर्णानं दण्डधनं अस्ति दिव्यां
मेरे पुत्रों! देवी ने कहा प्रभु! क्या चाहते हो ऋषि ने वेदों का उद्घोष करते हुए कहा प्रभु! मेरी इच्छा यह है कि राजकुमारों को अपने याग में रक्षार्थ ले जाना चाहता हूँ। ताकि

मेरा धुनर्याग सम्पन्न हो जाए। उन्होंने कहा कि नाना प्रकार के यागों में प्रवृत्ति जागृति होगी, मानव समाज ऊँचा बनेगा, जब इस प्रकार दिव्यां भूतां दिव्यं ब्रहे। जब उन्होंने कहा कि राजकुमारों को प्रदान कीजिए। राजा ने कहा यह बाल्य तो किशोर हैं और ये आपके याग को कैसे सम्पन्न करायेंगें आपके याग को मैं सम्पन्न कराऊंगा, तो देवियां ने कहा हे राजन! इसयाग का नाम धनुर्याग है और धनुर्याग तो होता है वह युवा पुरूषों का होता है, और याग ब्रह्मचारियों के द्वारा पूर्ण होता है। इस याग को पूर्ण करने के लिए ये अपने में याज्ञिक बने रहते हैं और अपने में उसका क्रियाकलाप ऊर्ध्वा को प्राप्त होता है। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम देवियों ने यह प्रार्थना की राजा ने मोहवश इसका उद्गीत नही गाया। तो कौशल्या जी ने कहा अमृतां दिव्यं ब्रह्मे हमारे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बाल्य यदि ऋषि की सेवा नही कर सकते तो हमारा गर्भाशय दूषित हो जाएगा। माता कौशल्या ने यह कहा तो राजा मौन हो गए। कर्तव्यवाद में ममता नही हुआ करती है कर्तव्यवाद में एक मानवीयतव रहता है और आत्मा विशुद्ध रहती है। मेरे पुत्रों! जब उन्होंने यह वाक्य कहा तो राजा ने राजकुमारों को प्रदान कर दिया। तो चारों राजकुमारों ने शिक्षा के लिए वहां से प्रस्थान किया। और वह दण्डक वनों में याग के लिए तत्पर हो गए।

धनुर्याग क्या है? धनुर्याग उसे कहते हैं जहां वैज्ञानिकजन विद्यार्थीजन को धनुर्विद्या का अभ्यास कराते हैं और जहां शास्त्रों का निर्माण होता है। जहां प्रातःकालीन याग होता है और उसके पश्चात धनुर्याग में परणित हो करके अपने में महानता कोवे गमन करते रहते हैं। इसमें राष्ट्र का बड़ा सहयोग रहता है। विचार आता रहता है कि हमारे यहां याग की अपनी स्थली में बड़ा विचित्र माना गया है, भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहता है तो विचार आता रहता है कि हम याग में परणित हो जाएं और याग को दृष्टिपात करते हुए अपने में एकोकीकरण हो जाएं। याग को दृष्टिपात करते हुए अपने में एकोकीकरण हो जाएं याग की भिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएं बन जाती हैं। विचार आता रहता है कि यागां मन्युं प्रब्रीहि मेरे पुत्रों! देखो, याग होना चाहिए। उन्होंने धनुर्याग किया, धनुर्याग के पश्चात अपने क्रियाकलापं ब्रहे पुत्रों! और पुत्रियों को ब्रह्म का

उपदेश दिया करते थे। ओर वे पुरोहित बन करके ब्रह्म विद्या और धनुर्याग को प्रदान करते रहते थे। मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! महर्षि वशिष्ठ मुनि आश्रम में विज्ञान के कुछ यन्त्र थे अमृतां मन्यु आस्ते विश्वामित्र दण्डक वनों में पंहुचें, दण्डक वनो में अन्वेषण हो रहा है, अनुसन्धान हो रहा है विचार विनिमय हो रहा है कि एक याग ऐसा निर्माणित किया जाएं जिस यन्त्र में विद्यमान हो करके वैज्ञानिक लोकों में जाएं। यात्री लोकों की आभा में भ्रमण करता हुआ अपने में लोकवेत्ता बन जाता है मेरे पुत्रों! इस प्रकार का विज्ञान महर्षि के आश्रम में था। महर्षि विश्वामित्र अपने में प्रसन्न रहते थे। विचार यह है कि यह धनुर्याग यह है जहां धनुर्विद्या की शिक्षा को प्रदान किया जाता है।

एक याग हमारे यहां अश्वमेध याग होता। अश्व नाम राजा का है मेध नाम प्रजा का है। अश्वयागां भूतं ब्रहे वेद में ओत प्रोत होकर याग करता है साकल्य प्रदान करता है। मेरे पुत्रों! उसमें भी विज्ञान की प्रतिभा निहित रहती है। आज मैं तुम्हें विज्ञान के युग में नहीं ले जा रहा हूँ विचार केवल यह प्रगट हो रहा है कि हमारे यहां भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहता है। जैसे हमारे यहां अग्निष्टोम याग है, अग्निष्टोम याग में राजा प्रजा अपने में उन्नत बनाने में निरभिमानी बनाने में लग जाते हैं वास्तव में वह याग कर रहे हैं मेरे पुत्रों! वेद का आचार्य यही कहता है कि परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में अभिमान नही होता। इसीलिए हे मानव! तू अभिमान से दूरी हो जा। परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में किसी प्रकार अभिमान नही होता है इसीलिए हे मानव! तू अभिमान से दूरी हो जा। परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में किसी भी प्रकार की हीनता नही होती, क्योंकि परमात्मा हीन नही हैं हे मानव! यह कैसा विचित्र वैदिक साहित्य है जिसमें भिन्न भिन्न प्रकार की प्रतिभाओं का वर्णन होता रहता है।

आज मैं विशेष चर्चा नही दे रहा हूँ महर्षि विश्वामित्र के आश्रम में अनुसन्धान हो रहा है। यज्ञशालाओं का निर्माण हो रहा है ओर विज्ञानशालओं में नृत हो रहा है मानव का मस्तिष्क नृत्त कर रहा है ओर नृत्त करता करता अपने ज्ञान ओर विज्ञान में रत्त होना यहां मानवीयता कहलाती है। अध्ययनं भूतं प्रवाह वह वृत्ति कहलाई जाती है विचार क्या

चला रहा था कि पुरोहितां होने चाहिए। वास्तव में जितने पुरोहित होते हैं बुद्धिमान, बुद्धिजीवी जितने प्राणी होते हैं उनसे राष्ट्र उनसे ऊँचा बनता है। बुद्धिजीवी जब माताएं होती हैं तो अपने गर्भस्थलों में बालकों की ऊर्ध्वा में गमन करा देती हैं और पांच वर्ष तक उन्हें विवेकी बना कर महात्मा बना देती हैं जब माताएं इस प्रकार बुद्धिजीवी वेद का पठन पाठन करने वाली हो तो यह समाज पवित्रता की वेदी पर लीन हो जाता है।

आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेषता में नही ले जा रहा हूँ, विचार केवल यह प्रगट कर रहा हूँ कि हम अपने में कितना महान बनना चाहते हैं कितनी प्रतिभा को चाहते हैं, कितना ज्ञान और विज्ञान को उपार्जन करना चाहते हैं कि हम अपने जीवन को निर्वाह और समपन्न बना करके हम इस संसार सागर से पार हो जाएं। वह पुरोहित की चर्चा चल रही है। जो पराविद्या को देने वाला है। परमपिता परमात्मा पुरोहित जब होते हैं तो राजाओं के राष्ट्र में अभिमान की उत्पति नही होती क्योंकि अभिमान जब नही होता तो निराभिमानी बन करके वह परमात्मा के राष्ट्र में भ्रमण करता है।

आओ पुत्रों! विचार क्या, आचार्यजन क्या कहते हैं कि इस सम्बन्ध में मुनिवरों! वह कहते हैं कि उद्गीत गाना चाहिए, उद्गीत में ही रत्त रहना चाहिए। कि हमारा पुरोहित बनना सार्थक बन जाएं। विचार क्या आज मैं विद्यालयों की चर्चा कर रहा था। आज महर्षि विश्वामित्र और वशिष्ठ ऋषि की चर्चा हो रही थी। क्योंकि महर्षि विश्वामित्र अपने में मनन करने वाले और अपनी आभा को ऊर्ध्वा में रत्त करने वाले रहे हैं। मैं आज तुम्हें विशेष चर्चा देने नही आया हूँ। विचार केवल यह प्रगट करने के लिए आया हूँ विचार केवल यह प्रगट करने आया हूँ कि हमारे यहां विद्याएं होनी चाहिएं, धनुर्विद्या भी होनी चाहिए, वाजपेयी याग, अश्वमेध याग, नरमेध याग, अग्निष्टोम याग भी होने चाहिएं, क्योंकि ये विभिन्न प्रकार के यागों का वर्णन प्रायः हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है हम उसे जानने में सदैव तत्पर रहें।

मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या हो रहा है हम देवतव को प्राप्त करने के लिए आएं हैं और वह देवतव हमारे जीवन का अंग बन करके ऊर्ध्वा में गमन कर सकता है। आज मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नही आया हूँ। विचार चल रहा है कि महर्षि विश्वामित्र के

यहां एक वर्ष में दीक्षान्त उपदेश होता रहता था, ब्रह्मचारियों को दीक्षा भी दी जाती और दीक्षा देने वाले वे ब्रह्मचारी वह अध्ययन में सदैव तत्पर रहें हैं भिन्न भिन्न प्रकार की विद्याओं का चयन होता रह है इसी प्रकार प्रत्येक मानव को विचारना है कि हम मानवीय जीवन को ऊर्ध्वा में गमना कराना चाहते हैं और वही ऊर्ध्वा में मानव के अंगरक्षक बन करके मानव के जीवन को महान पवित्रतम उपदेश दे सकें। मैं इस सम्बन्ध में विशेषता में नही ले जा रहा हूँ, उद्गीत गाता गाता दूरी चला जाऊं विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं और अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें

पूज्य महानन्द जीः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मेरे भद्र ऋषि मण्डल अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने परमपिता परमात्मा को पुरोहित सम्बोधित करते हुए अपने बड़े भव्य और मार्मिक विचार दिऐ कि पुरोहित की आवश्यकता रहती है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इस वाक्य में अन्तरात्मा के शब्दों में नवीन रूप लाने का प्रयास किया। यह सदैव हमें प्रकाश में रत्त रहने के लिए अग्रणी बनाते रहते हैं इसीलिए आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने पुरोहित के सम्बन्ध में जितना कहा है कि यह बड़ा प्रियतम है क्योंकि जो राष्ट्र आज अम्रब्राह मैं आज पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाता हुआ सबसे प्रथम यह तो हमारी वाणी है यह आकाशं भूतं मण्डलं ब्रहे यह मृतमण्डल में प्रवेश कर रही है। और वहां एक विशाल भव्य याग का आयोजन हुआ, जिस याग को दृष्टिपात करता हुआ मेरा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न रहता है, क्योंकि जो अपने हृदय से याग करते हैं उनको आयु प्रदान हो जाती है हृदय से जो याग करोगे तो तुम्हारे जो स्वर हैं वह अन्तरिक्ष में गमन करेंगें। मेरा अन्तरात्मा तो प्रातः यज्ञमान के साथ रहता है और मैं सदा यह उच्चारण करता रहता हूँ कि हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। और तेरी प्रवृत्तियां भी अखण्ड बनी रहें जिससे मानव अपनी आभा में रत्त हो सके। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि राष्ट्र में पुरोहित होने चाहिएं पुरोहिताम भूतं राष्ट्र में यदि पुरोहित नही होंगें तो राष्ट्र नही रहेगा। जो वर्तमान का काल चल रहा है, इसमें पुरोहित का अभाव है।

विचारधारा में एक दूसरे के विचारो में चिन्ता है और वे चिन्तन भी शुभ नही कर रहे हैं। क्योंकि राष्ट्र की प्रणाली में आवश्यकता है पुरोहितों की। जैसे ही परमपिता परमात्मा ने संसार को रचने के बाद स्वयं पुरोहित बने और वह स्वयं बन करके उपदेश दिया और वह तेपां कृतं का पान करते हुए अपनी अपनी विस्तृतियों में रत्त हो गए। और जानने के लिए ततपर हो गए।
मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी महात्मा विश्वामित्र और वशिष्ठ की चर्चाए की हैं इनका जीवन तेज और महान और पवित्र रहा है, उनके जीवन में आहार व्यवहार सदा से पवितत्रम रहते जिससे बुद्धि का विनाश न हो, परन्तु वे भी शिलस्थ अन्न का पान करते रहे। राष्ट्रीय अन्न को ग्रहण नही करते थे। पुरोहित राजा को भी कह सकते है। परन्तु हे राजन! तेरा राज्य पवित्र नही चल रहा हैं हे राजन! तुम्हारे राष्ट्र में प्रजाओं में महानता नही हैं परन्तु पूज्यपाद गुरुदेव ने यह उद्गीत गाया मैं तो यह कहा करता हूँ कि महाभारत के पश्चात पुरोहित का भी सदैव अभाव हो गया राष्ट्रवेत्ता बने परन्तु राजाओं ने पुरोहितों को चुनौती नही दीं। यदि पुरोहित भी बन गए तो वह पुरोहित स्वार्थपरता में रत्त हो गएं और स्वार्थपरता में रत्त होने के पश्चात यहां सदैव गोधन का का ह्रास हो गया। यहां सबसे प्रथम गोधन का अभाव हो गया। और ह्रास होता ही चला गया। और यह जो मेधा बुद्धि है उसका भी ह्रास हो गया और यहां से उल्टे मार्ग में सर्वत्रता में गमन कर गएं जहां अन्न में सुगन्धि होनी चाहिए थी वहां दुर्गन्ध का वास हो गया विचार आता रहता है मैं विशेषता में नही जा रहा हूँ यह जो आधुनिक काल के जो राष्ट्रवेत्ता हैं वे भी वाममार्गी हैं और प्रजा भी वाममार्ग के लिए तत्पर हो रही है। उसके आहार, व्यवहार दोनों में त्रुटियां आ गई हैं, पुरोहित के न रहने से। और यदि पुरोहित महान बुद्धिमान है, ब्रह्मात्मा है जैसे राजा के राज्य में बुद्धिजीवी होते हैं तो वहां राष्ट्र पवित्र बनता रहता है। बुद्धिजीवी प्राणियों से ही समाज का निर्माण होता है और इसी से राष्ट्र की प्रणाली को चुनौती प्रदान की जाती है।
आज मैं तुम्हें विशेषता में नहीं केवल यह आज जहां हमारी आकाशवाणी जा रही है, वहां एक भव्य याग का आयोजन हुआ है मैं प्रभु से प्रार्थना करता रहता हूँ अपने गुरुदेव

से आज्ञा पाता हुआ कि हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, सदैव उसके गृह में द्रव्य का सदपयोग होता रहे, द्रव्य का दुरूपयोग नही होना चाहिए आधुनिक जगत में जितना द्रव्य का दुरूपयोग किया जाता है उससे भी समाज में हीनता आती चली आ रही हैं आज मैं विशेषता में जाना नही चाहता हूँ विचार क्या कि द्रव्य का सदुपयोग हो अखण्डता में सदैव यज्ञमान बना रहे, यह मेरा सदैव एक नृत्त बना रहता है। क्रिया विचारों की क्रिया में रत्त रहना चाहिए। पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाता हुआ अपने विचार व्यक्त करता रहता हूँ। और वे विचार हैं कि नाना प्रकार की जो वृत्तियां विद्यमान हैं वे राष्ट्र में समाप्त करनी चाहिएं। राष्ट्रवेत्ताओं को कर्तव्यवादी बनें और कर्तव्यवादी यह राष्ट्र प्रणाली रहे या न रहे परन्तु मुझे तो अपने कर्तव्य का पालन करना है परन्तु पद की लोजुपतता में राजा जब परणित हो जाता है तो समाज में भी पद ही पद रह जाता है मानवता समाप्त हो जाती है विचार आता रहता है और मैंने कई काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से अपने विचार भी व्यक्त किए हैं आज मैं विशेष चर्चा नही दे रहा हूँ विचार केवल यह कि समाज में महानता हो महाराजा विश्वामित्र के सहित चारों राजकुमारों ब्रह्मचारियों के साथ विद्यालय में विद्या अध्ययन कर रहे हैं मैं इस समय जहो उद्गीत गा रहा हूँ। कि राम व लद्मण ही उनके सहित गए। परन्तु प्रायः ऐसा नहीं मुझे ऐसा स्मरण है कि चारों भ्राताओं ने अपने में प्रायः अस्त्रों शस्त्रों की विद्या प्राप्त की और वे अध्ययन करने में सदैव तत्पर रहें, क्योंकि राष्ट्र ऐसा आरोपण नही कर रहा है, पुरोहित भी नही कर रहा है पुरोहित कहते हैं कि सब विद्वान धुनर्विद्या पान करने वाले हैं बहुत पुरातन काल में हमारे यहां प्राणाली रही है परम्परागतों में यह प्रणाली रही वर्तमान में हैं या नही मैं इसके ऊपर जाना भी नहीं चाहता परन्तु परम्परा की प्रणालियां ये रही हैं कि मेरी पुत्रियां बाल्यों को भयंकर वनों में ले जा करके अस्त्रों शस्त्रों की शिद्मा देती रही हैं देखो, माता सीता के जीवन में नाना प्रकार की उद्गीतता प्रायः मुझे स्मरण आती रहती है वे जब महर्षि के आश्रम में अपने बाल्यों को, राजकुमारों को विद्या अध्ययन कराती थीं और वे विद्या अध्ययन करके अस्त्रों शस्त्रों की विद्या में पारायण होकर जब वे गृह में गए तो उनका वास होता है होता रहा है होता रहेगा भीं

परन्तु यह प्रणाली ऐसी नही हैं राजा विश्वासनीय आएगा तो यह प्रणाली पुनः स्थापित कर सकेगा। परन्तु मैं यह विचारता रहता हूँ कि उनका मत, साहित्य में वाममार्ग के काल में अशुद्धता आ गई परन्तु यह विचार में नही आ रहा है। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई समय यह प्रश्न किए हैं और उन्होंने भलि भांति उत्तर दिए हैं और वे उत्तर यू कि माता सीता के द्वारा वेद विद्यालयों में सन्तानों का उपार्जन करना। आश्रम में महर्षि बाल्मीकि अस्त्रों शस्त्रों में विज्ञानवेत्ता और आयुर्वेद के मर्म को जानने वाले, आयुर्वेद में पारायण कहलाते थे। आयुर्वेद विद्यालय में तो मेरी पुत्रियां की सन्तानों का जन्म होता रहा हैं।

मुझे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने निर्णय कराते हुए कहा है कि राष्ट्र की यह प्रणाली राजा के राष्ट्र को वैभवन को हनन करने का अधिकार नही होता, कि मेरी पुत्रियों के श्रृङ्गार को प्रजा के द्रव्य को अपने ऐश्वर्य में परणित करते चले जाएं । यह प्रणाली मानो कुछ समय की प्रणाली है यह परम्परा की प्रणाली नही हैं राजा स्वयं ऐसा उद्योग उद्गम करता रहा है और उद्गम करके पृथ्वी वसुन्धरा के गर्भ में अन्न इत्यादि को उत्पन्न करता रहा है राजा उसको पान करते रहे हैं और राजा प्रजा में भ्रमण करता हुआ अपने अस्तित्व और राष्ट्र को ऊँचा बनाता रहा है। मैं आज विशिष्ठता में इस सम्बन्ध में जाना नही चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि हमारे यहां बहुत ऊर्ध्वा में परम्परा रही है। क्योंकि मनु जी ने इस सम्बन्ध में प्रणाली को निर्धारित किया। यह राष्ट्र की प्रणाली को आज मानव अपने में ओझल करता चला जा रहा है। इसीलिए राजा और प्रजा सर्वत्र चिन्ता में मग्न हो करके यह राष्ट्र अग्नि के काण्ड की प्रतिभा में रत्त होने के लिए तत्पर हो रहा है।

विचार आता रहता है कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई कालों में प्रगट भी कराया, आज मैं उस आभा में जाना नही चाहता हूँ विचार केवल यह कि वाममार्ग पने को समाज को त्यागना चाहिए। वे उर्ध्वगति बन करके कर्तव्यवाद में रत्त हो जाएं। क्योंकि कर्तव्य में मानव की प्रतिभा है। कर्तव्य में आत्मीयता है कर्तव्य में राष्ट्रीयवाद है और कर्तव्य ही समाज को आनन्द की वृत्ति में परणित करा देता है। अब मैं अपने पूज्यपाद से आज्ञा

पाऊंगा क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब उड़ाने उड़ते हैं तो यह बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ते हैं विचार यह कि विश्वामित्र के यहो दो सौ चौरासी ब्रह्मचारी को धनुर्विद्या का अध्ययन कराते रहे है। राम के काल में देखो, ऐसे ऐसे दो सौ छतीस विद्यालय थे जहां धनुर्याग की विद्या को प्रदान किया जाता था और उसमें अस्त्रों शस्त्रों का ज्ञान और विज्ञान अन्तरिक्ष में उड़ाने उड़ना और एक एक यन्त्र का निर्माण करना, यह परमाणु अणु विद्या को जानने वाले, उस सयम अभ्युदय होते रहे हैं और राष्ट्र को ऊँचा बनाते रहे हैं इस प्रकार के विद्यालय प्रायः होनें चाहिएं जिससे पुनः से राम राज्य प्रणाल में यह समाज परिणित हो जाएं। और मानव अपने में सुखद अनुभव करने लगे। तथा अपनी अपनी आभा में रत्त रहना चाहिए, ऐसा मेरा सदा यह विचार रहता है। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी अभी मेरे प्यार महानन्द जी ने अपने भव्य विचार दिए। इनके विचारों में एक विडम्बना केवल यह है कि राष्ट्र और समाज दोनों पवित्र बन जाएं। और उनके हृदय में एक दाह है और वे प्रार्थना करते रहते है। कि राष्ट्र पुनः से पवित्र बन जाएं। और हर एक मानव मानव से प्रीति युक्त हो करके इस संसार की प्रतिभा में ज्ञान को अपने में समाहित करते रहें। ताकि विचार पवित्र रहें, क्योंकि समाज जब ऊँचा बनता है। भौतिक विज्ञान भी होना चाहिए और उस भौतिक विज्ञान में परमपिता परमात्मा की पुट लगी रहनी चाहिए। जिससे भौतिक विज्ञान से मानव को अभिमान न आ जाएं, क्योंकि अभिमान ही मृत्यु है। अभिमान रक्तमयी वृत्तिधारा कहलाती है आज का विचार अब सम्पन्न होने जा रहा है अब वेदों का पठन पाठन होगा।

६ 25 02 1990 पुष्प 59 आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चल जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणागान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा

महिमावादी हैं और जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं, क्योंकि यह जो जगत है यह अपने में परिपूर्ण है, और यह अपने में ही अपने को दर्शा रहा है। इसीलिए परमपिता परमात्मा इस सर्वत्र जगत में विद्यमान रहते हैं, क्योंकि वे जड़ और चेतना में, दोनों के गर्भ में निहित रहने वाले, चैतन्य देव है।

परमात्मा का स्वरूप

तो हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा और उसका सदैव गुणागान गाते रहें क्योंकि हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन कर रहा है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं, और जितना भी वेदों का ज्ञान, परमपिता परमात्मा की अमूल्यतव निधि है जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, अन्वेषण कर रहा है, और विचारता है, उड़ाने उड़ता रहता है। परन्तु वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं, इसीलिए मानव भी अन्त में मौन हो जाता है, परन्तु अन्त में वह मौन हो जाता है क्योंकि उस परमपिता परमात्मा का जो विषय है, वह इन्द्रियों में समाहित नही हैं, क्योंकि इन्द्रिय अपने में अपनेपन का विचार, ब्रह्मा वह अपने में दृष्टिपात आते रहते है। परन्तु परमपिता परमात्मा जो रहस्यतम है, वह इन्द्रियों से ऊर्ध्वा में रमण करने वाला है। मानो इन्द्रिय उसका बखान नही कर पाती है, अन्त में इन्द्रियों का विषय मौन हो जाता है। तो वे परमपिता परमात्मा जो अनन्तमयी है, मानो उसके जीवन में मानव सदैव रमण हो जाता है, तो हम परमपिता परमात्मा की महिमा और उसका सदैव गुणागान गाते रहें।

आज हम उस परमपिता परमात्मा, जो हमारे अन्तर्हृदयों में विद्यमान रहता है, मानो उसको हम नही जान पाते, मेरे प्यारे! देखो, आज का हमारा वेदमन्त्र अपने में, एक अनूठी वार्त्ता प्रगट कर रहा है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनूठा है, अनुपम है, न्यायकारी है, और अनन्तमयी विद्यमान है, और इन्द्रियों का विषय वह नहीं, इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की आराधना और उसको अपने अन्तर्हृदयों में दृष्टिपात

करना चाहिए। क्योंकि परमपिता परमात्मा प्राप्त हृदय गुफा में होता है, जब हम हृदय रूपी गुफा को अपने में लाना चाहते हैं, तो मानो वे परमपिता परमात्मा की अनुभूति हो जाती है, तो आओ मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें परमपिता परमात्मा की महिमा का जहाँ गुणगान गाया जाता है। वहाँ अनन्तमयी जो हमारे हृदय में इन्द्रियों का विषय विद्यमान रहता है, मानो उस अन्तर्हृदय की आभा को हमें जानना चाहिए।
आओ मुनिवरों! देखो, मैं तुम्हें विशेष विवेचना नही दूंगा क्योंकि विचारं ब्रह्मा कृतं देवाः बेटा! ऋषि मुनियों की सभाएं और ऋषि मुनियों का जो अपने में विचार विनिमय होता रहा है, वह बड़ा विचित्र रहा है, और वह अपने में बड़ा अनूठा है, तो हम उस परमपिता परमात्मा का जो ज्ञानं भूतं ब्रह्मणा जो ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहने वाला है। हम उस परमपिता परमात्मा को जानने के लिए सदैव तत्पर रहें।
तो आओ मुनिवरों! आज मैं तुम्हें एक ऋषि के द्वार पर ले जाना चाहता हूँ, क्योंकि वह ऋषि अपने में मन्त्र दृष्टा कहलाते हैं, तो इसीलिए वेदमन्त्र के ऊपर जितना अध्ययन करने वाला ऋषि है, मानो वह अपने में स्वतः प्रकाश को अपने में लाना चाहता है, जिस प्रकाश के लिए अनन्तमयी मानो उस परमपिता परमात्मा का जो अनन्तमयी प्रहा है। उसे अपनी इन्द्रियों के माध्यम से नही दृष्टिपात कर पाता है, तो इन्द्रियों का विषय जब जान लेता है, तो उसमें वह तत्पर हो करके विचार विनिमय करने लगता है।
आओ मेरे पुत्रों! मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें विवेचना देना नही चाहता हूँ, कि हमारा विचार विनिमय यह कि हम अपने देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, जड़ और चेतना की प्रतिभा में रत्त रहते हुए, हम उसके मौलिक स्वरूप को जानने के लिए सदैव तत्पर रहें।
तो आओ मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ ऋषि अपने में विचारता रहा है कि मानव का आध्यात्मिवाद क्या है और भौतिक विज्ञान क्या हैं क्योंकि प्रत्येक मानव परम्परागतों से बेटा! सृष्टि के प्रारम्भ से और वर्तमान के काल तक इन वाक्यों के ऊपर विचार विनिमय करता रहा है, यह आध्यात्मिवाद क्या है, और भौतिक विज्ञान क्या है, परन्तु यह दोनों ही विज्ञान हैं, अपने

में मेरे पुत्रों! देखो, यहाँ नाना ऋषि मुनि विचारते रहे हैं, एक समय बेटा! देखो, महर्षि वैशम्पायन अपने आसन पर विद्यमान हैं, और उनके आश्रम में महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज का आगमन हुआ, महर्षि विभाण्डक मुनि ने उनसे जिज्ञासा प्रगट की और उन्होंने यह कहा कि हे प्रभु! यह जो आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञान है, इसका मूल क्या है, मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने इसका उत्तर देते हुए कहा, वैशम्पायन बोले कि आध्यात्मिक और भौतिक दोनों मानो एक दूसरे से उपराम होना है। जैसे एक मानव एक आध्यात्मिक भौतिक विज्ञान से उपराम हो गया है, अणु और परमाणु को विभक्त करने में लगा हुआ है, और उसी में रत्त रहता हुआ विज्ञान की अन्तिम चरण सीमा पर मानो वह अपने में मौन हो जाता है, और वह जहाँ वह मौन हुआ है, वहाँ से आध्यात्मिक विज्ञान का प्रारम्भ होता है, आध्यात्मिक विज्ञान क्या है? और भौतिक विज्ञान क्या है? दोनों अपने में परस्पर एक ही सूत्र में पिरोने से मनके हैं। तो मुनिवरों! देखो, भौतिक विज्ञान वह कहलाता है कि जितना भी संसार का विज्ञान है, जितना आत्मा के सम्बन्ध में ज्ञान है, संसार का, उसको आध्यात्मिक विज्ञान कहते हैं, परन्तु देखो, जब आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कर गया है, तो भयंकर जो कर्मकाण्ड है, कर्म महिमा है, इस कर्म को अच्छी प्रकार जानना होगा और जब कर्म को जाना जाता है तो वह भौतिकवाद में रमण करता हुआ आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कर जाता है। तो महर्षि वैशम्पायन ने कहा कि भगवन! कि मेरे विचार में तो यह आया है कि हम भौतिक और आध्यात्मिक अपने में परस्पर महानता में रमण करते रहें। जिससे हमारा मानवीयतव इस भौतिक विज्ञान से उपराम हो जाएं, तो भौतिक विज्ञान किसे कहते हैं।

तो आओ मुनिवरों! आज मैं तुम्हें महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के विद्यालय में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे हैं, और भौतिक विज्ञान में लगे हुए हैं, क्योंकि विद्यालय में भिन्न भिन्न प्रकार के ब्रह्मचारी अध्ययन करते हैं। एक ब्रह्मचारी चाहता है मैं कर्मकाण्डी बन जाऊं, एक ब्रह्मचारी चाहता है कि मैं आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता बनूं, तृतीय ब्रह्मचारी कहता है मैं ब्रह्मवर्चोसि बन जाऊं। मेरे पुत्रों! देखो, और ब्रह्मचारी कहते हैं कि नहीं, अपने में गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करने वाला बनूं। मेरे

पुत्रों! देखो, सब महानुभाव और ब्रह्मचारियों का एक ही मन्तव्य हुआ है कि हम जब तक इससे उपराम नही हुए हैं, जब तक आध्यात्मिक में प्रवेश नही कर पायेंगें। तो महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ, परमाणु विद्या को अध्ययन करने वाले ब्रह्मचारी विद्यमान हैं और मुनिवरों! देखो, वह परमाणुवाद के ऊपर, अपनी विज्ञानशाला में प्रायः वह रमण करते रहे हैं, और उन्हें एक मार्ग प्राप्त हो जाता है। कहीं वह अग्नि के रूप में प्रवेश हो जाते हैं, कहीं परमाणु और अणु में प्रवेश कर जाते हैं, परन्तु वह इस क्रियाकलाप में लगे हुए हैं, और तत्पर हैं।

तो आओ मुनिवरों! देखो, मैं तुम्हें एक विशेषता में नहीं केवल अध्ययन की प्रतिक्रियाओं का वर्णन करने के लिए चला हूँ कि मानव को कितना गम्भीरता से अपने जीवन में महानता की आभा में रमण करना है, जिससे मानवीयतव मेरे पुत्रों! देखो, भौतिक विज्ञान में भौतिक विज्ञानवेत्ता मेरे पुत्रों! देखो, परमाणुओं का विभाजन कर रहा है, और उसमें भी वह दृष्टिपात कर रहा है कि इस परमाणु को कहाँ तक मुनिवरों! देखो, कितनी उड़ान और इसमें विद्यमान है, तो मेरे प्यारे! योगी एक साधना में जब प्रवेश हो जाता है। वह एक भौतिकवाद को साधना में दृष्टिपात करता है और उसको दोनों विभागों में विभक्त कर देता है।

मेरे पुत्रों! देखो, प्रमाणां भूतं ब्रह्मे कृतं देवाः वह जो परमाणुवाद में वैज्ञानिक भौतिक विज्ञानवेत्ता लगा हुआ है उसे अन्न की पिपासा भी नही हो रही है, जल पिपासा भी नही हैं, एक ही पिपासा लगी रहती है कि मैं भौतिकवादी बनूं, और मैं विज्ञानवेत्ता बन करके सागर की प्रतिभा में रमण करने लगूं। ऐसा उसका मानवीयतव विचार होता है, उसका नाम भौतिक विचार कहते हैं क्या? भौतिक विचार में यह भी कई प्रकार का माना गया है, एक भौतिक विचार यह है कि मानव अपने क्रियाकलापों में लगा हुआ है, और वह दैनिक क्रियाकलपों में लगा ही वह भौतिकवाद में रमण कर रहा है, परन्तु एक भौतिकवाद वह कहलाता है, भौतिक विज्ञान जो मेरे प्यारे! देखो, रजोगुण, तमोगुण, और इस भौतिकवाद की जो वृत्तियाँ है। उमसें लगा हुआ है। मेरे पुत्रों! देखो, एक प्रवृत्ति और भौतिकवाद की कहलाती है, जहाँ मानो देखो, अपने में उस ब्रह्म को

प्रकृतिवाद को ब्रह्मवर्चोसि में लगा रहा है, ब्रह्म और चरी में अपने को परणित कर रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, वह भी भौतिक विज्ञानवेत्ता कहलाता है, तो यहाँ नाना प्रकार का भौतिक विज्ञान जब हमारे समीप आने लगता है, तो हमारे यहाँ भौतिक विज्ञान अपने में एक बड़ा विश्वसनीय बन करके और एक महानता की ज्योति में रत्त हो जाता है।

तो आओ मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें विशेषता नहीं केवल विचार ये कि भौतिक विज्ञानवेत्ता बेटा! अपने में वह जो परमाणुओं के यन्त्रों में विद्यमान हो करके, अन्तरिक्ष की यात्रा कर रह है। मेरे प्यारे! वह पृथ्वी के गर्भ में भ्रमण कर रहा है, वह कहीं मुनिवरों! देखो, मण्डलों की आभा में रमण कर रहा है कहीं मन को उसमें प्रविष्ट कर देता है, कहीं मानो देखो, उसको हृदय रूपी ज्योति में यह ध्यानावस्थित हो जाता है वही मानव है बेटा! जो अणुओं और परमाणुओं में रत्त हो करके बेटा! देखो, यन्त्रित बन रहा है। यन्त्रों का निर्माण कर रहा है। तो जितना भी यह विज्ञान है, यह भौतिकता से ओत प्रोत कहलाता है, परन्तु देखो, जहाँ रजोगुण और तमोगुण की प्रतिभा में लगा हुआ भी मानो देखो, यह प्रकृति का बखान कर रहा है, वह तीन गुणों वाली है, रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण वाली है, परन्तु वह उसमें लगा हुआ, वह एक साधना के स्वरूप में प्रवेश हो जाता है। मुनिवरों! देखो, मानव अपनी आभा में मानो विचार रहा है, और मानो क्रियाकलापों में रत्त हो करके बेटा! भौतिक विज्ञानवेत्ता यही तक नही वह मेरे प्यारे! देखो, अपनी उड़ाने उड़ता हुआ वह लोक लोकान्तरों में प्रवेश हो जाता है, क्योंकि प्राण की ध्वनि को अपने में ध्वनित होता रहता है, और प्राण की ध्वनि पर ध्वनित होता हुआ इतना गम्भीर ध्वनित हो जाता है, वह बेटा! अनहाद के रूप में परणित हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, वह जो स्वर संगम हो रहा है, शरीर में मानो जो मस्तिष्क में जो संगम हो रहा है, उसको योगीजन, साधक जन, मेरे पुत्रों! देखो, उसे अपने में लाना चाहते हैं, और वह अपने में ध्वनित हो रहा है और ध्वनित होता हुआ मुनिवरों! और भी गम्भीरता में प्रवेश हो जाता है।

आओ मेरे प्यारे! यह प्रभु का विज्ञान कैसा अनूठा है, यह विज्ञानमयी आभा कितनी विचित्रतव मानी गई है, तो आओ मेरे पुत्रों! विचार यह चल रहा है कि भौतिकवाद

कितना प्रबल है, और भौतिकवाद में रत्त रहना ही मेरे पुत्रों! उस भौतिकवाद के गर्भ में जो तरंगें रमण कर रही हैं, वह तरंगों से तरंगित होने वाली चेतना है, उस चेतना को हमें जानना है, और उस चेतना के गर्भ में प्रवेश होना है। जहाँ मानो देखो, योगां भूतं ब्रह्मा प्रत्येक मानव की यह पिपासा बनी रहती है, क्या मैं योगेश्वर बन करके मैं मानो देखो, अपने में धर्म के मर्म को जानता हुआ, इस सागर से पार हो जाऊं। मेरे पुत्रों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है ऋषि मुनियों का वो पवित्र जीवन जहाँ मानव बेटा! तपस्वी बन करके, नाना प्रकार की प्रकृति का उपभोग कर रहा है। आओ मेरे पुत्रों! देखो, भौतिक विज्ञानवेत्ता, एक ब्रह्मचर्य व्रत से ले करके और मुनिवरों! देखो, अन्तिम चरण तक, उसकी जो प्रतिनिधियां हैं, अथवा उसका जो सीमाबद्ध होना है, वही तो मुनिवरों! देखो, अपने में अपनेपन का भान करा रहा है। आओ मुनिवरों! देखो, मैं तो तुम्हें विशेषता में नही ले जा रहा हूँ, विचार केवल यह कि मुनिवरों! हमारे यहाँ तपश्चर होना चाहिए, मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में कहा है, मेरे पुत्रों! भगवान राम जब लंका को विजय करने के पश्चात जब मुनिवरों! देखो, अपने में वह अपनी अयोध्या में पधारे, तो वहाँ बेटा! एक बड़ा उत्सव, समारोह हुआ, जिसमें महाराजा शिव और मुनिवरों! देखो, महर्षि वशिष्ठ विश्वामित्र और भी नाना ऋषि मुनि विद्यमान थे। मेरे पुत्रों! देखो, और महापुरूषों का एक समागम था, तो उस समय भगवान राम से यह कहा लंका को विजय करने के पश्चात क्या, भरत ने कहा हे भगवन! ब्रह्मणे व्रतं दिव्यं ब्रव्हा उन्होंने कहा राष्ट्र को भोगिये। मानो देखो, राष्ट्र का कर्तव्यवाद में रत्त हो जाईएं। तो राम ने यह कहा भगवन! मैं इतना सुयोग्य नही हूँ कि जो राष्ट्र को उन्नति दे सकूं मैं इतना सुयोग्य नहीं हूँ कि जो राष्ट्र को ऊर्ध्वा में गमन करा सकूं। भरत ने कहा प्रभु! मैं भी इतना सुयोग्य नहीं, जो मैं राष्ट्र का पालन कर सकूं, मेरी इच्छा सदैव यह बनी रहती है, क्या हमे मानो देखो, अमृतं ब्रह्मणा कृतं देवाः मैं इस राष्ट्र को नही भोगना चाहता, मैं वृत रहना चाहता हूँ, ऋषि मुनियों के उपदेश उनका उपदेशामृत पान करने के लिए मैं सदैव तत्पर रहता हूँ। तो हे भगवन! मेरी यह इच्छा नही हैं कि मैं राष्ट्र को भोंगूं। मेरे पुत्रों! देखो, जब यह वाक्यं ब्रह्मणे तो राम ने कहा क्या हे भरत! तुम नही भोगते

तो मुझे भी इच्छा नही। क्योंकि मैं भी तपश्चर में परणित हो जाऊंगां। जब मैं सुयोग्य हो जाऊंगा, जब मैं इस क्रियाकलापों में तत्पर हो जाऊंगा। मेरे पुत्रों! देखो, वशिष्ठ मुनि महाराज ने राजतिलक के लिए तत्पर रहे तो राम ने कहा प्रभु! मैं राष्ट्र को नही चाहता हूँ। मैं तपस्या करना चाहता हूँ। क्योंकि मैं राष्ट्र के सुयोग्य तो हो जाऊं, क्योंकि जब मैंने लंका में विजय किया तो रजोगुण, तमोगुण वाले जो शब्द हैं, वह मेरे अन्तःकरण में विद्यमान हैं, क्योंकि जब भी राष्ट्र का एक समागम होता है और राष्ट्र में मानो जब संग्राम का समागम होता है, हो वह अनूठा है, मानव अपने में विचारों में बडी गृतों में घृणामयी में परणित हो जाता है, तो इसीलिए भगवान राम ने जब यह कहा कि मैं राष्ट्र को नही भोगूंगा, तो शिव ने कहा कि कहो राम! तुम क्या चाहते हो। उन्होंने कहा प्रभु! मेरा जो विचार है वह रजोगुण, तमोगुण में परणित हो गया। मैं यह चाहता हूँ तपं ब्रह्मणा कि मैं तपस्या करने चला जाऊं। मेरे प्यारे! ऋषि मुनियों ने वह वार्त्ता स्वीकार की, वह भयंकर वनों में तपस्या करने लगे और वह तपस्वी कहलाता है, जो अपनी इन्द्रियों को जितेन्द्रिय बनाता हुआ, और वह सागर से पार होने का प्रयास करता है।

तो मेरे पुत्रों! मुझे कुछ स्मरण आ रहा है, ऐसा कुछ भान आ रहा है, सम्भवं ब्रह्मा सम्भवं रुद्रो भागं आस्वातं ब्रह्मणे कृता, भगवान राम बेटा! आज्ञा पा करके, समारोह के पश्चात, वह भयंकर वन में चले गये, मानो देखो, तपस्या करने लगे, वह तपस्या में तपश्चर हो गये, और उन्होंने एक इतनी विचित्र तपस्या की सम्भवा रूद्रं सम्भवा कृतं देवत्वां मेरे प्यारे! राम तपस्या करने लगे, विचार आया कि तपस्या क्या, साधना क्या है? मेरे पुत्रों! देखो, तपस्या उसे कहते हैं जहाँ मन, प्राण और मुनिवरों! देखो, विचारों का तीनों का एक समूह बन करके सर्वगर्त्री बन जाती है। मेरे प्यारे! देखो, मन, कर्म विचार को ले करके ही मानव नाना प्रकार के देखो, वृत्तियों में रत्त हो जाता है आओ मेरे पुत्रों! विचारा सम्भवं ब्रह्मणे सम्भव तपा ब्रहे राम तप रहे हैं, तपस्या कर रहे हैं, मौन रह रहे हैं, जो क्रियाकलापों में लाने वाली वस्तु उसका उपार्जन ब्रह्मे मेरे पुत्रों! राम को तपस्या करते हुए, समय हो गया राम तपस्या कर रहे हैं, मौन हैं, चिन्तन कर

रहे हैं, और अपने जीवन को चिन्तनीय बना रहे हैं, तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने बारह वर्ष का तप किया और बारह वर्ष में उन्होंने इन्द्रियों को एकाग्र लाने का प्रयास किया और इन्द्रामां भूतं ब्रह्मा कृतं भौतिक विज्ञान को अपने में लाने का प्रयास किया, क्योंकि भौतिकवाद अपने में एक अनूठा माना गया है, भौतिक विज्ञान अपने में आभा में परणित कर रहा है।

भगवान राम का तप

तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार क्या राम तपस्या में परणित हैं, प्रातःकालीन मेरे पुत्रों! देखो, भरत उनके समीप जाते और चरणों की वन्दना करके मुनिवरों! देखो, अपने गृहाश्रम में प्रवेश करते मेरे पुत्रों! देखो, ऐसा स्मरण आ रहा है, ऐसा मुझे अनुभव हो रहा है, यह बेटा! आज मैं राम की तपों में स्थली में हम विद्यमान हैं। मेरे पुत्रों! देखो, राष्ट्र को नही चाहते तपस्या को चाहते हैं। राष्ट्र को नही चाहते हैं, मेरे पुत्रों! देखो, रजोगुण, तमोगुण को नही चाहता और बिना रजोगुण, तमोगुण के राष्ट्र अपने में राजा नही कहलाता, समाज में अपने में समाज के प्रति भानी नही रह पाती, तो आओ मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें विचार दे रहा हूँ, और यह विचार यह कि राम अपने में तपस्वी बन गये, और राम को बारह वर्ष हो गएं तपस्या करते करते व्यतीत हो गये, तपं हृदयानि गच्छतं तपं ब्रह्मणे लोकां मेरे प्यारे! देखो, रजोगुण, तमोगुण जब इन्द्रियों के संयोग से इन्द्रियों के विषयों को धारण करने वाला मन है, मन मुनिवरों! देखो, प्राण की सहायता बन करके वह प्रणव में परणित हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, अपने में जब वह प्रणव ब्रहे कृतं रसतां भूतं ब्रह्मणे मेरे पुत्रों! देखो, वह अपने में वह भान कर रहा है, विचार कर रहा है, अनूभुति में आना चाहता है, अनुभूति में प्रणं गृति देवाः। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, राम ने कठोर तप करने के पश्चात, उन्होंने जब यह विचार लिया, कि प्रजा मेरे अनुकूल बन रही है, मेरे विधाता तो मेरे अनुकूल पूर्व से ही हैं। परन्तु देखो, उसके पश्चात भी मुझे तपस्या में परणित होना है, तपं हिरणयं तपं ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, राम ने बाहर वर्ष तक, बारह वर्षों में मेरे पुत्रों! देखो, **तीन माह तो उन्होंने जल**

का पान किया, जिससे रजोगुण, तमोगुण समाप्त हो जाए मेरे पुत्रों! देखो, वह कहीं अपना **एक भाग में जल का पान किया**, और मुनिवरों! देखो, तीन माह उन्होंने वायु का सेवन किया वायु को देखो, वह संकल्पोमयी को प्राण में, अपने को धारण कर देते हैं मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने उसके पश्चात अन्नाद को पान किया, अन्नादं भू वर्णनं ब्रह्मे वर्णनं प्रमाणं ब्रीहि कृतं देवाः मेरे पुत्रों! देखो, राम तपश्चर ने, अपनी इन्द्रियों के ऊपर संयम हो गया। संयमी महापुरूष जो होते हैं, वह महान कहलाते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है राम की वह तपोमयी, पवित्र भूमि मानो देखो, जहाँ वह वायु का सेवन करते थे, अपने में महान बनने की कल्पना करते रहे, वही कल्पातित जो जीवन होता है वह कोई महा मृत्युञ्जय बना, वह कृति में रत्त करने वाला है, तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार वेत्ता कहता है, वेद का मन्त्र कहता है, सम्भूति ब्रह्मणा कृतं देवत्वां लोकाः वेद का मन्त्र यह कहता है, वर्णनं ब्रव्हे मेरे पुत्रों! देखो, राम ने तप बारह वर्ष का उन्होंने तप किया और तप करने के पश्चात प्रभु की शरण में चले गये, आनन्द में आनन्दित हो गये, मेरे पुत्रों! तप का वह प्रभाव क्या राम वन में गमन करते थे, अयोध्या में आये, भरत ने चरणों की वन्दना की और उन्होंने कहा सम्भव ब्रहे आईए भगवन! अपने राष्ट्र को भोगिये उन्होंने कहा मुझे भरतं ब्रहे हे विधाता! मुझे इस राष्ट्र की आवश्यकता नही हैं, उन्होंने कहा प्रभु! यह तो स्वीकार कर लिया, आप यह स्वीकार नही कर पाते तो इस राष्ट्र को हम इस प्रकार स्वीकार कर लें।

तो आओ मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या है आज मैं विशेषता में तुम्हें नही ले जा रहा हूँ, विचार केवल यह कि हमें अपने में अपनेपन और देखो, अनकृत्तियों को जानना हमारा कर्तव्य है, तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है, मानव के द्वारा भिन्न भिन्न प्रकार के विचार विनिमय होते रहें हैं विचारों को ले करके मानव आगे अपना एक गमनं ब्रह्मा अपने में गमन होने के लिए तत्पर हो जाता है।

तो आओ मेरे पुत्रों! देखो, वेद का मन्त्र क्या कह रहा है, वेद का मन्त्र यह कह रहा है, तपं ब्रह्मणे व्रतं देखो, भौतिक विज्ञान मेरे पुत्रों! देखो, तपस्या स्थली बन करके रही है, परन्तु वह जो मन में विकृतता आ गई है, अन्न के दोषों की विकृतता आती है, वह जो

विकृतता आ रही है, वही तो मानो देखो, समाज की कृतिभन बन जाता है। तो आओ मेरे पुत्रों! विचार क्या राम का तप पूर्ण होने के पश्चात राष्ट्र को, अपने में राष्ट्र को अपने में धारण किया, और समाज भूतं ब्रह्मे और भी नाना ऋषिवर अपनी आभा में रत्त हो गये, आओ मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें विशेष विवेचना न देता हुआ, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का मैं सदैव गुणगान गाता रहूँ, और देव की महिमा को सदैव अपने में ही धारण कराता हुआ, इस सागर से पार होने की मैं कल्पना करता रहता हूँ। आओ मेरे प्यारे! देखो, विचार क्या, विचार विनिमय क्या, हमारे इन वाक्यों का कि हम मुनिवरों! देखो, तपस्वी बनें, और राष्ट्र को भोगने वाला तपस्वी कहलाता है। राज भोगा नही जाता, राष्ट्र में कर्तव्य का पालन किया जाता है। और कर्तव्य वही है एक आभा जिसमें मानव अपनी मानवीयता को अपने में धारण कर लेता है। आओ मेरे पुत्रों! विचार, विचार केवल यह कि हम ऋषि मुनियों की समीप जा करके, और अपनी जिज्ञासाओं को पूर्ण करके, जो पिपासा जागरूक हो गई हैं, तो मुनिवरों! देखो, उसी पिपासा में ही मानव को अपने में रत्त रहना चाहिए, जीवन की धाराएं महानता में गमन करनी चाहिएं, आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष तुम्हें विवेचना नही दूंगा, आज केवल तुम्हें इतना वाक् उच्चारण करने के लिए कि हम परमपिता परमात्मा जो अखण्ड है, जो देवतव है, उसको हम अपने में धारयामि बनाते रहें, और उसे अपने में धारण करके अपनेपन को अपने में प्राप्त करते हुए, मेरे पुत्रों! सागर से पार हो जाएं, आओ मेरे पुत्रों! विचार यह कि राम की जो तपस्थली है, वह बड़ी विचित्र बन करके और उन्होंने अयोध्या का राष्ट्र भोगा। अयोध्या का राष्ट्र को भोगना नही कर्तव्यवाद का पालन करना है।

तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार विनिमय क्या क्या हम परमपिता परमात्मा की महती में सदैव रत्त हो जाएं, और महती में रत्त हो करके उसकी महती को विचारने लगे, जिससे हमारा जीवन, एक जीवन बन करके आभा में रत्त होता रहे और उन धाराओं में रमण करता रहे, जिससे मानवीयतव अपने में मानवतव में प्रवेश होता है। बेटा! उच्चारण कर रहा था, क्या विद्यालय में भिन्न भिन्न प्रकार के ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे हैं, एक ब्रह्मचारी कर्मकाण्ड चाहता है, एक ब्रह्मचारी ऊर्ध्वा में रमण करता हुआ, उससे ऊर्ध्वा

में चाहता है, एक मानव वह कहलाता है, जो मेरे प्यारे! देखो, अपने में अपनेपन में मानो देखो, धाराएं अपने में सिमट जाती हैं, अपने में उद्बुद्ध हो जाती हैं, वह पुनः से उसी स्थली पर प्रवेश कर जाती हैं।
आओ मेरे पुत्रों! देखो, मैं उच्चारण कर रहा था, क्या ब्रह्मचारी अपने में देखो, कितना ऊर्ध्वा में अध्ययन करते रहते हैं, उस अध्ययन की प्रतिक्रिया को हमें जानना चाहिए, तो आओ मेरे पुत्रों! विचार विनिमय यह हो रहा था कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता को जानने के लिए मंगलं ब्रह्मा व्रतं देवत्वां लोकाः मेरे पुत्रों! देखो, मानव अपने में मानव है, अपने में मानवीयतव कहलाता है, अपने में धारयामि बनता रहता है, तो मेरे पुत्रों! देखो, वह महर्षि ने अपने में तपस्वी बन करके, अपने में अपनेपन को विचारा आओ मेरे पुत्रों! विचार क्या मानो तपस्या उसे कहते हैं, जो मन, प्राण देखो, इन्द्रियों के विषयों को जानता हुआ, मन में और मन के विषयों को प्राण में सिमट जाता है, और प्राण की आभा में रत्त रह जाता है मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना देने नही आया हूँ, विचार केवल यह कि भौतिक विज्ञान क्या है? यह सब भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान में प्रवेश होना है। तो इसीलिए आध्यात्मिकवादी न बनते हुए, विज्ञानवेत्ता बनें और विज्ञानवेत्ता वह कहलाते हैं जो अपनी प्रत्येक आभा को जानने वाले हों। जो मस्तिष्कां भूतं ब्रह्मा जो अपने हृदय में मस्तिष्कां भूतं ब्रह्मणे लोकाम् अपने में नही जान पाते अपने में बेटा! अपनी आभा में रत्त करना चाहते हैं। वे परमपिता परमात्मा जो अनूठा है, जो ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहने वाला है, जो भौतिकवाद और आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करने वाला है, हम उस परमपिता परमात्मा को जानने के लिए सदैव तत्पर हो जाएं, और अपने में अपनेपन को विचारते रहें, और उसके ऊपर मुनिवरों! देखो, परमात्मा की प्रतिभाषितता को विचारते हुए अपने में धारयामि बनना चाहिए।
आओ मेरे पुत्रों! देखो, मैं यह विचार दे रहा था, क्या वे परमपिता परमात्मा कितनी आभा में रत्त रहने वाला है, जिस आभा को, आभा में रमण कराते हुए सागर से पार होने के लिए तत्पर हो जाता है। आओ मेरे पुत्रों देखो, मैं तुम्हें विचार देता हुआ, महर्षि

वैशम्पायन और विभाण्डक मुनि की ये चर्चायें चल रही थी, कि राम के तप की चर्चायें हो रही थी। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वैशम्पायन ने यह कहा है कि अमृतां भूतं देखो, यह विभाण्डक मुनि ने एक पिपासा की है, कि भौतिक विज्ञान क्या है तो ये सब भौतिक विचार की एक माला है एक भौतिक विचार के ये मनके हैं बेटा! मैं तुम्हें आध्यात्मिकवाद की भी चर्चा करूंगा, परन्तु देखो, मैं इससे पूर्व काल में प्रगटं भूतं ब्रहा अग्रणीय बनाना यह हमारा कर्तव्य है तो बेटा! हमारा यह विचार क्या कह रहा है? मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि वैशम्पायन और महर्षि विभाण्डक मुनि की यह चर्चायें होती रही क्या वह मुनिवरों! देखो, कर्तव्य में रत्त हो जाएं, कर्तव्य की आभा को अपने में धारण करने के लिए तत्पर हो जाएं, जिससे जीवन एक अनूठा बन जाएं, जीवन की धाराएं पवित्रतव में गमन कर जाएं, और इस सागर जो हमें दृष्टिपात आ रहा है, महर्षि वैशम्पायन ने यह कहा कि सागर को जानना, और सागर को जान करके भी मौन हो जाना और मौन हो करके जो मानव को अनुभूति होती है उस का नाम देखो, वह आध्यात्मिकवाद की प्रतिभा कहलाती है। तो आओ मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें कल चर्चाएं करूंगा इस सम्बन्ध में, विचार विनिमय क्या कि आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञान, मेरे पुत्रों! देखो, क्या है? जहाँ महर्षि तत्त्व मुनि महाराज की, हम चर्चा कर रहे थे, कि हम विद्यालय में भिन्न भिन्न प्रकार की विचारधारा वालें, देखो, ब्रह्मचारी अध्ययन करते हैं, इन विचारों में एक ही सूत्र में लाने का प्रयास किया जाएं, मेरे पुत्रों! देखो, वह अपने में अपना वृत करते रहे, अपने में अपनेपन को धारण करके बेटा! सागर से पार होने की जो कल्पना है मानो देखो, उसको सार्थक बनाने में तत्पर रहे यह है बेटा! आज का वाक्, अब समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा, कि हमारे यहाँ तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान को ब्रह्मचारियों को कैसे मिलान किया जाता, वे चर्चायें बेटा! मैं तुम्हें कल प्रगट करूंगा, आज का वाक् हम केवल परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएं तो बेटा! देखो, मैं आध्यात्मिकवाद की प्रवृत्तियों को पूर्णता में नही ला सका हूँ। कल इसके आगे की कड़ी मैं आगे वर्णन करूंगा आज का विचार यह कि

परमपिता परमात्मा का यह अमूल्य जगत है, यह मानो जड़ और चेतना वाला जगत है, और वे परमपिता परमात्मा दोनों प्रकार के विज्ञान में निहित रहते हैं, वह देवतव है, तो यह है बेटा! आज का वाक् आज के वाक्, उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि भौतिकवाद और आध्यात्मिकवाद को ऋषि मुनियों ने एक दूसरे में मानो परणित कर दिया है, एक दूसरे में अभ्योदय हो गया है, तो बेटा! देखो, उसे अपने में कहीं कृतिका में रत्त होने के लिए तत्पर रहें तो आज का विचार अब यह सम्पन्न होने जा रहा है, इससे आगे की चर्चा इसी सम्बन्ध में प्रगट की जा सकेंगी, क्या ऋषि मुनि किस प्रकार अपनी आभा में सदैव रत्त रहे हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वे परमपिता परमात्मा जड़ और चेतना के गर्भ के चेतना जड़ और चेतना की आभा में रत्त रहने वाला उसके मूल में वह विद्यमान है। तो हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, कल बेटा! हम यह चर्चां करेंगें अपने चरणों में विद्यमान हो करके क्रियात्मकता का जो उपदेश उन्हें जो भौतिक विज्ञान में दिया जाता उस सम्बन्ध में कल हम वर्णन कर सकेंगें, आज का विचार समाप्त अब वेदों का पठन पाठन।

७ 26 02 1990 पुष्प 59 तप से मानवीय आभा का प्रकटीकरण

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है और उसका ज्ञान और विज्ञान अनन्तमयी माना गया है। तो हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा और उसके गुणों का सदैव गुणगान गाते रहें, क्योंकि हमारा वह जो परम आनन्दमयी श्रोत्रीय जो परमपिता परमात्मा जो अनन्तमयी माना गया है, मानो जिसका यह ब्रह्माण्ड अपने में अद्वितीय माना गया है हम उब ब्रह्माण्ड के ऊपर, जब चिन्तन और मनन करना प्रारम्भ करते हैं, तो हमारा जो आन्तरिक जगत है, उसका बाह्य जगत से समन्वय हो जाता है। आन्तरिक और बाह्य जगत दोनों अपने में महान अद्वितीय बन

करके मानव के अन्तर्हृदय से एक महान प्रतिभा का जन्म हो जाता है, तो इसीलिए हम परमपिता परमात्मा का जो बाह्य जगत है, और जितना अनन्तमयी जगत है, उस दोनों का हमें अपने में समन्वय करना चाहिए। क्योंकि वह अनन्त है, ब्रहा कृतं देवाः तो हम परमपिता परमात्मा के अनन्तमयी, स्वरूप को अपने में धारण करते चले जाएं तो हमारा जो आन्तरिक जगत है वह महान और पवित्र बन जाता है।

आओ हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का सदैव गुणगान गाते रहें और अपने आन्तरिक जगत को पवित्र बनाते रहे तो आज का हमारा वेदमन्त्र हमे यह अपने में प्रेरित कर रहा है कि हम सदैव परमपिता परमात्मा की जो महती है अथवा उसका जो ज्ञान और विज्ञान है उसके ऊपर हम सदैव मनन करते चले जाएं हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक दो प्रकार के विज्ञानवेत्ता होते चले आए हैं एक विचारवेत्ता वह कहलाता है, जो बाह्य जगत में उस महान ब्रह्म का दर्शन करता रहा है, और एक वह मानव है, जो उस परमपिता परमात्मा की अनुभूति और उसके रचाए हुए ब्रह्माण्ड को जो अपने आन्तरिक जगत को दृष्टिपात करने लगता है, तो दोनों प्रकार का जो विचारवेत्ता है, दोनों प्रकार के जो चिन्तन और मनन करने वालें हैं, हमें उनके विचारों के ऊपर अन्वेषण करना चाहिए अथवा अनुसन्धान और मानवीयतव में सदैव तत्पर रहना चाहिए। तो आज का हमारा वेद का मन्त्र कहता है अनन्तां भूतं ब्रह्मणा कृतं देवाः वह जो परमपिता परमात्मा है और अनन्तवान की हमें उपासना करनी चाहिए। जो बाह्य जगत और आन्तरिक जगत दोनों को सजातीय बनाता है अथवा दोनो को अपने में महान बनाने के लिए सदैव तत्पर रहता है।

तप से मानवीय आभा का प्रकटीकरण

तो आओ मेरे पुत्रों! आज का हमारा वेदमन्त्र हमें यह कहता रहता है कि मानव को आन्तरिक जगत को बाह्य जगत से मिलान करना चाहिए क्योंकि हमारे यहाँ दो प्रकार के विज्ञान की परम्परागतों से ही, मानो उसके ऊपर विचार विनिमय होता रहा है और यह विचारता रहा है, कि ये दोनों प्रकार का जो अनन्तमयी जगत है एक भौतिक विज्ञान

है और दूसरा आध्यात्मिक विज्ञान कहलाता है जो भौतिक विज्ञानवेत्ता है वह तरंगेंवाद में अपने को ले जाते हैं, और तरंगित हो करके मानो अपने आन्तरिक जगत का जो तरंगवाद है, उसका मुनिवरों! दोनों का समन्वय करने लगते हैं, तो भौतिक विज्ञान मानो अपने में सार्थक बन करके, मानव के समीप आ जाता है तो इसी से मुनिवरों! देखो, हमारा भौतिक विज्ञान कहलाता है, भौतिक विज्ञानवेत्ता बेटा! जो अपनी स्थलियों में मानो विद्यमान हो जाते हैं, तो उन स्थलियों में विद्यमान हो करके ये चिन्तन करना प्रारम्भ करते हैं, यह परमात्मा का यह कैसा अनूठा जगत है मानो ब्रह्माण्ड है, जिसके ऊपर हमें विचार विनिमय करना है। तो मेरे पुत्रों! देखो, उसके ऊपर चिन्तन कृता ब्रह्म और वह चिन्तन कैसे करता है, वह अपने प्राण और मनस्तव और मुनिवरों! देखो, इसका दोनों का समन्वय जब हो जाता है तो विचार स्वतः प्रारम्भ हो जाता है। तो उस विचारवेदी पर हम विद्यमान हो करके, परमात्मा के अनन्तमयी इस ब्रह्माण्ड को विचारने लगते हैं, और अपने में मुनिवरों! देखो, अपनेपन का ही ध्यानावस्थित हो जाते हैं। तो वह बेटा! देखो, महान तपस्वी कहलाते हैं हमारे यहाँ आता रहा है कि वेद के मर्म को जानने वाला, मेरे पुत्रों! देखो, जितना यह महान, अक्षरों का बोधि हो जाएं, परन्तु देखो, जब तक वेद ज्ञान के साथ में हमारे तपस्या नही हैं, मनन नही है, चिन्तन नही हैं, ब्रह्मवर्चोसि नही है तो मुनिवरों! देखो, हमे वेद का अक्षरों का बोध हमारे लिए निरर्थक बन जाता है। उसका अपना कोई महत्व नही रह जाता। इसीलिए हमारा वेद का मन्त्र कहता है। तपं ब्रह्मणे तपाः वृद्धश्चं ब्रह्मा मेरे पुत्रों! देखो, मानव को तपस्वी बनना चाहिए और तप करना चाहिए, क्योंकि तप ही मानवीय आभा को ऊँचा बना करके और एक दूसरे की पुट लग जाती है, प्रकाश आ जाता है।

तप का स्वरूप

तो मेरे पुत्रों! जब तक मानव अपने मे क्रियात्मक नही बनता है, तो तपस्वी नही बनता है, आचार्यों ने बेटा! यह वर्णन करते हुए कहा बेटा! एक समय याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में ब्रह्मचारियों ने यह प्रश्न किया कि महाराज! यह तप कौन कर रहा है,

और तप किसे कहते हैं? तो महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने यह कहा कि तप कहते हैं मानो ब्रह्मवर्चोसि को जो ब्रह्म और अपनी चरी को जानने वाला है वह मानव तपस्वी कहलाता है। मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभु! वह कौन है? उन्होंने कहा सम्भवं ब्रह्मे क्योंकि बिना तप के संसार में मानव कदापि ऊँचा नही बनता है। कोई भी संसार में पदार्थ ऊँचा नही बनता, जब हम यह कहते हैं कि परमपिता परमात्मा की सृष्टि में ध्यानावस्थित हो करके यह विचारते रहते हैं, कि वास्तव में तप क्या है? क्योंकि वेद का मन्त्र तो तप की बड़ी महिमा का बखान कर रहा है, और यह कह रहा है कि तपं ब्रह्मणा तपो मेरे पुत्रों! देखो, तप के लिए आता है, तो वैदिक आचार्य कहता है क्या यह पृथ्वी जब ग्रीष्म ऋतु आती है तो ग्रीष्म ऋतु में यह पृथ्वी तपायमान होती है। और यह मानो इतनी तपायमान हो जाती है, क्या जैसे वर्षा प्रारम्भ हो जाती है, तो वर्षा प्रारम्भ होते ही यह पृथ्वी नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बन जाती है, तो ये और पृथ्वी जब नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बन जाती है तो यह नाना प्रकार खनिज देना प्रारम्भ कर देती है। मानो देखो, खाद्य और प्रारम्भ वृतं देना प्रारम्भ करती है तो हमे विचारना चाहिए कि यदि सूर्य पृथ्वी को नही तपाएगा, तो यह नाना प्रकार के व्यंजनों का जन्म नही होगा। मेरे प्यारे! व्यंजन नही होंगें, तो पृथ्वी सजातीय नही होगी, और पृथ्वी सजातीय नही होगी, तो मुनिवरों! देखो, भिन्न भिन्न प्रकार की आभा वाले प्राणी नही होंगें। और जब भिन्न भिन्न प्रकार के प्राणी नहीं होंगें तो यह जगत शून्यवत् में प्राप्त हो जाएगा। तो विचारवेत्ता यह कहता है, विचारक यह कहता है कि हे मानव! तू अपने में मानो देखो, पृथ्वी नाना प्रकार के व्यंजनों वाली रहती है, इसी प्रकार यह परितश हो जाती है, और तप में परणित हो करके तपों में निष्ठ हो करके मानो तपं ब्रह्मणा तपं गतं ब्रह्मणे तपाः तो मुनिवरों! देखो, तप की मीमांसा करते हुए, ब्रह्मचारियों से कहा क्या बाल्य काल में ब्रह्मचारी, अपने विद्यालय में तप रहा है, आचार्य के कुल में विद्यमान हो करके, वह तपायमान है, वह मानो अपने मस्तिष्क को मेरे प्यारे! देखो, मानव, प्राण को, उदान को विचारों की उपलब्धि होती है, और यही विचार मेरे पुत्रों! देखो, यही समर्पित करने वाले, विचार है, देखो, आचार्य कहता है हे ब्रह्मचारी! तुम मेरे गर्भ में

वशीभूत हो जा मानो देखो, विचार आता है कि आचार्य का यह गर्भ कौन सा है? जिसमें ब्रह्मचारी समाहित हो जाता है। सु बनाने के लिए। तो मेरे पुत्रों! देखो, वह कहता है सम्भवं ब्रह्मे मुनिवरों! देखो, उसका अभिप्रायः ये है कि वह अपने विचारो में कितनी त्रुटियां हैं, चंचलता है, आचार्य अपने में परणित कर लेता है, और उस वेदी पर ला का करके मानो जैसे परमपिता परमात्मा का यह अनुठा जगत और अनुशासित है, और अनुशासन में वह परणित हो रहा है, सूर्य समय पर उदय होता है समय पर उदय होता है प्रकाश ले करके रात्रि अन्धकार से सजातीय हो जाती है। मेरे पुत्रों! प्रातःकालीन लालिमा से परणित हो जाता है। तो मुनिवरों! देखो, यह सब नियमबद्ध है, वायु देखो, चल रहा है, अग्नि वेग में चल रही है, अग्नि मुनिवरों! देखो, मानव के शब्द को और क्रियाकलापों को ले करके ओर द्वितीय ओर तृतीय उसमें परणित कर देती है द्यौ में प्रविष्ट हो जाती है इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, वह अग्नि है, महान तपं ब्रह्मणे कृतं देवाः तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी विद्यालय में तप रहा है, आचार्य की विचार रूपी जो अग्नि है, ज्ञान रूपी जो अग्नि है उसमें तपायमान हो करके ब्रह्मचरिष्यामि बन रहा है। मानो देखो, ध्यानावस्थित देखो, वह जो गार्हपथ्य नाम की अग्नि है, परणित हो जाता है, वही अग्नि मानव को पवित्र बना देती है।

तो विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, अपने में वह अपने आन्तिरक जगत को बाह्य लाता रहता है परमपिता परमात्मा का जो अनूठा ये जो जगत है भौतिक विज्ञान आध्यात्मिक विज्ञान ये अपने में बड़ा अनूठा माना गया है। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा ब्रह्मचारी विद्यालय में तप रहा है आचार्य अपने पुत्रों को ज्ञान करा रहा है, वह परमात्मा का आश्रित हो करके आचार्य के संरक्षण में, वह परणित हो करके उसकी आभा में निहित हो जाता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार आता है, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज, अपने में महान ओर पवित्रता की वेदी पर विद्यमान हैं। तो विचार क्या मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मचारी तप रहा है, वह ब्रह्मचर्य से तप रहा है वह विचारों से तप रहा है, वह अपने में अपनेपन में ही ध्यानावस्थित हो रहा है। तो मेरे पुत्रों! देखो, वह तपं श्वंजनं ब्रहे कृतं आचार्य वेद का ऋषि कहता है, कि क्या माता अपने में ब्रह्मचर्यवत् से तपायमान

है, और वह तप रही है, ब्रह्मचर्य से तप रही है और वह वीरांगना बन करके विद्या अध्ययन करती हुई मानो देखो, वह तपायमान है, जब तपायमान हो जाती है, तो उसके पश्चात वह ममतामयी को प्राप्त कर लेती है, और वह ममतामयी क्या है मानो देखो, ममत्वं ब्रह्मा जैसे शिशु माता के गर्भस्थल में विद्यमान हो करके मेरे पुत्रों! देखो, तपायमान रहते हैं। मेरे पुत्रों! माता अपने में धारण करने लगती है, तो मानो देखो, वह जो ममतव है, वह अपने में कितना अनूठा है, कितना विचित्र है, पुत्रों! जब यह विचार आता रहता है अमृतं ब्रव्हा कृतं देवाः यज्ञं ब्रव्हा कृते देवत्वां मेरे प्यारे! देखो, वह देवता प्राप्त हो करके बेटा! वही तपस्वी वीरांगना तव और वही तपस्वी मानो ब्रह्मवर्चोसि बन करके ब्रह्म को प्राप्त होते रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो, जो तपस्वी होता है वह सर्वत्र प्राणियों में आत्मा का भान करता है, चेतना का भान करता है, और परमपिता परमात्मा को उससे निहित होता हुआ, अपने में दृष्टिपात करता है तो मानव कहता है प्राणी, प्राणी को उग्रता में नही, वह केवल प्रीति से आभा में रमण करता रहता है, और प्रीति की आभा में रमण करता हुआ अपने में मानो देखो, उस परमपिता परमात्मा को, अपने में समाहित कर लेता है। तो विचार विनिमय क्या, मेरे पुत्रों! यह विशेषता नही, केवल विचार की यह कि मानव को यह तपायमान रहता है, कि मेरी प्यारी माता वीरांगना बन जाती है और वीरांगना बन करके मृगराजों से सर्पराजों से वार्त्ता प्रगट करने लगता है। मेरे पुत्रों! देखो, कैसा अनूठा जगत है, कैसा अग्नि का यह मानो अनुशासन है जिसको अपने में धारण करके बेटा! देखो, प्राणी प्राणी से ही मानो देखो, प्रीति करता है।

महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज

मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! जब देखो, महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज, जब तपस्या कर रहे थे और कुक्कुट मुनि महाराज, एक समय तपस्या करते हुए मानो देखो, वह इतना ज्ञान हो गया था, क्या प्राणी मात्र में ही प्रभु का दर्शन हो रहा था, प्राणी मात्र में ही मुनिवरों! देखो, एक अग्नि मानो प्रदीप्त होती हुई, दृष्टिपात हो रही थी। तो मेरे

पुत्रो! देखो, उनके समीप एक मृगराज मानो गमन करता है, और वह उसी के आश्रम में रत्त रह करके, आश्रम में आ जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, वह सिंहराज मानो देखो, महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज के चरणों की वन्दना करता रहता था। तो वह जब वन्दना करता तो ऋषि उसे मानो देखो, उसे अपनी करूणामयी हस्त वर्धन करते रहते मेरे पुत्रों! देखो, सिंहराज अपने आसन को चले जाते। तो यह मुनिवरों! देखो, मानव की आत्मीयता का, एक प्रमाण है आत्मयीता जब इतनी बलिष्ठ हो जाती है, ज्ञान और विज्ञान से सजातीय हो जाती है। तो मुनिवरों! देखो, उसमें हिंसा नही रह पाती, वह सबमें एक आत्मा का दर्शन करता है, परमात्मा का दर्शन करता है, और वह जो इस प्रकार का दर्शन करने वाला जिज्ञासु है, वे परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाता है।
आओ मेरे प्यारे! विचार विनिमय यह कि हम प्रभु अपनी आभा में मनं कृतं मुनिवरों! देखो, मानव को कितना महान बनना है, साधक बनने से पूर्व, उसे अपने को अपनेपन में ही अपने को दृष्टिपात करना है, उसके पश्चात यह साधना करता है, तपस्या करता है और यही तपस्या का मूल है हिंसा में परिणित रहता है। चिन्तन करने के लिए तत्पर रहता है, वह मुनिवरों! देखो, परमात्मा की आभा को प्राप्त नहीं कर पाता। परमात्मा की आभा को जो मानव प्राप्त करता है बेटा! वह तो प्रकाश के समान बन जाते हैं वह मुनिवरों! देखो, सिंहराज को अपने में और सिंहराज को अपने में अपने में जब आचार्य का दर्शन करता है। तो मेरे प्यारे! वह देखो, तपश्चर कहलाते हैं, यह विवेक है, तपस्या है, तपस्या और विवेक में मुनिवरों! देखो, जब मानव परणित हो जाता है। वह याग करने वाला याज्ञिक कहलाता है, जो याग में परणित रहता है, और याग में यह विचारता है कि मुझे तपस्वी बनना है। तो याग को बेटा! देखो, उसे अपनी अन्तरात्मा के याग को विचारना होगा अन्तरात्मा के याग को विचार करके, बाह्य याग का उसे समन्वय करना होगा। मेरे प्यारे! देखो, जितने होता बन करके, देखो, आहुति देते रहते हैं, विचार आता रहता है, वेद का ऋषि याज्ञवल्क्य कहता है तपं ब्रह्मणा तपं यज्ञं भूतं ब्रह्मा तपेः बेटा! वेद का आचार्य कहता है॰ क्या ब्राह्मण तपते हैं, मेरे प्यारे! देखो, ब्राह्मण को यदि ज्ञान नही होगा, और यदि ज्ञान अक्षरों का होगा, तो वही मानो मूल्यवान

नही, और जो मुनिवरों! देखो, वह अक्षरों का बोधि हो, उसके अनुसार वह बरतने वाला हो, अनुकूल मुनिवरों! देखो, गति करने वाला हो, तो वह महान कहलाता है, वह तपस्वी कहलाता है। इसी प्रकार जो ममत्वां भूतं ब्रह्मे मेरे प्यारे! देखो, मुझे एक लोक्तति स्मरण आती रहती है वह कई समय पुनरूक्ति है वेद की लोलुक्ति मुझे स्मरण आती रहती है जहाँ याग का प्रश्न चलता है ज्ञान का प्रकरण चलता है, ज्ञान याग से पृथक नही है और देखो, याग से ज्ञान भी पृथक नही हैं।

विचार आता रहता है कि हमारे ऋषि मुनियों ने सृष्टि के प्रारम्भ से जितने भी मुनिवरों! देखो, क्रियाकलाप हैं, मानव के, जो देखो, धर्म और मानवीयता से गुथे हुए हैं, उनको ऋषियों ने याग की संज्ञा दी हैं और उनको याग माना है, वह याग मुनिवरों! देखो, सृष्टि के प्रारम्भ से चला आ रहा है, मेरी पुत्रियां जब सन्तान को जन्म देती हैं, तपस्या के अनुसार मेरी माताएं तो बेटा! देखो, उसका नाम भी याग माना गया है। मेरे पुत्रों! देखो, जब उसे लोरियों का पान कराती हुई, उसे मानो देखो, उसे उत्तम शिक्षा प्रदान करती है वह भी उसका याग माना गया है। जब बाल्य को मुनिवरों! देखो, हृदय से चुम्बन करती हुई, अपने दार्शनिक विचारों दे देती है माता तो वह भी याग हो रहा है। बेटा! देखो, आचार्य के कुल में विद्या का याग हो रहा है, वह याग में परणित हो रहा है, तो यहाँ आचार्यों ने बेटा! प्रत्येक प्रकरण याग में परणित किया है, और यह कहा है कि यह सर्वत्र याग है बेटा! देखो, वह याग की विवेचना करती थी, याज्ञवल्क्य से यज्ञदत्त ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु! देखो, हृदय का याग क्या है? जो आपने हमें वर्णन कराया। तो उस समय याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि हृदय का याग तो बड़ा विशाल याग है। मेरे पुत्रों! देखो, पञ्च याग कहा जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, जब याग में हम जब देखो, ब्रह्मणा कृतं जब याग देखो, अपने में याग करके तो बेटा! रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, और मुनिवरों! देखो, शब्द, जब मुनिवरों! देखो, इनका पञ्चीकरण हो करके, वह पञ्चीकरण हो करके समाहित हो है। तो संसार से वार्त्ता लाते हैं, हृदय को समाहित कर देते हैं, मानव कोई रूप ला रहा है, कोई शब्द ला रहा है, कोई गन्ध ला रहा है, कोई रसों को ला रहा है, मेरे पुत्रों! देखो, कोई स्पर्श को ला रहा है अरे, सर्वत्र

मुनिवरों! देखो, यह पञ्च होता बन जाते हैं, और ये पंचामृत बना करके, जब योगी बेटा! अपने में पान करना चाहता है, जो अपने हृदय में ही मानो जिसको समाहित कर लेता है, वह बेटा! देखो, याग कर रहा है, वह हृदय रूपी जो याग है, वह पंचामृत को पान करते हैं, हमारे यहाँ ऋषि मुनि पंचामृत को वह जान करके रहे हैं, और वह जो पंचामृत है वह क्या है बेटा! बाह्य इन्द्रियों का जो विषय है और उन इन्द्रियों को हृदय में समाहित कर देता है वह मेरे पुत्रों! देखो, वह परमात्मा की सृष्टि में रत्त हो करके, मेरे पुत्रों! देखो, अमृतव को पान करने वाला, महान और विवेकी पुरूष कहलाता है।

आओ मेरे पुत्रों! तुम्हें विशेषता में ले जाना नही चाहता हूँ। मैं कोई व्याख्याता नही हूँ, केवल तुम्हें परिचय कराने के लिए आता हूँ, कि वह परिचय क्या है कि हम परमपिता की महती का सदैव गुणगान गाते रहें परमपिता परमात्मा महती में सदैव हम रमण करते हुए, मेरे पुत्रों! देखो, यागों का अपने में कृत करते रहें बेटा! कृत कहा जाता है तो विचार आता है बेटा! देखो, वह यज्ञमान, अपनी यज्ञशाला में विद्यमान है, याग कर रहा है, अपने को हृदय को माप करके याग करता है, याग वह अपने को याग है, वह याग मान करके किया जाता है, अन्तर्हृदय को एकाग्र करता हुआ, वह अग्नि के मुखारबिन्दु में अपना साकल्य प्रदान करता है। मेरे पुत्रों! यज्ञमान याज्ञिक कहलाता है।

तो आओ मुनिवरों! देखो, मैं तुम्हें विशेष चर्चा नहीं दूंगा, आज मैं तुम्हें ये परिचय देना चाहता हूँ कि अपने हृदय को यह पंचामृत को पान करते हुए बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जब मैं मुनिवरों! देखो, शिकामकेतु उद्दालक और उनकी पत्नी का प्रातः कालीन मेरे पुत्रों! देखो, उसको पान करते रहते थे, और पंचामृत को पान करते रहते और दोनों प्रकार के विज्ञान को जानते रहते थे बेटा! आध्यात्मिक और भौतिकवाद की चरमसीमा को जानते, तो आओ मेरे पुत्रों! देखो, विचार यह चल रहा है वेद का ऋषि कहता है तपं ब्रह्मणे कृतं ब्रह्मचारी कहता है, आचार्य के समीप यह तप क्या है? तो वेद का ऋषि कहता है कि माता अपने में तपायमान है, और वह तप ही मुनिवरों! देखो, यह जो रमण कराता है, बाह्य जगत का जो तप है, और आन्तरिक जगत का जो तप है, वह दोनों का समन्वय करने का नाम विवेक कहा जाता है, उस

विवेक को हमें धारणा करना है, विवेकी बनना है, आओ मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें विशेष विवेचना न देता हुआ वेद का ऋषि कहता है, अमृत को पान करने वाला मुनिवरों! बेटा! अग्नि में प्रवेश करता रहता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा यह विचार, क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा को जानते हुए, ओर परमपिता परमात्मा के जगत को जानते हुए, मानो देखो, हम परमपिता परमात्मा की महती को जान करके ओर पंचाग्नि को जान करके, हम प्रभु को जान सकते हैं, यह है बेटा! उस प्रभु की अनन्तवान जगत की महिमा, चाहे वह प्रभु अनन्तवान है। ओर यह ब्रह्माण्ड भी अनन्तवान है, और ज्ञान भी अनन्तवान हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ज्ञानी जब बनता जबकि उसके साथ में तपस्या होती है, और देखो, ज्ञानी ही तपस्वी होता है मेरे पुत्रों! देखो, अक्षरों का बोधि है ओर यदि वह अपनी इन्द्रियों को नही सजातीय बनाता, मन का उसमें वास नही वह तपस्या नही करता तो बेटा! वेदों का ज्ञान अक्षर बोध बन जाता है, और वह वेद नही रह जाता जो अक्षरों का बोधि कहलाता है। तो इसीलिए हम प्रकाश को अपने में जब तक धारणा नही करेंगें, जब तक तपस्वी बन करके तो बेटा! आज मैं यह विचार दे रहा हूँ, कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा और उसके ज्ञान ओर विज्ञान को सदैव विचारते रहें। बेटा! उसका ज्ञान ओर विज्ञान बड़ा अनन्तमयी माना गया है, आज का विचार यह कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा का सदैव गुणगान गाते हुए, उसकी महिमा को विचारते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। बेटा! यही संसार में आने का लक्ष्य है। और उसके अनुसार हमारा क्रियाकलाप होना चाहिए हम प्रभु को प्राप्त होते हुए सागर से पार हो जाएं यह है, बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा, तो मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट कर सकूंगा, आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा को जानते हुए अपने में तपों में परणित होते हुए तपस्वी बन जाएं बेटा! तप की चर्चा मैं कल प्रगट करूंगा, आज का विचार अब यह सम्पन्न होने जा रहा है। आज के विचारों का अभिप्रायः यह है कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते हुए, और ब्रह्मचारी और आचार्यों का गुणों का

समन्वय इतना विचित्र होना चाहिए और देखो, इतने प्राणी मात्र हैं और प्राणीयों का समन्वय कैसा होना चाहिए बेटा! यह चर्चाएं आज मैंने तुम्हें प्रगट की हैं, तो बेटा! यह शेष चर्चा तप के ऊपर विचार विनिमय होगा आज का विचार क्या कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते हुए इस सागर से पार हो जाएं। संसारवाद से पार होने के लिए मानो नाना प्रकार अनुष्ठान करता रहता है नाना प्रकार का अध्ययन करता रहता है, तो बेटा! यह तप की महिमा का वर्णन और देखो, गम्भीरता में करता हुआ, आज का विचार अब सम्पन्न होने जा रहा है, अब मैं शेष चर्चाएं पठन पाठन होगा। आज के विचार क्या कि हम परमपिता परमात्मा को अनन्तवान है अनूठा है तपोमयी है उसकी महिमा का हम गुणगान गाते रहें यह है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा।

८ 27 02 1990 पुष्प 59 प्राणायाम से रोग शमन

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चल जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं और वह हमारे पुरोहित हैं जो पराविद्या को प्रदान करने वाले हैं और वह मानो अमृतं ब्रह्मा वर्णनं और वह अमृत है, और वरने योग्य है, और हमे उसे अपना वरण बना लेना चाहिए। उसे वरने के पश्चात, मानव को शेष वरण की आवश्यकता नहीं हैं। हमारे यहाँ प्रत्येक मानव अपना कोई न कोई प्रतिनिधि का वर्णन करता रहता है, उसे वरता रहता है। परन्तु यह संसार प्रत्येक मानव, मानव से कटिबद्ध रहता है, और वह अपने में अपनेपन को विचारता रहता है, और उसी के अनुसार, वह एक दूसरे को अपने में धारण करता हुआ, उसे वरता रहता है। परन्तु हमारे ऋषि मुनियों ने तपस्वियों ने यह कहा है, कि वह मानव परमपिता परमात्मा को अपना वरण

बना लेता है, अथवा उसे वर लेता है, तो उसे शेष वरण की आवश्यकता नही हैं।

ईश्वर प्रणिधान

तो इसीलिए हमारे यहां वेदमन्त्र कहता है कि उस परमपिता परमात्मा को हमें अपना वरण लेना चाहिए और उसको जब अपने में वर लेता है, तो उसका आत्मोत्थान होता जाता है और वह उसी में रमण करता हुआ, अपने में अपनेपन को विचारता रहता है, और परमपिता परमात्मा की महिमा में, सदैव वह रत्त हो जाता है। तो विचार आता रहता है, वेद का ऋषि कहता है कि हे मानव! तू उसको अपना वरण बना और उसको अपना सखा बना करके मानो अपनी अन्तरात्मा में उसको ध्यानावस्थित करते हुए, और अपने हृदय में जो अगम्यी ज्योति है, उसको ज्योति से ज्योति का मिलान करता चल। जिससे तेरा मानवीय कल्याण हो जाएं, और तू मानो परमपिता परमात्मा जो सखा है, मानो उसे तू अपना वरण बना करके संसार सागर से पार हो जाएं। तो मेरे प्यारे! देखो, यह वेद का मन्त्र हमें यह कह रहा है कि हमें परमपिता परमात्मा को अपना वरण बना लेना चाहिए, तो उस परमपिता परमात्मा की जो महिमा है, अथवा उसका जो यह ब्रह्माण्ड है इसको तुम अच्छी प्रकार जानने लगो। क्योंकि हमारे यहाँ ऋषि मुनियों का, इस संसार को विचार विनिमय करते हुए, उन्होंने कहा है कि हम सम्भव ब्रहे कृतं कि हम मानो परमपिता परमात्मा का जो अनन्तमयी ब्रह्माण्ड है, और उस ब्रह्माण्ड में हम सदैव रत्त होते रहें और ब्रह्माण्ड में जो प्रतिक्रिया हो रही हैं, उन प्रतिक्रियाओं को अपने अन्तर्हृदय में धारण करके मानो उनका दोनों का एकोकीकरण होना चाहिए, प्रत्येक मानव परम्परगतों से ही, साधना की चर्चा करता रहा है। बेटा! हम बहुत समय से साधना की चर्चा करते रहे हैं, और साधना के क्षेत्र में जाने का सौभाग्य भी प्राप्त होता रहा है। कि परन्तु हम यह गौरव के सहित कहा करते हैं कि हमें साधक बनना चाहिए और साधक वही बनता है सबसे प्रथम, जिसे परमपिता परमात्मा का यह विश्वास हो जाता है कि परमपिता परमात्मा है और वह हमारे अन्तर्हृदयों में विद्यमान है, वह हमारे अंग संग रहने वाला है, जब इस प्रकार का उसे

निश्चय हो जाता है, तो वह संसार को जितने कालिमा कर्म विचार हैं, वह उनको अग्रणीय नही होने देता। मानो वह उससे दूरी चले जाते हैं, परन्तु जब परमपिता परमात्मा का विश्वास मानव को नही हो पाता, साधक को विश्वास नही होगा, तो उसकी साधना पूर्णतव को प्राप्त नही हो सकती। मेरे प्यारे! देखो, मानव जब ही तक, अपने मन को स्थिर करता है, या बाह्य जगत में स्थिर करता है, जब तक उसे द्वितीय दृष्टिपात हो रहा है। परन्तु देखो, जब उसे यह भान हो जाता है, कि मैं मनस्तं ब्रह्मा कृतं लोकाः कि मैं आत्मा हूँ और मैं चेतना हूँ, और मैं विवेकी हूँ। तो मुनिवरों! देखो, मनस्तव की तरंगें उसे प्रभावित नही कर पाती है। परन्तु जब उसका विश्वास ओर विश्वस्तं ब्रहा जब तक यह विश्वास नही हो पाता, कि परमपिता परमात्मा है, उससे पूर्व मानव नाना प्रकार की विडम्बना करता रहता है। नाना प्रकार के रूपों में रमण करता रहता है मेरे पुत्रों! देखो, परमपिता परमात्मा एक महान है, और वह संसार का रचयिता है, ओर हमारे अंग संग रहने वाला अन्तर्हृदयों में प्रकाश को देने वाला है। तो हमे अपने में उस परमपिता परमात्मा को अपने में धारण कर लेना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, विज्ञानवेत्ता भी इस वाक् को विचारते रहते हैं, आज बेटा! मैं पुनः से तुम्हें तपस्या के क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। क्या प्रत्येक मानव को तपस्वी रहना चाहिए, ओर तप करना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, तप किसे कहते हैं? मैंने बहुत पुरातन काल में मैने तप की विवेचना करते हुए कहा था कि तप कहते हैं कि जो मानव प्रत्येक इन्द्रियों को ज्ञान से सजातीय बना देता है ओर देखो, उनको सजातीय नही बना पाता देखो, अपने में वह अधूरेपन में सदैव रत्त रहता है।

स्थावर सृष्टि

तो आओ मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है एक समय बेटा! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज, समुद्र के तट पर विद्यमान थे, परन्तु वह कुछ गम्भीरवत चिन्तन करने लगे, ओर वह चिन्तन करते हुए अपने में मानो समुद्र की तरंगों को ग्रहण करने लगे ओर वह जो समुद्र की जो तरंगें आ रही हैं, ओर उसमें नाना प्रकार की सृष्टि का वह

भान कर रहा है। तो मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार की सृष्टियां हैं, उसे अपने में ही नहीं, परन्तु वह संसार की प्रतिभा को दृष्टिपात करता रहता है। जो ये संसार रूपी समुद्र है जिस संसार समुद्र की कल्पना करने वाले ऋषि यह कहते हैं कि वे परमपिता परमात्मा कैसा अनूठा है, कैसा महान है, मानो जिस देव ने चार प्रकार की सृष्टि का निर्माण किया है, वह सृष्टि कैसी अदभुत है। तो मुनिवरों! देखो, वह उसका भान करते हुए, ऋषि कहता है अमृतां देवतं ब्रह्मा कृतं लोकाः मेरे प्यारे! वह उद्गीत गाता हुआ, ऋषि कहता है, क्या यह जो मानो सबसे प्रथम जो सृष्टि है, जिसका नाम स्थावर कहलाता है, उस स्थावर सृष्टि में, मेरे पुत्रों! देखो, स्थिर रहने वाला जगत, और वह स्थिर रहा है परन्तु बलवती हो रहा है, और वह नाना प्रकार की वनस्पतियों के रूप में विद्यमान रहता है। और पर्वतों की शृंखला के रूप में परणित रहता है। तो मानो देखो, बेटा! वह अपना ब्रहो कृतं वह स्थावर सृष्टि है। जो स्थावर सृष्टि ही मानो देखो, समुद्र को, अपने में निहारते रहते हैं, और वह समुद्रों से वह जलों का उत्थान करते रहते हैं, और जल का उत्थान करके मुनिवरों! देखो, उसी से मेघ मण्डल बनते हैं, उसी से वायु का परिवर्तन होता है। मेरे पुत्रों! देखो, जब उससे वृष्टि होती है मेघ मण्डलों का निर्माण हुआ, और धीमी वृष्टि हो गई तो मुनिवरों! देखो, ये नाना प्रकार की सृष्टि बेटा! खाद्य और खनिज रूप में दोनों में परिवर्तित हो जाती है। तो मुनिवरों! देखो, विचार आता रहता है, कि परमपिता परमात्मा जो देवतव कहलाता है, उस देव ने मानो स्थावर सृष्टि का प्रारम्भ किया, वह स्थावर सृष्टि मानो देखो, वह वृक्षों के रूप में हैं मुनिवरों! देखो, उसमें नाना प्रकार के मानो फलस्वरूप आते रहते हैं, कोई भी सृष्टि इस प्रकार की जो देखो, औषध बन करके रहती है, कोई सृष्टि स्थावर में इस प्रकार की है जो मुनिवरों! देखो, प्राणवर्धक बन करके प्राण का सञ्चार कर रही है वह प्राणायाम करने वाले जानते हैं, बेटा! क्या मानव कितनी आभा में रत्त रहता है, वह साधना का एक रहस्य माना

गया है।

प्राण संचालन

मेरे पुत्रों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ बेटा! प्राण विद्या का स्वधान किया गया, और वह प्राण विद्या को ले करके बेटा! मानव को तपस्वी बनाते रहे हैं और उनका रूग्ण भी शान्त होता रहा, तो इसीलिए वह मुनिवरों! देखो, वेद का ऋषि कहता है प्राणं ब्रह्मे भविता प्राण सुताः प्राणों लोकां वर्णासुतं ब्रह्मे लोकाः मेरे पुत्रों! देखो, प्राण को ले करके ऋषि अपनी विवेचना प्रगट कर रहा है और वह अपने आश्रम में, नाना ब्रह्मचारियों को अध्ययन करा रहा है, और ये कहता है कि हे ब्रह्मचारियों! तुम मानो देखो, अपने में विद्या का अध्ययन करते हुए, मानो देखो, मानो सबसे प्रथम तुम्हें अपने में प्राण को संचारित करना है, और प्राण को जानना है, मेरे पुत्रों! देखो, प्राण हमारे शरीर में, गमन कर रहा है, वही प्राण मुनिवरों! देखो, बाह्य जगत में गमन कर रहा है, तो दोनों प्रकार का जो प्राण है, इसे हम एक विश्वभान नाम का प्राण है, एक विशेष प्राण कहलाता है। तो वह कहता है हे साधकों! आओ, तुम प्राण विद्या को जानने वाले बनो। मेरे पुत्रों! देखो, प्राणायाम करने वाले रेचक, कुम्भक और पूरक मानो शीतली प्राणायाम संकल्पोंमयी प्राणायाम, कहलाते हैं। ये नाना प्रकार का जो प्राणायाम है यह क्यों मानो देखो, साधको के लिए और साधकों को बाध्य किया जाता है। वेद कहता है प्राणायाम भवितं प्राणं भवि कृत्यं भव्या प्राणों को भवित प्रमाणं कृतं लोकां मानो यह तो प्राण है, यही मानव को विकृत बनाता है, यही प्राण है, जो मुनिवरों! देखो, मानव का समूह बना देता है, यही प्राण है मुनिवरों! देखा जिसका सन्निधान मात्र से मानो जिसके ऊपर उसके मिलान को जानने वाला, योगेश्वर बन जाता है, साधक ही नही, वह योगी बन जाता है। तो महात्मा तत्त्व मुनि महाराज के ही द्वारा जब बेटा! ब्रह्मचारी प्राण का अध्ययन कराते रहते थे, तो बेटा! देखो, प्राण को एक अंग में ले जाना प्राण को मुनिवरों! देखो, एक स्थली पर स्थिर कर देना, यह सब प्राण की कृति कहलाती है। तो इसीलिए हमें यह विचारना है, कि हम अपने में

प्राणायाम करने वाले बनें, और वह जो प्राण विद्या है, मुनिवरों! देखो, जो रेचक प्राणायाम करता है, मानव, जब कुम्भक करता है तो बेटा! प्राणायाम जिस अंग में प्राण नही जाता है, उस स्थली पर भी मुनिवरों! देखो, प्राण गमन कर जाता है और जब प्राण को बाह्य जगत में हम रेचक रूप में कृत करते हैं, तो मानो वही प्राण, मेरे पुत्रों! देखो, मानव को वृतक बना करके मुनिवरों! देखो, उसी आभा में उसे परणित कर देता है। मेरे पुत्रों! देखो, ये प्राण अपने में विद्या की कुंजी कहलाती है, जो मानव प्राण को जानता है, प्राण विद्या को अपने में संचय करना जानता है वह योगेश्वर बन जाता है। वह विवेकी बन जाता है, और यह प्राण विद्या को अपने में धारण करता हुआ महानता की ज्योति में ज्योतिवान हो जाता है।

प्राणायाम से रोग शमन

तो आओ मेरे पुत्रों! हमारा ये विचार यह चल रहा है, महात्मा तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ, नाना ब्रह्मचारी जब अध्ययन करते थे, तो बेटा! वह प्राण विद्या को अपने में धारण करते रहे हैं, जैसे प्राण विद्या में मुनिवरों! देखो, सबसे प्रथम अमृतां देवत्वाम् मानो देखो, अपने में यक्ष्मा का रुग्ण है, रोगी है, तो मुनिवरों! देखो, यक्ष्मा को शान्त करने के लिए, उसे शीतली और देखो, कुम्भक प्राणायाम में रत्त रहना चाहिए, और सूर्य प्राणायाम की उसमें पुट लगनी चाहिए। तो मुनिवरों! देखो, यक्ष्मा जो रूग्ण है उससे देखो, मुक्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ याग का बड़ा वर्णन आया है एक देखो, वह जो सुगन्ध है सुगन्ध को लाना चाहिए जिस मानव को देखो, किसी प्रकार का देखो, अमृतां यक्ष्मा का रूग्ण है देखो, उसे याग करना चाहिए याग में देखो, सुन्दर सुन्दर पदार्थों को प्रदान करता है, उनका साकल्य बना करके और गो घृत के द्वारा मुनिवरों! उसमें देखो, अमृतां उसमें करीट की देखो, समिधा होनी चाहिएं, अम्ब की समिधा होनी चाहिएं, और मुनिवरों! देखो, वह जो याग करता है उस याग करने से मेरे पुत्रों! देखो, उसका यक्ष्मा रूग्ण समाप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, जब वह प्राण की प्रतिभा में रत्त हो जाता है, तो प्राण अपने में सखा बन करके मानव को मानवीयता

के क्षेत्र में ले जाता है तो विचार आता रहता है, बेटा! महात्मा तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ नाना ब्रह्मचारी अपने में अध्ययन करते रहे हैं और नाना ब्रह्मचारियों का यह कर्तव्य रहा है कि वह विद्या का अध्ययन करना और प्राणायाम करना बेटा! प्राण को एक अंग में लाना प्राण को एक मानो मस्तिष्क में स्थिर कर देना और वही प्राण मेरे प्यारे! प्राण की उड़ान से वह लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाला बन जाता है।

तो विचार आता रहता है कि सबसे प्रथम हम उस प्राण विद्या को जानने का प्रयास करें जो प्राण को अपान में संगठित कर देता है, जैसे मुनिवरों! वेद का मन्त्र हैं और वेद के मन्त्र में मुनिवरों! एक मानव कड़ी बन जाती है, एक दूसरा शब्द मानो एक दूसरे से कटिबद्ध हो जाता है जैसे प्राण को माध्यम से साधक मुनिवरों! देखो, अपने ब्रह्मरन्ध्र में, ब्रह्मरन्ध्र में देखो, प्राण और अपान को एकाग्र करके, दोनों को एक सूत्र में लाने से, वह जो अनहाद एक स्वर, एक मानो मानव के मस्तिष्क में एक ध्वनि हो रही है, और वह अपने में ध्वनित हो रहा है, उस ध्वनि को मुनिवरों! श्रवण करने लगता है, और उस ध्वनि में मानो जो एक शब्दों की जो कड़ी बनी हुई है, एक माला बनी हुई है। उस माला को वह अपने में धारण कर लेता है, और उस माला को जान जाता है जब वह माला को जान लेता है तो बेटा! माला इनमें गम अम्ब्रहा बन करके मुनिवरों! देखो, माला में माला को दृष्टिपात करता रहता है। तो विचार आता रहता है, बेटा! वह जो ध्वनि है वही शब्दों की कुञ्जी बन करके बेटा! व्याकरण के रूप में परणित हो जाती है।

तो विचार आता रहता है मैं इस सम्बन्ध में विशेषता तुम्हें देना नही चाहता हूँ, विचार केवल यह कि मुनिवरों! देखो, कि महात्मा तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ नाना प्रकार के देखो, प्राण को एक दूसरें में पिरोया जाता है, एक दूसरे में माला बनाई जाती है। तो मुनिवरों! देखो, जैसे प्राण को अपान में जब प्रवेश करते हैं, तो बेटा! देखो, प्राण को कैसे अपान में प्रवेश किया जाएगा। यह साधको का विषय है, परन्तु जब साधक अपनें विद्यमान होता है तो मुनिवरों! देखो, प्राण जो वेग में चल रहा है यह जो प्राण है जो नाभि केन्द्र से भमण करता हुआ, ब्रह्मरन्ध्र में अग्रत करता हुआ, यह नाभि केन्द्र से

मानो उद्बुद्ध होता है, और यह घ्राण के द्वारा बाह्य जगत में प्रवेश कर जाता है। तो हमारे अन्तर्हृदय से एक श्वास के साथ में मानो इतना परमाणुवाद चला जाता है, इतनी प्रतियां धाराएं चली जाती हैं जितनी धाराओं से, जितने परमाणुओं से माता के गर्भस्थल में एक शिशु का निर्माण हो जाता है।

तो मेरे पुत्रों! देखो, यह जो प्राण है जो ब्रह्मरन्ध्र से होता है हुआ अग्रणीय बनता है तो इसी प्रकार वह अपनां ब्रहे मेरे पुत्रों! देखो, बाह्य जगत से अरबों खरबों परमाणुओं को ले करके बेटा! वह गमन करता रहता है वह बाह्य जगत में प्रवेश करना ओर बाह्य से आन्तरिक में ले जाना, यह साधकों का सबसे प्रथम एक नृत्त होता रहा है ये परम्परागतों की वार्त्ता तुम्हें प्रगट करा रहा हूँ। तो मेरे पुत्रों! देखो, प्राण को अपान में अपान किसे कहते हैं? बेटा! जितनी ऊर्ध्वा गति करने वाला, वह अपान कहलाता है, जितनी भी मुनिवरों! देखो, वह वीरतव से ले करके ओर मुनिवरों! देखो, त्वचा कृतियों से अमृतों को धारण करता हुआ वह सब उसको ध्रुवा ऊर्ध्वा गति बनाता रहता है, वह मुनिवरों! देखो, वह मुनिवरों! अपान कहलाता है, अपान वायु से समन्वय रहता है और जब वायु से वेग में गमन कराती है तो बेटा! देखो, अपने में वायु यान वह को गमन करने वाला बन जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, पृथ्वी से जल को ऊर्ध्वा में गमन कराना, अमृत को देना ओर मुनिवरों! देखो, धारा में परणित हो जाना, यह सर्वत्र मुनिवरों! देखो, अपान का एक क्रियाकलाप कहा जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, जितनी भी वीरतव से ले करके ओर गमनतं ब्रह्मे पृथ्वी के जलाशयों तक समुद्र के जलाशयों तो मुनिवरों! देखो, उसका समन्वय रहता है, वह अपान कहलाता है। ओर जब अपान का ओर प्राण का दोनों का समन्वय रहता है, तो मेरे प्यारे! देखो, अन्तरिक्ष का जो स्वामी है, जो भुवः का स्वामी है, मेरे पुत्रों! देखो, वह स्वामी को हम अमृतं देखो, प्राण कहते हैं। वह मुनिवरों! देखो, जो अब्रहा कृतं स्व तक ले जाने वाला है, वह अपान का क्रियाकलापं ब्रह्मे देखो, वह अपान से उसका समन्वय रहता है, और अपान अपने में अपानता को धारण करता हुआ, मेरे प्यारे! लोक लोकान्तरों को दृष्टिपात करने लगता है। जबकि वह देखो, प्राण और अपान को मिलान करता है, उसी काल में वह प्रभु की जो अनन्तमयी सृष्टि है,

देखो, वह लोक लोकान्तरों का जो जगत है, उसे वह दृष्टिपात करने वाला कहलाता है। मेरे पुत्रों! देखो, महात्मा तत्त्व मुनि महाराज के, यहाँ नाना प्रकार का अध्ययन होता रहा है महात्मा तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ बेटा! प्राण विद्या के ऊपर, अन्वेषण किया गया, यह जो प्राण है यह बेटा! प्राण एक एक श्वास में देखो, गतिवान होता रहा है और द्यौ से इसका समन्वय हो जाता है और द्यौ से माता के गर्भ में वह मुनिवरों! देखो, माता के गर्भ का समन्वय होता है और वही परमाणुवाद बेटा! गमन करते हुए शिशु के रूप में माता के गर्भस्थल में प्रवेश हो जाते हैं।

प्राण वृधिका औषध

तो मेरे पुत्रों! मैं विज्ञान में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, बेटा! वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है, सम्भवं ब्रह्मे मेरे पुत्रों! देखो, प्राण विद्या को जानना चाहिए, मैंने तुम्हें प्राण विद्या के ऊपर कई प्रकार की विवेचना दी हैं, बेटा! देखो, त्रेता के काल में, जब राम और रावण का संग्राम हो रहा था, तो मुनिवरों! देखो, लक्ष्मण मानो अस्त्रों शस्त्रों की प्रवाह उनकी शक्ति से, प्राण शक्ति से मुनिवरों! देखो, वह मूर्छित हो गया, और वह अपने में जब शव रूप में विद्यमान हो गये, तो मुनिवरों! देखो, वह राजा रावण के यहाँ जो वैद्यराज थे, वह मानो देखो, जो औषधियों में जो प्राण विद्या गमन कर रही है, उस प्राण विद्या को वह जानते रहते थे, मेरे पुत्रों! देखो, वह ब्रहे वह उन्होंने देखो, जब वह उनको लाया गया, उनसे कहा गया कि महाराज! यह मूर्छित है। यह वैद्यराज निष्पक्ष होते हैं, मानो देखो, वैद्यराज अपने में निष्पक्ष हो करके, बोले कि भगवन! मेरे द्वारा इसकी कोई औषध नही हैं, और पर्वतों से जाने से इसकी औषध तुम्हें प्राप्त हो जाएगी। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण ऐसा आ रहा है, उस औषध को लाया गया, क्योंकि उसमें प्राण विद्या, विशेष थी, और प्राण विद्या का मुनिवरों! देखो, प्राण उसमें ह्रास हो गया था, जब उस औषध को लाया गया, उस औषध का नाम, प्राण वृधिका मानो प्राण वृधिका एक औषध कही जाती थी। मेरे पुत्रों! देखो, वह उसे लाया गया तो मेरे पुत्रों! देखो, वह जब लक्ष्मण को प्रदान की तो वह अपने में मानो देखो, लक्ष्मण के रूप में

परणित हो गया। परिणाम क्या है हमारे वाक् उच्चारण करने का बेटा! देखो, वह जो परमपिता परमात्मा ने जिस सृष्टि का सृजन किया है, उसमें प्राण विद्या कितनी विशिष्ठ मानी गई है। हम उस प्राण विद्या को अपने में लाने का प्रयास करें, यही प्राण विद्या बेटा! देखो, प्राण और अपान दोनों ही मुनिवरों! देखो, अपने में अपनेपन को विचारते रहते हैं, तो उसको हमें प्राणायाम करना चाहिए। ब्रह्मचारी को बेटा! विद्यालय में, सबसे प्रथम मुनिवरों! देखो, प्राण की विद्या को, आचार्य प्रदान करता है, और वह यह कहता है कि तुम प्राणायाम करो, तुम साधना करो। मेरे प्यारे! प्रत्येक इन्द्रियां हैं, जो हैं वह प्राण की प्रतिभा से, वह प्रतिष्ठित रहती हैं, और प्राण विद्या है जो मुनिवरों! देखो, वह महान विद्या कहलाती है। प्राण विद्या से कोई रूग्ण नही रहता है शरीरों में, मेरे प्यारे! हमारे यहाँ देखो, औषध विज्ञान, प्राण विज्ञान, नाना प्रकार की विज्ञान की धाराएं प्रायः मानवीय मस्तिष्कों में सदैव नृत्त करती रही हैं।

संकल्पोमयी प्राणायाम

तो विचार आता रहता है वेद का आचार्य कहता है, कि हम प्राण और अपान को जानने वाले बनें, जब प्राण ओर अपान को हम दोनों को विशेषता की वृत्तियों में विशेषज्ञ बन जाएंगें, तो हमारा प्राण मानो देखो, हम उसमे सिद्ध हो करके, परमात्मा की सृष्टि को निहारने लगेंगें। क्योंकि बिना प्राण विद्या को जाने, हम प्रभु की सृष्टि को निहार नही पायेंगें, क्योंकि मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! एक समय महात्मा तत्त्व मुनि महाराज के द्वारा, कुछ ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे थे, ओर वह प्रातःकालीन मानो देखो, एक पंक्ति में विद्यमान हो करके, और वह गुड़ा वृत्ति औषध को, ले करके देखो, उसे प्रदान करते रहे, और उस औषध को प्रदान करके वह प्राण विद्या को संचालित करते हुए, उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारियों! एक पंक्ति में विद्यमान हो जाओ, उन्होंने बेटा! संकल्पोमयी प्राण का अभ्यास कराया और संकल्प प्राण ऐसा होता है जो प्राण में कुम्भक करना चाहते हैं, तो मानो देखो, संकल्प से मानो प्राण को मन को एकाग्र करते हुए मन को प्राण के सहित गमन करते हुए, बेटा! उस प्राणायाम को किया जाता है, वह मंगलं

ब्रहा जब वह मुनिवरों! देखो, अपने प्राण वृत्ति में रत्त हो जाता है। तो बेटा! देखो, ब्रह्मचारी का हृदय पवित्रता को प्राप्त होने लगता है। और अपने में वह गमन करता है क्योंकि उसका ब्रह्मचरिष्यामि से घनिष्ट समन्वय होता है। इसीलिए कोई भी ब्रह्मचारी अपने में विवेकी और महान बनना चाहता है। तो उसे प्राणायाम करना चाहिए और वह संकल्पोंमयी जो प्राण है, उसे मानो सूर्य से भरण करना और मुनिवरों! देखो, वह चन्द्रकेतु से मुनिवरों! देखो, बाह्य जगत में त्याग देना, इसी प्रकार देखो, चन्द्र से ले करके सूर्य को गमन कराना है तो मुनिवरों! देखो, **जब रसना को दन्तों के मध्य में** मुनिवरों! देखो, वह गमन कर दिया जाता है, उसे प्राप्त किया जाता है तो मुनिवरों! देखो, प्राण देखो, अमृतां कहलाता है वह संकल्पोमयी प्राण से मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी को संसार में किसी भी षट रस का और किसी का स्वादन नही आता, क्योंकि देखो, रसना को जो समन्वय रहता है, षट रसों से रहता हैं रसों को ले करके मानो देखो, एकोकी रस बन जाएं मेरे प्यारे! देखो, उसकी साधना पूर्ण हो जाती है।

तो विचार आता है, मैं साधना के क्षेत्र में तुम्हे ले जाना नही चाहता हूँ विचार केवल यह कि प्राण और अपान दोनों का मिलान करना चाहिए दोनों में सतत रहना चाहिए मेरे प्यारे! देखो, महात्मा तत्त्व मुनि महाराज प्राणायाम करा रहे थे, संकलपोमयी प्राणायाम, मैं रूग्ण नही होना और औषधियों को अध्ययन करने से प्राण वर्धक है, जो स्थावर सृष्टि में, मेरे पिता ने, सृष्टि के पिता ने जिनका मानो सृजन किया है और वह सूर्य की किरणों के साथ मानो देखो, औषध विज्ञान को जाना जाता है, एक औषध ऐसी होती है, जो मुनिवरों! देखो, मानव के श्वास के साथ ही वह मृतक बन जाती है, एक औषध ऐसी होती है जो हस्तों में आते ही मुनिवरों! देखो, उसका जो महत्व है, वह समाप्त हो जाता है, एक औषध होती है, जो मुनिवरों! देखो, जो मानव के नेत्रों से ही मुनिवरों! देखो, उसका क्षय हो जाता है, तो मेरे प्यारे! प्रभु का विज्ञान और प्रभु की जो रचना है, वह बड़ी अनुपम मानी गई है, मुनिवरों! देखो, एक हिमालय की आभा में एक औषध होती है, जो औषध का नाम पुत्रदा कहा जाता है, वह पुत्रदा कहलाती है, तो मुनिवरों! देखो, वह पृथ्वी के तनों में मुनिवरों! देखो, खरल बन जाती है, जो

मुनिवरों! देखो, उसको हस्तों से जब उसको स्पर्श किया जाता है, तो मुनिवरों! देखो, वह औषध मृतक बन जाती है, वह पुत्रं भव सम मेरे प्यारे! देखो, उसको स्वर्ण के पात्रों में लिया जाता है, और स्वर्ण के पात्रों में ले करके मुनिवरों! देखो, जब उसका खरल बनाया जाता है, सूर्य की किरणों में उसे कृत किया जाता है, निम्बा कृति औषध ले करके उसको मिलान किया जाता है, तो मेरे प्यारे! देखो, इस इक्कतीसवें दिवस तक मुनिवरों! देखो, उसका खरल होना चाहिए, मानो जिस मेरी प्यारी माता को पुत्र की हीनता हो जाती है, मानो पुत्र नही हो पाता, मेरे प्यारे! देखो, वह मुझे कृतियों में उसे प्रदान कर देना चाहिए, मेरे प्यारे! देखो, उसे याग करने के पश्चात प्रभु से प्रार्थना करते हुए, उसे मुनिवरों! देखो, दिया जाएं, तो वह पुत्रों! उत्पन्नो ब्रह्मा लोकं प्रव्हा मेरे प्यारे! देखो, अपने में वह प्रकाश में रत्त हो जाती है।

मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण आता रहता है, जब मुनिवरों! देखो, महाराज दशरथ के यहाँ जब पुत्र नही था, तो उन्होंने एक पुत्रेष्टि याग कराया था, मुझे वह याग स्मरण आ रहा है, अग्नि ऋषि से जब यह कहा गया कि महाराज! यह गृह है, और वशिष्ठ मुनि महाराज ने यह प्रार्थना महर्षि श्रृङ्गी से की कि महाराज पुत्रों! भवतं ब्रह्मा कृतम् देवाः, वेद में मन्त्र आए हैं, क्या औषध होनी चाहिए परन्तु देखो, यह गृह प्रकाश मान हो जाने चाहिए देखो, उस समय अंगिरा से यह प्रार्थना की अंगिरा ऋषि से यह प्रार्थना की, कि महाराज आप इस वेदमन्त्रों को जानते हैं, इस प्रकार का औषध लाओ, तो उनहोंने देखो, कजली वनों से उस औषध को लाया गया, और ला करके उसे इसी प्रकार खरल किया गया, और उसी प्रकार की देखो, समिधा एकत्रित की गई, इसी प्रकार का साकल्य एकत्रित किया गया और एक एक वर्ष तक मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचर्य व्रत के जो ब्रह्म का चिन्तन करना, ब्रह्मचर्य का एक अर्थ नही होता है, ब्रह्मचर्य कहते हैं, जो धातु को मानो स्थिर करने वाला साधक जो होता है, वह ब्रह्मचारी है, एक ब्रह्मचारी वह कहलाता है, जो प्रत्येक श्वास के साथ में मानो प्रत्येक श्वास को अपना मनका बना लेता है, और उसे माला बना करके अपने में धारण कर लेता है, एक मानो वह भी ब्रह्मचारी कहलाता है, एक ब्रह्मचारी वह है, जो विद्या का अध्ययन कर रहा है, प्राणायाम

कर रहा है, वह मानो देखो, अपने में नृत्त करना हुआ, और वह विद्या से कहता है, कि हे विद्या! तू मेरे कण्ठ में वशीभूत हो, मेरी इन्द्रियों को सजातीय बना, तो मानो देखो, एक ब्रह्मचारी वह कहलाता है, वह ब्रह्मचारी वह कहलाता है, जो मुनिवरों! देखो, एकान्त स्थलियों में विद्यमान हो करके, ओर साधकों के द्वारा मानो परमात्मा के ब्रह्माण्ड को निहार रहा है, और परमात्मा के ब्रह्माण्ड को निहारता निहारता, वह लोक लोकान्तरों की यात्रा में चला जाता है, वह मानो देखो, अग्नि की धाराओं पर अपने को स्वीकार करता हुआ, एक देखो, वह ब्रह्मचारी कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, पांचवा जो ब्रह्मचारी है, वह कहलाता है। जो औषध विज्ञान में प्रवेश करता हुआ कहता है क्या हे भगवन! मैं तेरे राष्ट्र में आया हूँ, ओर मैं तेरे राष्ट्र में आ करके, मैं ब्रह्मवर्चोसि बनना चाहता हूँ और मैं ब्रह्मवर्चोसि जब बनूंगा, जब पूर्णता से मेरा निकास हो जाएगा, जैसे मैं पूर्ण हूँ, ऐसे ही मानो मेरे में से पूर्ण सत्ता का जन्म हो जाएं, जब वह दिव्यां भूतं ब्रह्मा देवी भी जब इसी प्रकार की प्रार्थना करती है, एक सन्तान का जन्म होता है, परन्तु औषध विज्ञान को जानने वाला अपने को ऊर्ध्वा गति बना लेता है, बेटा! एक ब्रह्मचारी वह कहलाता है। और एक ब्रह्मचारी वह कहलाता है जो मेरे प्यारे! संसार में आसक्त नही है, कर्तव्य का पालन कर रहा है, अपनी अन्तरात्मा की आज्ञा का पालन कर रहा है। मेरे पुत्रों! आत्मा को परमात्मा से मिलान करना चाहता है, एक ब्रह्मचारी वह कहलाता है। द्वितीय, एक ब्रह्मचारी वह है जो ब्रह्मवर्चोसि को जानता रहता है मेरे पुत्रों! देखो, यहाँ नाना प्रकार की विवेचना हो सकती हैं आज मैं केवल तुम्हें यह विचार देने के लिए आया हूँ, क्या मुनिवरों! देखो, महाराजा दशरथ के यहाँ पुत्रेष्टि याग हुआ ओर वह मानो देखो, गुड़ा केशम नामक औषधियों को ला करके, वह मुनिवरों! देखो, मृचिका नामक ओषध सुगन्धकेतु और मृचिका नामक औषधियों को ले करके उसको खरल बनाया और उसको मुनिवरों! देखो, गो घृत ओर गो दुग्ध के द्वारा जब वह यज्ञशाला में जो अग्नि प्रदीप्त हो रही है। साकल्य वाली अग्नि है, समिधा वाली अग्नि है मेरे पुत्रों! अन्नां भूतं देखो, जब तपाया जाता है, तन्दुलों के साथ मे, तो मेरे प्यारे! देखो, वह ओषध बन जाती है, ओर वह ओषध बन करके मेरी पुत्रियों को प्रदान की जाती है मेरे

प्यारे! देखो, उसके गर्भस्थल में जो ग्रन्थियां हैं, जो मुनिवरों! देखो, गर्भस्थल में जो ग्रन्थियां हैं, वह मानो देखो, अशुद्ध हो गई हैं या उनमें किसी प्रकार का रुग्ण हो गया है, या मानो किसी प्रकार की उनमें शक्ति नही रही हैं धारण करने की मुनिवरों! देखो, वह धारयामि बन जाती हैं, तो विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, परमात्मा का जो स्थावर जगत है, वह कितना विचित्र है, परन्तु देखो, प्राण विद्या को जानना चाहिए, और अपने में ब्रह्मचरिष्यामि को जान करके अपने में, अपने पन का भान होना चाहिए। मेरे पुत्रों! मैं बहुत दूरी चला गया हूँ, अपने विचार देता हुआ, विचार यह दे रहा था, क्या मुनिवरों! देखो, यह प्राणायाम होना चाहिए, जब प्राण और अपान का दोनों का समन्वय हो जाता है, तो दोनों का मिलान हो जाता है, मेरे प्यारे! देखो, एक तो वह साधक है, जो प्राणों को मिलान करके मेरे पुत्रों! देखो, परमात्मा की सृष्टि को निहारता है, और एक वह ब्रह्मचारी एक वह साधक है, जो प्राण को ले करके, साधना के एक अंग में ले जाता है, प्राणों को और तृतीय जो साधक होता है, प्राणायाम करने वाला मेरे पुत्रों! देखो, वह बहुत वृत्तियों में रत्त हो करके उस, प्राण को, प्राण में गमन कराता हुआ, परमात्मा की सृष्टि को निहारता रहता है।

तो आओ मेरे प्यारे! आज का विचार हमारा क्या कह रहा है, कि हमें प्राण विद्या को जानना चाहिए, और साधक बनना चाहिए और साधना करने वाला ही मुनिवरों! देखो, संसार को जानता है, और साधना करने वाला ही प्राण विद्या को अपने में धारण करता है, साधना करने वाली ही परमात्मा के विज्ञान को जानने लगता है, और मुनिवरों! साधना करने वाला ही परमात्मा के सर्वत्रता को जान करके बेटा! उसी को प्राप्त हो जाता है, आओ मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें विशेष विवेचना देना नही चाहता हूँ, केवल विचार विनिमय क्या कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान को जानते हुए, इस सागर से पार हो जाएं।

आओ मेरे पुत्रों! यह आज का हमारा यह विचार क्या कह रहा है, हम उस परमपिता परमात्मा की महती और उसकी आनन्दमयी श्रोत्रोंमयी प्रवेश होना चाहते हैं, उसी में रत्त रह करके बेटा! उसी में अपने पन को दृष्टिपात करते हुए मेरे पुत्रों! देखो, साधक

बन करके परमपिता परमात्मा के ब्रह्माण्ड को जानने वाले बनें। यह है बेटा! आज का वाक् आज के वाक् उच्चारण करने अभिप्रायः क्या है, हमारा कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा को जानते हुए, इस स्थावर सृष्टि को जानते रहें, सबसे प्रथम मानो देखो, ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज बेटा! अपने विद्यालय में क्या समुद्र के तट पर विद्यमान हैं, और वह विचार कर रहा है, क्या हे प्रभु! मानो तेरा यह स्थावर सृष्टि कितनी विचित्र है, देखो, समुद्र को दृष्टिपात करने वाला मानो देखो, वृक्ष है और वृक्ष पर फल लग रहा है वह समुद्रो से आपो ले रहा है वह अमृत को मानो समाज को प्रदान करता रहता है यह कैसी तेरी स्थावर सृष्टि है? हे प्रभु! तेरा ये जो जगत कितना अनन्तमयी है, और कितना महान है, तो यह स्थावर सृष्टि कहलाती है, जिससे बेटा! मानव जानने वाला लाभप्रद होता है, इसी मानव वृक्षों की आभा को जान करके मानो यज्ञ का साकल्य बनाता है, यज्ञ का साकल्य बना करके उसको सामग्री रूप में परणित करता हुआ अग्नि के मुखारबिन्दु में परणित करता है। मानो उसी औषधियों के रसों को मुनिवरों! औषधियों का पान करता है और वह जब पान करता है और वही मुनिवरों! देखो, दुग्ध को रूप में परिवर्तित हो करके आता है, वही घृत के रूप में परणित हो जाता है तो मुनिवरों! उसी से यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में बेटा! याग में परणित हो जाता है।

आओ मेरे प्यारे! देखो, विशाल विचार है मैं इसको देता रहूँगा, परन्तु देखो, इसमें आभायुक्त हो जाएगा, कल मैं तुम्हें यह प्रगट कर पाऊंगा, कि देखो, उद्दालक गोत्र के ऋषि, इस प्रकार के औषध विज्ञान को साकल्य बना करके, जब वह औषधां भूतं जब साकल्य बना देते थे देखो, वह किस प्रकार की अग्नियों की, और अग्नियों में किस प्रकार की ध्वनियों को अपने में ध्वनित करते रहे हैं। ये चर्चाएं कल बेटा! मैं तुम्हें दृष्टिपात कराऊंगा, मानो देखो, यह तो विचारों का वन है स्थावर सृष्टि का साकल्य बनाना और देखो, वह यज्ञमान की अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके बेटा! उसे अग्नि के मुखारबिन्दु में परणित करता है, और उसके विचार द्यौ लोक में जाते हैं और द्यौ लोक में मुनिवरों! देखो, उसका जो शब्द है, अथवा उसका जो चित्र है, उसका जो

क्रियाकलाप है, वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके द्यौ में स्थिर हो जाता है। यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा। मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा तपस्या के सम्बन्ध में क्या मानव को तप करना चाहिए। अब वेद का पठन पाठन होगा।

९ 28 02 1990 पुष्प 59 कर्तव्यवाद

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी और वह महान पवित्रता में, सदैव रत्त रहने वाले हैं। तो हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का, गुणगान गान इसीलिए गाते रहते हैं, कि वह महानता में गमन करने वाला है और प्रत्येक मानव की यह इच्छा बनी रहती है कि मैं महान बनने के लिए सदैव तत्पर रहूँ। तो जितना भी महान पुरूष, प्राणी महान बनना चाहता है। तो मानो उसे निरभिमानी बन करके, और जो महानतम आनन्दमयी जो स्रोत बह रहा है, उस परमपिता परमात्मा के नाम और उसके गुणों का जो वर्णन होता रहता है हमें उस परमपिता परमात्मा को अपना वरणीय बनाना चाहिए। क्योंकि वह वरण करने योग्य है, इसीलिए कि वह महान है और उससे महानता की आभा का जन्म होता है और उस आभा को अपने में वह धारण करता रहता है।

कर्तव्य का पालन

तो इसीलिए हम परमपिता परमात्मा का आश्रय ले करके और अपने जीवन में जो नाना प्रकार के क्रियाकलाप हैं, उनमें रत्त रहना चाहिए। क्योंकि वह महानता की आभा में रमण करना है, मानो बेटा! देखो, नाना प्रकार के आनन्द और सुखद के लिए, नाना प्रकार का प्रयास करता रहा है, और मानव का मानव से मिलन कराता रहा है, और

वह प्रेरणा को पा करके प्रेरित होता रहता है। तो विचार आता रहता है कि एक मानव ये कहता है कि राष्ट्रीयतं, बहुत पुरातन काल हुआ, जब राष्ट्रीय विचारों का एक मानवीयतव हमारे हृदयों में, यह एक प्रेरणा प्राप्त हुई, कि हमें राष्ट्रवाद की स्थापना करनी चाहिए, परन्तु राष्ट्रवाद की स्थापना क्यों की जाए? जब दार्शनिक यह कहता है कि मानव अपने कर्तव्य का पालन करता रहे और कर्तव्य क्या है कि जो मानव की अन्तरात्मा से उदगार उत्पन्न होते हैं मानो उसके अनुसार उस मानव को अपने जीवन में रत्त रहना है तो वह उसका कर्तव्यवाद मात्र माना गया है परन्तु देखो, जब यह विचार दार्शनिकों आता है तो दार्शनिकवाद की आवश्यकता पुनः प्रश्न करने वाला करता रहता है कि राष्ट्र का निर्माण होना चाहिए। परन्तु देखो, जब राष्ट्र के सम्बन्ध में आता है तो राष्ट्र एक दूसरे को दमन करने के पश्चात वह राष्ट्रीयता में निवृत्त हो जाता है। और राष्ट्रीयता को अपनाने के लिए तत्पर होता है। तो मुनिवरों! देखो, राष्ट्रीय विचार जो एक मानव के एक आत्मा उदगारता के अवृत है तो उससे वह मानव दूरी होना प्रारम्भ होता है। परन्तु यह विचार आता रहता है, कि राष्ट्रवाद है क्या? मुनिवरों! देखो, मानव के मस्तिष्कों में, नाना प्रकार की आभा का जन्म होता है, जबकि आनन्द तो यह कहते हैं कि परमपिता परमात्मा से समीप जाने से आनन्द की उपलब्धियां होती हैं, और देखो, मोह, ममता के करने के पश्चात, मानव को जन्म जन्मान्तरों के संस्कार बनते हैं जब यह संस्कार बनते हैं, तो राष्ट्र की आवश्यकता क्यों? मानो वेद का मन्त्र तो यह कहता है राष्ट्रदं ब्रह्मणा ब्रव्हे मन्त्र इस प्रकार के आते हैं जो राष्ट्र के ऊपर हमें मानो बाध्य करते रहते हैं, और यह कहते हैं कि राष्ट्रं ब्रव्हो कृतं मानो देखो, हमें राष्ट्रीयवादी बनना चाहिए। विचार आता है कि राष्ट्रीयवादी कौन है? एक मानव देखो, सत्य उच्चारण करने वाला, मानो देखो, राष्ट्रीयता में गमन नही करता, और वह राष्ट्रीयता में गमन करने वाला मुनिवरों! देखो, एक महान व्यक्तितव को प्राप्त नही होता। क्योंकि राजाओं के सम्बन्ध में ऐसा है, परम्परागतों से जब इसको आत्मीय अशान्ति आ गई है, तो राजा ने मानो देखो, महापुरूषों का आश्रय लिया, और उन तपस्वियों के द्वारा जा करके, उनके सम्पर्क में प्रवेश हो करके मुनिवरों! देखो, वह प्रार्थना करते रहे, और वह कहते

हैं कि प्रभु मैं इस संसार में आपकी शरण में आना चाहता हूँ और मंगलं ब्रव्हा कृतं मैं आत्म शान्ति को चाहता हूँ, मेरे प्यारे! देखो, जब वह इस प्रकार की वृत्तियों में रत्त होता है, मानव तो हमें यह प्रतीत होता है, कि राष्ट्र में आनन्दवत नही हैं, परन्तु प्रश्न ज्यों का त्यों बना रहा कि राष्ट्रीयवाद क्यों? प्रश्न ज्यों का त्यों बना हुआ है, देखो, राष्ट्रवादी राजा जब महापुरूषों का आश्रय लेता है तो राष्ट्र में वह शब्द देखो, उपलब्धि का अवृत्त बना हुआ है वो शब्द होता रहता है कि राष्ट्रवाद क्यों हैं? मेरे प्यारे! एक राष्ट्रवादी है वह राष्ट्र के लिए मानो क्रियाकलापों में रत्त है, और वह नियम चलाने वाला है, परन्तु देखो, उसके पश्चात भी अल्पज्ञ रह जाता है।

तो मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें इस सन्दर्भ में नही ले जाना चाहता हूँ केवल यह कि मुनिवरों! देखो, राष्ट्र की आवश्यकता जब भी हुई है, क्या मानव जब अपने कर्तव्य से दूरी हो गया, और कर्तव्य को लाने के लिए कर्तव्यवाद की साधना करने के लिए मेरे प्यारे! देखो, वह राजा बनता है, कोई राजा का पुरोहित बनता है, कोई विभाग में मन्त्री बनता है, परन्तु उसके नाना प्रकार कृतियां जन्म ले लेती हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वह मानव को कर्तव्यवाद में लाने के लिए, क्या हे मानव! तू कर्तव्यवादी बन, मानो कर्तव्य क्या है जिसके ऊपर वह कर्तव्य की विवेचना कर रहा है, और वह यह कह रहा है कि वह जो कर्तव्य में परणित हो जा, तो मुनिवरों! देखो, कर्तव्य वह कहलाता है, जो मुनिवरों! देखो, अन्तरात्मा की पुकार को स्वीकार करने वाला, और उसके अनुसार अपने जीवन को व्यतीत करता है वह मुनिवरों! देखो, कर्तव्यवाद है। और देखो, यदि प्रश्न पुनः बन जाता है क्या कर्तव्यवादी कौन है? यह तो आध्यात्मिकवाद की विवेचना बन गई कि वह कर्तव्यवादी है, जो आत्मा की पुकार को स्वीकार करता है, परन्तु देखो, उकसे सन्दर्भ में जब यह आता है कि अप्रतं मानो देखो, आगे वह कर्तव्यवादी कौन है? मेरे पुत्रों! देखो, वह एक कर्तव्यवादी वह बना हुआ है जो पुत्र पुत्रियों को गृहाश्रम में, मेरे प्यारे! देखो, वह दीक्षा, शिक्षा देने में सदैव तत्पर रहता है। पति और पत्नी देखो, अपने में बड़े शुद्ध विचारों से अपनी मानो देखो, वाणी का उदगार और वह गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करके वह दर्शनों का अध्ययन और मुनिवरों! देखो, अपने विचारों में ले

जाते हैं। एक कर्तव्यवाद वह होता है, जब गुरुकुल में गुरु के कुल में जब प्रवेश जब ब्रह्मचारी होता है तो वहाँ मुनिवरों! देखो, रात्रि समय में भी गुरु पत्नी और गुरु देखो, दर्शनों की चर्चा का बखान करते हैं और वह कहते रहते हैं कि हम अपने में जितेन्द्रीय बन करके और ज्ञान और विज्ञान की वृत्तियों में अपने को ले जाएं तो मुनिवरों! देखो, एक कर्तव्यवाद वह कहलाता है जिसको ब्रह्मचारीजन अपने विद्यालय में ग्रहण करते हैं और विद्यालय में उनके ग्रहण करने के पश्चात वह गृह और उनके बाल्य बालिका उसको ग्रहण करते हैं तो वह गृह की अग्नि मानो विचित्र बन करके रहती है उन्हीं विचारों से बेटा! स्वर्ग और महानता का जन्म होता है तो मेरे प्यारे! देखो, एक कर्तव्यवादी है एक राजा राजा देखो, राष्ट्र की स्थापना हुई है और राजा है और राजा न्याय कर रहा है अपने न्यायालय में, परन्तु देखो, एक मानव उसका बाल्य है, उसका ही पुत्र है, उसका ही न्याय है। और एक दूसरा है प्रतिवादी बना हुआ है, तो जब दोनों को न्याय में परणित करता है, तो न्याय सुसज्जित देता रहता है, तो राष्ट्र का वह कर्तव्य बन जाता है। क्योंकि प्रजा का बाल्य और देखो, वह अपना बाल्य जब एक ही तुल्य स्वीकार करता है तो राष्ट्र की प्रणाली पवित्र बन जाती है। तो वह भी एक कर्तव्यवाद है। परन्तु एक कर्तव्यवाद वह कहलाता है, जो मेरे प्यारे! देखो, मैं कई समय से उच्चारण कर रहा हूँ, एक कर्तव्यवाद है, एक मानव कर्तव्यवाद में मानो देखो, तपस्वी बना हुआ है, और तप करने के लिए तत्पर है, तो तपस्या कर रहा है, उससे जब यह प्रश्न किया जाता है, क्या यह तपस्या क्या है? जिसको तुम करने जा रहे हो तो वह कहता है, तपश्चं ब्रह्मणे कृतं आत्मां ब्रह्मणे देवं इन्द्रो शमं ब्रव्हा वर्णनं मेरे प्यारे! देखो, वह कहता है कि मैं तपस्या करने जा रहा हूँ, तप किसे कहते हैं? यह तुम्हारा प्रसंग बना रहा मेरे अन्तर्हृदय में।

तो इसीलिए मैं तुम्हें इसका उत्तर देता हूँ, क्या तपं भूतं ब्रह्मणा तप उसे कहते हैं जहाँ प्राण और अपान को जाना जाता है जहाँ देखो, अपान को देखो, प्राण में प्रवेश कर दिया जाता है और अपान को मानो देखो, व्यान में प्रवेश कर दिया जाता है, तो इन्द्रियों का विषय शून्य हो जाता है, इससे पूर्व काल में, यह क्या इन्द्रियों का जो विषय है,

उन विषयों को एकाग्र करते हुए, हम अपने में साधक बने हुए हैं, तो एक वह क्रियाकलाप कहलाता है, तो विचार आता रहता है, मेरे पुत्रों! तो वह मानो देखो, परमात्मा के समीप जाना चाहता है वह मुनिवरों! देखो, याज्ञिक बनता है, आत्मा में आत्मा की अनुभूतियों का याग कर रहा है, और याग करके मुनिवरों! परमात्मा के समीप जाता हुआ वह मोक्ष की पगडण्डी में पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है एक मानव देखो, वहाँ कर्तव्यवाद कहलाता है, जिससे वह परमात्मा की प्रतिभा में निहित हो जाता है।

तो विचार आता रहता है, कि मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा के इस अनूठे जगत में, इस महान जगत में मुनिवरों! देखो, मानव देखो, नाना प्रकार के क्रियाकलापों में लगा हुआ है, विचारता रहता है तो आओ मेरे प्यारे! देखो, आज मैं तुम्हें एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ, जिसकी चर्चायें बेटा! कई समय से प्रारम्भ हो रही है वाद में यह कि विचार देने के लिए आया हूँ, जहाँ बेटा! देखो, महर्षि तत्त्व मुनि महाराज क्या मुनिवरों! देखो, वृत्तिका मुनि अपने में विद्यमान हैं, और वृत्तिका मुनि देखो, प्राणायाम की प्रत्येक क्रिया को जानने वाला है। वह मानो देखो, कुम्भक रेचक और व्रताः ये नाना प्रकार के क्रियाकलापों में लगा हुआ है, ब्रह्मचारी जन एक पंक्ति में विद्यमान हैं, और ब्रह्मचारी क्या वह जिज्ञासु हैं, और जिज्ञासु ये कहता रहता है कि मैं प्राण सत्ता में रमण करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, प्राण और अपान की मैं विवेचना कर रहा था, बेटा! जब प्राणों के ऊपर देखो, अन्वेषण किया जाता है अथवा उसके ऊपर संयम किया जाता है। तो प्राणायाम करने वाला मुनिवरों! देखो, कहीं का कहीं चला जाता है।

महर्षि शिकामकेतु

वह परमात्मा के ब्रह्माण्ड को अपने में दृष्टिपात करने लगता है मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण आता रहता है मुनिवरों! देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि और उनकी पत्नी रम्भेश्वरी जब बेटा! देखो, अपने जब अन्वेषण करने लगे वह याग करते उनमें भिन्न भिन्न प्रकार का साकल्य एकत्रित करते याज्ञिक बन जाते, परन्तु याज्ञिक बनने के पश्चात वह

मुनिवरों! देखो, अपने में प्राणायाम करते, प्राण को अपान में जब प्रवेश कर दिया जाता, तो मेरे पुत्रों! देखो, ये जो ब्रह्माण्ड है। लोक लोकान्तरों का यह मानो देखो, वह समाधिष्ट हो करके, दृष्टिपात करने लगते, क्योंकि वह जो हमारा जो मानवीय शरीर है, उस शरीर में पञ्चीकरण ही तो हो रहा है, वह पञ्चीकरण को अपने में धारण करके पञ्चीकरण को एक सूत्र में लाने का प्रयास करने वाला ही मानो देखो, वह योगेश्वर कहलाता है। वह वैज्ञानिक कहलाता है।

मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है जब शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ मुनिवरों! देखो, यह विचार विनिमय होता रहा यही विचार मुनिवरों! देखो, भारद्वाज मुनि के यहाँ होता रहा, मुनिवरों! देखो, जब यह समाधि के द्वारा प्राण अपान को एक मिलान कराने के लिए तत्पर होते, तो बेटा! वहाँ अग्नं ब्रह्मा कृतं देवाः वही प्राण सत्ता बेटा! एक अणु और परमाणु के मध्य में विद्यमान हो जाती है और विज्ञान अपने में सार्थक बन जाता है मेरे पुत्रों! देखो, जब यह ज्ञान और विज्ञान को अपने में धारयामि बनाना चाहता है। तो मुनिवरों! देखो, वह प्राणायाम करता है और प्राणायाम का अनुष्ठान करता है, उससे मानव के अन्तर्हृदय में जो नाना प्रकार के जन्म जन्मान्तरों के संस्कार हैं वह उद्बुद्ध हो जाते हैं, और उनके उद्बुद्ध होने से वह अपने संस्कारों का जागरूक कर लेता है। वह मुनिवरों! देखो, लाखों जन्मों के संस्कार उनके उद्बुद्ध हो जाते हैं, और वह दृष्टिपात करता है, परन्तु एक प्राणायाम करने वाला विज्ञानवेत्ता बनना चाहता है तो बेटा! विज्ञान किसे कहते हैं विचार आता है कि विज्ञान कहते हैं एक एक परमाणु के विभाजन करने को और जब जो भी परमाणुओं का विभाजन करने लगता है। वह वैज्ञानिक बेटा! विज्ञान के युग में प्रवेश कर जाता है। विज्ञान वही है जो मानो देखो, विभक्त कर दे, और उसको एकाग्रता में लाने के लिए सदैव यन्त्रों का निर्माण करे, वह विज्ञानवेत्ता कहलाता है, और वह विज्ञानवेत्ता मुनिवरों! देखो, जैसे एक योगेश्वर है, वह प्राणों के विभक्त करने से प्राणों की प्रत्येक क्रिया को जानता है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता कहलाता है।

तो आओ मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें विचार देता हुआ, दूरी न चला जाऊं, विचार

केवल यह कि हम देखो, भौतिक विज्ञान में जितना परमाणुवाद है, मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! एक समय महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि के आश्रम में नाना ब्रह्मवेत्ता और ब्रह्म जिज्ञासु और विज्ञानवेत्ता सब विद्यमान थे, मेरे प्यारे! देखो, उनके हृदयों में एक यह उपलब्धियां, महान से महान उपलब्धियों का जन्म होता रहा है। और उन्होंने यह कहा कि ब्रह्मणे कृतं देवाः भव प्रमाणां ब्रहे मानो देखो, अन्तरात्मा से, उन्होंने यह प्रगट किया, क्या भगवन! यह विज्ञान क्या है? इसमें वृत्तिका मुनि ने कहा था वृत्तिका मुनि ने यह कहा कि प्राणायाम ब्रह्मणे इसको जानना और प्राण के आंगन में देखो, जो गतियां करने वाला परमाणुवाद है, उन परमाणुओं को विभक्त करना और विभक्त होने में जो शक्ति उसमें से मानो विकसित होती है उसी शक्ति को एकाग्र करने के पश्चात यन्त्रों का निर्माण कर देता है उसका नाम विज्ञानवेत्ता है। मानो देखो, वह विज्ञानवेत्ता ऐसा जो एक एक परमाणु में मानो अपनी दिव्यता के द्वारा एक एक परमाणु को विभक्त करने देखो, वह उसी परमाणु में यदि परमात्मा का ब्रह्माण्ड मानो लोक लोकान्तरों की जो माला है, वह माला मानो स्पष्टीकरण कर जाती है, और उस माला को जो धारण करके मानो गमन करता है, वह अपने में महान विज्ञानवेत्ता कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, परमाणुओं का विभाजन करना, परमात्मा के ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करना, उसी में मानो देखो, वृत हो जाना। मेरे प्यारे! यही हमारे यहाँ विज्ञानवाद कहा जाता है।

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं विचार दे रहा था प्राण के सम्बन्ध में कि प्राण अपने में कितना सखा है, प्राण कितना अनूठा है, मेरे पुत्रों! देखो, मुझे बहुत सी वार्त्ताएं स्मरण आती रहती हैं जब ऋषि मुनियों का जीवन मानो दृष्टिपात किया गया, उनके जीवन में कितनी सार्थकता रही है, कितनी महानता में रमण करने वाले विचार रहे हैं। उन्हीं विचारों को ले करके, आज बेटा! देखो, मैं अपने विचारों को प्रगट कर रहा हूँ, शिकामकेतु उद्दालक मुनि की चर्चा हो रही है, शिकामकेतु उद्दालक मुनि महाराज बेटा! बड़े विज्ञानवेत्ता थे, उनके विज्ञान की मानो देखो, वह साधारण वैज्ञानिकों को, उसकी गणना में नही आता। तो विचार आता है मेरे पुत्रों! क्या प्राणायाम करना, और प्राण को मानो देखो, बाह्य जगत में त्यागना और बाह्य जगत से मानो परमाणुओं को अपने में संचय करना, उनको

मानो संचय करने के पश्चात, वही तो उनको एक स्थली पर एकत्रित किया जाता है, तो उसमें से नाना प्रकार की तरंगों का प्रादुर्भाव होता है और वही तरंगें मुनिवरों! देखो, उन तरंगों को अपने में पुनः से ग्रहण करना है, तो प्राण ओर अपान को मेरे प्यारे! जितना संसार का त्यागवाद है, वह सर्वत्र मुनिवरों! देखो, उदान प्राण के प्रवृत्ति कही जाती है, वह मेरे प्यारे! देखो, वह अमृतं देखो, प्राण ओर अपान में रत्त रहने वाला है। तो यह देखो, जब प्राणायाम करने वाले साधकजन जब प्राणायाम करते हैं, तो नाना प्रकार के रूग्ण नष्ट हो जाते हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब याग करते हैं, एक याज्ञिक एक महान, एक महान व्यक्ति कहता है कि भगवन! यह जो याग कर रहे हो, इसका क्या लाभ है? तो उन्होंने कहा प्राण सत्ता को जो जानता है प्राण विद्या को जो जानता है, वह याग को जानता है, और जो प्राण को नही जानता, वह याग को नही जानता और याग को जानता है मानो देखो, वह इस ब्रह्माण्ड की आभा को जानता है। और जो ब्रह्माण्ड की आभा को जानता है वह परमात्मा परमात्मा के मार्ग में सफलता को प्राप्त हो जाता है वह परमात्मा की आनन्दमयी पगडण्डी में वह सफलवृत बन करके और अपने मानो देखो, परमात्मा के आंगन से देखो, मार्ग में चलने वाला, जो उस पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है वह लोक लोकान्तरों की पगडण्डी को जानता है। क्या लोकों की पगडण्डियां क्या हैं? और जो लोकों को जानता है, मेरे पुत्रों! देखो, वही तो सौर मण्डलों को जानता है, ओर जो सौर मण्डलों को जानता है वह निहारिका को भी जानता है ओर जो निहारिका को जानता है। वह बेटा! वसुन्धरा के गर्भ में प्रवेश हो जाता है मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेषता में ले जाना नही चाहता हूँ, मैं इसकी विवेचना देना चाहता हूँ, केवल विचार विनिमय क्या है? प्राण को जानने वाला ही तो देखो, मुनिवरों! देखो, रूग्णों को जानता है, मेरे प्यारे! देखो, प्राण गमन कर रहा है, प्राण में वायु का शमन हो रहा है, और वायु में कहीं मानो पित्त का समन्वय हो रहा है, मेरे पुत्रों! देखो, मेरे पुत्रों! देखो, जब तीन दोष उसके समीप आने प्रारम्भ हो जाते हैं, और वह मुनिवरों! देखो, उसके अनुष्ठान मात्र से उसका एक मिलान करता हुआ, उसमें प्राण की प्रतिभा को जानता है, उसमें मिश्रित करना जानता है, वह महान वैद्यराज कहलाता

है। मेरे पुत्रों! देखो, वैद्यराज वही होता है, जिसके स्वप्नवत में औषधियों का स्वप्न हो करके, वह अपने अपने गुणों का वर्णन करने वाली हैं। मानो देखो, वही तो प्राणायाम की सत्ता है, और वह प्राणायाम करने वाला जो वैद्यराज है। वही संसार में वैद्यराज कुशल है, और वह वैद्यराज कुशल हो करके वह रूग्णों को जानता है, प्राण सत्ता को जानता है मेरे पुत्रों! देखो, मैं दूरी न चला जाऊं विचार केवल यह है, कि वेदां भूतं ब्रह्मणा व्रतं बेटा! वेद की एक आख्यिका कहती है, क्या शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ, इस प्रकार का प्राणायाम होता रहा और वृत्तिका मुनि के यहाँ भी, वृत्तिका आचार्य बेटा! देखो, बड़े विचित्र व्यक्तित्व, जब प्राणायाम करते, तो वह ब्रह्माण्ड का दर्शन करते और ब्रह्माण्ड का दर्शन करके विज्ञान अपनी आभा में रमण करता रहता है, इसका अभिप्रायः अपने को वह धारण करते रहे हैं और प्राण को मुनिवरों! देखो, जब प्राण को अपान में मिलाना जानता है, उसके रूग्ण शान्त हो जाते हैं, जो व्यान को इसको सम्मलित कर देता है, उसका अभिमान समाप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, रूग्णों का कारण अभिमान कहलाता है, जब वह दर्शनों में जाता हूँ और दार्शनिकता में जाता हूँ, जब मानव को अभिमान आ जाता है, कुछ ही समय में देखो, वह रूग्णों का कारण बन जाता है, यह वृत्तिका मुनि ने भी कहा है। वृत्तिका मुनि ब्रह्मचारियों को यही कहते रहते थे, हे ब्रह्मचारियों! तुम्हें अभिमानी नही बनना है, जबकि तुममें अभिमान आ जाएगा, मान, अभिमान के पश्चात मान है और मान के पश्चात मुनिवरों! मृत्यु है, देखो, तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी, शरीर को त्यागने का नाम मृत्यु नही कहलाता, यह शरीर तो जिसका निर्माण हुआ है, इसका तो निधन होना है। परन्तु देखो, वास्तव में जो निधन है, वह तुम्हारी जो मृत्यु है, वह तुम्हारा अभिमान है, तुम्हारा अभिमान ही तुम्हारी मृत्यु बन करके रहेगा। एक समय तुम्हारा वर्ण व्रत बन जाएगा, विचार आता रहता है मुनिवरों! देखो, प्राणायाम करने वाला प्राण करने वाला, जब प्राण को जानता है तो उदान को जानता है और जितना भी मानो देखो, उदान है यह इतना विशाल इसके समीप बन करके आता है क्या यह विचारता है कि मैं कुछ नही जानता, मैं क्या अभिमान करूं, अपनी वाणी पर? परन्तु वह जो रचाने वाला वह जो प्रभु है वह आनन्दवत है, जब

उसका भान हो जाता है, तो अभिमान की मात्रा नष्ट हो जाती है।

विचार आता रहता है बेटा! जब अभिमान नष्ट हो गया तो देखो, मृत्यु भी नही आ पाती, मृत्यु का निधन हो जाता है, तो मृत्यु जब नही आ पाती, तो मुनिवरों! देखो, मृत्यु भवा सम्भवे मुनिवरों! देखो, मान और अपमान यह न आने पर, मुनिवरों! देखो, मृत्यु का क्षय हो जाता है, इसीलिए हमारा विचार कहता है, हमारा वैदिक साहित्य कहता है, हे मानव! यदि तू परमात्मा के समीप जाना चाहता है, तो परमात्मा तो निरभिमानी है, मानो यदि तू ऊर्ध्वा में गमन करना चाहता है, तो परमात्मा तो देखो, काया से भिन्न है, तू मानो देखो, काया से अमृतं शरीर के ऊपर अभिमान क्यों कर रहा है। वह परमात्मा देखो, अकाय है, और जो सबसे महान है, और जो मानो देखो, अकाय है, निरभिमानी है, अरे, निरभिमानी बनता है, वही तो परमात्मा के समीप जाने का उसे अधिकार प्राप्त होता है।

तो आओ मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, आज मैं बेटा! इन विचारों को दूरी नही ले जा रहा हूँ, केवल विचार यह दे रहा हूँ, वृत्तिका मुनि के यहाँ बेटा! ब्रह्मचारी एक पंक्ति में विद्यमान हैं, और ब्रह्मचारियों को यही कहते हैं कि हे ब्रह्मचारियों! तुम्हारी मृत्यु नही होनी चाहिए, और मृत्यु देखो, उस काल में होती है जब तुम्हें अभिमान आ जाता है, जब तुम मानो देखो, निराशा में परणित हो जाते हो, अपमान में आ जाते हो, तो तुम्हारी मृत्यु के मूल बन जाते हैं। मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी को कहते हैं कि वह मृत्यु को विजय कर लेता है बेटा! मृत्यु को विजय वह ब्रह्मचारी कैसे करता है, मेरे प्यारे! देखो, उसे ज्ञान हो जाता है, क्या मृत्यु क्या है और मानव जीवन क्या है? जब दोनों का ज्ञान हो जाता है तो मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मचारी मृत्यु से विजय हो जाता है। मृत्यु मानो उसके चरणों का चुम्बन करने लगती है। तो मेरे पुत्रों! देखो, वेद का ऋषि वृत्तिका मुनि कहता है, तुम प्राणायाम करो, और प्राण को अपान में मिलाने का प्रयास करो, और मुनिवरों! देखो, अपान को व्यान में, और व्यान को समान में प्रवेश करते चले जाओ और समान को देखो, उदान में जब प्रवेश कर दोगे, तो मानो देखो, उन प्राणों को एकोकीकरण हो करके, तुम मानो प्राण विद्या को जानने लगोगे, और

प्राण विद्या को जानने वाला बेटा! रूग्णों को नष्ट कर देता है। इसीलिए वह मृत्यु से पार हो जाता है।

तो आओ मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है अरे, यह मृत्यु से पार कौन होता है? ब्रह्मज्ञानी! मेरे प्यारे! देखो, पुनः प्रश्न करता है कि यह मृत्यु से कौन पार होता है? वह कहता है ब्रह्मजिज्ञासु, उन्होंने कहा मृत्यु से विजय कौन होता है? अरे, जो ब्रह्म को जानता है, उसकी मृत्यु नही हुआ करती। मेरे प्यारे! देखो, वैदिक ऋषि अपने में बड़ा अनुष्ठान करते रहे हैं, और प्रश्नों का जब जिज्ञासा उनके अन्तर्हृदयों में बनी रहती है, और जिज्ञासा होनी चाहिए, वह जिज्ञासा मानवीयता के क्षेत्र में ले जाती है, तो विचार आता है कि बेटा! जब मानव मानवीयता की आभा में रत्त हो जाता है, तो वह महान और पवित्रतव को प्राप्त हो जाता है। तो हमें बेटा! तपस्वी बनना चाहिए, और तप किसे कहते है? मैंने बेटा! कई काल में तुम्हें विवेचना दी है। मेरे पुत्रों! देखो, तप वही है, तपश्चं ब्रह्मा तपो हिरण्यं ब्रव्हा मेरे प्यारे! देखो, इन्द्रियों के विषयों को मन में और मन को प्राण में और प्राण को विचार में जब परणित कर दिया जाता है, तो बेटा! वह तपस्या का महान मूल कहलाता है, तो विचार आता रहता है, बेटा! आज का हमारा वेद का पठन पाठन क्या कह रहा है? वेद का ऋषि क्या उद्गीत गा रहा है? वेद का ऋषि यही कहता है कि हे मानव! तू मानवीयता की आभा में रमण करता हुआ तू योगी बन। और योगेश्वर बन करके तू अपने कर्तव्यवाद की वेदी पर आ मेरे प्यारे! देखो, कर्तव्यवाद की बड़ी विचित्र एक मीमांसा है, मेरे प्यारे! मीमांसाकारों ने जब उसकी विवेचना की है, तो बड़ा विचित्र दृश्य मानो एक मानव के समीप आ जाता है, ब्रह्माण्ड की प्रत्येक कृतिका उसके समीप आ जाती है।

तो मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है आज मैं तुम्हें विशेषता में न ले जाता हुआ उद्दालक गोत्र के ऋषि शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ बेटा! देखो, ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, देखो, वृत्तिका मुनि एक ही समकालीन हुए हैं, वह प्राण का अभ्यास करा रहे हैं, तो वह परमाणुवाद का अभ्यास करा रहे हैं मेरे प्यारे! वह परमाणु में प्राण को दृष्टिपात करके, यन्त्रों का निर्माण कर रहे हैं, और वह मुनिवरों! देखो, प्राणं ब्रह्मे वह

प्राण सत्ता को प्राणों का मिलान कराते हुए, वह प्राण को अपान में, और अपान को समान में, और समान को मुनिवरों! देखो, व्यान और उदान में प्रवेश करते हुए वह चित्त के मण्डलों को साक्षात्कार करते रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह मुक्ति के मोक्ष के मार्ग में, अपने को सफलता को प्राप्त करना चाहते हैं।

मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! उद्दालक गोत्र के ऋषि हुए हैं, परन्तु उद्दालक गोत्र में ऋषि हुए, मेरे प्यारे! देखो, अंगिरस गोत्र में एक ऋषि थे, वंचनं ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, उनका नामकरण वाचकेतु मुनि कहते थे वाचकेतु मुनि मुनिवरों! देखो, एक समय वह अपने में शान्त विद्यमान थे, वेद के मन्त्रों का अध्ययन कर रहे थे और मन्त्र उद्गीत गा रहे थे जननं ब्रह्मा कृतं देवत्वां वर्णनं प्रमाणां ब्व्हे प्राणा कृतं प्राणं भूतं ब्रह्मे अपानां ब्रहे कृतं देवत्वां उदानां ऐसा वेद का मन्त्र उद्गीत रूप में गाया जा रहा था, और वेद के मन्त्र की विवेचना करता हुआ ऋषि कहता है, क्या मानो देखो, प्राणं ब्व्हा कृतं मेरे पुत्रों! देखो, प्राण के आंगन में प्रवेश करना है, यह प्राण को मुनिवरों! देखो, जो जानने वाला है, वही तो मुनिवरों! देखो, प्राण की सत्ता को जान करके वह ब्रह्माण्ड को और आध्यात्मिकवाद में वह सफलता को प्राप्त हो जाता है।

चित्त

आओ मेरे प्यारे! ब्रह्मचरिष्यामि गतं ब्रह्मा वह एक दूसरे में अकृति करते रहते हैं, तो मेरे प्यारे! मैं उद्गीत गा रहा था, ऋषि का जीवन मुझे स्मरण आ रहा है, ऋषि ने मुनिवरों! देखो, अपने में उन प्राणों का अध्ययन करना प्रारम्भ किया और क्रिया में लाने का प्रयास किया मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मवर्चोसि ऋषि बन करके मुनिवरों! वह अपने जन्म जन्मान्तरों के, जो चित्त में संस्कार विद्यमान हैं, उन संस्कारों को मुनिवरों! देखो, वह अपने में साक्षात्कार करते रहे। तो विचार आता रहा है कि प्राण को अपान में, अपान को प्राण में, वह पिचासी वर्षों तक बेटा! देखो, उनका अध्ययन चलता रहा। प्राणायाम करते रहे और मौन रहे और पत्र पुष्पों को पान करके, अपने उदर की पूर्ति करके बेटा! वह अन्वेषण करते रहते थे। मेरे पुत्रों! देखो, उनके चित्त मण्डल में, जो

उन्होंने जाना, इतने समय मौन रह करके, बेटा! अपने देखो, दो लाख जन्मों के मेरे प्यारे! संस्कार उनके समीप आने प्रारम्भ हो गये। तो विचार आता रहता है कि यह संस्कार कहाँ विद्यमान रहते हैं, बेटा! चित्त के मण्डल में और चित्त के मण्डल को जानता है बेटा! चित्त किसे कहते हैं? मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार मानो देखो, यह इनका नाम चतुष अन्तःकरण कहलाता है। और मुनिवरों! देखो, यह मन की धारा कहलाती हैं। मेरे पुत्रों! देखो, यह प्राण गमन करता रहता है। और प्राण उन संस्कारों को देखो, मन का सहयोग ले करके उनको जागरूक करता रहता है। मन की देखो, आत्मा की चेतना के प्रकाश से यह क्रियाकलाप होता रहता है, बेटा! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ दूरी चला गया हूँ विचार देता हुआ केवल विचार यह कि मैं परमपिता परमात्मा की जो अनन्तमयी महिमा है, अथवा उसके जो उदगार हैं। जो कर्तव्यवाद की मानो कोई सीमा बद्ध नही कर सकता। मेरे पुत्रों! देखो, संस्कार जन्म जन्मान्तरों के अन्तःकरण में होते हैं, उन्हीं संस्कारों के आधार पर मानव का पुनरूक्ति जीवन और मानो देखो, मरण देखो, पुनरूक्ति त्याग है और पुनरुक्ति मानो ग्रहण करना है और उसी से उसके जीवन की शृङ्खला मानो कटिबद्ध रहती है।

तो आओ मेरे पुत्रों! देखो, विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रों! मैं उच्चारण कर रहा था, क्या कर्तव्यवाद की कोई सीमा नही हैं। मेरे पुत्रों! देखो, सबसे प्रथम कर्तव्य, उसका यही है, कि मानव का क्या संसार को जानते हुए, और जानते जानते चले जाऐं, तो मेरे प्यारे! हम सूक्ष्म मण्डल में चले जाएं, उसको भी जाने, और सूक्ष्म मण्डल को जान करके, मेरे पुत्रों! हम परमात्मा को प्राप्त हो जाएं, और हम परमात्मा की प्रतिभा में रत्त हो करके, मेरे पुत्रों! देखो, वह हमारा सबसे महान कर्तव्य कहलाता है। हमारे आने का जो उद्देश्य है, इस संसार में मानो इसीलिए कि मन की जो नाना प्रकार के वृत्तियाँ हैं, वह प्राण में सम्मिलित हो जाएं और प्राण और मन की प्रवृत्तियां विचारों में प्रवेश हो जाएं, तो मानो देखो, मोक्ष की पगडण्डी ग्रहण कर लेना है। और उसी से रत्त हो जाना है। मेरे पुत्रों! देखो, मानव प्रारम्भ से ले करके बाल्यकाल से माता के गर्भस्थल में प्रवेश हो जाएं, और माता जब उसे ऊर्ध्वा में गमन करा देती है कि अपने गर्भ के शिशु

को मेरे प्यारे! वह महान बाह्य जगत में आ करके वह महानता में गमन करता है, वर्चोसि बनता है, और वर्चोसि बन करके उसी को अपनाता रहता है, और यदि क्रियाकलाप नही होता तो बाल्यकाल है, अोर बाल्यकाल से जब युवा काल आता है, तो अभिमान की मात्रा बलवती हो जाती है। उस अभिमान में जहाँ उसे मृत्यु को विजय करना था, वहाँ मृत्यु का आह्वान करता रहता है। तो इसीलिए देखो, अभिमान मृत्यु को आह्वान करना है, अोर यदि उसमें देखो, मृत्यु को विजय करना है, अपने को मानो परमाणु सत्ता है, जिस परमाणुवाद से मुनिवरों! देखो, वह अपने में अभिमान कर रहा है, जिस परमाणु को वह ध्रुवा में गमन कराना चाहता है, ध्रुवा में चला गया अभिमानी बन गया मृत्यु के मूल में चला गया है, अोर जब वह अभिमानी बन गया है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह मृत्यु से पार हो करके, वह ब्रह्मचारी ही मृत्यु से विजय हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, मैं बहुत दूरी चला गया विचार यह दे रहा था कि मुनिवरों! देखो, इसीलिए मानव को अपने कर्तव्यवाद की कोई सीमा नही हैं, यदि यही कर्तव्यवाद है, अपने अन्तर्हृदयों में गमन करता रहता है, तो परमात्मा के राष्ट्र में क्योंकि परमात्मा निरभिमानी है परमात्मा का यह जगत राष्ट्र है, इसमें जो भी वस्तु प्राप्त होती है अथवा वह सब परमपिता परमात्मा की ही अनुभूतियां हैं, वे अनुभूतियां बन करके तेरे समीप आ रही है, यदि तू यह विचार रहा है, जो भी तुझे प्राप्त हो रहा है, वह परमात्मा की मानो प्रकृति की धरोहर है, और उस धरोहर को जब तू अपने में ग्रहण करता है, तो तू अभिमानी मत बन, तू मानो देखो, अपने में एक रस बन करके गमन करता हुआ, मृत्यु से पार हो जा, और मानो देखो, तेरा जीवन महान बन जाएगा। कर्तव्यवाद की वेदी पर रत्त हो जाएं। मेरे प्यारे! देखो, राष्ट्रवाद की विवेचना हो रही थी, राष्ट्रवाद कर्तव्यवाद में लाना चाहता है, समाज को मेरे प्यारे! कर्तव्यवाद में यदि राजा स्वयं कर्तव्यवादी होगा, स्वयं क्रियाकलाप करने वाला होगा, उस समय प्रजा अपने कर्तव्य में निहित हो जाएगी।

भगवान मनु के काल में जब मुझे स्मरण आता रहता है, भगवान मनु स्वयं प्रातःकालीन मानो याग करते थे, प्रातःकालीन वेद का सुअध्याय करते थे, अोर वह मानो देखो, प्रजा

को अनुशासन में लाने के लिए नम्रता से उपदेश देते थे, क्योंकि जो स्वयं कर्तव्यवादी है, वही कर्तव्यवाद में ला सकता है। मेरे पुत्रों! भवं ब्रव्हा वेद का ऋषि कहता है, क्या हम अपने में महान बन करके, राष्ट्रवाद केवल कर्तव्यवाद चाहता है, तो कर्तव्यवाद की कोई सीमा नही हैं, कितना विशाल है मानो देखो, पृथ्वी से ले करके, वह लोक लोकान्तरों की यात्रा कर जाएं, वह कर्तव्यवाद में आते हैं, और इनको जान करके अपने अन्तर्हृदय में स्नेह से, समेट करके, जब वह देखो, चित्त के मण्डल में संस्कारों को उद्बुद्ध करने लगता है, तो संस्कारों को जान करके वह मानो देखो, परमात्मा की मोक्ष की आनन्द की जो पगडण्डी है, उसे वह ग्रहण कर लेता है, तो परमपिता परमात्मा का जगत ही अनूठा बन करके उसके समीप आता रहता है। मेरे पुत्रों! देखो, वह मानव को मृत्यु से पार ले जाता है, कर्तव्यवाद की वेदी में निहित कर देता है। वह योगेश्वर बन जाता है। वह परमात्मा को ही दृष्टिपात करता है। उसे कण कण में अपने में ब्रह्म और ब्रह्म मानो देखो, उसमें निहित हो रहा है तो यह बेटा! देखो, आज का हमारा विचार यह क्या कह रहा है, जितना भी विज्ञान है, जितनी भी धाराएं हैं, उन धाराओं की जो उपलब्धि है, उसके मूल में ब्रह्म है। इसीलिए हम परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते रहते हैं, और संसार की प्रतिभा को जान करके इस सागर से पार होना चाहते हैं। यह है बेटा! आज का वाक् आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम मुनिवरों! कर्तव्यवादी बनें, और कर्तव्यवाद एक राष्ट्र से ले करके राष्ट्र क्या चाहता है, कर्तव्यवाद परन्तु देखो, ब्रह्मणे वृतं देवाः देखो, आज का विचार यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते चले जाएं। मेरे पुत्रों! आज का विचार अब समाप्त समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा आज मैंने तुम्हें कर्तव्यवाद का परिचय दिया है, व्याख्या नही की है, आज का विचार समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन।

१० 01 03 1990 पुष्प 59 प्राणायाम साधना

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से,

जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परगतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, आज हम परमात्मा की महती और सदैव हम विचार विनिमय करते चले जा रहे थे और उस परमपिता परमात्मा का जो उद्गीत है, अथवा उसकी जो महती है, और वह ब्रह्मा है वह ब्रह्मवर्चोसि कहलाते हैं, तो हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का गुणवादन प्रायः हमारे वेदमन्त्रों में आ रहा था, और वेदमन्त्र अपने में उद्गीत गाते रहते हैं, तो हम उस परमपिता परमात्मा जो उद्गीत है, और वह उद्गीत का स्वामीतव है, तो हम उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके गुणों का गुणवादन करते रहें। क्योंकि वह ऐसे है, जैसे माला में सूत्र होता है, इसी प्रकार वह प्रत्येक प्राणी मात्र में और प्रत्येक लोक लोकान्तरो में बेटा! जैसे माला में सूत्र होता है। और वह उस सूत्र रूप में पिरोया हुआ है, तो हम उस परमपिता परमात्मा जो सूत्रो भव सम्ब्रव्हा जो मानो सूत्र रूप में हमें दृष्टिपात आ रहा है, तो हम उस परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान और विज्ञान है और वह उसी में निहित रहता है, तो कोई वस्तु हमें ऐसी दृष्टिपात नही आ रही है, जहाँ वे परमपिता परमात्मा सूत्र रूप में दृष्टिपात न आता हो तो इसीलिए हमें उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके गुणों का गुणवादन करते रहें, और अपने में उसे धारयामि बनाते हुए उसकी महती का सदैव अपने में ही वरण करते रहें। क्योंकि हमारे यहाँ प्राणों की विवेचना होती रहती है, और प्राणों की जो साधना है, वही मानव को देवता, ऋषि बना देती है, और मन और प्राण की साधना ही मानव को, मुनिवरों! देखो, रेचक और कुम्भक और प्राणायाम करता हुआ, योगी अपने में उड़ान उड़ने लगता है। मानो इसी प्राण सत्ता को ले करके, और पृथ्वी के अव्ययों को, प्रकृति के अव्ययों ले करके, एक विज्ञानशाला में एक वैज्ञानिक है, वह अपने मन की पुट लगाता हुआ, बाह्य जगत के प्राण लेता हुआ, मेरे पुत्रों! वह उसमें भरण कर लेता है, और यन्त्रों का निर्माण हो जाता है, और यन्त्रों के मध्य में विद्यमान हो करके लोक लोकान्तरों की यात्रा करने लगता है।

तो मुनिवरों! देखो, कई समय हो गएं हैं, हम इन प्राणों की विवेचना कर रहे हैं। कर्तव्यवाद की विवेचना कर रहे हैं परन्तु देखो, जहाँ हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने बेटा!

मुझे बहुत समय की वार्त्ताएं स्मरण आने लगती है। जब मैं ऋषि मुनियों के क्षेत्रों की चर्चाएं अथवा उनके जीवन का यह अध्ययन किया, तो हमारा अन्तरात्मा हृदय गदगद हो जाता है और हम यह कहा करते हैं कि प्राणां भू वर्णासुतम् यह प्राण ही तो स्मृति का एक मूल कारण है, जब प्राण सत्ता सूक्ष्म हो जाती है प्राण सत्ता मानव मन ओर मस्तिष्क में जब यह सूक्ष्म हो जाती है, तो स्मरण शक्ति भी सूक्ष्म हो जाती है, स्मरण शक्ति स्मरण नही रहता, तो इसीलिए हमारे यहाँ बेटा! आचार्यों ने कहा बेटा! कि प्राणसता को महान बनाना है, क्योंकि प्राणायाम से ही मानो देखो, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करता है मेरे पुत्रों! देखो, आज मैं तुम्हें ऋषि मुनियों के क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ ऋषि मुनि अपने विचारों की बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ते रहे है। ओर अपने विद्यालय में विद्यमान हो करके, ऋषि मुनि अपनी विचारधारा में परणित रहे हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वेद का ऋषि तो यहाँ तक कहता है, कि माता को प्राणायाम करना चाहिए, माता को प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान में प्रवेश करते हुए, अपने में अपने गर्भस्थल में जो आत्मा विद्यमान है, शिशु के रूप में, उस अपनी आत्मा से वार्त्ता प्रगट करनी चाहिए। यदि कोई माता बुद्धिमान, अपनी सन्तान को जन्म देना चाहती है अपने गर्भ में संस्कार देना चाहती है, तो बेटा! वह माता ऐसी है, जो उसको सुसज्त्ति बना देती है ओर गर्भस्थल में सुसज्जित बना देती है मेरे प्यारे! देखो, बाल्यकाल है, माता का साया है ओर माता उसे उदगार देती है, विचार देती है गर्भस्थल में। तो मुनिवरों! देखो, वह माता अपने में धन्य हो जाती है, वह कर्तव्यवाद की वेदी पर विद्यमान है और वह अपने दायित्व को मानो परमपिता परमात्मा को आश्रित हो जाती है।

प्राण विमर्श

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं इस सम्बन्ध में, विवेचना नही, केवल विचार विनिमय यह कि हम प्राण ओर देखो, प्राण को जानने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहते हैं। बेटा! देखो, ऋषि मुनियों की एक सभा हुई थी, बेटा! उस सभा में महर्षि तत्त्वेत्वर ऋषि महाराज के यहाँ हुई, और तत्त्वेत्वर ऋषि महाराज के यहाँ प्रश्न उत्पन्न हुए कि भई! यह जो

प्राण है यह क्या है? तो ऋषि मुनियों ने भिन्न भिन्न प्रकार की विवेचना उसमें दी, उन्होंने का प्राण एक गति है। पुनः जब प्रश्न किया गया कि यह प्राण क्या है? तो उत्तर मिला कि यह जो प्राण है, जीवन का एक समूह है, मानो जीवन का मूल है, जब पुनः यह प्रश्न किया गया कि यह प्राण क्या है? तो ऋषियों ने कहा कि यह जो प्राण है यह सूत्र कहलाता है। जैसे मानो देखो, माला में मनका है, और मनके में माला है, इसी प्रकार यह जो प्राण है, यह सूत्र है, और यह सूत्र बन करके सबमें पिरोया हुआ गति दे रहा है। तो बेटा! जब पुनः यह प्रश्न किया गया, कि यह प्राण क्या है, तो ऋषि कहते हैं कि रेचक और कुम्भक के द्वारा मानो देखो, जब यह प्राणायाम करता हुआ, रेचक और कुम्भक को सिद्ध कर लेता है, तो जैसे पक्षी अन्तरिक्ष में गमन करता है। ऐसे ही मानो देखो, योगेश्वर भी गमन करने लगता है मेरे प्यारे! देखो, जब यह ऋषियों की सभा में जब यह उत्तर दिया गया तो पुनः यह प्रश्न किया कि यह प्राण क्या है? उन्होंने कहा कि यह जो प्राण है यह समुद्र के आंगन में रमण करने वाला जो योगेश्वर जो देखो, जल समाधिष्ट हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, जब यह पुनः प्रश्न किया कि यह प्राण क्या है? तो उन्होंने कहा कि यह प्राण ही मानो देखो, इस ब्रह्माण्ड इस मानो देखो, पृथ्वी का अधिपति कहलाता है। खाद्य और खनिज पदार्थों का स्वामीतव करता है। यह निधितव करने वाला है, मेरे पुत्रों! देखो, जब यह प्रश्न आया कि यह प्राण क्या है? उन्होंने कहा देखो, सूर्य और चन्द्रमा का, दोनों का परस्पर यह प्राण के माध्यम से मानो देखो, अपनी अपनी ऊर्ज्वा दे रहे हैं, और प्रकाश दे करके मानव को उद्गम् कराते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि यह प्रश्न उत्तर करते रहे, इसकी कोई सीमा तो होती नही हैं, जब पुनः यह प्रश्न किया गया कि यह प्राण क्या है? उस समय यह कहा गया कि यह प्राण माता के गर्भस्थल में मानो शिशु का पालन करने वाला है, और देखो, यही पालना करता हुआ, माता को वह महानता में देखो, परणित कर देता है। तो विचार आया कि यह प्राण अपने में कितना सत्ताधारी है, जिस प्राणायाम करने वाला, जल समाधि लेता है, प्राणायाम करने वाला अन्तरिक्ष में रमण करता है। मेरे पुत्रों! देखो, यह सर्वत्रता का एक मूल बन जाता है। तो विचार आता रहता है कि मुनिवरों! देखो,

यह ब्रह्माण्ड, अपने में कितना विचित्रतव है, जिससे प्राण अपने में नृत्त करता रहता है, और यह संसार नृतता में ओत प्रोत हो करके अपनी आभा को परणित कर रहा है। तो आओ मेरे प्यारे! देखो, वह मुनि के यहाँ बेटा! जब यह एक सभा हुई, तो प्राण के ऊपर विचार विनिमय होने लगा, तो मेरे पुत्रों! देखो, यह प्राण की बड़ी विचित्र विवेचना, ऋषियों ने दी, सबसे प्रथम जो योगेश्वर है, बेटा! देखो, उन्होंने यह प्रश्न किया, कि यह प्राण को कैसे हम संचय कर सकते हैं? ओर कैसे इस सर्वत्रता को जान सकते हैं। तो ऋषि मुनियों ने बेटा! देखो, इस समाज ओर मानव जीवन के कर्तव्यवाद के लिए बेटा! तीन प्रकार उन्होंने विभूतियां उत्पन्न कीं। तीन प्रकार की वास्तव में चतुर्थ प्रकार की विभूतियां होती हैं, परन्तु देखो, यहाँ तीन प्रकार विभूतियों का वर्णन आता रहता है। मेरे पुत्रों! देखो, सबसे प्रथम जो विभूतियां होती है, जो विचित्राएं प्रायः होती हैं, वह बाल्य काल होती हैं, और बाल्यकाल में ही देखो, मानव अपने जीवन को संचय करने लगता है, जीवन की प्रतिभा में रत्त हो जाता है, और वही मुनिवरों! देखो, आचार्य कुल में प्रवेश होता हुआ, आचार्य सबसे प्रथम मुनिवरों! देखो, उसको आत्म तत्त्व का ज्ञान देता है, और आत्म तत्त्व का ज्ञान देता हुआ, उसे मानो देखो, ब्रह्मवर्चोसि बना देता है ब्रह्मवर्चोसि बनाने के पश्चात, मेरे पुत्रों! देखो, बाल्यकाल में विद्यार्थी कुल में, जब प्रवेश हो जाता है, तो बेटा! देखो, ब्रह्मवर्चोसि बनने लगता है, वह ब्रह्मचारी है वह मृत्यु को विजय करने वाला है। इन प्राण सत्ता को जान करके मानव मृत्यु को विजय कर लेता है, तो वह ब्रह्मचारी है जो मैंने कई कालों में तुम्हें विवेचना दी है। परन्तु देखो, द्वितीय जो क्रियाकलाप है, वह मुनिवरों! देखो, गृहाश्रम में प्रवेश होता है, तो गृहाश्रम में प्राण की आवश्यकता है, माता और पिता के लिए मानो पति ओर पत्नी के लिए वही प्राण सत्ता है बेटा! जिससे शिशु माता के गर्भस्थल में प्रवेश होता है, और वह प्राण सत्ता है, जो वहाँ प्राण की धुकधुकी से शिशु अपने में सुरक्षित कहलाता है।

तीन आचमन

बेटा! देखो, जब यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान होता है तो वह तीन आचमन करता है,

और तीन आचमनों से कहता है, कि वह अमृत है, मानो देखो, यह पिधानमसि है यह वर्चोसि है, मेरे पुत्रों! देखो, यह जो आपोमयी जल है, इसका आचमन इसीलिए करता है क्योंकि जब मैं माता के गर्भ में था, तब भी मानो देखो, तीन अवस्था में, मुझे जल ही प्राप्त हुआ, मेरा ओढ़न है और बिछौना भी मेरा जल है, ओर पांशे भी मेरे जल बने हुए हैं और मैं आपो में गमन करने वाला हूँ, मानो यज्ञमान कहता है हे देवतं अग्नि देवतं हे अग्नि! मैं तेरे आश्रित हो करके मानो तीन आचमन करता हूँ, और तीन आचमन का अभिप्रायः यही है कि मेरा ओढ़न, मेरा बिछौना, और मेरे जो पांशे हैं, वह सर्वत्र मानो देखो, वृत्रं ब्रव्हा उसमें आपो निहित है। मेरे प्यारे! देखो, वह जलं ब्रह्मा और वही जल मेरे प्यारे! देखो, आपो देखो, है संसार में आने के पश्चात भी उसकी यह गति बना करती हैं, परन्तु यही प्राणं ब्रह्मा यह प्राणायाम कर रहा है यदि जल नही होगा, शरीर में तो प्राणायाम भी नही होगा। यदि प्राणायाम नही होगा, प्राण सत्ता नही होगी, तो आपो जल भी नहीं होगा। दोनों एक दूसरे के पूरक कहलाते हैं, ओर पूरक होने से ही मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी अपने में साधना कर रहा है, तो जितनी संसार में रहने वाली वस्तु हैं सबका नाम आपो कहलाता है। वह जल कहलाता है। तो मुनिवरों! देखो, उसमें रजतं, वीरतव आपं ब्रहे यह सब रक्त ब्रहे मेरे पुत्रों! देखो, सर्वत्र ये जल के रूप में परणित रहता है। तो विचार आता रहता है, इसी आपो के कारण, हमारे में देखो, शिशु प्रवेश हो करके, माता के गर्भ में प्रवेश हो जाता है, और वही शिशु जब प्रवेश होता है, तो देवताओं का दायित्व बन जाता है और वह देवता उसकी रक्षा में परणित हो जाते हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, यह प्राणं भूतं ब्रह्मा यह प्राण सत्ता है, जिसको ले करके मानव अपने में गमन करता रहता है। तो विचार आता रहता है मुनिवरों! देखो, यह जो प्राण सत्ता है यह कितनी विचित्र है मानो देखो, जब गृह में प्रवेश होता है, तो आपो ही मुनिवरों! देखो, अमृत का कारण बनता है, वही मानव के प्राणी मात्र की उत्पति का मूल बना हुआ है, वही उत्पति के मूल में रहता है, मेरे पुत्रों देखो, अमृतां जब यह वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश कर जाता है, तो गृह में जैसे प्रवेश किया है, तो गृहाश्रम में

बेटा! सब जल की ही पूजा करने वाले हैं। और जल को ही उग्रवाद की प्रतिक्रिया से ही कही है, और आपो ही मुनिवरों! देखो, अन्तरिक्ष में उड़ान की प्रतिक्रिया है तो विचार आता रहता है, बेटा! यह वानप्रस्थ रह जाता है, जब तृतीय चरण आता है, वह तृतीय चरण यह है, कि वह दोनों प्रकार की आभाओं का पूजन करता हुआ वह मेरे पुत्रों! देखो, वान वृत्तियों में रत्त हो जाता है, जहाँ विद्यालयों में वह अपने अनुभव देता है, ओर विद्यालयों में अपना अनुभव दे करके, ब्रह्मचारी अथवा ब्रह्मचारिणी सब उसकी संरक्षणता में गमन करने लगते हैं, और वह विचित्र धाराओं की उपलब्धियाँ हो जाती है। तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार आता रहता है हे मानं ब्रहे तू मानो विद्यालयों का धिपति है, तू विद्यालयों में गमन कर, जिससे मानो देखो, तू अपने में अपनेपन का भान करता हुआ, विद्यालय को सुसज्जित बना सके। यदि राषट्र का ऊँचा मूल कोई कारण है वह केवल वानप्रस्थ आश्रम है, जिससे देखो, विद्यालय है, क्योंकि राष्ट्र को जो निर्माण होता है वह विद्यालयों से हुआ करता है ओर राष्ट्र की जो प्रणालियाँ हैं उनमें जो उद्बुद्धता आती है, वह राष्ट्रीय प्रणाली से आती है, राष्ट्र में यह नियमावली होनी चाहिए, कि ये भगवान मनु के काल में इस प्रकार की नियमावली रही है, क्या वह मुनिवरों! देखो, वानप्रस्थ विद्यालयों में अध्ययन कराते रहे हैं, मेरे प्यारे! मुझे एक वाक् स्मरण आ रहा है, जो वाक् मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में भी वर्णन कराया था, उन्होंने अमृतां देखो, जब हम महाराजा अश्वपति के यहाँ विद्यालयों में अध्ययन कराते थे, और पठन पाठन कराते थे, तो वहाँ देखो, वहाँ युवावस्था को देखो, शिक्षक नही होना चाहिए। यदि राष्ट्र को विद्यालयों को ऊँचा बनाना है, पवित्र बनाना है तो मानो देखो, उसमें वानप्रस्थ होना चाहिए, जिसकी इन्द्रियों की मानो तृप्तियां हो गई हों, सन्तानों से तृप्तियाँ हो गई हों, वह मुनिवरों! देखो, विद्यालयों में जा करके, शिक्षण का कार्य क्रियाकलाप करते हैं, क्योंकि मनु जी के यहाँ प्रायः ऐसा रहा।

एक समय मुनिवरों! देखो, भगवान मनु के यहाँ क्या उनके अमृतां देखो, महाराजा अश्वपति के यहाँ भी जब हम अध्ययन करा रहे थे, तो वहाँ एक युवा देखो, अध्ययन वानप्रस्थी जब अध्ययन कराने लगा तो एक समय मानो वानप्रस्थी का मन चंचल हो

गया जब चंचल हो गया तो वहाँ ऐसे ऐसे यन्त्र विद्यमान थे, उनके विद्यालयों में मानो जिनका मन चंचल होता है, उसके मन की जो तरंगें है वह मानो देखो, यन्त्रों में दृष्टिपात आती रहती थी। जब वह मन चंचल हुआ तो वह तरंगें मानो यन्त्रों में प्रवेश हो गईं और यह महाराजा अश्वपति को यह बहुत पुरातन काल में यह निर्णय दिया गया था, कि विद्यालय में चंचलता यदि आ जाएगी, तो देखो, ब्रह्मचर्य का विनाश हो जाएगा, और ब्रह्मचर्य नही रह पाएगा। तो मेरे प्यारे! देखो, वह उस चंचलता इन प्रवृत्तियों को, यन्त्रों में प्रवेश हो करके वैज्ञानिकों ने बेटा! उसको अनुसन्धान में लाए, और वह महाराजा अश्वपति को निर्णीत कराया गया। उन्होंने कहा यथार्थ।

शिक्षालयों की पवित्रता से राष्ट्र की पवित्रता

तो मेरे प्यारे! यदि राष्ट्र को राजा को ऊँचा बनाना है तो शिक्षालय पवित्र होने चाहिएं और विद्यालयों में मुनिवरों! देखो, अध्यापन का क्रियाकलाप देखो, वानप्रस्थ को दे देना चाहिए और राजा का संरक्षण होना चाहिए, मेरे प्यारे! यदि राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है, समाज में परिवर्तन लाना चाहता है, ब्रह्मचारियों में ब्रह्मचर्यवत को लाना चाहता है, तो मानो देखो, इस प्रकार का देखो, विद्यालयों में वानप्रस्थियों का अध्यापन का कार्य होना चाहिए। जिससे वह अपनी संसार के वैभव और संसार के क्रियाकलापों से वह निवृत्त हो जाएं। यदि देखो, विद्यालय में यदि मोह आ गया है, तो वह भी विनाश का कारण है, यदि क्रोध की अग्नि प्रदीप्त हो गई है, क्या वह अपने को नष्ट कर ले वह भी एक महान मानो दुराग्रह है, और यदि विद्यालय में मुनिवरों! देखो, विद्यालय में यदि ब्रह्मणे लोभ की मात्रा आ गई है, देखो, काम, क्रोध, लोभ, मोह यह कोई भी कारण आ जाएं, वही विद्यालय ब्रह्मचारियों अन्तःकरण के लिए, घातक बन जाता है। मेरे प्यारे! देखो, यह मैं विशेषता नही कल मेरे प्यारे महानन्द जी इसके ऊपर कुछ प्रकाश देंगें। क्योंकि इनकी बड़ी इच्छा रहती है, तो विचार आता रहता है, ब्रह्मणो कृतं देवाः मैं केवल यही उच्चारण कर रहा हूँ, कि देखो, यहाँ जब यह राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाना है, तो वानप्रस्थ की मेरी पुत्रियां जो मानो माता के तुल्य है

उन्हें प्राणायाम करना चाहिए, प्राण की सत्ता को वह जानने वाले हों, ब्रह्मचर्य से सुसज्जित हों, और मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचर्य का अभिप्रायः क्या है? मैं ब्रह्मचारी किसे कहता हूँ? यहाँ प्रत्येक आभा में ब्रह्मचारियों का अपना अपना महत्व होता है, ब्रह्मचारी विद्यालय में वह होना चाहिए, जो प्रत्येक श्वास को देखो, मुनिवरों! ब्रह्म में परिणत करने वाला हो, तो वह मानव ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है, और पालना में लाने वाला ही मुनिवरों! देखो, समाज को ऊँचा बना सकता है।

तो विचार आता रहता है प्राण के ऊपर, मैं जितनी भी विवेचना कर सकूंगा, मेरे में सार्मथ्य नही क्योंकि इतना विशाल ये वन है प्राणायाम का क्या देखो, रेचक और कुम्भक करने वाले वानप्रस्थी होनें चाहिएं। मेरे पुत्रों! देखो, जिससे ब्रह्मचारी मृत्यु को विजय कर सके, आज उच्चारण करने वाले कर ही देते हैं कि ब्रह्मचारी मृत्यु को विजय कर लेता है, अरे, ब्रह्मचारियों को तो वही मृत्यु से विजय होते हैं, जिनके आचार्य यमाचार्य जैसे होते हैं। जो मृत्यु को विजय करने वाले आचार्य हों, वही ब्रह्मचारी अपने को मृत्यु से पार ले जाता है। तो आओ, मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है महाराजा अश्वपति के यहाँ जितने भी ब्रह्मचारियों को शिक्षा देने वाले मानो देखो, आचार्यजन थे, वे आचार्य मृत्यु से पार हो गएं थे, तो ब्रह्मचारियों को भी मृत्यु से उल्लांघने की, उन्होंने शिक्षा प्रदान की। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मणा कृतं देवत्वां लोकां हिरण्यम रथाः तो विचार आता रहता है मैं विशेष विवेचना तुम्हें देना नही चाहता हूँ, और मृत्यु से वह विजय होता है जो काम, क्रोध, लोभ, मोह से उपराम हो जाता है मेरे प्यारे! समाज को अपने में एक रस स्वीकार करता है, वही ब्रह्मचारियों को अपने में, ब्रह्मवर्चोसि कहलाता है, और ब्रह्म मृत्यु को विजय करने वाला है, क्योंकि मृत्यु से इन्हीं से आती है, क्रोध आ गया है, तो मृत्यु है, काम प्रवृत्ति बन गई है, तो मृत्यु है, यदि मानो देखो, उसके अन्तर्हृदय में यदि मोह ममता आ गई है, वह भी मृत्यु है, मेरे पुत्रों! देखो, मृत्युञ्जय बनने वाला वही कहलाता है, जो इन दोषों से उपराम हो जाता है, और वह ब्रह्मचारियों को भी अध्ययन देता है, समय समय पर तो मुनिवरों! देखो, विचार आता रहता है, मैं इस सम्बन्ध में विशेष नहीं ब्रह्मचारियों को मुनिवरों! देखो, **आचार्य विचारता हुआ मेरे**

पुत्रों! देखो, रेचक और कुम्भक कराता है रेचक ओर कुम्भक में जब अभ्यास बलवती हो जाता है। जब मानो एक प्रहर का उसे अभ्यास हो जाता है, दो प्रहर का उसे अभ्यास हो गया, तो मानो देखो, वह प्राण का किसी भी काल में मन से समन्वय करके ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करने लगता है, मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करने लगता है, तो वह ब्रह्माण्डम् व्रतं देवत्वां आज मैं कहता हूँ, लोक लोकान्तरों की यात्रा करने वाला बहुत से यात्री हुए हैं, मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, महर्षि उद्दालक गोत्र में महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि ने और देखो, शिकामकेतु गोत्र में मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणे भारद्वाज हुए हैं, और भी नाना ऋषि हैं बेटा! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ब्रह्मवेत्ता ओर ब्रह्मनिष्ठ और भी आभा में युक्त होते रहे हैं। तो उनके प्रतिक्रियाओं में सदैव यही गमन होता रहा है सम्भूति ब्रह्मा सम्भूति लोकां सम्भूति प्राणं ब्व्हे जब वह प्राण और अपान को मुनिवरों! सम्भूत करते थे तो मेरे प्यारे! मृत्यु उसके समीप नही रह पाती, तो विचार आता रहता है, तो रेचक और कुम्भक और पूरक और मुनिवरों! देखो, इनका प्राणायाम जब दो दो प्रहा ब्रहे जब मेरे प्यारे! दो दो प्रहर का जब अनुभव स्थिर हो जाता है। वह इस प्राण को अपने में सफल कर लेता है मेरे प्यारे! देखो, वह कौन है? विद्यालय में कैसा अन्न होना चाहिए? जिससे मन की प्रवृत्ति विशुद्ध बनी रहे, देखो, विद्यालयों में वह अन्न रहना चाहिए, अन्न ऐसा होना चाहिए, देखो, कृषक का अन्न है, और वह अन्न पर किसी का विशेष देखो, अवृत न हो, राजा का देखो, तमोगुणी, रजोगुणी अन्न पर न होना चाहिए, वह अन्न जब विद्यालयों में पंहुचेगा, तो ब्रह्मचारी उस अन्न को पान करके विशुद्ध बनेगा, और पवित्रता की आभा में परणित हो जाएंगे।

तो विचार आता रहता हैं, मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नही प्रगट करूंगा, विचार केवल यह है कि हम प्राण की महतता को जानें मानो यही प्राण देखो, प्राणायाम विद्यालयों में आता है, ब्रह्मचारी ही मृत्यु को विजय करता है, ब्रह्मचारी ही विद्यालयों को सजातीय बनाता है, और विद्यालय भी देखो, ब्रह्मचारी विद्यालय को सजातीय बनाता है और विद्यालय ही, गृह को पवित्र बना देते हैं, माता प्रसन्न हो रही है, ब्रह्मचारी को

दृष्टिपात करके कहती है कि हे ब्रह्मचारी! मानो देखो, माता कहती है, ब्रह्मचारी से तू पूज्य है, माता देखो, अपने ही ब्रह्मचारी को पूज्य की उद्गीतता गा रही है, क्यों गा रही है, क्योंकि उसने मृत्यु को पार हो गया है। वह रेचक और कुम्भक के द्वारा मृत्यु से पार हो गया है, वह अन्तरिक्ष की यात्रा करने लगा है, जैसे वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण कर रहे हैं, इसी प्रकार रेचक और कुम्भक को जानने वाला ब्रह्मचारी अन्तरिक्ष की यात्रा कर रहा है।

सन्यस्थ

आओ मेरे प्यारे! मैं विशेषता में तुम्हें नही ले जा रहा हूँ विचार केवल यह प्रारम्भ है ब्रह्मणो मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि मुनियों की सभाएं हुई, और ऋषि मुनियों ने इस मानव के जीवन को चार भागों में मानो तीन भागों में विभक्त किया समाज के लिए, मेरे पुत्रों! एक भाग रह जाता है जिसको हम सन्यस्थ कहते हैं अग्नेय जैसा मुनिवरों! देखो, जिसका हृदय बन गया है, और अग्नि के तुल्य मुनिवरों! देखो, अग्निमयी हृदय युक्त हो गया है, मेरे पुत्रों! देखो, जैसे अग्नि का स्वरूप है, जो समिधाओं के गर्भ में मुनिवरों! देखो, वह परोक्ष रूप से मानो देखो, उसमें विद्यमान है, जब यज्ञशाला में मुनिवरों! देखो, यज्ञमान याग करता है, उस अग्नि का स्वरूप अपने में ही मानो देखो, अपने में ऊर्ध्वा में गमन करने लगता है, वह अग्नि की एक दूसरी समिधा से मानो सम्पर्क करके अग्नि का अपना जो अपरोक्ष स्वरूप में अग्नि का स्वरूप विद्यमान है, बेटा! वह प्रत्यक्ष हो जाता है, उसको दृष्टिपात करने वाला, अपने में दृष्टिपात करता हुआ कहता है, यह कैसा प्रभु का नृत्त हो रहा है? इसी प्रकार सन्यासी जब मानो सन्यास को प्राप्त होता है, वह मृत्यु को विजय कर लिया है, ब्रह्मचर्य में और देखो, संसार को त्याग दिया है गृहस्थ में और विद्यालयों में मानो देखो, अपनी मृत्यु को विजय करने वाला वानप्रस्थ मुनिवरों! देखो, वह सन्यस्तव को प्राप्त हो जाता है। और जब सन्यस्थ को प्राप्त होता है, तो उसका ज्ञान, इतना विचित्र है कि वह ममता में नही आता है, वह प्रभु के राष्ट्र में चला जाता है, यदि वह प्रभु देखो, गृह में मोह नही करना चाहिए, यदि सन्यास में

देखो, अपने वस्त्र को परिवर्तन कर लिया है, बाह्य जगत में परिवर्तन जब करना चाहिए, जब आन्तरिक जगत उसका परिवर्तित हो जाएं, और यदि उसका आन्तरिक जगत परिवर्तित नही होता है, ज्ञान से उसने स्नान नही कराया है, विषय जिससे ज्ञान से दग्ध नही हो जाते, अरे, ऐसे मानव को देखो, सन्यास को प्राप्त नही होना चाहिए। यदि समाज को परमात्मा की आभा में ले जाना है, तो वह सन्यस्थ कहलाता है, जो अग्नेय स्वरूप जैसा बाह्य जगत है ऐसा ही उसका आन्तरिक जगत बन जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करने लगता है।

बेटा! मैं दूरी न चला जाऊं यह विचार उदगार है, यह महापुरूषों के उदगार हैं, मेरा कोई उदगार नही विचार आता रहता है, कि महापुरूष यह कहता है, कि सन्यास उसे कहते हैं, कि वह समाधि में विद्यमान है, समाधिष्ट होता हुआ वह मन और प्राण को जब एकाग्र कर लेता है, उसको मानो इन्द्रियों के साकल्यों को एकत्रित करता हुआ, जब मानो देखो, अग्निमयी स्वरूप बन जाता है, अग्निमयी बन जाता है, तो मेरे प्यारे! वह अग्नि का ध्यान करता है, ध्यानावस्थित हो जाता है, वह मेरे प्यारे! देखो, वह जो परमात्मा की विचित्र जो अग्नि है, वह जो उसका विचित्र स्वरूप है, उसको अपने में धारण करता हुआ, उसको अपने अपनेपन में वर्णित करता हुआ बेटा! देखो, वह सागर से पार हो जाता है, और वे परमपिता परमात्मा के आनन्दतव को प्राप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, मैं उच्चारण कर रहा था, क्या हमारे यहाँ देखो, सन्यस्थ होना चाहिए, और सन्यास कैसा हो अग्नि जैसा स्वरूप जैसे अग्नि के मुखारबिन्दु में मानो प्रत्येक साकल्य जब प्रदान करता है यज्ञमान, तो अग्नि उसका विभाजन कर देती है, उसको विभक्त कर देती है, तो मानो देखो, वही अग्नि है ब्रह्मणे व्रतं जो प्रत्येक पदार्थों का साकल्यों का विभक्त करती हुई वह मानो देखो, प्रभु की सृष्टि को प्रदान कर देता है। तो बेटा! यह कैसा अमूल्य जगत है, कैसी अमूल्य यह यज्ञशाला है, इसके ऊपर बेटा! जब मैं विचार विनिमय करता हूँ, तो मेरा अन्तरात्मा परम्परागतों से बेटा! देखो, देखो, अन्तर्हृदय पवित्र हो जाता है, और गदगद हो जाता है, और मैं यह कहा करता हूँ, कि यह भयंकर वनो में तपश्चर बनते हुए और संसार में जैसे तपश्चर बनते हुए, वह मानो

देखो, अग्नि के समक्ष अग्नि के सहयोग से वह जैसे यज्ञशाला में और जैसे त्याग हो रहा है, यज्ञमान त्याग कर रहा है, घृत का त्याग कर रहा है, समिधा का त्याग कर रहा है, साकल्यों का त्याग कर रहा है, और उसी में देखो, उसके जो विचार होते हैं, वेदमन्त्रों के सुविचार उद्गीत होते हैं, वह जब उसमें प्रवेश हो जाते हैं, तो वह मुनिवरों! देखो, अग्नि विभाजन कर देती है, ओर अग्नि बेटा! देखो, ब्रह्माग्नि में उसकी वाणी पवित्र हो जाती है, और जब वाणी पवित्र होती है, तो अन्तःकरण पवित्र हो जाता है, और अन्तःकरण के पवित्र होने पर मुनिवरों! देखो, वह इस संसार को अपने में धारण करता हुआ और वह परमात्मा को प्राप्त होता हुआ बेटा! वह मानो देखो, मोक्ष की पगडण्डी का अधिकारी बन जाता है। तो विचार आता है बेटा! मैं तुम्हें विशेषता में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, विचार तो देखो, देने के लिए बहुत से विचार हैं, बड़ा अध्ययन और मानो क्रियात्मकता में लाने का प्रयास किया।

आओ मेरे पुत्रों! आज का विचार क्या, कि हम परमपिता परमात्मा की महती का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं, ऐसा हम एक प्रयास करना चाहिए तो मेरे प्यारे! देखो, विचार चल रहा था, देखो, जब सन्यासी प्राणायाम करता है, और प्राण, अपान, उदान और समान के एकाग्र करता हुआ, रेचक और कुम्भक में ले जाता है। तो ऐसा वह सन्यासी होता है, बेटा! जो प्राण को ही जानने वाला है, मृत्यु को विजय कर गया है, मेरे प्यारे! जन्म जन्मान्तरों के उसके जो संस्कार हैं, उस अग्नि में वह दग्ध हो जाते हैं, अन्तःकरण प्रकाशित बन जाता है, और वह प्रकाशित होता हुआ प्रभु को प्राप्त कर लेता है। मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार के जो मृत्युञ्जय बनते हैं, वही तो मृत्यु से पार होते हैं। तो बेटा! देखो, आज का विचार, मैं विशेषता में, तुम्हें ले जाना नही चाहूँगा, केवल विचार विनिमय यह कि प्राण की कितनी विचित्र धाराएं हैं प्राण को मानो देखो, एक नख में ला देता है इसी प्रकार साधना के द्वारा एक पग में ला देता है, देखो, जैसे वह त्रेता के काल में देखो, त्रेता के काल मे देखो, बालि पुत्र मुनिवरों! देखो, अंगद ने वही किया था, एक पग में सर्वत्र पांचों प्राणों की संज्ञा को दस प्राणों की आभा को उसमें लाने का प्रयास किया, कोई कितना बलिष्ठ प्राणी हो,

वह भी उसको दूरी नही कर सकता। मुनिवरों! देखो, एक योगी है वह अपनी प्राण की सत्ता के द्वारा प्राण और मन की पुट लगा करके बेटा! यह एक एक वैद्यराज यह दृष्टिपात कर रहा है, कौन सी औषध ऐसी है, किस प्रकार की उसमें प्राण सत्ता है, और प्राण सत्ता को कैसे उद्बुद्ध कर सकती है, वह मानो देखो, ऐसी औषध समाधि के द्वारा दृष्टिपात करता है, मेरे प्यारे! देखो, वह समाधि लगाने वाला अपने गृह को दृष्टिपात कर रहा है। समाधिष्ट होता हुआ मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्माण्ड की यात्रा कर रहा है।

आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा को दिए हुए, मानो देखो, इस अनूठे देन को हम अपने में धारण करते चले जाएं, बेटा! देखो, यह समाज मानव जीवन को देखो, तीन भागों में, संसार के लिए विभक्त किया गया है, और अन्तिम जो चरण है मानव के जीवन का, वह मोक्ष और अपने लिए होता है, वह परमात्मा को प्राप्त करने के लिए और तीन चरण भी अपने लिए होते हैं, परन्तु उसमें वह समाज से कटिबद्ध होता है। बेटा! देखो, बाल्यकाल, माता पिता का काल है, और युवा काल आचार्य का काल है, और गृहाश्रम मानो देखो, उत्पति का काल कहलाता है और अपने में अपनेपन को जानना है और वानप्रस्थ में मुनिवरों! देखो, राष्ट्र को समर्पित कर देता है, और चतुर्थ जो समय रह जाता है, सन्यस्थ का वह प्रभु को प्राप्त कर लेता है। मेरे प्यारे! देखो, आज का यह विचार, आज मैं तुम्हें यह उद्गीत गाने के लिए आया हूँ, क्या हम परमपिता परमात्मा को जानते हुए, तीनों को, चारों को, अपनी अपनी आभा के बिना प्राण के ये बिना प्राणायाम सिद्ध नहीं होंगे, न तो ब्रह्मचर्य है, न ब्रह्म देखो, युवा ही ऊँचा बनता है और न गृह ही ऊँचा बनता है और बिना प्राण के न वानप्रस्थी ऊँचा है और न देखो, बिना प्राण से देखो, मुनिवरों! सन्यास मोक्ष को प्राप्त हो जाता है, तो बेटा! देखो, यह प्राण सत्ता बड़ी विचित्र है, और इसमें प्राण को जानना अपान को उसमें प्रवेश करना, और व्यान में उसे मानो सिद्ध करना और तरंगें समान में समानता को दृष्टिपात करना है, और मुनिवरों! देखो, जो अमृतं ब्रह्मा उदान है, अरे, उदान प्राण ही तो बेटा! देखो,

चित्त के मण्डल में प्रवेश होता है, और चित्त का मण्डल उसमें प्रवेश हो जाता है, जब उस शरीर को त्यागा जाता है, तो चित्त का मण्डल है, और चित्त के मण्डल में उदान प्राण है, और उदान प्राण पर अश्वत होता हुआ, मुनिवरों! देखो, वह मन ओर प्राण और मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणे चित्त का मण्डल उसमें प्रवेश हो करके, मेरे प्यारे! देखो, शरीर को त्याग दिया जाता है, वह तो प्राण ही है वह जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों को क्रिया दे रहा है उसे एकत्रित कर रहा है वह मानो देखो, प्राण की मानो देखो, जो नाना प्रकार की प्रेरियां हैं उसमें प्रदीप्त कर देता है मेरे प्यारे! मैं विशेषता में नही यज्ञमान भी प्राण सत्ता है तो आज मैं बेटा! देखो, विशेषता नही देने आया हूँ, विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा का प्राण स्वरूप को जानते हुए इस सागर से पार हो जाएं। यह है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, और देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, मेरे पुत्रों! हम सागर से पार हो जाएं, और यह मानो ऋषि मुनियों की सभाएं आदि ऋषियों ने बेटा! जब उस मानव के जीवन के उतने भाग होने चाहिएं, समाज के लिए, जानकारी के लिए, परमात्मा को प्राप्त होने चाहिए। जिससे हमारा जीवन मानो महान बनता रहे, ऐसा मानो देखो, ऋषि मुनियों की अपनी लोलुक्तियों में प्रगट किया हैं यह है बेटा! आज का वाक् अब वेदों का पठन पाठन होगा।

११ 02 03 1990 पुष्प 59 प्राणायाम से रूग्ण समाप्ति

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परगतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महान देवतव मानो देवता का वर्णन किया जाता है। हमारे यहाँ वे परमपिता परमात्मा को, देवताओं की आभा में रत्त रहा है, ओर यह हमारा विचार विनिमय परम्परागतों से रहा है कि यदि हमारा कोई

देवतव है, तो वह प्रभु है, वह चैतन्य देव है।

देवता

तो वह जो प्राण स्वरूप जो परमपिता परमात्मा, जो देवता है जो देवतव को धारण कराता है, और वह स्वयं देवतव बना हुआ है, तो हम उस परमपिता परमात्मा जो देव है, उस देवतव की हम सदैव उपासना करते रहें क्योंकि उस देवता के गुणों को धारण करने वाला भी देवता कहलाता है। इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा को देवता के रूप में, प्रायः वर्णन करते रहे हैं, कि वह देवतव है और जो उसे धारण करने लगता है, उसकी आज्ञा, उसकी आभा में, वह रत्त हो जाता है, वह देवता कहलाता है। तो आओ मुनिवरों! हम देवता बनने के लिए सदैव तत्पर रहें ओर देवता वह कहलाता है, जो मानो संसार का रचयिता है निर्माण करने वाला है, और वही परमपिता परमात्मा इसे संहार कर देता है, तो वे परमपिता परमात्मा हमारे यहाँ देवता है, यूं तो संसार में सर्वत्र प्राणी एक दूसरे के लिए देवता कहलाते हैं। मानो देवतव को जो धारण कर लेता है, वही देवता है, और मुनिवरों! देखो, देवता की आभा में सदैव, मानव को रत्त रहना चाहिए। देवां भूतां देवां रजत्प्रमाणां ब्रहे देवाः कि वह देवता है, जो संसार का रचयिता है, जो निर्माण करने वाला है, तो हम उस परमपिता परमात्मा की महती और उसकी महिमा का सदैव गुणगान गाते रहें, क्योंकि वह अनुपम देवता है। यह अनुपम देवतव को धारण करने वाला है।

प्राणेश्वर

तो आओ मुनिवरों! देखो, आज मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें विशेषता में नही ले जा रहा हूँ, विचार केवल यह प्रारम्भ हो रहा है, कि वह जो परमपिता परमात्मा है, जो प्राणेश्वर है, मानो जो प्राणों का सञ्चार करने वाला है, ओर वह प्राण स्वरूप हो करके, वह संसार को प्राणों का सञ्चार कर रहा है। तो आओ मुनिवरों! देखो, आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा है, बेटा! कई समय हो गये, हम प्राण, अपान ओर उदान की विवेचना और उसकी आभा में लगे हुए हैं। परन्तु देखो, यह जो प्राण है यह अपने में

कितना महान तपश्चर कहलाता है हमारे यहाँ एक नाग नाम का प्राण कहलाता है, और नाग प्राण वह कहलाता है जैसे हमारे यहाँ, एक रेंगने वाली पृथ्वी पर एक योनि कहलाती है, जिसको हम नाग कहते हैं और वह मानव को स्पर्श करते ही, अग्नि दूतां देखो, वह दूसरों के हृदयों में अमृतं उनके शरीरों में उसका सञ्चार कर देता है, और उनमें मानो वह ऐसा शक्तिशाली नाग होता है, क्या मानव की प्राण सत्ता समाप्त हो जाती है और वह शून्यतव को प्राप्त हो जाता है, आत्म चेतना भी उसमें मानो अमृत में समाप्त हो जाती है, तो वह नाग प्राण कहलाता है, मानो देखो, वह नाग कहलाता है, वह योनि है, क्योंकि हमारे यहाँ कई प्रकार की योनियां हैं।

वनस्पति विज्ञान

स्थावर सृष्टि

जैसा हमने बेटा! स्थावर सृष्टि के सम्बन्ध में, तुम्हें वर्णन किया था कि स्थावर सृष्टि में जितना वनस्पति विज्ञान है, वह बड़ा अनूठा माना गया है, क्योंकि ये जितना भी वृक्ष इत्यादि वनस्पति विज्ञान है, यह वनस्पतियों का जो भार है, इस ब्रह्माण्ड में वह सर्वत्र मानो देखो, स्थावर सृष्टि कहलाती है। वह स्थावर सृष्टि पृथ्वी पर भी है, वह चन्द्रमा में भी है, वह सूर्यमण्डल में भी है, और वह बुध में भी है और वह बुध और शनि में भी विद्यमान है, मानो मंगल मण्डल में भी वह सृष्टि विद्यमान है, क्योंकि वनस्पति विज्ञान जहाँ प्राणी रहता है, वहीं ये वनस्पति विज्ञान माना गया है, और यह वनस्पति विज्ञान को जानने वाले वैद्याराज भी माने गएं हैं, और वह वैद्यराज मानो देखो, वह अपनें में तपा रहा है, उसी स्थावर सृष्टि को मानो स्थावर सृष्टि में कुछ खनिज को ले करके मानो अग्नि में उसको तपा करके खरल कर रहा है तो वह नाना प्रकार के वनस्पति विज्ञान में लगा हुआ है। चाहे वह पृथ्वी मण्डल का प्राणी हो कृषक हो, चाहे वह मानो देखो, मंगल इत्यादि और किसी भी लोक लोकान्तर का क्यों न हो, तो मुनिवरों! देखो, यह स्थावर सृष्टि बड़ी विचित्र है, और इसमे चार प्रकार माने गएं हैं। मुनिवरों! देखो, चिकित्सा प्रणाली में तो सभी जितनी वनस्पति हैं चाहे वह फैलने वाली हों, चाहे वह

मानो देखो, ऊर्ध्वा गति को गमन करने वाली हो, चाहे वृत्तियों में रत्त रहने वाली हो, वह सर्वत्र मुनिवरों! देखो, औषध विज्ञान के रूप में विद्यमान रहता है, हमारे यहाँ औषध का बड़ा विशेष वर्णन किया गया है, मेरे प्यारे! देखो, जैसे कणक है उस कणक को यदि हम जल में जल में रात्रि समय जल में प्रवेश करके और प्रातःकालीन उसको खरल करके मानो देखो, दुग्ध बना करके और उसे अग्नि में तपा करके पान करता है तो मुनिवरों! देखो, वह इस प्रकार का पान करने वाला और उसमें एक मानो मृचिका औषध होती है उसे पान करने वाला मेरे प्यारे! उसे कदापि भी वृद्धपन नही आता। शरीर को त्यागा जा सकता है परन्तु वृद्धपन नही आता, वृद्ध वह प्राणी होता है मानो देखो, जिसको अंगों में स्थिलता आ जाता है और वह स्थिलता आ करके मानो वह रूग्ण रहने लगता है, रूग्ण को वृद्धपन कहते हैं शरीर को त्यागने को मुनिवरों! देखो, परिवर्तन कहते हैं।

तो विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, मैं विशेष चर्चा नही केवल स्थावर सृष्टि की चर्चा कर रहा था। वह स्थावर सृष्टि मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, ऐसी ऐसी औषध है, जिनका मानो खरल बना करके, और तपा करके शरीर पर मर्दन कर लिया जाता है, यह जो काष्ठ में रहने वाली अग्नि है, यह उस प्राणी को मानो दग्ध नही कर सकती, उसे भस्म नही कर सकती है। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है द्वापर के काल की वार्त्ता मुझे स्मरण आती है, मानो द्वापर के काल में मंगल मण्डल में महाराज अर्जुन का वास हुआ था, तो मंगल मण्डल से, वह ब्रोहत नाम की, एक औषध को लाए और उस औषध में यह विशेषता रही है, क्या उसी औषध में एक पृथ्वी का एक वनस्पति होती है, उसे उन्होंने देखो, खरल किया और मृचिका ओर मौनकृतिका एक पर्वतों में औषध होती है, मानो देखो, उसको खरल बना करके, तपा करके उसका पिपाद बना करके, बेटा! देखो, शरीर पर मर्दन करने से अग्नि में वह स्वतः भ्रमण कर सकता है प्राणी, उसको अग्नि वह भस्म नही कर सकती है क्योंकि वह उसका जो नृत्त है, वह औषध है वह बड़ा विचित्र माना गया है।

तो आओ मेरे पुत्रों! देखो, विचार क्या मेरे पुत्रों! यह वनस्पति विज्ञान स्थावर सृष्टि

मुनिवरों! देखो, संसार में निहित रहती है, ये पृथ्वी मण्डल का क्या यह ब्रह्माण्ड का कोई भी मण्डल ऐसा नही है, जहाँ यह ओषध विज्ञान न हो, और प्रायः वेद के मर्म को जानने वाले बुद्धिमान न हो, मेरे प्यारे! देखो, मैं इस सम्बन्ध में, विशेष विवेचना नहीं देने आया हूँ, विचार यह देने के लिए आया हूँ, पुत्रों! ब्रह्मणे कृतं, वेद का आचार्य बहुत ऊँची उड़ाने उड़ता रहता है, और दर्शन भी अपने में बड़ी विचित्र उड़ाने उडता रहता है स्थावर सृष्टि के सम्बन्ध में, मेरे प्यारे! देखो, स्थावर सृष्टि में प्राण है और प्राणां ब्रह्मे बेटा! देखो, मैं उच्चारण कर रहा था, दूसरी सृष्टि का नाम अण्डज सृष्टि कही जाती है, जिस अण्डज सृष्टि में बेटा! एक योनी का निर्माण होता है, उस योनी का नाम है, नाग है बेटा! नाग एक योनी है नाग उस मानो अण्डज सृष्टि से उत्पन्न होता है, उसी से उसका प्रादुर्भाव होता है।

नाग प्राण का प्रभाव

मेरे पुत्रों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, नाग प्राणी जब मानव को स्पर्श कर लेता है, तो उसकी मृत्यु तक हो जाती है, मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार, हमारे शरीरों में भी जैसे यह पांच मुख्य प्राण होते हैं, एक मानो छठा प्राण है, जिसका नाम नाग प्राण कहा जाता है। तो नाग प्राण में यह विशेषता रही है क्या नाग प्राण जब मानव को क्रोध आता है, तो क्रोधाग्नि जब प्रदीप्त हो जाती है, तो बेटा! नाग प्राण जो शरीर में विद्यमान है, जैसे नाग, जैसे नाग का ऊर्ध्वा मुख हो जाता है, उसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, नाग प्राण का ऊर्ध्वा मुख हो जाता है, और जब उसे क्रोध आता है, अति क्रोध आता है, तो शरीर में जो अमृत का बहाव है, उसे वह निगलने लगता है, और अमृत का बहाव जैसे उसने निगला तो मुनिवरों! देखो, उसमें से अमृतां भूतं ब्रह्मणा लोकां बेटा! अमृत का बहाव समाप्त होने लगता है, और वह मुनिवरों! देखो, विष को उगलने लगता है। और वही जो विष है बेटा! वह किसी न किसी रूप में मानो उसका प्रादुर्भाव होता है, मानो उसका निकसना होता है, शरीर मे से तो विचार आता है, क्रोध नही आना चाहिए, यह क्रोध इतनी भयंकर अग्नि कहलाती है। मेरे पुत्रों! देखो, यदि हम एक

नाग प्राण के देखो, ऊर्ध्वा में यदि क्रोध को हम एक यन्त्र में स्थिर कर देते हैं, और उस यन्त्र में मानो देखो, उसकी जो तरंगें हैं, उसे यदि हम खरल बना करके और मानो देखो, टीके से शरीर रूप में मानो शरीर में प्रवेश कर देते हैं, तो एक क्षण समय एक मानो देखो, पलं ब्रह्मे देखो, आधे पल का जो क्रोध है, उससे मानो देखो, संसार में दस प्राणी समाप्त हो जाते हैं। मानो देखो, इतना विशाल, उससे विष उगला जाता है। तो इसीलिए हमारा वेदमन्त्र कहता है, नारां भू वर्णनं व्रते देवत्वां हे मानव! तू नाग प्राण को जागरूक मत कर, यदि तेरा नाग प्राण जागरूक हुआ, तो तेरा शरीर रूग्ण बन जाएगा। मानो तू अपमानी बन जाएगा, हे मानव! तेरी प्रतिभा समाप्त हो जाएगी। मेरे प्यारे! देखो, नाग प्राण, आयु को सूक्ष्म बना देता है, जो मानव मुनिवरों! देखो, क्रोध के बिना ही मुनिवरों! देखो, जीवन को व्यतीत करता है, नम्रता से करता है, मेरे प्यारे! देखो, उसका आयु बलवती हो जाता है। और जो क्रोधी प्राणी होता है, क्रोध करने वाला मेरे प्यारे! देखो, उससे आधी उम्र उसकी समाप्त हो जाती है।

विचार आता रहता है क्रोध आता है अग्नियां प्रदीप्त हो जाती हैं, और वह भयंकर अग्नि बेटा! अमृत को अपने में धारण करके अमृत को निगल जाती है, और विष को त्याग देती है, यह विष ही मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार के रूपों में परणित होता है, वही विष है, जो देखो, अति कामी बना देता है, वही विष है जो मुनिवरों! देखो, अति उसके शरीरों में जो मानो नाना प्रकार की तरंगों का जन्म होता है।

एक समय बेटा! देखो, वैद्यराज सुधन्वा से अश्विनी कुमारों से यह प्रश्न किया गया, क्या महाराज इस क्रोधां भूतं उन्होंने कहा यह जो हमारा शरीर का जो एक एक बाल है रोम हैं, इसमें से देखो, एक एक देखो, क्षण क्षण में मुनिवरों! देखो, बहत्तर बहत्तर नाम की मानो तरंगें उत्पन्न होती रहती हैं, ओर वह मुनिवरों! देखो, रोम रोम में से उत्पन्न हो करके, यदि मुनिवरों! देखो, उन तरंगों को हम अपने में धारण करते रहें, उन तरंगों के ऊपर विशेषज्ञ बनते रहें, तो बेटा! यह ब्रह्माण्ड को जानना बड़ा आश्चर्य नही हैं, इस ब्रह्माण्ड का जानना आश्चर्यतव नही हैं, यह सहज बन जाता है, तो विचार आता रहता है कि हम मुनिवरों! देखो, क्रोधाग्नि को जागरूक न करें, जब क्रोधाग्नि जागरूक हो

जाती है। तो मानव के मुनिवरों! देखो, एक एक मानो देखो, रोम में से तरंगों जो प्रादुर्भाव होता है, मुनिवरों! देखो, वह तरंगों का मानो देखो, जो भाव है, वह समाप्त हो जाता है, तो मानो बेटा! देखो, बुद्धि में हीन हो जाता है, तो विचार आता रहता है, मैं इस सम्बन्ध में विशेष नही ले जाना चाहता हूँ, इसीलिए हमारे आचार्यों ने यह कहा कि है, तुम प्राण सत्ता को जानने का प्रयास करो और प्राणायाम करने वाला मेरे प्यारे! एक दूसरे में परणित होता हुआ, और वह मुनिवरों! देखो, एक एक अंग में लाने वाले प्राण को जान लेता है, बेटा! वह अन्तरिक्ष में यात्रा करने लगता है, मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय हम मानो देखो, भ्रमण करते हुए ब्रेतकेतु मुनि के यहाँ पंहुचे तो ब्रेतकेतु मुनि महाराज मानो वह समाधिष्ट हो जाते थे, वह समाधिष्ट हो करके देखो, ऊर्ध्वा उड़ाने उड़ते थे, मेरे प्यारे! मुझे तो ऐसा भान होता है, क्या देवर्षि नारद मुनि इस प्राण विद्या को जानते थे, और प्राण विद्या को जानने से बेटा! लोक लोकान्तरों में उसकी यात्रा बन जाती है। मानो देखो, जैसे यन्त्र में देखो, प्राण को ही प्रवेश किया जाता है, जब वैज्ञानिक जनों से यह प्राप्त किया जाता है, यन्त्र में प्राण को वह फूंक देता है, और प्राण को अमृत बना करके बेटा! ऊर्ध्वा में उड़ाने उड़ता है।

प्राण के दो प्रकार

तो आओ मेरे पुत्रों! देखो, इस सम्बन्ध में विशेषता नही केवल विचार यह कि हम संसार की प्रतिभा अपने ही मानो देखो, प्राण सत्ता से जान सकते हैं, क्योंकि मानो दो प्रकार का प्राण हमारे यहाँ स्वीकार किया जाता है, एक प्राण विशेष कहलाता है, और एक विश्वभान कहलाता है, जैसे मन ही विश्वभान है, और मन देखो, विशेष भी कहलाता है, मुनिवरों! देखो, विशेष प्राण वह कहलाता है, जो विभक्त क्रिया में परणित हो जाता है, जो मानो प्राणी मात्र में विद्यमान है, प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान, नाग, देवदत देखो, देव दत्तम् ब्रह्मा अप्रहा मेरे प्यारे देखो, यह जो पञ्चीकरण हो रहा है, पांच प्राण हैं, तो मानो पांच उप प्राण कहलाते हैं, जैसे प्राण है, अपान है, उदान है, समान है, और व्यान है, यह मुनिवरों! देखो, दस प्राण कहलाते हैं। जब मुनिवरों! देखो, समाज

ने यह विचारा कि ऋषि मुनियों ने यह विचार विनिमय करने का प्रयास किया गया, कि अब हम देखो, राष्ट्र का निर्माण करेंगें तो पांच मन्त्रियों का निर्माण किया मेरे प्यारे! राष्ट्र को संचालन करने के लिए देखो, प्राणों से देखो, रचिताओं ने, निर्माणवेत्ताओं ने इन प्राणों से ही प्रेरणा ले करके मेरे प्यारे! देखो, प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान देवदत और व्रतं ब्रहा यह दस पांचों प्राणों को ले करके मुनिवरों! देखो, राष्ट्र की प्रणाली का निर्माण हुआ। इसी प्रकार मैं बेटा! राष्ट्रीय विचारधारा में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, विचार केवल यह कि हमारा वेद का मन्त्र क्या कहता है, हे मानव! जब तू नाग प्राण के आश्रित हो जाएगा, तो मानो उसी समय तेरी मृत्यु हो जाएगी, तो इसीलिए नाग प्राण में नही जाना चाहिए। उस सर्वत्र प्राणों का समावेश करते हुए, हम एक दूसरे में परणित हो जाएं, और एक दूसरे में जानने लगो तो मुनिवरों! देखो, जैसे प्राणी प्राणी में पिरोया जाता है, इसी प्रकार यह नाना प्रकार की ऊर्ध्वा में गमन करने वाला है।

प्राणायाम से रूग्ण समाप्ति

तो विचार आता रहता है, मेरे पुत्रों! देखो, अमृतं ब्रह्मा वर्णनश्चं कृतं देवाः तो मुनिवरों! देखो, यह जो प्राण है, यह अपने में बड़ा विवित्र है, मैंने तुम्हें इससे पूर्व कालों में प्रगट किया, क्या हमारे यहाँ नाना प्रकार का औषध विज्ञान प्राणायाम भी इसी प्रकार के जिससे मानव के रूग्ण समाप्त हो जाते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ऐसी मेरी पुत्रियां रही हैं, जिन पुत्रियों में प्राण के द्वारा अपने शरीर में जो बहुत से मानो देखो, अंगों में मानो देखो, जो अप्रतं वह रूग्णता में परणित हो गये, उन्होंने प्राण की सत्ता के द्वारा प्राणायाम के द्वारा उन रूग्णों को समाप्त किया।

मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण आता रहता है, एक ब्रह्मचारी थे, और ब्रह्मचारी के हृदय में रूग्ण हो गया, तो उन्होंने बेटा! वृत्तिका मुनि के यहाँ विद्यमान हो करके देखो, वह प्राण के द्वारा देखो, रूग्ण को समाप्त कर दिया। एक मेरी पुत्री थी बहुत पुरातन काल की वार्त्ता है पुत्रों! क्या वह ऋषि के आश्रम में उसका वास होता, परन्तु वह रूग्ण हो गई अपने किसी मूल कारणों से तो मानो देखो, वह प्राणायाम करने लगी, जब वह प्राणायाम

करने लगी तो मानो देखो, एक दिन उसके पति देव ने कहा, हे देवी! मेरी इच्छा यह है कि मेरा जो गृह है, यह पुत्रवान बन जाएं, और मैं पुत्रवान बनने के लिए मेरी प्रबल इच्छा रहती है, तो उस समय मुनिवरों! देखो, जब उन्होंने कहा प्रभु! मैं वही प्रयास कर रही हूँ, क्योंकि मेरे अन्तर्हृदय में वह सत्ता समाप्त होने जा रही है, जिससे मैं पुत्रवती बन करके और मैं मानो गृह को ऊर्ध्वा में ले जाऊं। मेरी इच्छा यह रही है कि मैं प्राणायाम करने लगूं बेटा! वह शीतली प्राणायाम करती और शीतली प्राणायाम से संकल्प प्राणायाम करती, और संकल्प प्राण के साथ में वह मानो देखो, मौन प्राणायाम करती हुई मुनिवरों! देखो, छह माह में मुनिवरों! उसका रूग्ण समाप्त हो गया, और वह जो देखो, उसके शरीर में विषैले परमाणु थे वह मानो देखो, प्राण की अग्नि के द्वारा वे सब भस्म हो गएं तो मुनिवरों! देखो, उसके पश्चात एक वर्ष के पश्चात मुनिवरों! देखो, वह सन्तान वाली बन गई।

तो विचार आता रहता है प्राण सत्ता बड़ी विचित्र मानी गई है, परन्तु देखो, यह प्राणायाम करने वाला योगी बनता है, प्राणायाम करने वाला ब्रह्मवर्चोसि बनता है, ब्रह्म की साधना में परणित हो जाता है। आओ मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ यह जो सूर्य की देखो, नाना प्रकार की रश्मियां आती हैं, इनमें प्राण सत्ता है, और प्राण आ रहा है, और वह बाह्य प्राण आता है, उसको देखो, रूग्ण अपने शरीर में प्राण सत्ता को अपने में समर्पित करता है, और उससे मुनिवरों! देखो, वह उससे ही वह तरंगों से ही मुनिवरों! देखो, अपने रूग्णों से समाप्त कर देता है।

अमृत का स्वरूप

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, यह प्राण सत्ता बड़ी विचित्र है, चन्द्रमा की आभा में जो मुनिवरों! देखो, वैद्यराज विशेष बनना चाहता है, मेरे प्यारे! देखो, चन्द्रमा की कान्ति में विद्यमान हो करके, वह मानो देखो, शीतली प्राणायाम में मानो सूर्य प्राण की पुट लगाता है, और प्राणायाम करता हुआ, रेचक और कुम्भक में चला जाएं, तो मुनिवरों! देखो, वह चन्द्रमा की जो नाना प्रकार की रश्मियां हैं, नाना प्रकार जो कान्तियां

हैं, वह अपने में सिद्ध कर लेता है, और वह जब साधक बन करके सिद्ध कर लेता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, वह शीतली है, जो अमृत बह रहा है, चन्द्रमा में अमृत बह रहा है, प्राण के द्वारा मेरे पुत्रों! उसे अपने में धारण करता हुआ वह वैद्यराज यह जान जाता है, कि कौन सी औषधि में कौन सा गुण विद्यमान है, मानो जिससे चन्द्रमा का इसी से औषधि से समन्वय होता है, जो अमृत को बहा रहा है, वह अमृत के जानने वाला बन जाता है, मेरे प्यारे! देखो, अमृत की बहुत विवेचना आती रहती है। वैदिक साहित्य में अमृत को प्राप्त करता रहता है, वैदिक साहित्य में वेदमन्त्रों में भी आता रहता है, तो मुनिवरों! देखो, मैं यह कहा करता हूँ, ब्रह्मणे वृतं एक समय बेटा! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कुछ ब्रह्मचारियों से यह कहा कि तुम अमृत को पान करो। वह अमृत को पान करने के लिए ज्ञान का संचय करने लगे, उन्होंने कहा प्रभु! यह ज्ञान ही तो अमृत है, उन्होंने कहा तुम अमृत को ग्रहण करो, **मेरे प्यारे! अपने में वह प्राणायाम के माध्यम से मुनिवरों! देखो, जिह्वा को अग्रणीय आभा में दन्तों के मध्य में दमन करते हुए जब मुनिवरों! छिद्रों का दमन हो जाता है तो वह प्राण देखो, छह माह, एक वर्ष देखो, छह मास तक अभ्यस्त करने से संसार की स्वाद की प्रतिक्रिया समाप्त हो जाती है।** मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने जब पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहा गया प्रभु यह अमृत है यह छिद्रों के ऊपर संयम करना यह भी तो अमृत है उन्होंने कहा तुम अमृत को ग्रहण करो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने प्राणायाम किया और प्राण को देखो, एक दूसरे में परणित करते हुए, रेचक माध्यम से मेरे पुत्रों! देखो, जो मस्तिष्क में नाना प्रकार की जो ग्रन्थियां लगी हुई हैं, उनका स्पष्टीकरण हो गया और मस्तिष्क में प्राण को सञ्चार करने से मेरे प्यारे! देखो, तीस लाख पृथ्वियों में बेटा! वह ब्रह्मवेत्ता भ्रमण कर लेता है। मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार जब यह अभ्यास हो गया, तो आचार्य के जब गुरुदेव के समीप पंहुचे, तो उन्होंने कहा तुम अमृत को प्राप्त करो। मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मचारी जब अध्ययन करने लगे, तो अमृत को विचारने लगे अमृत क्या है? मेरे पुत्रों! देखो, वह प्राण की सत्ता में प्रवेश हो गये, और वहाँ मन को उसमें परणित कर दिया और विचारों में परणित कर दिया और विचारों में परणित हो गएं जब देखो, मन प्राण और विचारों का एक मनका

बनाया तो बेटा! देखो, वह ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करने लगा योगेश्वर।

अमृतों का अमृत चेतना

तो विचार आया मेरे पुत्रों! क्या वेद का ऋषि जब अभ्यास करके जिज्ञासु ब्रह्मचारी आचार्य के समीप पंहुचें, तो आचार्य ने पुनः यह कहा कि तुम अमृत को ग्रहण करो। मेरे प्यारे! जब यह कहा कि तुम अमृत की वार्त्ता आई। तो ब्रह्मचारी विचारने लगे क्या पूज्यपाद गुरुदेव ने हमें अमृत के लिए कहा है, वह अमृत क्या है? तो मेरे प्यारे! उन्होंने नाना प्रकार का पृथ्वी तल पर, जो अन्न उत्पन्न होता है, उस अन्न को मुनिवरों! देखो, उन्होंने तपाया, और अन्न को मुनिवरों! देखो, जल में खरल में प्रवेश करने से प्रातःकाल में मुनिवरों! उसको खरल करना और मुनिवरों! देखो, अग्नि में गो घृत के द्वारा उसे पान करने और देखो, अग्नि में तपाना और तपा करके उसे पान करने से मेरे प्यारे! देखो, मेरे प्यारे! दो वर्ष के पान करने से यह पृथ्वी के गर्भ के सब अव्ययों को जानने लगता है।

मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभु! यह अमृत है इस अमृत में जो खनिज और खाद्यान्न इस पृथ्वी के गर्भ के परमाणुओं से बह रहा है। प्रभु! उसे हम दृष्टिपात करने लगें हैं। मेरे प्यारे! देखो, आचार्य ने कहा हे ब्रह्मचारियों! अमृत को ग्रहण करो, मेरे प्यारे! देखो, आचार्य की वार्त्ता पान करते हुए ब्रह्मचारियों ने कहा ऐसा कौन सा अमृत है जो पूज्यपाद हमें वर्णन करा रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो, अपने में अन्वेषण करने लगे विचार करने लगे, और विचार विनिमय करके मेरे प्यारे! देखो, वह प्राणं ब्रह्मा प्राणं रुद्रो भागां ब्रह्मणो लोकां मेरे प्यारे! देखो, वह विश्वभान प्राण में चले गये, ये विश्वभान कहाँ रहता है? बेटा! वायु वेग में भ्रमण करता है वह भी विश्वभान प्राण है, मेरे प्यारे! मेघमण्डलों में जल को स्थिर करने वाला वह भी मुनिवरों! देखो, विश्वाभान प्राण है। और जो विद्युत के रूप में रहने वाला वह भी विश्वभान प्राण है, मेरे प्यारे! प्राणों की झड़ियां लगने लगी, पृथ्वी के गर्भ में भी तो प्राण ही बह रहा है, इसके गर्भ में बह रहा है, वह भी मानो देखो, प्राण ब्रहा है मुनिवरों! देखो, इस प्रकार विचारते विचारते

ब्रह्मचारियों ने सब देखो, विश्वाभान प्राण को जान करके मेरे प्यारे! देखो, जो विश्व का रचयिता है, विश्व का देवतव है, मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मचारियों ने उसे पान कर लिया, वह अमृत बन गया। मेरे पुत्रों! देखो, सर्वत्र अमृत तुम्हें प्राप्त हो जाएं। परन्तु देखो, जब सब अमृतों को एक ही अमृत बन जाता है, उसको चेतना कहते हैं, उसी को मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक देखो, ब्रह्माण्ड के गर्भस्थल में प्रवेश करते हुए सौर मण्डलों में चले जाते हैं। तो मुनिवरों! देखो, वह उसी में प्रवेश हो करके और अन्तर्हृदय में उनको समावेश करते हुए, मुनिवरों! देखो, जब चेतना और प्रभु में रत्त हो जाते हैं आत्म तत्त्व बन जाते हैं, तो बेटा! वह महान अमृत कहलाता है।

तो विचार आता रहता है, बेटा! अमृत को पान करना यह हमारा कर्तव्य है, ओर अमृत हमें कहाँ कहाँ प्राप्त होता है? यह भी जान लो एक बाल्य को क्षुधा लग रही है, और वह मानो व्याकुल हो रहा है, क्षुधा में तो माता लोरियों का पान करा देती है, और जब माता लोरियों का पान कराती है, तो उसे अमृत प्राप्त हो जाता है, बाल्य अपनी क्षुधा को समाप्त कर लेता है, परन्तु वही माता यदि दुग्ध का आहार कराते हुए गायत्री छन्दों का या वेदों का पठन पाठन करती है, अपने विचारों में आत्मा का चिन्तन करती है, तो बाल्यों को मुनिवरों! देखो, और अमृत प्राप्त होते हैं। मेरे प्यारे! वही माता जब योगाभ्यास की वार्त्ता, उस बाल्य के श्रोत्रों में प्रवेश कर देती है, मेरे प्यारे! देखो, बाल्य को ब्रह्म विज्ञान का अमृत प्राप्त होने लगता है। उसके संस्कार तरंगों के रूप में उनका प्रादुर्भाव हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, वही माता जब लोरियों से पृथक करती हुई, उसे मानो देखो, जब ब्रह्म ज्ञान दे देती है, प्राण सत्ता का वर्णन करा देती है, बेटा! यह प्राण है, यह अपान है, यह व्यान है, यह समान है, यह उदान है। इनका पञ्चीकरण जब हो जाता है, तो यह नाग प्राण के साथ जाते हैं। नाग प्राण में देवदत है, धनंजय है, कुरू है, कृकल है, जब माता इस प्रकार बाल्य को प्राण सत्ता देती है मेरे प्यारे! देखो, वह बाल्य माता की लोरियों का पान करता हुआ अंग संग रह करके बेटा! वह कुछ ही समय में ब्रह्मवेत्ता बन जाता है। और वह ब्रह्मसत्ता को प्राप्त कर लेता है। मेरे पुत्रों! देखो, मैं कहाँ तक प्राण सत्ता की वार्त्ता प्रगट करूं प्रगट करता हूँ, यह तो विशाल वन

है। बेटा! मैं विचार दे रहा था कि प्राणां भूतं ब्रह्मा प्राणां रुद्रो भागं ब्रह्मे प्राणाः मेरे प्यारे! देखो, ये प्राण सत्ता ही है, जो माता के गर्भस्थल में बेटा! देखो, शिशु की रक्षा हो रही है, प्राण ही तो है, मेरे पुत्रों! देखो, यदि माता प्राणायाम करती हुई, अपने शिशु से वार्त्ता प्रगट करने लगती है, तो मानो उसका जीवन धन्य हो जाता है, पवित्र हो जाता है।

माता की साधना

मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय जलातकारु ऋषिवर अपने आसन पर विद्यमान थे, मुनिवरों! देखो, चाक्राणी, गार्गी वहाँ भ्रमण करती हुई कुछ मानो देखो, ब्रह्मवेत्ताओं के सहित देखो, जलातकारु ऋषि के द्वार पर पंहुची, और उन्होंने उन्हें आसन दिया विराजमान हो गए, तो चाक्राणी ने यह कहा कि हे प्रभु! जे जलातकारु! आप तो बड़े बुद्धिमान हैं, आपको तो मानो देखो, नित्यप्रति ब्रह्म से वार्त्ता प्रगट करते हैं, जब आपकी इच्छा होती है, तो वायु से वार्त्ता प्रगट करने लगते हैं, जब इच्छा होती है, जब ही अग्नि से वार्त्ता प्रगट करने लगते हैं, और जब आपकी इच्छा होती है, जब ही मानो देखो, पृथ्वी के गर्भ से देखो, जो परमाणु हैं, उससे वार्त्ता प्रगट करने लगते हो। यह क्या विशेषता है आपमें, तो जलातकारु ने कहा कि हे दिव्या! हे चाक्राणी! तुम्हें यह प्रतीत है, क्या मानव देखो, इनके ऊपर साधना करता है, और वह साधना प्राण की है, वही तो साधना है, जिस साधना को करने वाला प्राणायाम करता है, खेचरी मुद्रा में परणित हो जाता है, वही मानो शीतली प्राणायाम करने लगता है, वही रेचक और कुम्भक में परणित होता हुआ, मानो उनको सब प्राण को एकाग्र करता हुआ, नाग प्राण को अपने में समाहित कर लेता है और देवदत का उसके ऊपर अस्वार हो जाता है और मानो देखो, धनंजय, अपने में धनि सूक्तों को, अपने में धनिय सूक्तों को धारण करने लगता है। तो मानो देखो, जहाँ एक प्राणायाम किया मानो देखो, उसके सम्बन्धी तत्त्व हमारे स्मरण आने लगते हैं, अपने अनुभव में आने लगते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा क्या हे जलातकारू! यह सत्ता तुम्हें कहाँ से प्राप्त हुई? उन्होंने

कहा मेरी जो माता है मानो माता ही मुझे इस प्रकार की प्रेरणा देती है, और गर्भस्थल में जब मैं विद्यमान था, तो माता मानो देखो, प्राणायाम करके एक दूसरे प्राण को एक दूसरे में फूंकने लगती थी, एक दूसरें में परणित करके मानो देखो, वह साधना गर्भ से ही प्रारम्भ हो जाती है, और जब मैं बाह्य जगत में आया, तो लोरियों का पान कर रही है, प्राण को प्राण में प्रवेश कर रही है, शीतली को अग्नि प्राण में प्रवेश कर रही है, और अग्नि प्राण को मानो देखो, वह खेचरी मुद्रा में ले जाती है, तो मानो वह मेरी प्यारी माता की, जो साधना है, मानो देखो, वह मेरी क्रियात्मकता में आ गई। ओर मैं मानो देखो, उसी की आभा में परणित हो गया। तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार विनिमय क्या, यह प्राण सत्ता बड़ी विचित्र मानी गई है। मेरे पुत्रों! देखो, जो साधना में जो मानव परणित होता है, वही जानता है इसमे कितनी महानता विद्यमान है। मेरे प्यारे! वही प्राण सत्ता नेत्रों में गमन करती रहती है, रूप को दृष्टिपात करती रहती है, निहारती रहती है, वही प्राण सत्ता मानो देखो, मानव के वाक् में होती है, जो मानो देखो, वाक् गमन कर रहा है, वही प्राण सत्ता में मेरे प्यारे! प्रेम में हैं, वही प्रीति में है, वही प्राण सत्ता बेटा! मन्द सुगन्ध में प्रवेश कर रही है, कैसा विचित्र यह मेरे प्यारे प्रभु का ब्रह्माण्ड है, जब मैं इसकी कल्पना करने लगता हूँ। तो बेटा! यह संसार मुझे एक ऐसा दृष्टिपात आने लगता है, कि मैं कहाँ चला गया हूँ, कौन से जगत में चला गया हूँ, जहाँ यह संसार सूक्ष्मता में दृष्टिपात आने लगता है।

माता व गुरुजनों की देन

मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने जलातकारू ने यह कहा कि हे दिव्या! यह माता की देन है, गुरुजनों की देन है, और उसी देन के कारण हम प्रभु को जानते हैं, प्रभु की आभा में परणित हो रहे हैं, तो दो प्रकार के प्राण हैं, मुनिवरों! देखो, एक विशेष है, जो आत्मा के अंग संग रहने वाला है, और देखो, जिसको विश्वभान प्राण कहते हैं, यह परमात्मा के अंग संग रहने वाला है इसीलिए बेटा! देखो, वे परमपिता परमात्मा जड़ में भी और चेतनता में भी दोनों में विद्यमान रहता है, वही परमपिता परमात्मा के ब्रह्माण्ड में हम

सदैव रत्त रहते हैं।

तो आओ मेरे पुत्रों मैं विशेष विवेचना तुम्हें देने नही आया हूँ, विचार केवल यह कि हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार की उड़ाने उड़ी जाती हैं, इन्हीं पञ्चीकरण को ले करके वैज्ञानिक जन बेटा! विज्ञान के तन्तुओं को अपने में ग्रहण करते हैं और इन्हीं परमाणुओं को ला करके प्राण सत्ता के द्वारा मुनिवरों! देखो, लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि नारद मुनि को यह प्राण सत्ता यह सिद्ध हो गई, कि वह साधना में परणित हो गये। बेटा! पृथ्वी से उड़ाने उड़ते मानो देखो, वह प्रायः उससे और साधना के द्वारा कुछ यन्त्रों के द्वारा मानव वह मंगल में चले गये, ध्रुव में देखो, वह ध्रुव तक भ्रमण किया, उन्होंने तो बेटा! विचार आता रहता है, यह विद्याएं हमारे यहाँ, परम्परागतों से मानवीय ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में से गमन करती रही हैं। और उस मानो देखो, नृतिका को हमें दृष्टिपात करना चाहिए मेरे प्यारे! देखो, मैं विशेष विवेचना ने देता हुआ, केवल तुम्हें यह वर्णन कराने के लिए आया हूँ, कि हम परमपिता परमात्मा जो अमृत है, उसे हमें पान करना चाहिए। वह जो ब्रह्माण्ड है, वह भी अमृत के रूप में, परन्तु वह भी परमात्मा अमृत जब प्राप्त होगा। जबकि हम मानो देखो, यहाँ के नीचे के अमृतों को जानते हुए चलेंगें, एक दूसरे अमृत को हम दमन करते हुए, एक दूसरे अमृत को जानते हुए, तो बेटा! देखो, परब्रह्म परमात्मा का भान होता है, हम अमृतमयी बन जाएंगें तो विचार आता रहता है, बेटा! वेद की विद्या में, बहुत सी विद्याएं हैं, वेद एक अपने में एक बड़ा अनूठा एक चरम माना गया है, वैदिक साहित्य में जब मानव प्रवेश करता है, तो मानो मेरे प्यारे! मानव धन्य हो जाता है। और मानो देखो, मैं यह कहा करता हूँ, मेरे पुत्र महानन्द जी ने कई काल में यह प्रगट कराते हुए कहा है, क्या देखो, इस वैदिक साहित्य को ऊर्ध्वा बनाने के लिए क्या मानो यह राष्ट्र का दायित्व होता है। क्या मानो यह नाना प्रकार की सम्प्रदायों में आभावेशों में यह विज्ञान यह साधना नष्ट हो जाती है, तो मानो विज्ञान की प्रतिभा अपने में नष्ट हो जाती है।

तो विचार आता रहता है, आज का विचार आज विचार विनिमय दे रहा हूँ, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, इस

संसार सागर से पार हो जाएं, मेरे पुत्रों! देखो, यहाँ प्राणों से और प्राणायाम करने से रूग्ण समाप्त हो जाते हैं। प्राणायाम करने वाला बेटा! देखो, महान बन जाता है। ब्रह्मवर्चोसि और ब्रह्मवेत्ता बन जाता है, और देखो, प्राण को प्राण को न जानने वाला नाग प्राण को उत्पन्न करने वाला मेरे प्यारे! देखो, अपने को नष्ट करता रहता है। इसीलिए क्रोधाग्नि का जागरूक नही होना चाहिए। एक महान प्रतिक्रिया तुम्हारे हृदय में महानता की होनी चाहिए। यदि क्रोधाग्नि जागरूक रहती है, उस क्रोधाग्नि से तुम्हारा जो नाग प्राण हैं, वह शरीरों को रहने वाले गृह को रूग्ण कर देता है, जिस गृह में जिस शरीर में आत्मा वास करता है वह गृह रूग्ण बन जाता है रूग्ण बन करके वासना में परणित करता हुआ मानो अपनेपन को नष्ट कर देता है, तो मानो देखो, यह विचार आ रहा है यह विचार क्या कह रहा है बेटा! क्रोधां भूतं ब्रह्मा वेद में नाना मन्त्र इस प्रकार के आयें है जो नागां भूतं ब्रह्मा कृते देवत्वां देवो ब्रह्मा कृतं मेरे प्यारे देखो, इसीलिए हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, और मुनिवरों! क्रोधाग्नि को शान्त करते हुए, वासनाओं को दमन करते हुए ओर इन्द्रियों पर संयम करते हुए ओर प्रत्येक मानव देखो, स्वरूप को जानते हुए हम प्राणों में सिमट जाएं ओर सिमट करके मानो देखो, इस संसार से ओझल हो जाएं, और अमृत में पंहुच जाएं, अमृत को प्राप्त करने लगें, यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा।

१२ 31 03 1990 पुष्प 62

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है ओर वह महान ओर पवित्र कहलाते हैं और वे विज्ञानवेत्ता हैं ओर विज्ञान में प्रायः अपनी आभा में रत्त रहते हैं। वह गृह स्वामी है क्योंकि इस संसार रूपी गृह का जिसने निर्माण किया है

और वह संसार में पवित्र रूप में दृष्टिपात आता रहता है। आज का हमारा वेदमन्त्र हमें प्रेरित कर रहा है। और यह प्रेरणा दे रहा है कि परमपिता परमात्मा की महिमा और महती और उसका जो गृह है मानों उसमें सदैव रत्त रहें। क्योंकि यह जो ब्रह्माण्ड है। यह परमपिता परमात्मा का गृह है। सदन है और वह उसी में वास कर रहा है। इसी प्रकार प्रत्येक प्राणी मात्र अपने में अपने गृह में वास करते रहते हैं और वे परमपिता परमात्मा के गर्भस्थल में अथवा उसकी आभा में सदैव रत्त रहते हैं इसीलिए हमारा वेदमन्त्र हमें यह प्रेरित कर रहा है, हमें यह उद्गीत गा रहा है उद्गीत गाने के लिए बाध्य कर रहा है कि हम मानो अपने गृहों के ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ करते रहें। क्योंकि हमारा यह जो मानवीय गृह है जिसमें यह अन्तरात्मा विद्यमान रहता है।

बेटा! यह आत्मा का गृह है एक समय बेटा! महात्मा जालवी ने प्रश्न किया कि यह आत्मा का लोका क्या है? तो महर्षि जालवी ने यह कहा कि हमारा आत्मा का जो लोक है वह पञ्च महाभूत माना गया है। यह पञ्च महाभूतों का गृह कहलाता है जिसमें देखो, दस प्राण है मानो एक ही गति के दस भाग दस रूपों में परणित होते रहते हैं। और देखो, अमृतां ब्रह्ममयी वह ही पञ्च महा वृत्तियां कहलाती है जिन्हें हम ज्ञानेन्द्रियां कहते हैं और पांच कर्मेन्द्रियां कहलाती है मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार ये प्रकृति के सूक्ष्म स्वरूप माने गएं हैं तो यह आतम का गृह माना गया है जिस गृह में आत्मा वास करता है और वह पञ्च महाभूतों में रत्त रहने वाला है तो विचार आता रहता है कि वेद का मन्त्र क्या कहता है, वेद का मन्त्र कहता है गृहताम ग्रहेवर्णाम ब्रह्मात्मा कि हे आत्मा! यह तेरा गृह है। और जिस गृह में तू वास कर रहा है तू इसको जानने का प्रयास कर। देखो, पञ्च महा भौतिक रूपों में रमण करने वाला यह आत्मा का लोक कहलाता है। जैसे कन्या का लोक है देव लोक है, पितर लोक है और देखो, पति लोक कहलाता है। इसी प्रकार हमारा जो यह आत्मा का लोक है वह पञ्च महाभूतों भौतिक शरीर कहलाता है। तो देखो, इसके ऊपर हम विचार विनिमय करते चले जाएं। जैसे उस परमपिता परमात्मा ने हमारे मानव शरीरों का निर्माण किया है और मानो उस आत्मा के गृह का निर्माण किया और वह माता के गर्भस्थल में माता के गृहतां में मानो इसका

निर्माण होता रहता है इसी प्रकार इस बाह्य जगत में जब यह आत्मा इस पञ्च लोक पञ्च महाभूतों वाले गृह में प्रवेश करता हुआ जब यह बाह्य जगत में जाता है तो शरीर की रक्षा के लिए देखो, इस पञ्चमहाभूतों की इसका विशाल रूप ले करके, स्थूल रूप ले करके बेटा! इसके गृह का एक ओर निर्माण करता है वह गृह स्वामी है अथवा गृहस्वामिनी ाहै ओर वह यह चाहता है कि हमारा जो गृह है यह मानो एक अन्तन्धनम् ब्रह्मे जिसमें हम पञ्चमहाभूतों में रमण कर रहे हैं ओर हम देखो, तमोगुण रूप में रक्त हो करे हम उत्पति के मूल में पंहुच जाएं। ऐसी उकनी मनोकामना रहती है, ऐसी भावना के साथ ही मानव एक निर्माण करता है। मेरे प्यारे! देखो, यह गृह वर्णनं ब्रह्मा वर्णनं सम्भवे देवत्वां लोकां वेद का मन्त्र यह कहता है कि हे गृह स्वामी! कि हे गृहस्वामिनी तू अपने गृह में जैसे तू निर्माण करता है वह भी परमपिता परमात्मा का दिया हुआ स्थूल जगत है जैसे सूक्ष्म जगत मानो प्राण और इन्द्रियों से आत्मा के शरीर का निर्माण होता है इसी प्रकार बाह्य जगत में जो पञ्च महाभूतों का स्थूल रूप है जैसे मानो जल रूप है जैसे गुरूतव रूप है और जिस प्रकार अग्नि का वृत कहलाया जाता है ओर उसी में गति है जो देखो, अन्तरिक्ष में ऊर्ध्वा गति को गृह गमन कराते रहते हैं। हे गृह स्वामी! तू परमात्मा के अमूल्य जगत में मानो माता वसुन्धरा के गर्भ में विद्यमान हो करके तू इन ऊर्ध्वा गृहों का निर्माण करता है। ओर निर्माण में तरी भावना यह रहती है कि मैं संसार में शरीर की आत्मा के शरीर की रक्षा कर सकूं। आत्मा का शरीर यह मानव का शरीर कहलाता है वह भी इस अन्तःस्थली में विद्यमान हो करके याग में याज्ञिक मानव अपने में प्रवेश करता रहता है तो आओ मेरे पयरे मैं इस सन्दर्भ में तुम्हें अधिक नही ले जाना चाहता हूँ।

बेटा! सतोयुग के काल में ले जाना चाहता हूँ। जिस काल में महर्षि भृंगी पैदा हुए है ओर वह भृंगि ऋषि बड़े उद्गीत गाने वाले वेदों के मन्त्रों का उद्घोष गाने वाले ओर सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर के आत्मा के शरीरों को जानने वाले थे अथवा उन गृहों को जानने वाले थे देखो, वेदमन्त्रों में अध्ययन करते रहते रहे कि एक पुत्र याग भी होता है। और मैं पुत्र याग में रमण करना चाहता हूँ। देखो, जहां ऋषि नाना प्रकार के वेद

मन्त्रों में अध्ययन में नाना प्रकार के यागों की चर्चा करता रहा जैसे अग्निष्टोम याग जैसे वाजपेयी याग, रुद्र याग और विष्णु याग इसकी चर्चाएं हम इसके पूर्वकाल में ले करके आए हैं तो महर्षि भृंगि ऋषि वेद मन्त्रों में इस प्रकार का अध्ययन करते रहते थे जब अध्ययन करते रहे तो एक समय ऋषि के हृदय में यह आकांक्षा जागरूक हुई कि हमें पुत्र याग करना चाहिए। देखो, पुत्र याग के लिए उन्होंने अपने आसन को त्याग दिया तपस्वी ने और वेद के मर्म को जानने वाला ऋषि बेटा! वहां से प्रस्थान करता है। देखो, व्रेतू नाम का एक राजा अयोध्या में राज कर रहा था ऋषि भ्रमण करते हुए राजा के समीप पंहुचें। राजा ने अपने आसन को त्याग दिया और कहा आईए भगवन! पधारिए वह उस स्थली पर विराजमान हो गए। जब राजस्थली पर विराजमान हो गए तो राजा ने कहा कहो भगवन! आज कैसे आगमन हुआ है कि मैं वेदों का अध्ययन कर रहा था और अध्ययन करते करते उमसें पुत्र याग का वर्णन आया और मुझे पुत्र याग करना है क्योंकि नाना प्रकार के जहां यागों का वर्णन आता रहता है वहां पुत्र यागों का भी वर्णन आता रहता है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा कि हे भगवन! अमृतां ब्रह्मणे तो मुझे अपनी कन्या को प्रदान करो। जिससे मैं पुत्र याग कर सकूं। देखो, राजा ने कहा भगवन! बहुत प्रियतम।

बेटा! उन्होंने गृह में प्रवेश करते हुए अपनी पत्नी को और पुत्री को एकाग्र करते हुए कहा हे पुत्री देखो, ऋषि भृंगि पधारे हैं। और भृंगि ऋषि वेद, की तपस्या की आभा में रत्त रहते हैं वेद के मर्म को जानते हैं और जो सदैव प्रकाश में रहते हैं। मेरा राष्ट्र ऐसे महापुरूषों से सुशोभित हो रहा है। हे पुत्री वह याग करने के लिए तुम्हें अपना साथी बनाना चाहते हैं तो उस समय देखो, उनकी देवकन्या ने कहा कि हे प्रभु! जैसी भी पितर आपकी आज्ञा हो वैसा कीजिए। यह तो मेरा सौभाग्य है कि जो मैं एक महापुरूष तपस्वी के साथ अपने जीवन को व्यतीत करूं। देखो, उन्होंने यह स्वीकार कर लिया और राजा ने राजस्थली में आकर के ऋषि से कहा कि ब्रह्मर्षि मेरी कन्या आपको स्वकार कर रही है। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम बेटा! दोनों ने वहां से गमन किया और

वह राजकन्या मानो वह देवी उन्हें प्रदान कर दी गयी।

मेरे पुत्रों! वह भयंकर वनों में जा करके निर्जन देखो, जहां परमपिता परमात्मा का नामोकरण का उद्घोष होता रहता था, जहां कोई प्राणी नही, पक्षीगण अपने में चयन कर रहे थे ऋषि और वह कन्या तपस्या करने लगे और तपस्या में देखो, वेद के मन्त्रों की विवेचना में और तपस्या में इतने तल्लीन हो गऐ कि एक दूसरे के लिए उन्हें भान ही नहीं रहा कि दो हैं याग एक बारह वर्ष हो गएं उन्हें इसी प्रकार व्यतीत हो गए। बारह वर्ष के पश्चात महर्षि को पुनः पुत्रेष्टि याग का स्वरूप याग का प्रसंग पुत्र का प्रसंग उनके समीप वेद मन्त्रों में पुनः आया। वह देवी के समीप पंहुचें और देवी से कहा हे देवी! हम पुत्र याग करना चाहते हैं उन्होंने कहा प्रभु! आप तो वेद के मर्म को जानने वाले हैं मैं तो आपको शरण में रहती हूँ प्रभु मैं भी तपस्या के कुछ अर्थों को जान गई हूँ। बारह वर्ष हो गए हैं तपस्या अपने जीवन को व्यतीत कर रही हूँ। यह जीवन मुझे बहुत प्रिय लग रहा है यदि आपकी इच्छा है कि पुत्रेष्टि याग करना है, पुत्र याग करना है तो प्रभु! यह तो मानो वायुमण्डल है और वायुमण्डल में पक्षीगण भी भ्रमण कर रहे हैं यदि वह निर्जन हो करके हमें दृष्टिपात करेंगें तो प्रभु! वह सुशोभनीय नही हैं हे प्रभु! इसके लिए कोई आड़ चाहिए, और गृह चाहिए। और गृह में सब सुविधा होनी चाहिए। देखो, भृंगि ऋषि ने कहा हे देवी! मैं ऐसा ही करता हूँ।

बेटा! ऋषि ने अपने आसन को त्याग करके और भयंकर वन में गमन करते हुए राजा के समीप पंहुचें और राजा ने नतमस्तिष्क होते हुए चरणों की वन्दना की और कहा कहो, भगवन! आज कैसे आगमन हुआ हे? ऋषि ने कहा हे राजन! मैं इसीलिए आया हूँ कि देखो, मैं पुत्र याग करना चाहता हूँ मेरे लिए गृह चाहिए, एक भव्य भवन चाहिए। और उसमें सुविधा चाहिए। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। उन्होंने देखो, एक तालाब के तट पर उनके लिए एक गृह का निर्माण और गृह का निर्माण करके उसमें सब सुविधाएं प्रदान की और प्रदान करके देखो, उन्होंने उसको ऋषि को समर्पित कर दिया। ऋषि भ्रमण करते हुए भयंकर वन में पंहुचें और भयंकर वन में जा करके देवी से कहा हे देवी! देखो, हमारे गृह का निर्माण हो गया है। अब हमें पुत्र याग करना है देवी ने कहा

बहुत प्रियतम! मेरे प्यारे! वह भव्य भवन में चले गए जहां सब सुविधा विद्यमान हैं और वे उसमें वास करने लगे। मुनिवरों! देखो, कुछ समय के पश्चात दिव्या के एक सन्तान का एक पुत्र का जन्म हुआ। और पुत्र का जन्म होते ही जब वह देखो, कुछ बाल्य आवृत्तियों में रत्त हो गया तो उन्होंने कहा देवी! हमारी इच्छा पूर्ण हो गई है। क्योंकि हम मानो पुत्र यागी बन गए हैं। हे भगवन! देखो, आपं ब्रह्मे हे देवी! जब हमें इस गृह को त्याग देना चाहिए। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम बेटा! मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है कि वह भयंकर वन में पुनः तपस्या में तल्लीन हो गए। और वह तपस्या करने लगे। बाल्य को दोनों तपस्या की युक्तियों का वर्णन कराते रहे और वेद का अध्ययन कराती रही माता।

क्योंकि माता तो दिव्य है बेटा! जो गृह का निर्माण होते हैं इनमें एक ही विशेषता होती है कि माता इस अन्तःस्थली में विद्यमान हो करके अपने पुत्र पुत्रियों को वह देखो, वेदज्ञ बनाने के लिए त्तपर हो जाए। और तपस्या में बाल्यों को परणित कराती रहे जिससे गृह स्वर्ग बन जाए। गृह के निर्माण का अभिप्रायः यह है कि यह गृह स्वर्ग होना चाहिए। गृह स्वर्ग उस काल में बनता है जब एक दूसरे की सम्मति से ये प्राणी उसमें वास करता है मानो पति ने कहा, पत्नी ने कहा दोनों की देखो, सम्मति हो गई पुत्र से कहा पुत्रियों से कहा तो वह एक सम्मति हो गई है और उस सम्मति के पश्चात देखो, उसमें तरंगें उत्पन्न होती हैं उसका नाम स्वर्ग कहा जाता है। तो वेद का ऋषि कहता है, वेद का मन्त्र कहता है कि हे गृहस्वामिनी, हे गृह स्वामी! तुमने अपने गृह को स्वर्ग बनाना है तो स्वर्ग उस काल में बनेगा जब मानव एक दूसरा एक दूसरे की सम्मति में रहेगा। देखो, ऋषि भृंगि में अपनी सन्तान को ब्रह्मवेत्ता बनाया क्योंकि वह भी ब्रह्मवेत्ता थे और उनकी दिव्या भी ब्रह्मवेत्ता बन गई उनके सम्पर्क में तो मेरे प्यारे! देखो, विचार केवल यह है कि यह हमारा जो गृह है आत्मा का जो गृह है यह तो शरीर है पञ्च महाभूतों वाला शरीर है और मुनिवरों! देखो, वह जो बाह्य जगत में शरीर की रक्षा करने वाला जो गृह है वह भी परमपिता परमात्मा ने स्थूल जगत को ले करके उसका निर्माण किया है क्योंकि उसमें देखो, जल है, पृथ्वी के परमाणु हैं। पृथ्वी की स्थूलता

है जल की स्थूलता है ओर देखो, अग्नि की स्थूलता प्रवेश हो करके देखो, गृह का निर्माण होता है उसी गृह में वायु गमन कर रहा है। उसी गृह में आकाश तत्त्व का निर्माण किया। जिससे हम उसमें भ्रमण कर सकें। तो देखो, यह स्थूल जगत कहलाता है हे मानव! तू स्थूल जगत में वास करता हुआ अपने गृह को स्वर्गाश्रम बना। जिससे मानो स्वर्ग में तेरे हृदय की तरंगें ओत प्रोत हो जाएं।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है कि महर्षि भृंगी ऋषि ओर उनकी दिव्या जब तपस्या करते थे तो बाल्य बालिका ओर उनकी दिव्या जब तपस्या करते थे तो बाल्य बालिका भी तपस्या में तल्लीन रहते। एक समय भृंगी ऋषि महाराज ने देवी से कहा हे देवी! तुम्हें इतना समय हो गया है तो देखो, मेरे प्रश्नों का तुम उत्तर दो उन्होंने कहा भगवन! आप मेरे से प्रश्न करना चाहते हैं आप तो महान तपस्वी हे ओर मैं आपकी शरण में रहती हूँ। उन्होंने कहा यह सूक्ष्म सा विचार है उन्होंने कहा तो उद्गीत गाईए। उन्होंने कहा देव तपस्या किसे कहते हैं? देवी ने कहा प्रभु! आपके मुखारबिन्दु से ओर आपको दृष्टिपात करके ओर पूज्य पिता जी के गृह में मैंने यह पाया है आचार्यों से भी पाया है कि स्वर्ग उसे कहते हैं जहां मानव की तरंगें मानो सत्य में परिणत होने वाली हों, यह गृह को ऊँचा बना देती है। उन्होंने कहा सत्य है ऋषि ने पुनः कहा हे दिव्या मैं जानना चाहता हूँ कि यह तपस्या क्या है उन्होंने कहा इन्द्रियों के विषयों को जान करके ओर वह जो वेदों का तरंग बन करके उसका साकल्य बना देता है ओर उसका साकल्य जब हृदय रूपी यज्ञशाला में उसे प्रवेश करा देता है तो ज्ञान की उपलब्धि हो जाती है, अन्धकार नष्ट हो जाता है अज्ञान नष्ट हो जाता है तो ज्ञान का नाम प्रकाश कहा गया है ओर उसी का नाम मानो तपस्या कहा है मेरे पुत्रों! ऋषि बड़े प्रसन्न हुए भृंगि ऋषि बोले कि देवी हे दिव्या मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह तप क्या है? ऋषि देवी ने कहा हे प्रभु! मेरे विचार में तो यह आता है कि मानव अग्नि के समीप रहता हुआ जब अग्नि के स्पर्श न कर पाए मानो वही तपस्या है देखो, पञ्चमहाभूतों की अग्नियां वे अग्नियां उनकी दिव्या में प्रवेश हो रही हैं ओर उसमें वे स्पर्श न कर पाएं तो इसी का नाम तपस्या हैं उन्होंने कहा दिव्या इसका स्पष्टीकरण करो। उन्होंने कहा हे प्रभु!

विचार आता रहता है कि उनमें ब्रह्मणे वृतं वह जो विषय है उन विषयों को जो बरतने वाला है और उन विषयों को जो वरत करके मानो प्रकाश में परणित हो जाता है वही देखो, तपस्या कही जाती है उन्होंने कहा यथार्थतम जब फिर उन्होंने यह वाक् कहा कि यह तपस्या क्या है उन्होंने कहा कि हे दिव्या, यह तपस्या क्या है उन्होंने कहा कि तपस्या उसे कहते हैं जो हम इस संसार में रहते हुए और संसार में मानो पिरक्त हो जाएं और संसार में हम मानो देखो, आस्था में देखो, हम मोह ममता में न रह करके हम अपने कर्तव्य का पालन करते जाएं तो मानो वही तपस्या कहलाती है उन्होंने कहा हे दिव्या मैं जानना चाहता हूँ यह कर्तव्य क्या है जिस कर्तव्य की तुमने वार्त्ता प्रगट की है वह उन्होंने कहा हे प्रभु! जो भी क्रियाकलाप इस संसार में हो रहा है चाहे वह गृह में हो रहा है, चाहे वह बाह्य जगत में हो रहा है चाहे वह गृह में हो रहा है, चाहे वह बाह्य जगत में हो रहा है चाहे वह अपने मनोनीत हृदय में हो रहा है देखो, जो भी इस प्रकार से भावना से क्रियाकलाप करता है कि यह मेरा कर्तव्य है इसीलिए मेरा जन्म हुआ है और वह कर्तव्य की वेदी पर निहित हो जाता है तो उसी का नाम कर्तव्यवाद है। उन्होंने कहा हे देवी! मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह कर्तव्यवाद क्या है? उन्होंने कहा भगवन! कर्तव्यवाद उसे कहते हैं जो आत्मा में जिन तरंगों का प्रादुर्भाव होता है आत्मा में जिसका परमाणु वृत उत्पन्न होता है तो मानो आत्मामम् भूतं ब्रह्मणा आत्मामम् ब्रहे कृतं हे देवी! अमृतां हे दिव्या पितर गृहे हे ऋषिवर देखो, वही कर्तव्यवाद है जो आत्मा की प्रेरणा को स्वीकार करता हुआ अपने क्रियाकलापों में सदैव तत्पर रहता है उसका नाम कर्तव्यवाद है जैसे मेरी प्यारी माता अपने पुत्र का पालन कर रही है मानो अति मोह करती है। तो यह जान लगती है कि वह मोह कर रही है वह पुत्र को अपने से दूरी कर रही है पुत्री को दूरी कर रही है। और देखो, यह कहती है कि बाल्य तू ब्रह्मवेत्ता बने, हे बाल्य! तू महान बन करके तू विचरण कर, हे बाल्य! तू मानो मेरे गर्भस्थल को देखो, दूषित मत कर देना क्योंकि मैं तेरी ममता में रत्त हूँ। माता जब इस प्रकार की शिक्षा देती है तो वह कर्तव्यपारायणता कहलाती है। वह कर्तव्यवाद में निहित हो जाती है जैसा मैंनें तुम्हें कई काल में प्रगट कराया कि बेटा! महर्षि विश्वामित्र ने

अपने धनुर्याग को पूर्ण करने के लिए राजासे कहा कि राजन मुझे यह राम और लक्ष्मण चाहिए मैं अपने याग को सम्पन्न करना चाहता हूँ। तो राजा ने ऋषि से कहा प्रभु! आपके याग को मैं पूर्ण कराऊंगा। उन्होंने कहा नही मुझे शिशु चाहिए। मुझे युवा चाहिए मुझे आप नही चाहिए। इतनें में कौशल्या जी और सर्वत्र राज लक्ष्मियां ने उनके चरणों की वन्दना की। उन्होंने कहा कहो भगवन! कैसे आगमन हुआ है। उन्होंने कौशल्या से कहा हे मां अमृतां ब्रह्मे हम देखो, राम और लक्ष्मण और ब्रह्मचारियों से याग कराना चाहते हैं मेरा धनुर्याग चल रहा है उन्होंने कहा राजा से कहा राजन आप प्रदान कीजिए। यदि हमारे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बाल्य एक ऋषि की आज्ञा का पालन नही कर सकता, एक ऋषि के वाक् को पूर्ण नही कर सकता तो हमारा गर्भाशय दूषित हो जाएगा। कौशल्या ने जब यह शब्द कहा तो राजा निरुतर हो गए। और राजकुमारों को प्रदान कर दिया तो यह कर्तव्यवाद कहलाता है। देखो, यह कर्तव्यवाद की आभा में महर्षि भृंगि ने कहा रजन्नम ब्रह्मे हे देवी! मेरे विचार में यह आ गया है परन्तु वेदामृत को पान करने वाला कर्तव्य क्या है उन्होंने कहा आत्मा का प्रकाश में रत्त रहता है और उस प्रकाश को जानना इसका कर्तव्य है और प्रकाश ही मानो देखो, वेद रूपी प्रकाश में यदि आत्मा रत्त रहता है तो वह उस मानव का कर्तव्यवाद है। वह उस ऋषि का कर्तव्यवाद है कि वेद की प्रतिभा के अनुकूल अपने जीवन को जो व्यतीत कर रहा है और गृह में वास कर रहा है और गृह में देखो, वेदमन्त्रों की ध्वनियां आती रहती है। उससे राष्ट्र और समाज ऊँचे बनते रहते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है कि मनु वंश ने ही अयोध्या का निर्माण किया था जो अष्ट चक्र नौ द्वारों वाली पुरी कहलाती थी जब राष्ट्र का निर्माण किया तो राजा के यहां देखो, यह नियमावली बन गयी, राजा ने यह घोषणा कर दी कि राष्ट्र में मानो प्रत्येक गृह में सुगन्धि होनी चाहिए, प्रत्येक गृह में वेद ध्वनि होनी चाहिए जिससे वह गृह और ऊँचा बन जाएं। देखो, भगवान अद्ववा मनु ने भी ऐसा कहा वृत्तिका मनु ने भी ऐसा ही कहा देखो, जो स्वायंभु मनु ने इस प्रकार के नियम बनाए। और इसी प्रकार के नियम आगे बनते रहे। तो विचार विनिमय क्या कि प्रत्येक गृह में सुगन्धि

होनी चाहिए। और सुगन्धि वो विचारों की सुगन्धि हो। देखो, गृह जब ऊँचे बनते हैं जब गृह में गृहस्वामी और गृहस्वामिनी वेद का पठन पाठन करते हैं और मानवीय दर्शन को अपने समीप लाते हैं गृह स्वामी और गृहस्वामिनी जब इस प्रकार के क्रियाकलाप को करते हैं तो देखो, उनके गृह में जितना भी जन समूह है चाहे वह पुत्र के रूप हैं चाहे वह पुत्री के रूप में हो उनके विचारों के अनुसार अपने गृह को व्यतीत करते रहते हैं। मेर प्यारे मैं विशेषता में नही ले जारहा हूँ वेद का मन्त्र क्या कहता है कि वेदमन्त्र यही कहते हैं कि परमपिता परमात्मा ने हमारे मानवी शरीर का निर्माण किया है। इसी प्रकार गृह स्वामी और गृहस्वामिनी देखो, पञ्च महाभूतों के एक शरीर का गृह का निर्माण और करते हैं। जिससे हम वास कर सकें और हम तमोगुण ला करके उग्र क्रिया ला करके सन्तान का उपार्जन कर सकें। और उसे पुनः सतोगुणी बना सकें। इस लिए गृह गृहों का निर्माण होता रहता है गृह में प्रातः कालीन सुगन्धि होनी चाहिए और सुगन्धि क्या है देखो, वह वेदों का उद्घोष है वेदों की ध्वनियां और विचारों की ध्वनियों में जो गृह परणित रहते हैं बेटा! वह गृह पवित्र कहलाते है।

आओ मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें विशेषता में नही ले जाऊंगा। विचार केवल यह कि हमें गृह में प्रवेश करना है हमें गृह में वास करना है जैसे आतम इस शरीर को त्यागता है तो पुनः उसे किसी माता के गर्भस्थल में उसकी स्थली प्राप्त हो जाती है। इसी प्रकार यह जो गृह के अव्यक्त निर्माण होते हैं इसी प्रकार होते हैं यह शरीर आत्मा का गृह है और यह जो बाह्य जगत है बाह्य जो गृह है यह आत्मा के शरीर का गृह कहलाता है वह भी पञ्च महाभूतों का समूह है। तो विचार आता रहता है कि दोनों में परमपिता परमात्मा निहित रहते हैं जितना संसार जड़वत में है चैतन्य में है सर्वत्रता में प्रभु गमन करते रहते हैं इसीलिए हमें अपने गृह को ऊँचा बनाना है, कर्तव्यवाद में निहित रहना है यौगिकवाद में ले जाना है। जिससे हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता में गमन करते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। हम परमात्मा के स्वरूप को जानते हुए मानो जो गृहों में भी निहित है जड़ में भी है चैतन्यवत में भी निहित है वही तो

महान कहलाता है। अपना जीवन व्यतीत करें।
आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नही हूँ केवल विचार िनिमय देने के लिए चला आता हूँ और विचार यह है कि हम अपने को ऊँचा बनाएं। जहां आत्मा की प्रेरणा के अनुसार मानव कर्तव्यवाद में रत्त हो जाता है, आत्मा की प्रेरणा के साथ जो क्रियाकलाप करता है, आत्मा की प्रेरणा के साथ जो मानव जन समूह में रमण करने वाला है वह महापुरूष कहलाता है और वह गृहस्वामी कहलाता है वह उस गृह को अपनी सम्पदा नही वह परमात्मा की सम्पदा स्वीकार करता है क्योंकि द्रव्य भी परमात्मा की सम्पदा है और देखो, जिस साकल्य से गृह का निर्माण हुआ वह भी परमपिता परमात्मा की सम्पदा है। तो देखो, गृह में अभिमान नही होना चाहिए। अरे, अभिमान किससे कर पाएंगें। जब यह परमात्मा की पवित्रता है परमात्मा की देन है, परमात्मा का जगत है, परमात्मा का सभी निर्माणित किया हुआ है माता के गर्भस्थल में बेटा! हमारा निर्माण होता है परन्तु माता को प्रतीत नहीं हृदय कहां रहता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा निर्माण करने वाला है वह निर्माणवेत्ता है वैज्ञानिक है और वह इतना विज्ञानवेत्ता है कि उसके विज्ञान की कोई सीमा नही हैं वह सीमा से रहित है वह मानो अपने में अपनेपन को ही विचारता रहता है।
आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष विचार देने नहीं आया हूँ केवल अपना विचार यह प्रगट करने के लिए आया हूँ कि गृह हमारा पवित्र हो, हमारा कर्तव्यवाद मानवीयता को स्पर्श करता रहें। अरे, अपनी आभा में परणित होता हुआ प्रभु को प्राप्त हो जाए। बेटा! देखो, यही हमारे गृहों के निर्माण का अभिप्रायः कहलाता है। मुझे कहीं से यह प्रेरणा प्राप्त हुई कि गृह के सम्बन्ध में उद्गीत गाया जाए। तो मानो इस प्रेरणा के साथ मैंने अपने विचारों को व्यक्त किया है। और विचार यह है कि हम देवतव को अपने में प्राप्त करते रहें। देखो, मैंने अपने महर्षि भृंगि की तपस्या में परणित कराया और वही देखो, ब्रह्मे अमृतां भूतं ब्रह्मणे कृतं वही बाल्य जिस गृह में अमृता में वह देखो, ऋषि भृंगि के पुत्र का नाम देखो, उन्हीं अमृतां भूतं ब्रह्मणे लोकां देखो, उन्हीं का पुत्र अगस्तय मुनि बन करके रहा। वह अगस्तय कहलाया। बेटा! भृंगी के पुत्र का नाम अगस्तय था

ओर वह अगस्तय मुनि कैसे विचित्र थे। वह इस संसार रूपी समुद्र को पान करके उसे खारी बना करके त्याग देते थे। यह जो संसार रूपी समुद्र है जिसमें कोई मान कर रहा है, कोई किसी का अपमान कर रहा ै कोई किसी का पूजन कर रहा है कोई किसी का तिरस्कार कर रहा है ऐसे संसार को जिसमें देखो, कहीं उष्णता है कहीं नम्रता है कहीं मलीनता है कहीं उज्जवलता है अरे, ऐसे संसार को महर्षि अगस्तय मुनि महाराज खारी बना करके त्याग देते थे। खारी का अभिप्रायः कि उससे उदासीन होना कि यह संसार तो इसी प्रकार गतिमान होता है मुझे तो अपने कर्तव्य में रहना है। मुझे आत्मा की प्रेरणा को स्वीकार करना है और आत्मतत्व जान करके इस सागर से पार होना है, इस सागर को त्यागना है वह भृंगि ऋषि के पुत्र कितने महान ओर पवित्र जिसका तप बड़ा महान रहता था वह अनुष्ठान करते रहते थे। केवल इसीलिए समुद्र से पार हो जाएं। तो बेटा! आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती ओर उसकी अनन्तता को जानते हुए अथवा उसके गृह ओर मानवीय गृह को ऊँचा बना करके इस सागर से पार हो जाएं। वेद का मन्त्र यह कहता है कि ये जो संसार रूपी गृह है इसका स्वामी परमपिता परमात्मा है ओर मानव शरीर का स्वामी आत्मा कहलाता है मुनिवरों! देखो, स्थूल रूप ले करके यह आत्मा मानव शरीर के लिए गृह का निर्माण करता रहता है यह है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा

१३ 12 04 1990 पुष्प 62 उग्रवाद में ममता हानिकरक

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं ओर जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र

ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं वह अनन्तमयी है ओर उसका ज्ञान ओर विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है आज का हमारा वेदमन्त्र यह उद्गीत गा रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की महती ओर उसकी अनन्तता के ऊपर हम सदैव विचार विनिमय करते रहें तो आज का हमारा वेदमन्त्र यह उद्गीत गा रहा है अमृतां दिव्यं गतं ब्रह्मणा व्रतं देवाः वेद का मन्त्र यह कहता है कि हे मानव! यदि तू अपनी साधना में परणित होना चाहता है तो मानो अपने में गमन करना चाहता है (पुस्तक से) अपने में गमन करना चाहता है तो तेरा मानवीयतव सदैव पवित्रता में रत्त रहना चाहिए। जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, अन्वेषण करता रहा है और अनुसन्धान करता रहा हैं क्योंकि उसका कोई भी ऐसा क्रियाकलाप नही हैं, जिस क्रियाकलाप में हम उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन न कर सकें। तो हमारा जीवन उस महान देव की आभा में सदैव रत्त रहे। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है ओर उसका ज्ञान ओर विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है, जिस अनन्तता के ऊपर परम्परागतों से ही, मानव अपने में अन्वेषण करता रहा है। क्योंकि प्रत्येक मानव की यह प्रवृत्ति बनी रहती है कि हम अपने में अन्वेषण करें चाहे वह मानवीय जीवन हो, चाहे वह इस ब्रह्माण्ड की आभा हो। वह सर्वत्रता में यह चाहता है कि प्रत्येक वस्तु को हम जानने वाले बनें। जब हम परमपिता परमात्मा की महती को अपने में धारण कर लेते हैं तो यह संसार हमारे लिए ओर यह ब्रह्माण्ड हमारे अन्तःकरण में प्रवेश होने लगता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा की महती है। ओर उस की अनन्तता में मानव सदैव तत्पर रहा है।

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं इस सम्बन्ध में कोई विवेचना नही देना चाहता। विचार केवल यह कि यहां परमपिता परमात्मा का दिया हुआ जो अनन्तमयी ज्ञान ओर विज्ञान है उसके ऊपर हमारा अन्वेषण होना चाहिए। अथवा उसी में हमें रत्त रहना चाहिए जिससे मानवीय जीवन एक महानता में गमन करता रहे। ओर अनन्तमयी धाराओं के ऊपर

विचार विनिमय होता रहे।

उग्र क्रिया से हानि

तो आओ मेरे पुत्रों! देखो, आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ कह रहा है वेद के आज के मन्त्र आया है कि वच्चनम बृही कृणास्वातम् वरुण स्वतः प्रवाः उग्रो चंजन्म् ब्रव्हे वेद का वाक्य यह कहता है कि हे मानव! तू उग्र मत बन। क्योंकि उग्रवाद जितना भी है वह मानव की अन्तरात्मा की प्रतिभा को विनाशता के मार्ग पर ले जाता है। तो इसीलिए वेद का वाक् कहता है कि उग्रो संजनं ब्रव्हे हे मानव! तू उग्र क्रिया को प्राप्त न हो क्योंकि जितनी भी उग्र क्रिया है वह चाहे किसी भी क्षेत्र में हो, चाहे वह क्रोधाग्नि के रूप में हो, चाहे वह मानव अपने में स्वार्थपरता के रूप में हो, चाहे वह मानव अपने में स्वार्थपरता के रूप में हो चाहे वह मोह और ममता के रूप में रत्त रहने वाली हो वह विशेषता के मार्ग पर ले जाती है। मैं आज किसी वस्तु का विरोधी नही हूँ वेद में दर्शनों में वेदमन्त्रों में किसी भी वस्तु का विरोध नही आता है परन्तु जब वह सीमा से उपरान्त हो जाती है तो उसके पश्चात मानो उसमें विरोधाभास हो जाता है। और वही देखो, मानव के लिए हानिप्रद होती है। इसीलिए हमारा वेद का मन्त्र कहता है कि हे मानव! तू किसी भी क्षेत्र में उग्र मत बन क्योंकि उग्रवाद आने के पश्चात मानवीयता नष्ट हो जाती है आत्मा की जो मानवीय तरंगें है, उसका विनाश हो जाता है। और साधना का क्षेत्र भी नष्ट हो जाता है।

मुनिवरों! देखो, मुझे ऐसा प्रतीत होता रहता है कि आदि ऋषियों की बेटा! सभाएं हुआ करती। मुझे स्मरण आता रहता है कि एक समय बेटा! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के यहां एक सभा उपस्थित हुई। जिसमें देखो, कुछ ब्रह्मवेत्ता भी थे और ब्रह्मनिष्ठ भी कहलाते थे तो बेटा! वे सब एक दूसरे की चर्चा को श्रवण कर रहे थे उसमें यह प्रसंग आया कि संसार में उग्रवाद किसे कहते हैं? तो देखो, शाकल्य मुनि महाराज के वार्त्ताओं को वह वर्णित करने लगे। परन्तु महर्षि रोगू ऋषि ने यह कहा कि भगवन! मेरे विचार में तो यह आता है कि जितना भी क्रियाकलाप है मानव में जब अहम भावना प्रबल हो

जाती है, जब वह अहम भावना प्रबलता को प्राप्त होती रहती है, तो वही अहम भावना मानव के विनाश का मूल बन जाती है और यदि वह सीमा में रहती है अपने स्वाभिमान में रहती है और अपने में मानो अपनेपन का गुणगान गाने लगती है तो वही मानो उसके लिए हितकर है, वही मानव के स्वाभिमान को स्थिरता में धारण करने वाला है। परन्तु अमृतं ब्रह्मे कृतं यदि वह देखे उग्रता में हैं जैसे काम्यतः उससे ममता है जब ममता भी चरम सीमा में चली जाती है तो वही ममता विनाश के मार्ग पर ले जाती है। तो विचार आता रहता है कि ममता करनी चाहिए। क्योंकि बिना ममतव के पालना नही हो पाती। तो वही ममतव मानव के जीवन की प्रतिभा को नष्ट कर देती है।

अति ममता से हानि

मुनिवरों! देखो, मुझे कई वार्त्ताएं स्मरण आने लगती हैं कि मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा था कि कोई भी मानव जो अपने स्वाभिमान को जागरूक करता है और उसका स्वाभिमान यदि विशिष्टता के लिए और अपने अभिमान के लिए परणित हो जाता है अपनी ममता के लिए तो वही स्वाभिमान देखो, उसके आत्मबल को नष्ट करने लगता है इसी प्रकार विचार आता रहता है कि माता अपने बाल्य का ममता में पालन कर रही है और वह अपने में यह विचार रही है कि मेरा बाल्य पवित्र बन जाए, मेरा बाल्य मानो महान बन जाए, और बाल्य मानो सर्वत्र गुणों की स्थापना हो जाए। यदि इसी प्रकार माता जब ममता में परणित हो करके उसे नाना प्रकार की शिक्षाओं में परणित कर देती है तो वह उसकी जो ममता है उसके लिए मानो एक विचित्र मार्ग बना देती है, वही माता को माता बना देती है। परन्तु देखो, यदि माता, वही माता उस बाल्य को शिक्षा नही दे पाती और वह मानो अप्रियता को शिक्षा उसे प्रदान करने लगती है और उसे देखो, मानव से अमानव में ले जाती है वह मानव अपने में दुष्कर्मी बन जाता है तो माता की वही जो अति ममता है वही मानो माता के लिए हानिप्रद हो जाती हे इसी प्रकार प्रत्येक मानव को यह विचारना है क हम अपने में देखो, सीमा से

दूरी न चले जाएं। हम इनको मानो प्रत्येक दशा में ऊर्ध्वा में गमन करते रहें।

मोह

मेरे पुत्रों! देखो, यहां और भी नाना ऋषियों के प्रसंग आए। उन्होंने कहा क्रोधाग्नि और ममतव और देखो, यह जो मोह ममता है जो मोह है यह भी होना चाहिए। परन्तु यह सीमा से बाह्य नहीं होना चाहिए। मोह किसे कहते है? मोह मानो एक ऐसी वस्तु है जो मानव को मोक्ष के द्वार से भी संसार में ले जाती हे देखो, जब मोह अति हो जाता है तो मानव की मृत्यु हो जाती है वह मानव की मृत्यु किसे कहते हैं? बेटा! वह उसी आभा में समाप्त हो जाता है, उसी को प्राप्त करता रहता है। आओ मेरे प्यारे! आज मुझे एक वाक् स्मरण आ रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में इन वाक्यों को तुम्हें निर्णय भी दिया। आज भी मुझे स्मरण आ रहा है मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि शाकल्य मुनि हुए हैं और महर्षि शाकल्य मुनि महाराज का जीवन बड़ा अद्वितीय था। भयंकर वनों में उनका वास था और उन्हें लगभग दो सौ वर्ष हो गएं थे साधना और तपस्या में रत्त होते हुए। उनको साधना बड़ी विचित्र चल रही थी। और वह देखो, सब द्वारों से पार हो गए थें, मोह ममता इत्यादियों से भी देखो, एक समय अपने आसन पर वह विद्यमान थे और वह देखो, अपने को यह स्वीकार कर रहे थे कि मैं अब मोक्ष के द्वार पर चला गया हूँ और मोक्ष के द्वार पर द्वार के लिए जाने के लिए मैं तत्पर हो रहा हूँ। देखो, वह यही चिन्तन कर रहे थे कि मैं प्रभु के राष्ट्र में आ गया हूँ। और प्रभु के राष्ट्र में जाने से ही महानता महान प्रबलता को प्राप्त होती रहेगी। और मेरा आत्मीय जो ज्ञान है वह पवित्रता में परणित हो जाएगा। देखो, जब ऋषि ने अपने मन में यह स्वीकार कर लिया कि मैं मोक्ष के निकट चला गया हूँ और वह प्रभु के राष्ट्र में अपने को स्वीकार कर रहे थे तो बेटा! विचार विनिमय होता नाना ऋषिवर आते और वह ऋषि मुनि देखो, ज्ञान और विज्ञान की आत्मा की चर्चा करते रहते थे।

बेटा! एक समय आत्मा की चर्चा करते हुए महर्षि शाकल्य मुनि नाना ब्रह्मचारी और जिज्ञासुओं से यह उच्चारण करने लगे कि यह जो आत्मा का अनुपम विषय है यह बड़ा

विचित्र है देखो, केवल आत्मा ही मानो प्रकाश में रत्त रहने वाला है और आत्मा ज्ञान और प्रयत्न के माध्यम से ही रमण करता रहता है। मानो यह जो आत्मा है इसका जो मौलिक गुण है वह ज्ञान और प्रयत्न कहलाता है। ज्ञान कहते हैं संसार को मौलिक वस्तुओं का ज्ञान होना, ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहना, ज्ञान उसे कहते हैं। देखो, प्रभु का दिया हुआ जो अनुपम ज्ञान है, प्रत्येक मानव उस परमपिता परमात्मा का सूत्र बना रहता है, और जो उस सूत्र की माला को अपने में धारण करने लगता है वह ज्ञान में रमण करने लगता है क्योंकि उसी माला का नाम ज्ञान है। जैसे हमारे यहां वेदों में तीन विषय आते हैं ज्ञान, कर्म और उपासना मानो ज्ञान उसे कहते हैं ज्ञानाति जन्नम ब्रहे जो प्रत्येक वस्तु को जान लेता है। जैसे देखो, हम अग्नि को जानना चाहते हैं। तो अग्नि का जो गुण है वह तेजोमयी है। और अपने तेज से देखो, अग्नि के तेज से दोनों की तुलना करने लगता है तो वह सन्तुलित हो जाता है तो अग्नि को जानना ही मानो अपनी अग्नि से समावेश करने का नाम ज्ञान है मुनिवरों! देखो, ज्ञानाम् ब्रह्मे जैसे हम सूर्य के ज्ञान में जाना चाहते हैं वह सूर्य का जो प्रकाश है वही उसका ज्ञान है मानो देखो, जो उसमें ऊर्जा है वही उसका ज्ञान है और वह ऊर्जा क्या क्या क्रियाकलाप करती है इस संसार में तो देखो, यह उसका ज्ञान कहलाता है तो वह जो ज्ञान है वही देखो, जानाति जन्नमं ब्रह्मे कृतं जो जान लेता है वह ज्ञानी बन जाता है। मेरे पुत्रों! ऊर्जा में जब यह गमन करता है कि यह ऊर्जा का ज्ञान ही यह जो ऊर्जा गमन कर रही है इसका मूल क्या है हम इससे क्या क्या क्रियाकलाप कर सकते हैं तो बेटा! भौतिक विज्ञान में पहुचों उसके पश्चात आध्यात्मिकवाद में रमण कर जाओ जब भौतिक विज्ञान में यह जान लेता है कि यह जो सूर्य की ऊर्जा है उसके साथ मेरा यन्त्र गमन कर सकता है मेरे प्यारे! यन्त्र को गमन कराता रहता है इसी प्रकार जब वह आध्यात्मिकवाद में प्रवेश होता है। तो आध्यात्मिकवाद में योगी सूर्य की किरणों के साथ कुम्भक प्राण को जान कर देखो, प्राण का कुम्भक करता हुआ अपान और उदान के द्वारा उसे जानते हुए देखो, सूर्य की किरणों के साथ वह सूर्य मण्डल में प्रवेश हो जाता है। तो मानो यह उसको ज्ञान कहते हैं वह जानाति जन्नमं ब्रह्मे कृतं मानो जो इसको जानता है वह ज्ञान

कहलाता है तो मेरे पुत्रों! यह जितना भी संसार है यह चाहे व्यवहार में हो, चाहे वह देखो, परोक्ष में हो, चाहे अपरोक्ष में हो इस सर्वत्र ज्ञान को अपने में जाने लेना ही ज्ञान कहलाता है।

मेरे प्यारे! प्रयत्न किसे कहते हैं प्रयत्न उसे कहा जाता है जो मानव देखो, दृष्टिपात करके उसकी गति में मानो अन्तर्द्वन्द्व आ जाए। अगर गति में परिवर्तन हो जाता है तो उसी गति के साथ देखो, उसका प्रयत्न बन जाता है। वह अपने प्राणों की रक्षा करता है और प्राणों की रक्षा करना ही बहुत अनिवार्य कहलाता है वह उसका प्रयत्न बन जाता है तो देखो, प्रयत्न की ओर भी विचित्र विवेचना करते हुए ऋषि मुनियों ने यह कहा है और वेद का मन्त्र यह कहता है कि मानो प्रयत्न कर रहे हैं हम संसार में अपने उपार्जन का भी प्रयत्न करते हैं। मानो वैज्ञानिक यन्त्रों के द्वारा नाना प्रकार के परमाणुओं का मिलान करते हैं वह भी प्रयत्न कहलाता है प्रयत्न की विवेचना करते हुए ऋषि ने कहा है कि इस पृथ्वी से नाना प्रकार की ऊर्ज्वा तत्त्वों को मानो उन्हें उपार्जन करने का नाम भी देखो, प्रयत्न कहा जाता है और वह प्रयत्न ज्ञान के माध्यम से उत्पन्न होता है। जैसे किसी वस्तु का जब ज्ञान होता है तो उसके पश्चात प्रयत्न करता है जैसे एक मानव सूर्य मण्डल में जाना चाहता है। और उसने यह जान लिया है कि तू सूर्य की किरणों के साथ में गमन कर सकता है तो उसी समय वह प्रयत्न करता है और प्रयत्न क्या करता है कि प्राण को अपान में मिलाता है और अपान को समान में और समान को व्यान में प्रवेश करता हुआ उदान में प्रविष्ट कर देता है। तो प्राणों की जहां एक सूत्रता बनी तो उसी समय ज्ञान के ही द्वारा वह प्रयत्न करता है। कि मैं योगेश्वर बन जाऊं। मैं प्राण और अपान को जानने लगूं। और सूर्य की किरणों में कौन सा प्राण गमन कर रहा है। उससे वह अपने में प्रयत्नशील हो करके वह ज्ञान और प्रयत्न देनों के स्वरूप में रमण करता हुआ देखो, वह सूर्य मण्डल की यात्रा करने लगता है और भी नाना प्रकार के लोकों की यात्रा करने लगता है तो विचार आता रहता है कि आत्मा के दोनों ही मौलिक गुण कहलाते हैं। ज्ञान और प्रयत्न।

देखो, विचार आता रहता है कि ज्ञानं ब्रह्मे जब मानव के परमाणुओं को सुन्न कर दिया

जाता है तो वह प्रयत्न कहां गमन करता है। किसके गर्भ में चला जाता है तो विचार आया कि बेटा! वह जो सुन्नां भूतं ब्रह्मे वह मानो आत्मा का जो प्रयत्न है उसके गर्भ में चला गया और वह जिसके माध्यम से वह प्रयत्न करना चाहता है वह प्राण के माध्यम से ही तो गमन करना चाहता है। वह प्राण की क्रिया सुन्न हो जाती है परन्तु वह जो उसका मौलिक गुण है वह नष्ट नही होता। वह उसके गर्भ में चला जाता है क्योंकि जब मानव का साथी नही रहता है तो जिस मानव को जिस यन्त्र ये वह क्रिया में लाना चाहता है। जब वह नही रहता तो उसका जो मौलिक गुण है वह उसी के गर्भ में प्रवेश कर जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, मैं दूरी नही ले जा रहा हूँ। इन वाक्यों को केवल विचार विनिमय क्या कि मानव को ज्ञान और प्रयत्न की आभा में रत्त रहना चाहिए। आज बेटा! मैं अपने विचारों को बहुत दूरी ले गया हूँ। विचार यह चल रहा है, विचार यह प्रारम्भ हो रहा है कि जब महर्षि शाकल्य ने यह वाक् कहा कि मानव को ज्ञान और प्रयत्न को दोनों को एक दूसरे में समावेश करना है और वह समावेश ही मानव को मोक्ष के द्वार पर ले जा रहा है। तो मुनिवरों! देखो, शाकल्य मुनि महाराज जिज्ञासुओं से इस प्रकार की चर्चायें करते रहते थे। बेटा! महर्षि शाकल्य मुनि ने एक समय यह चर्चायें की कि ज्ञान और प्रयत्न को ही जानना है अथवा उसको जान करके ही हम अग्रणीय बन सकते हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, महात्मा शाकल्य मुनि महाराज दो सौ पिचासी वर्ष हो गएं थे इस प्रकार का अध्ययन करते करते। वह चित्त के मण्डल को भी कुछ जान गए थे और वह मोक्ष के निकट जाना चाहते थे। उसके द्वार पर चले गये। एक समय बेटा! देखो, कोई जिज्ञासु नही था वह जिज्ञासु सब अपनी अपनी स्थलियों पर चले गऐ तो महर्षि शाकल्य मुनि महाराज अपने आसन पर विद्यमान थे और वे चिन्तन कर रहे थे। कि इतने में ही एक हिरणी जो अपने गर्भ में मानो पूर्णता को प्राप्त हो रही थी मेरे पुत्रों! देखो, जब वह अमृतां ब्रह्मे उस हिरणी को देखो, दमन करना चाहते थे अथवा उसको नष्ट करना चाहते थे अथवा उसको नष्ट करना चाहते थे तो जिह्वा के स्वाद होते हैं जो मानो रस्वादन करने वाले होते हैं, उन्हें विवेक नही हो पाता और विवेक न होने से ही देखो, उनका

अन्तरात्मा मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। जो अन्तरात्मा की वार्त्ता को स्वीकार नही करता वही तो मृत्यु कहलाती है तो देखो, उन्होंने हिरणी पर शस्त्रों से प्रहार किया और शाकल्य मुनि आश्रम के निकट ही उसका गर्भाशय विच्छेद हो गया ओर वह हिरणी अपने आसन को भय अमृतों को प्राप्त हो करके वह अग्रणीय बन गयी। ओर वह जरायु ऋषि के आश्रम में देखो, प्रवेश हो गया। जब ऋषि ने दृष्टिपात किया कि यह क्या है तो उन्होंने जाना ही जरायु अपने में श्वास की गतियों में रमण कर रहा है ऋषि ने जल ले करके उसे अर्पित किया और प्राण शक्ति को वह प्राप्त हो गयी। ओर वह ऋषि के आश्रम में पनपने लगा। महर्षि शाकल्य मुनि महाराज उसे जल का पान कराते और अन्य पदार्थों का आहारा कराते तो वह देखो, प्रबल हो गया ओर ऋषि को देखो, ममता जिसको वह त्याग गए थे। वह ममता पुनः से जो आत्मा के मानव स्वरूप में गमन कर रही थी मन के और प्रकृति के मण्डल में वह मोह पुनः से जागरूक हो उठा। और वह जब जागरूक हो गया तो हिरणी के बाल्य से वह मोह ममता में रत्त हो गए। जब मोह ममता में रत्त हो गए तो इतनी ममता जागरूक हो गई कि वह पुनः भोज्य उसे पान कराते उसके पश्चात स्वयं भोज्य करते। तो ऋषि इतनी ममता में परणित हो गए। अपनी आयु पर आकर वह हिरणी का बाल्य समाप्त हो गया जब समाप्त हो गया तो ऋषि के अन्तर्हृदय में दुखद हुआ ओर वह ममता इतनी जागरूक हो गई कि उन्हें हिरणी के बाल्य के द्वितीय कोई दृष्टिपात नही आ रहा था। उसी की दाह में वह रत्त रहते।

मेरे प्यारे! जब उनके माता पिता को, उनके सहपाठियों ओर ऋषि मुनियों को यह ज्ञान हुआ कि महर्षि तो ममता में रत्त हो गए हैं तो एक समय भ्रमण करते हुए महर्षि सोमकेतु उनके आश्रम में आ पंहुचें क्योंकि विद्या अध्ययन की है उन्होंने कहा भगवन! इस मोह में क्यों आ गए हो? उन्होंने कहा मोह ममता में मैं रत्त हो गया हूँ ओर यह जा नही पा रही है। उन्होंने कहा प्रभु! देखो, ममता तो होनी ही नहीं चाहिए। क्योंकि यह ममता तो मानव के अन्तःकरण को विनाश करने वाली है। आप किस आभा में चले गए, आपको तो कर्तव्य का पालन करना चाहिए। वे ऋषि को उपदेश देने लगे, आत्मा के ज्ञान की प्रतिभा उन्हें स्मरण कराने लगे ओर वह यह बोले कि आत्मा का

तो यह लक्षण ही नही हैं आत्मा का लक्षण तो केवल ज्ञान और प्रयत्न है आप तो प्रयत्न कर रहे हैं कि मैं संसार में देखो, उपरान्त हो जाऊं। यह भी देखो, एक प्रयत्न है जो आप कर रहे थे। और यह आत्मा का एक मौलिक गुण है जिसको तुमने जान लिया है, जिस संसार के एक एक परमाणुवाद को जान लिया है, उसमें इतनी ममता के रत्त हो गए हो। आपने प्रकृति से मण्डल को जाना है यह प्रकृति का जो मण्डल है देखो, यह जड़ है परन्तु यह परमात्मा के सानिध्य मात्र से नाना प्रकार की रचना में दृष्टिपात आता रहता है। यह परमात्मा की, जैसे मानव को स्वप्न बनाता है और वह स्वप्न क्या है देखो, मन और आत्मा के प्रकाश में रमण करता है वही तो स्वप्न को प्राप्त होता है। इसी प्रकार आत्मा के प्रकाश में ही मानो ममता में परणित हो गएं हो। तुम आत्मा के प्रकाश में ही मानो ममता में परणित हो गएं हो। तुम आत्मा के मौलिक प्रकाश को जानने का प्रयास करो जो ज्ञान और प्रयत्न के माध्यम से रमण करने वाला है एक मानव ने यह दृष्टिपात किया कि यह जो वायुमण्डल में यह जो सूर्य गमन कर रहा है या चन्द्रमा गमन कर रहा है ओर चन्द्रमा शीतल है तो यह सब अपनी अनुभूति से उसने जान लिया परन्तु जब वह प्रयत्न करता है। तो चन्द्रमा के स्वरूप को जानने के लिए तत्पर हो जाता है तो वह आत्मा का मौलिक गुण है परन्तु प्रकृति के तथ्यों को जानना ही तो प्रयत्न है ओर देखो, उस में प्रयत्न करना जहां से हम आए हैं जहां हमें जाना है हमें जाना कहां हैं कहीं जाना है लेकिन जाना आना है परन्तु देखो, यही तो हमारा ज्ञान और प्रयत्न कहलाता है ऋषि ने सोमकेतु मुनि महाराज ने जब इस प्रकार वर्णन किया तो शाकल्य के मन में यह विचार नही आ पा रहा था उन्होंने कहा प्रभु! वाक् तो यथार्थ है परन्तु जो मेरे संस्कार पुनः से ममता के जागरूक हो गऐ हैं वह कैसे नष्ट होंगें। क्योंकि यह मेरा जीवन व्यर्थ बन गया है। महर्षि सोमकेतु ने बहुत सी वार्त्ता प्रगट की।

मेरे प्यारे! देखो, एक समय भ्रमण करते हुए वहां कहीं से महर्षि वैशम्पायन भी आश्रम में पंहुच गये। उन्होंने कहा कहो शाकल्य मैंने तो आपका नामोकरण यह श्रवण किया है कि तुम मोक्ष के द्वार पर ले गए हो। इस संसार को जानते जानते तुम कहां चले

गए तो कि तुमने ममता को जाना, तुमने क्रोधाग्नि को जाना, तुमने ही मानो यह मोह की प्रवृत्ति को जाना है और जानते जानते तुम कहां आ गए हो? किस क्षेत्र में प्रवेश कर गऐ हो? उन्होंने कहा प्रभु! यह मेरा दुर्भाग्य है मैं दुर्भागी हूँ जानता हुआ अग्नि में प्रवेश हो गया हूँ भगवन! हे प्रभु! यह भी मेरे लिए भयंकर अग्नि है जिसने इतनी ममता में मुझे परणित कर दिया है मानो भगवन! जब मैं माता की लोरियों का पान करता था ओर माता के आंगन में किलकारियां करता था तो माता मुझे यह कहती थी कि हे बाल्य! तुझे मोह नही करना है। मैं भी कर्तव्य का पालन कर रही हूँ। मैं मोह में परणित नही होना चाहूँगी। क्योंकि मानव को कर्तव्यवाद में रत्त रहना चाहिए ओर देखो, मोह में अपने को उपराम हो जाना चाहिए, उससे उदासीन हो जाना चाहिए। एक समय जब मैं प्रबल हो गया था तो माता ने मुझे प्राण की विद्या प्रदान करायी ओर मैं साधना मैं परणित रहता। एक समय मैंने कुम्भक प्राणायाम ऐसा किया जिससे दूसरों को यह दृष्टिपात आने लगा। कि मैं मृतक हो गया। मैंने अपनी माता से यह परीक्षा ली कि माता इसमें क्या कहेंगी। कुम्भक और रेचक प्राणायाम दोनों का मिलान करते हुए, प्राण और अपान का समन्वय कराते हुए मैं समाधिष्ट हो गया। ओर ऐसा दृष्टिपात होने लगा। जन समूह को कि इसकी मृत्यु हो गई है। जब माता से यह कहा माता तेरा युवा बाल्य मानो मृत्यु को प्राप्त हो गया है और विद्या को अध्ययन करके वह आए थे विद्यालय से उस समय माता ने जब यह दृष्टिपात किया और श्रवण किया तो माता ने कहा इसमें रूधन न करो, वह व्याकुल होने का विषय नहीं है तो मानो इसका योग आचरण ब्रह्मे मानव के जन्म जन्मान्तरों के संस्कार हैं ओर उन संस्कारों के आधार पर ही मानव अपने भोगतव्यों की क्रियाओं में रत्त रहता है। इसी प्रकार वह बाल्य भी अपने भोग आचरणों में रत्त हो रहा है। परन्तु देखो, माता तेरी परीक्षा ले रहा है क्योंकि मैंने कहा है कि में ममता में नही जाना चाहती थी तो जब ऐसा उन्होंने अपने मन में पान किया तो माता ने कहा हे बाल्य! तू मेरी परीक्षा ले रहा है तो प्रभु! माता मानो इस प्रकार की तरंगों को जानने वाली थी जब मानव के शरीर से तरंगों का प्रादुर्भाव हो जाता है और उन तरंगों को तरंगों से जब मिलान होता होता है। तो वह सब अच्छी प्रकार जान

लेता है, इसका नाम ही तो ज्ञान कहलाता है। बेटा! ज्ञान की विवेचना बड़ी विचित्र मानी गई है, एक एक तरंग हमें ज्ञानी बनाती है। एक एक तरंग की सुगन्धि हमें वही तरंगों में तरंगित हो करके वह हमें महापुरूष बना देती है देखो, शाकल्य मुनि ने कहा कि माता ने भी निर्णय कराया और यह उसी की देन थी जो मैं यहां तक आया परन्तु मेरा कौन से जन्मों का संस्कार कौन से चित्त के संस्कार ऐसे उदबुद्ध हो गएं जो हिरणी के बाल्य से मुझे मोह हो गया।

तो मेरे प्यारे! महर्षि वैशम्पायन ने कहा कि इसको त्यागों। उन्होंने कहा ऋषिवर! अब यह नही त्यागी जाती क्योंकि अन्तःकरण में जो संस्कार अंकित हो गए हैं। उसके चयन के संस्कार अंकित हो गए हैं। इनसे मुझे पुनः से उसी दशा में जाना होगा जिस दशा में मेरी माता ने मुझे पवित्र शिक्षा दे करके निर्मोही बना दिया था। मैं मानो पुनः से मोही बन गया हूँ और वह संस्कार पुनः से मेरे अन्तःकरण में जागरूक हो गए हैं। देखो, महर्षि शाकल्य मुनि महाराज ने जब ऐसा कहा तो महर्षि वैशम्पायन ने भी पुनः से यह कहा कि ब्रह्मचारी हे ऋषिवर! तुम तो ब्रह्मवर्चोसि कहलाते हो। ब्रह्मचर्य को तुम जानने वाले हो और जो ब्रह्मचर्य को जानने वाला है वह महान कहलाता है तो तुम इन वार्त्ताओं को त्यागने का प्रयास करो। महर्षि शाकल्य मुनि महाराज ने यह कहा कि मेरे पिता भी मुझे शिक्षा देते रहते हैं क्योंकि मेरे पितर अमृत रहते हैं उनकी चार सौ पिच्चासी वर्ष की आयु हो गई है और वे मेरे समीप आते रहे हैं और मुझे शिक्षा देते रहते हैं हे भगवन! मैं उन शिक्षाओं को स्वीकार तो कर रहा हूँ परन्तु मेरे अन्तःकरण में जो संस्कार अंकित हो रहे हैं और जब मुझे वह स्मरण आते हैं तो उसी क्षेत्र में चला जाता हूँ मोह एक ऐसा विचित्र एक ऐस नृत्त है जो मानव के अन्तःकरण में अंकित हो जाता है। जिस माता के अन्तःकरण में अंकित हो जाता है वह बाल्य की पालना में इतनी मोहित हो जाती है कि वह अपने को दूर नही कर पाती है। विचार आता रहता है कि महर्षि शाकल्य मुनि महाराज का यह निश्चय विचार बन गया कि मोहं ब्रह्मे देखो, यह एक वृत्त है कर्तव्यवाद से दूरी होना ही मानव की प्रतिभा नष्ट हो जाती है। इसीलिए मेरी प्रतिभा नष्ट हो गई है भगवन! महर्षि वैशम्पायन ने अपने विचार दे करके वहां से

गमन किया।

मेरे पुत्रों! देखो, कुछ समय के पश्चात यह चिन्तन होता रहा और इसी ममता में उन्होंने अपने शरीर को त्याग दिया। आत्मा अपने उन्हीं मोह के संस्कारों को ले करके चित्त के मण्डल में प्रवेश कर गए शरीर को त्याग देने के पश्चात वह शव रह गया। मुनिवरों! देखो, ऋषि मुनियों ने अमृता को जान करके कि शाकल्य मुनि महाराज का इस शरीर से विच्छेद हो गया है उस शव को अग्नि में दाह कर दिया। अग्नि में दाह करने के पश्चात ऋषि मुनि उस भूमि पर विद्यमान हो कर विचारने लगे कि ऋषि का उद्धार कैसे होगा कैसे कल्याण होगा? ऋषि मोक्ष का निकट चला गया था परन्तु पुनः से संसार में आ गया और देखो, ऐसे अन्धकार में गया जो मोक्ष से भी नीचे की स्थली पर प्रवेश हो गया। ऋषि मुनि यह विचार विनिमय करते रहे कि एक विशीशग नाम के ब्रह्मचारी ने कहा कि भगवन! मेरे विचार में तो यह आता है कि मैं उनके चरणों की जब वन्दना करने आता परन्तु वह यही कहते थे कि मैं मोक्ष को तो चला जाऊंगा परन्तु देरी लगेगी। देखो, मुझे एक जन्म दो जन्म और लेने होंगें। क्योंकि मेरे अन्तःकरण में देखो, मेरे जन्मों का एक संस्कार बन गया है।

तो मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार ऐसे विचारों में जाना हैं जहां हमारे जीवन में मोह इतना प्रबल न हो जाए उसी का नाम उग्र क्रिया लाता है देखो, उग्र क्रिया जीवन में नही आनी चाहिए। वेदमन्त्र कहता है कि हे मानव! यदि तू अपने जीवन को महान बनाना चाहता है तो तेरे उग्र क्रिया नहीं आनी चाहिए। वेदमन्त्र कहता है कि हे मानव! यदि तू अपने जीवन को महान बनाना चाहता है तो तेरे में उग्र क्रिया नही आनी चाहिए। अगर तेरे में उग्र क्रिया आती है तो तेरे जीवन का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। यदि क्रोधाग्नि जागरूक हो जाए तो तुम अपने अन्तःकरण में संस्कारों को जन्म न दो। यदि अन्तःकरण में संस्कार बनेंगें तो आवागमन का क्षेत्र बन जाएगा। ऋषि कहता है कि क्रोधाग्नि नही आनी चाहिए इसमें देखो, नाग प्राण उदबुद्ध हो करे हमारे शरीर का विष बना देता है। उसी से हमारे शरीर में मानो नाना प्रकार के रोगों की उत्पति हो जाएगी। और रूग्ण हो करके हम जीवन में मृत्यु को प्राप्त होते रहेंगें। ऋषि ने कहा कि देखो,

यह जो मानव का जीवन है इसमें शरीर को त्यागने का नाम मृत्यु नहीं कहलाता है मृत्यु उसे कहते हैं जो अशुद्ध संस्कारों को जन्म देता रहता है और अन्तःकरण में वह संस्कार अंकित होते रहते हैं और वह जन्म जन्मान्तरों में हमें भोगना होता है। मेरे प्यारे! देखो, क्रोधाग्नि के सम्बन्ध में मोह के सम्बन्ध में बहुत से विचार हैं बेटा! इन विचारों के लिए ऋषि मुनियों ने प्राणायाम किया है, प्राण और अपान को मिलाने का प्रयास किया है, उदान को समान में ले जाने का प्रयास किया है मेरे पुत्रों! देखो, प्रभु के राष्ट्र को विचारा है और अपने को इसमें ले गएं हैं। तो इसीलिए विचार आता रहता है कि हम क्रोधाग्नि में, उग्र क्रिया में परणित न हो जाएं।

उग्र क्रिया के पञ्च प्रकार

बेटा! हमारे यहां पांच प्रकार की उग्र क्रिया होती है। बेटा! काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह यह मानो पञ्चीकरण कहलाता है जो मानव को उग्र क्रिया में ले जाता है यह पांचों ही उग्र क्रिया कहलाती हैं जब तक यह सीमा में हैं वही तक मानव का संसार है और इनका सीमा से पार होना ही मानो संसार में से दुरिता को प्राप्त होना है। तो जैसे अमृता व्रते देवत्वां जैसे मानव को जब लोभ आता है तो जब लोभ इतना अति प्रबल हो जाता है और वह इतना प्रबल हो जाए कि दूसरों के द्रव्य को ग्रहण करने की उग्र क्रिया उसमें आ जाएं। तो वही जानो कि इसकी आत्मा की तरंगों का विनाश होने जा रहा है और वह एक समय मानो अपने में अपनेपन को न जा करके यह संसार में नाटकीय क्षेत्र में प्रवेश हो जाता है तो विचार आता रहता है कि ये पांच प्रकार की उग्र क्रिया कहलाती हैं बेटा! आज मैं तुम्हें विशेषता में तो नही ले जाऊंगा नहीं केवल विचार विनिमय यह कि देखो, महर्षि शाकल्य मुनि की चर्चा हो रही थी। इतने समय देखो, कितने ऋषि चले गऐ हैं। इसीलिए अति का नाम ही उग्रता है और सामान्यता का नाम ही यह संसार कहलाता है इसमें आनन्दतव को मानव प्राप्त होता है।

बेटा! महर्षि शाकल्य मुनि की चर्चाएं वह राज गृह में शकुन्तका माता के गर्भ में प्रवेश हो रहा है उस आत्मा को ज्ञान है गर्भ में भी कि तू मानो मोक्ष के निकट से आया है

तू माता के गर्भ में पुनः प्रवेश हो गया है जहां देखो, दाह ब्रहे आवरण भ्रमण कर रहे हैं माता नाना प्रकार के तीखें पदार्थों का ग्रहण कर रही है। वही रूधिर में मानो स्नान हो रहा है देखो, आपो उसी में प्रविष्ट हो रहा है और मैं मानो उस माता के नाटकीय गर्भ में प्रवेश कर गया हूँ। मैं यह चाहता था कि मेरे अन्तरात्मा की यह भाव थी कि मैं मोक्ष के निकट चला जाऊं अरे, देखो, माता परमात्मा के गर्भ में तो मैं जा नही पाया परन्तु माता के गर्भ में पुनः से आ गया हूँ। इस प्रकार ऋषि अपने में प्रार्थना कर रहा है, और यह कह रहा है हे प्रभु! मुझे इस संसार से उसी संसार में ले जा प्रभु! मैं आगे जाऊंगा संसार में मेरे क्षेत्र में मोह नही करूंगा। मैं मोह नही करूंगा। प्रभु मुझे यहां से पृथक कीजिए। मेरी माता को मोह हो जाएगा। जिसके गर्भ से मैं पृथक होऊंगा। परन्तु मैं यह प्रतिज्ञाबद्ध हूँ कि आपके क्षेत्र में यह सब आपका क्षेत्र है परन्तु इसमें आकर मैं मोह नही करूंगा। ऐसी बेटा! वह याचना कर रहा था मैं शेष चर्चा तो इसकी कल प्रगट करूंगा आज का विचार तो केवल यह कि मानव को उग्र क्रिया में प्रवेश नही करना चाहिए। विचार कहता है कि उग्र क्षमम् ब्रह्मा कृतं कि यदि उग्रता लानी है तो तपस्या में उग्रता लाओ जिससे तुम प्रभु के राष्ट्र को प्राप्त हो जाओ। अरे, उग्रता लानी है तो यहां काम, क्रोध, मोह, लोभ को त्यागने में उग्रता लाने का प्रयास करो ओर उसमें प्रयत्न शील बन जाओ और वही प्रयत्न मानो तुम्हें प्रभु के राष्ट्र में पंहुचा देगा। और वही राजा प्रभु के राष्ट्र में प्रवेश करा देगा जहां अन्धकार नही रहता हैं जहां प्रकाश ही प्रकाश रहता है, प्रकाश का प्रकाश जिसमें आत्मा प्रकाश में रत्त हो जाती करके ओर प्रकृति से अपना विच्छेद कर लेती है। और चेतना से अपना मिलन करके प्रभु को प्राप्त हो जाती है आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा में ले जाना नही चाहता विचार विनिमय क्या कि आज का वेद का मन्त्र कहता है कि उग्रो क्षमम् ब्रह्माः कृतं मनस्तताः हे मानव! तू अपने में उग्र क्रिया को मत ला क्योंकि उग्र क्रिया तेरे विनाश का मूल है बेटा! मैं शेष चर्चा तो तुम्हें कल ही प्रगट करूंगा। आज का विचार तो केवल यह है कि हम उग्र क्रियाओं को त्यागना चाहिए ओर सामान्यता में रहना चाहिए। और उग्र क्रिया लानी है तो परमात्मा के राष्ट्र में आकर तुम साधना में प्रवेश हो जाओ, सूर्य की

किरणों के साथ गमन करने लगो। जैसे यन्त्रवेत्ता यन्त्रों का निर्माण करता हुआ वह सूर्य की किरणों के साथ उसकी ऊर्ज्वा में रमण करने वाला यान देखो, सूर्य की परिक्रमा करता है इसी प्रकार मानव को यदि उग्रता लानी है तो सूर्य की किरणों के साथ तुम्हें गमन करो प्रकाश में प्रकाश को मिला दो जब तुम्हारे प्रकाश का प्रकाश से समन्वय हो जाएगा। तो स्वतः अन्धकार तेरे नष्ट हो जाएगा। और तू प्रकाश में रत्त हो जाएगा। यह है बेटा! आज का वाक् आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह हे कि हमारा जीवन महान बनना चाहिए। जिससे प्रभु के राष्ट्र को हम दृष्टिपात करते रहें और अपने में उग्र क्रिया को त्याग करके और नम्रता से महानता के लिए हम प्रभु से सदैव प्रार्थना करते रहें। आज का विर हमारा क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता को जानने का प्रयास करें और उसकी अनन्तता में रमण करना चाहिए जिसकी अनन्तता को जान करके ही संसार सागर से हम पार हो जाएं। यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते रहें। और प्रत्येक मानव को अपने में महान बनने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए। और ज्ञान और विज्ञान में रत्त हो करके हम प्रभु के राष्ट्र को अपनें में स्वीकार करें ओर हमारे जीवन में एक महान क्रिया कलाप आ जाए। यह है बेटा! आज का वाक् अब वेदों का पठन पाठन होगा वेद पाठ।

१४ 13 04 1990 पुष्प 62

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठ किया। हमारे यहां मानव सदैव से ही वेदों का उद्गीत गाता रहता है ओर वह उद्गीत गा ही हमारा कर्तव्य कहलाता है जिस उद्गीत गाने के लिए प्रत्येक मानव मानवीयता को धारण करता रहता है। तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान ओर विज्ञान को अपने में धारयामी बनाते रहें। क्योंकि प्रत्येक मानव का यह कर्तव्य बना हुआ है कि वह अपनी अन्तरात्मा के अनुकूल अपने विचारों को

बनाता रहे। और आत्मा की प्रेरणा को जो स्वीकार कर लेता है वह महान और पवित्रतम को प्राप्त हो जाता है। तो आओ मेरे पुत्रों! आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा है? वह मन्त्र यह कहता है कि सर्वणां ब्रह्मणां ब्रव्हे कृतं देवाः अश्वतं ब्रव्हे कृति वर्णास्वति कि हम उस प्राण स्वरूप को जानने के लिए सदैव तत्पर रहें। जिस प्राण की प्रतिभा से ही, मानवीयता मानो मानव वृत्तियों में रत्त होने लगता है तो हम उस परमपिता परमात्मा को जो प्राण स्वरूप है और जिसके नामो करणों से उद्गीत गाया जाता है, उस परमपिता परमात्मा को हम रुद्र के नाम से वर्णन करते हैं। परन्तु वैदिक साहित्य में जहां रुद्र नाम परमपिता परमात्मा को कहा जाता है वहां रुद्र नाम बेटा! प्राणों को भी कहा जाता है। प्राणां ब्रह्मे कृतं यह प्राण ही मानव को महानता की वेदी पर ले जाने के लिए सदैव तत्पर रहता है। आज बेटा! मैं तुम्हें प्राणों के क्षेत्र में नही ले जा रहा हूँ क्योंकि प्राणों का क्षेत्र बड़ा विशाल क्षेत्र माना गया है।

आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा है? आज मैं तुम्हें यज्ञ क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। आज के हमारे वैदिक मन्त्रों में कहीं यागों का वर्णन हो रहा था कहीं आध्यात्मिक वाद की चर्चा हो रही थी। हमारे यहां वैदकि साहित्य चवालों ने नाना प्रकार के यागों का चयन किया है और साहित्यकारों ने वैदिकता में याग को अपने में धारयामि बनाया है। याग एक ऐसा ऊर्ध्वा में क्रियाकलाप है जिस क्रियाकलाप में मानव अमृतं देवः जाने के पश्चात और शेष कोई क्रिया नही रह पाती हमें याग में विस्तृत रूपों को जानना चाहिए।

तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार विनिमय क्या कि वेदमन्त्र में कहीं प्राण की विवेचना आ रही थी, कहीं नाग प्राण की चर्चा आ रही थी कि नाग प्राण इस मानव के शरीर में रहता है। वैदिक मन्त्र कहता है नागां भूवृत्ति देवत्वं ब्रह्म अश्वता अमृतां अश्वता अमृते वर्णास्वतं दिव्य ब्रहे कृतं कि वह जो नाग प्राण है मानो जब वह विकृत हो जाता है तो मानव के शरीर में जो अमृत रहता है मानो उसका विष बना देता है। इसीलिए मानव को इस प्राण को विकृत नही रहने देना चाहिए क्योंकि प्राण के ऊपर हमारा अन्वेषण होना चाहिए। और यदि नाग प्राण में विकृतता रही है तो मानवीयता की मानवता नष्ट हो

जाती है और वह विकृतता आने से देखो, विष बन जाता है और अमृत नष्ट हो जाता है इसीलिए विषधर नही रहना चाहिए। हमें नाग प्राण की शान्ति युक्त पूजा करनी चाहिए। इसीलिए हम परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन करते रहते है। क्योंकि परमपिता परमात्मा नम्र है इसीलिए मानव को भी नम्र बन जाना चाहिए, परमपिता परमात्मा निरभिमानी है इसीलिए मानव को निरभिमानी बन जाना चाहिए, परमात्मा अकाय है इसीलिए काया का मानव को देखो,ा विशेष अपने में धारयामि नही बनना चाहिए वे परमपिता परमात्मा ज्ञानी है और चेतना में रत्त रहने वाला है इसीलिए मानव को चैतन्य और ज्ञान में रत्त हो जाना चाहिए। वे परमपिता परमात्मा इस संसार को धारण किए रहता है इसीलिए प्रत्येक मानव को अपने जीवन की प्रतिक्रिया को अपने में धारण कर लेना चाहिए। वे परमपिता परमात्मा विज्ञानवेत्ता है। इसीलिए मानव को भी विज्ञानवेत्ता बनना चाहिए।

मेरे पुत्रों! देखो, उस परमपिता परमातमा की महती अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान के ऊपर तुम्हें अपने विचार व्यक्त करने नही आया हूँ। केवल तुम्हें यह विचार देने आया हूँ कि प्रत्येक मानव को उस परमपिता परमात्मा की महती को अपने में चिन्तन में लाना चाहिए। आओ मेरे प्यारे! उसी वेदमन्त्र की प्रतिभा में तुम्हें ले रहा हूँ जहां मानव को अपने को कितना महान बनाना है और महान बना करके देखो, त्रुटियों के मानव कहीं का कहीं चला जाता है। विचार आता रहता है कि महातं ब्रह्मे देखो, महर्षि शाकल्य मुनि की चर्चा हो रही थी। जहां वे महर्षित्व को प्राप्त हो गए थे बेटा! वहां मोह के कारण ममता के कारण वह मानव कहीं का कहीं चला जाता है। इसीलिए हमारे यहां विचार आता रहता है ममत्वा ब्रह्मणे ममत्वां लोकाः ममत्वां धारयामि रुद्रो भागाः वेद का वाक् कहता है कि हमें अपने ममतव इतना ममता में परणित नही होना चाहिए। वह ममतव अपनी सीमा में रहना चाहिए जब भी ममतव सीमा में रहता है मानो उसी काल में मानव अपने कल्याण के मार्ग को प्राप्त कर लेता है तो इसीलिए आज का यह विचार क्या कह रहा है मेरे पुत्रों! देखो, वह शाकल्य मुनि महाराज हिरणी के बाल्य को मानो उसकी ममता के ममतव का उसके प्राणों को अन्तिम चरण समाप्त हो गया, शरीर को

तयग दिया और अपने अपने अवव्यों में प्रवेश हो गए।

मेरे प्यारे! देखो, आत्मा के साथ में जो चित्त का संस्कार होता है मानो देखो, जो मनस्तव और बुद्धितव रह जाता है, वह मनस्तव ही देखो, चित्त के मण्डल कहलाता है जैसे प्रकृति का सबसे सूक्ष्म यदि कोई वस्तु है तो वह मनस्तव कहलाता है। बेटा! यह मन वास्तव में जड़ पदार्थ है परन्तु जब यह आत्मा के प्रकाश में गमन करता है तो यह मन मानो संसार में अपने में समाहित कर लेता है यह मन की ही मानो एक अंकुर से वृक्ष का निर्माण कर लेता है यह मन की मानो एक अंकुर से ही मानो यह अपनी आभा को विशेष आभा को त्याग करके वह अपने में परिणत हो जाता है तो देखो, आत्मा के प्रकाश में ही यह गमन करता रहता है तो आओ बेटा! देखो, मैं तुम्हें मन के ऊपर विशेषता में नहीं ले जाऊंगा केवल विचार विनिमय यह कि मन को हमें जानना है इस मन के कारण ही इनता मोह ममता मानव में परिणत हो जाता है, कहीं वह मोक्ष के निकट चला गया है उसके पश्चात भी वह देखो, मोक्ष से भी कई आवृत्तियों में निचली स्थलियों में प्राप्त हो जाता है जब इन स्थलियों को प्राप्त कर लेता है तो बेटा! वह अपने में शान्त हो जाता है तो विचार आता रहता है बेटा! आत्मा को ज्ञान है, आत्मा ज्ञान में परिणत रहने वाला है जो जन्म जन्मान्तरों में क्रियाकलाप हुए हैं वह इन क्रिया कलापों को भी जागरूक करने के लिए तत्पर रहता है।

बेटा! इसी प्रकार मुझे स्मरण आता रहता है वह बाल्य भरत वह महर्षि शाकल्य मुनि महाराज का आत्मा जब माता के गर्भस्थल में प्रवेश करे दया तो देवता उसकी रक्षा करते ही हैं देखो, सूर्य ऊर्ज्वा देता रहता है। अग्नि अपने स्वरूप में गमन करती रहती है। चन्द्रमा मानो अमृत में प्रवेश कर जाता है, वायु प्राणवर्धक है यह प्राण को देने वाली गतिवान बना देती है परन्तु वह जो आत्मा का ज्ञान है और जो वह ममता के कारण उस स्थली पर आ पंहुचां तो देखो, वह आत्मा के गर्भ में ही परमपिता परमात्मा से उद्गीत रूप में प्रार्थना कर रह है कि प्रभु आपने मुझे अपने क्षेत्र से तो दूरी कर दिया है हे प्रभु! आपने मुझे अपने क्षेत्र से तो दूरी कर दिया है हे प्रभु! में मोह नही करूंगा मैं मोह के उपराम हो जाऊंगा। मेरा यह संकल्प बन गया है, मैंने यह संकल्प किया

है वह बाल्य यह प्रार्थना करता रहा, यह आत्मा अपने में मानो परमात्मा का उपासक बन करके वह तपस्या में परणित हो रहा है वह जो नौ माह और नौ दिवस हुए तो माता के गर्भ से वह बाल्य पृथक हो गया। जब पृथक हो गया तो देखो, माता की लोरियों का पान करने लगा परन्तु राजा को जब यह प्रतीत हुआ कि आज तो हमारे गृह में बाल्य का जन्म हुआ है तो बेटा! कहीं वेदों का उद्गीत गाया जा रहा है, कहीं याग हो रहे है कहीं मानो दर्शनों की वार्त्ता हो रही है राजा के राष्ट्र ेमं एक आनन्दवत छाने लगा तो राजा बड़े प्रसन्न हुए। वह बाल्य पनपता रहा। परन्तु वह अन्तरात्मा को तो जानता था। और उसे ममता और मोह से पृथक रहना ही था मेरे प्यारे! कुछ ऐसा स्मरण आता रहता है कि वह जब युवा प्रबल होने लगा तो उसे न तो ममता माता से है न पितरों से है और न मानो उस गृह और राष्ट्र से उसे ममता है मेरे प्यारे! देखो, राजा ने यह कहा कि यह बाल्य तो ऐसा प्रतीत होता है देवी जैसा यह बाल्य निर्बुद्धि हो। उन्होंने कहा प्रभु! यह आपके समीप है।

मेरे पुत्रों! देखो, राजा ने जो मानो मस्तिष्क के विशेषज्ञ थे उनके द्वारा उनका प्रवेश कराया गया और उनका निदान होने लगा। जब निदान होने लगा तो देखो, वह अपने में बड़े अपूर्णतव में है, अपने में मानो सुसज्जित हैं और स्वास्थवर्धक अपनी क्रियाओं में रत्त हैं विशेषज्ञों ने कहा राजन यह तो बाल्य बड़ा स्वस्थ है मानो इसका मस्तिष्क और हृदय बड़ा उज्वल है उन्होंने कहा प्रभु! इसे को रूग्ण नहीं हैं

तो मुनिवरों! देखो, वह बाल्य जब गृह में आ गया तो उसे मोह ममहा नही थी और जिसे ममता नही होती, मोह नही होता वह मानो विवेकी पुरूष कहलाता है और जब विवेकी हो जाता है तो आत्मा में ही अपने में लीन होना चाहता है मेरे पुत्रों! वह बाल्य आत्मतत्व में रमण कर गया था। वह आत्मतत्व में जब रमण कर रहा था तो मानो वि ब्रहे उसे राजा ने जब अपनी वाटिका में प्रवेश कराया तो वाटिका को वह बालक नष्ट करने लगा। जब नष्ट करने लगा तो तो वाटिका के जो विशेषज्ञ थे वह राजा के समक्ष आए और राजा से कहा कि हे प्रभु! आपका जो यह बाल्य है उसने सर्वत्र वाटिका का विनाश कर दियाह है प्रभु अब क्या किया जाएं? राजा स्वतः उस वाटिका में पंहुचें और

वाटिका का विनाश हो गया। तो राजा ने कहा हे बाल्य! तुम मेरे राष्ट्र से दूरी हो जाओ, तेरा इस राष्ट्र में रहने का कोई अधिकार नही हैं ऐसा कहा जाता है कि अब उसे धिक्कारा तो देखो, बाल्य ब्रह्मणे कृत उन्होंने उस वाटिका को तयाग दिया और भयंकर वनों में चले गये। क्योंकि न तो राजा को मोह रहा है न देवी को मोह रहा है और न उस बाल्य को मोह रहा है न नगरी वालों को मोह रहा है। बेटा! जब निर्मोही हो गया तो उसने राष्ट्र को त्याग दिया और भयंकर वन में चले गये।

मेरे प्यारे! देखो, आत्मवेत्ता तो आत्मा में लीन रहते हैं, आत्म चिन्तन करते रहते हैं पुष्प् पत्र पा न कर लेना और पान कर लेने के पश्चात ब्रह्मणां ब्रव्हा कृतं देवः हिरण्यं रथं ब्रह्मे कृताः देवत्वां मेरे प्यारे! वेद की एक आख्यिका यह कहती है जो मानो भयंकर वनों में आत्मा में लीन हो रहा है, आत्म चिन्तन कर रहा है वह संसार की गणना में नही जी रहा है। वह विवेक और विडम्बना वृत्तियों में नष्ट हो गया है जिसका देखो, यह संसार नही वही तो आध्यात्मिक वेत्ता कहलाता है, आत्म चिन्तन करता है और वह तो भयंकर वन में हैं।

मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहां मनु वंश में जो अयोध्या में राज करते थे, महाराजा नहुष वह अपने चौथे पन का वृत्तियों में सर्वसम्पन्नता को प्राप्त हो गए। उन्होंने अपना ब्रह्मचर्य काल तो विद्यालय में व्यतीत किया और गृहाश्रम मानो राष्ट्रीय प्रणाली को नियुक्त करने लगे, वह राजकीय कार्यों से जब उपराम हुए तो उनका वह दूसरापन भी समाप्त हो गया, तीसरे पन में प्रवेश कर गए। वे तीसरे पन में जब आए तो उनका जो पुत्र था, बहु सन्तु राजा, वह उन्हें अपना राज दे करके महाराज नहुष ने कहा हे गो घृत मैं भयंकर वन में जा रहा हूँ मैंने यह श्रवण किया है कि महाराज! जड़ भरत एक आत्मवेत्ता हो गए हैं, मैं उनको निश्चित करके मैं भी तपस्या करने जा रहा हूँ। आत्मा में लीन रहना चाहता हूँ। राजा के पुत्र ने कहा प्रभु! जैसी आपकी इच्छा क्योंकि हमारी जब राष्ट्र प्रणाली इस प्रकार की नियमावली नियुक्त करती हे तो भगवन! आप जाईएं।

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा नहुष चार कहारों की पालिका में विद्यमान हो करके वहां से गमन करते हैं और भ्रमण करते हुए देखो, नाना ऋषि मुनियों का मिलन हुआ, नाना

जिज्ञासुओं का मिलन हुआ परन्तु वह किसी भी आभा में यह स्वीकार नही कर सके कि ये मेरे आध्यात्मिवादी हैं और आध्यात्मवाद का मुझे उपदेश दे सकते हैं। या मुझे यह साधक बना करके यौगिकता में परणित कर सकते हैं। महाराजा नहुष भ्रमण करते हुए मुनिवरों! जब भयंकर वन में पहुचें तो एक कहार पालिका का रूग्ण हो गया। जब रूग्ण हो गया तो महाराजा नहुष उन सेवकों ने महात्मा जड़ भरत जो वहां जड़वत की भांति मानो एक स्थली पर विद्यमान थे उन कहारों ने उन्हें लाकर के उस पालिका में जब नियुक्त कर दिया तो वह जड़ भरत जानते नहीं थे कि यह पालिका कैसे चलती है, कैसे इससे गमन किया जाता है वह कहीं ध्रुवा हो जाएं कहीं ऊर्ध्वा हो जाएं तो देखो, अमृतं राजा बड़े दुखित हुए। राजा को क्रोधाग्नि जागरूक हो गई और उसने कहारों से कहा कि मेरी पालिका को स्थिर करो। उनकी वह पालिका जब स्थिर हो गई उन्होंने दण्डे से महाराजा भरत को दण्डित करना प्रारम्भ किया। जब वह दण्डित करते रहे करने के पश्चात जब वह थकित हो गए, महाराज नहुष अपने आसन पर विद्यमान हो गए। महाराज जड़ भरत प्रभु से प्रार्थना करने लगा और वेदमन्त्रों के उद्गीत गाने लगा सम्भवे ब्रह्मणा स्वस्तं हे प्रभु! हे देव हे देवों के महादेव हे विष्णु तू पालन करने वाला है हे भगवन! तुम न्यायकर्त्ता हो आप न्यायकारी हैं हे भगवन! मैंने तो पूर्वले जन्म में हिरणी के बाल्य से मोह किया था, भगवन! और मैं मोह कके कारण कहां से कहां चला गया। हे प्रभु! जब मुझे मोह आया तो पिता ने मुझे धिक्कारा ऋषि मुनियों ने बहुत धिक्कारा परन्तु मेरा मोह ज्यों का त्यों बना रहा शरीर को त्याग दिया उस मोह के कारण माता के गर्भ में रहता हुआ माता के गर्भ से पृथक हो गया तो राजा ने मुझे अपने राष्ट्र से दूरी कर दिया कि मेरे राष्ट्र में तुझे रहना नह हैं मैं भयंकर वन में चला आया प्रभु हे भगवन! यहां ऐसे ऐसे राजाओं के मुझे दण्डित किया था जो मुझे इतना दण्डित किया है परन्तु जो मोह भी करते हैं क्रोध भी करते हैं कामा देखो, काम वृत्तियों में भी रत्त रहते हैं हे प्रभु! जब ये तेरे द्वार पर जाएंगें। तेरे न्यायालय में तो प्रभु!। आप कैसा न्याय करोगे? हे प्रभु! आप किस प्रकार उनको कर्म गतियों के न्याय में परणित हो जाएंगें? मोह के कारण ही जब मैं इस संसार में इतना दुखित हो गया हूँ हे प्रभु!

जो क्रोधी भी हैं ओर कामी भी रहे हैं शासनकर्त्ता भी हैं उनकी क्या गति होगी?

मेरे प्यारे! महाराजा नहुष ने कहा हे प्रभु! आप कौन हैं उस समय भरत ने कहा हे राजन! मैंने पूर्वलें जन्म में मोह किया था तो मेरी यह छषा हो गई ओर मैं प्रभु ये यह प्रार्थना कर रहा हूँ। कि ऐसे प्राणियों को क्या बनेगा जो क्रोधी भी हैं कामी भी हैं और जो मोह भी करने वाले हैं सब प्रकार के प्रपंचों में जो रत्त रहने वाला हैं प्रभु उनको न्यायालय में आप क्या न्याय देंगें। मैं यह प्रार्थना कर रहा हूँ। महात्मा भरत की वार्त्ताओं को श्रवण करने के पश्चात महाराजा भरत की वार्त्ताओं को श्रवण करने के पश्चात महाराजा नहुष ने कहा कि प्रभु आप कौन हैं उन्होंने कहा मेरा नाम भरत है उन्होंनेकहा कि क्या आप वही जड़ भरत हैं जिसका नामोकरण वायुमण्डल में क्या सर्वत्र पृथ्वी मण्डल पर हो रहा है आप तो धन्य है प्रभु मैं तो आपको मानो अपना स्वामी बनाने के लिए ओर गुरु बनाने के लिए आत्मवेत्ता के लिए मैं प्रार्थना कर रहा था ओर मैं हे भगवन! इसीलिए आया हूँ हे प्रभु! मुझे क्षमा करो ओर मुझे आप अपनी शरण में ले लीजिए। आप मुझे ज्ञान ओर विज्ञान की प्रतिभा वर्णन कराईए। हे प्रभु! मेरा उद्धार जब ही हो सकेगा ओर मैंने यह महापाप किया है जो आपको दण्डित किया है अपनी स्वार्थपरता के कारण हे प्रभु! अब आप ब्रह्मवेत्ता हैं मुझे क्षमा कीजिए। महात्मा भरत बोले कि हे राजन! आपका इसमें कोई दोषारोपण नही हैं यह तो मेरे भोगों की पराकाष्ठा कहलाती है। जो मैंने कर्म किया वह तो भोगना ही है मेरे अन्तःकरण में नाना जन्म जन्मान्तरों के जो संस्कार उदबुद्ध हो रहे हैं नाना संस्कारों को ले करके जो मैं गमन कर रहा हूँ मानो वे तो मेरे समीप आने ही हैं उन्होंने कहा राजन आप आध्यात्मिकवेत्ता हैं किसी आचार्य ओर महापुरूष की यदि आपको पिपासा बनी हुई है तो आप जाईएं किसी को आचार्य बनाईए ओर उनके चरणों की वन्दना कीजिए। मैं इस योग्य नही हूँ राजन।

मेरे प्यारे! देखो, महाराज नहुष ने कहा प्रभु! आप ही तो मेरे सहयोगी हैं क्योंकि मैंने तो संकल्प बद्ध हो करके ही अपने राज्य को त्यागा है ओर मैं आपकी शरण में आया हूँ प्रभु मुझे आप अपने से दूरी न कीजिए। हे प्रभु! मंगलं ब्रह्मे जैसे यह प्रकृति परमात्मा

से दूरी नही होती है, यह नाना प्रकार की आभा में रत्त रहती है, जिस प्रकार माता का पुत्र माता से दूरी नही होता है, जब तक वह जीता रहता है वह इस संसार में रहता है उसका नामोकरण बना रहता है और प्रणालियां भी इसी प्रकार की आभा में बनी रहती हैं हे प्रभु! मुझे क्षमा कीजिए। मेरे प्यारे! महाराजा भरत ने कहा मैं कौन हूँ स्वीकार करने वाला, क्योंकि परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है और वह अनन्तवान है मानो मैं उसका प्रार्थना करता रहता हूँ। ओर इसके पूर्वले काल में मेरा जीवन मोक्ष के निकट चला गया था और मैं मोह के कारण यहां आ गया हूँ प्रभु आप मेरे इस योग्य नही हैं ओर मैं आपके सुयोग्य नही हूँ। क्योंकि आप तो राज्य को त्याग करके आए हैं, किसी राजर्षि के द्वार पर जाओ ओर राजर्षि से जा करके कहो यह प्रश्न करो। कि मैं आत्मवेत्ता बनना चाहता हूँ। हे प्रभु! मेरे में इतनी क्षमता नही हैं क्योंकि मैं तो मानो अन्तरात्मा को निहारता रहता हूँ। ओर मेरे हृदय की यह पिपासा बनी हुई है कि अब मैं वहीं मोक्ष के द्वार पर चला जाऊं। जहां से मैं इस संसार में आ गया हूँ। मेरी अभिलाषा यही बनी रहती है। प्रभु क्योंकि प्रभु का जो ज्ञान विज्ञान है वह अनन्तमयी माना गया है। यहां प्रभु के राष्ट्र में नाना प्रकार के विचारक होते हैं कोई मानो आध्यात्मिकवेत्ता आत्मा के ऊपर विश्लेषण कर रहा है कोई मानो पृथ्वी विज्ञान में रत्त रहना चाहता है। कोई शब्द विज्ञान को जानना चाहता है, मानो कोई अपने में क्रियात्मक जीवन बना करके प्रभु के समीप जाना चाहता है। तो हे राजन! आप तो किसी ओर महापुरूष को लीजिए जो तुम्हारी पिपासा को पूर्ण कर सकें क्योंकि में तो स्वतः पिपासी बन गया हूँ। तो मैं तो पिपासी हूँ। ओर जो आपकी पिपासा को शान्त कर दे, तुम वहां चले जाओ। हे प्रभु! देखो, नाना प्रकार के ज्ञान ओर विज्ञान में रत्त रहने वाले ही महापुरूष कहलाते हैं हे राजन! अम्ब्रहे कृतं तुम वहां चले जाओ जहां अन्तरिक्ष की उड़ान उड़ने वाले ऋषि मुनि होते हैं जहां मानो अग्नि की धाराओं ओर ऊर्ज्वा पर विद्यमान हो करके द्यौ को प्राप्त कर लेते हैं तुम उस स्थली में गमन कर जाओ। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा जड़ भरत ने कहा कि मैं तो जड़ हूँ। और भतर मानो मुझे वह समाज कहने लगा है मैं तो जड़वत हूँ और जड़ के द्वारा मानो चेतना का वाहन नही

बन पाएगा। प्रभु मैं तो जड़वत हूँ और मैं जड़वत ही बनना चाहता हूँ। मैं इस संसार की दृष्टि में ज्ञान और विज्ञानवेत्ता नही बनना चाहता हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा नहुष बोले कि प्रभु मैंने ज्ञान और विज्ञान की बहुत सी उड़ाने उड़ी हैं क्योंकि हमारे यहां मैं राष्ट्रवेत्ता भी रहा हूँ और राष्ट्रवेत्ता के यहां नाना प्रकार का विज्ञान होता है और उस विज्ञान में मानो मैं भी रमण करता रहा हूँ। विज्ञान हमारे यहां नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों वाला रहा है। विज्ञान मानो एक एक शब्द के ऊपर यह सर्वत्र सृष्टि का चक्र चल रहा है। इस प्रकार का विज्ञान हमारे यहां हैं हे प्रभु! उस विज्ञान को आप त्यागिये मुझे तो अपने आध्यात्मिकवाद और उस प्रकाश में ले जाईएं जिस प्रकाश के लिए आप भी पिपासा बने हुए हैं और वह जो पिपासा है हे भगवन! मेरी भी पिपासा आप शान्त कीजिए।

मेरे पुत्रों! देखो, महाराज नहुष के यह शब्द श्रवण करते हुए महात्मा जड़ भरत ने कहा हे राजन! मैं इस योग्य नही हूँ मानो मैं तो अपने प्रभु में ही रत्त रहना चाहता हूँ मैं संसार में शिक्षा नही दे सकता। मैं संसार को नही जानना चाहता हूँ मैं संसार को अपने अन्तःकरण में समेटना चाहता हूँ मुनिवरों! देखो, महाराजा नहुष ने कहा हे प्रभु! आपका जो ज्ञान औेर विज्ञान हे वह भी मुझे नही चाहिए। भगवन! मुझे तो आध्यात्मिकवाद जो ये गतियां हो रही हैं जिससे आत्मा के समीप चला जाऊं मैं आत्मा के ही ज्ञान औेर विज्ञान में रत्त रहना चाहता हूँ। क्योंकि आत्मा प्रकाशक है आत्मा के न रहने पर ही यह शरीर शून्य गति को प्राप्त हो जाता है। प्रभु मुझे वह शून्यता नही चाहिए। प्रभु मैं यह जानना चाहता हूँ। क्योंकि आत्मा प्रकाशक है आत्मा के न रहने पर ही यह शरीर शून्य गति को प्राप्त हो जाता है। प्रभु मुझे वह शून्यता नही चाहिए। प्रभु मैं चाहता हूँ कि मेरी चेतना सदैव बनी रहे और उस चेतना को ही मैं जानना चाहता हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, उस समय महात्मा भरत ने कहा हे राजन! जब आत्मा स्वतः चेतना है और वह तुम्हारे अन्तःकरण में विद्यमान है, फिर चेतना का तुम भान क्यों करते हो? चेतना में क्यों रहना चाहते हो क्योंकि स्वतः तुम चैतन्य हो। उन्होंने कहा प्रभु! वह जो आवरण आ गया है, उसी आवरण को तो मैं नष्ट करना चाहता हूँ। जैसे आपका आवरण

नष्ट हो गया है। मेरे मानो जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों और मेरे राष्ट्र की क्रियाकलापों से मेरे अन्तःकरण में नाना प्रकार का आवरण आ गया है। उस आवरण को नष्ट कराना चाहता हूँ। आवरण को ही दूरी करना चाहता हूँ। जिससे मेरा स्पष्टीकरण मानो प्रकाश में मेरा अन्तर्हृदय चला जाएं, मैं ऐसा चाहता हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भरत ने कहा हे राजन! हे नियूषम्ब्रहे कृतं देखो, वह आवरण तो तुम्हारी वृत्तियों के कारण है और वह आवरण जब तुम परमात्मा के राष्ट्र में चिन्त करने करोगे और इस संसार में प्रकृतिवाद में परणित न होगे तो मानो तुम्हारे अन्तःकरण का जो प्रकाश है तुम्हारी जो मानवीयता है वह तुम्हारे में ही स्पष्टीकरणता को धारण करने लगेगी। देखो, उन्होंने कहा यह मैं जानता हूँ। आपने ही मुझे निर्णय करया है परन्तु आप ब्रह्मे मेरी अन्तरात्मा यह कहती है कि आप मुझे भगवन! ऐसा वृतद उत्पन्न कीजिए जिससे मरा वृत महान बन करके आपके चरणों की वन्दना करता रहे और मैं इस संसार सागर से पार होने के लिए प्रयास करता रहूँ।

मेरे पुत्रों! देखो, जब उन्होंने यह कहा तो महात्मा भरत मौन हो गए। और राजा वही विद्यमान हो गए। मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है कि बारह वर्ष हो गए महात्मा नहुष भी विद्यमान हैं और महाराजा जड़ भरत भी जब मौन धारण कर लिया तो वे कोई वार्त्ता एक दूसरे में प्रगट नहीं कर रहे थे वे दोनों ही प्रभु की सृष्टि को निहारने लगे। महात्मा जड़ भरत जब हृदय में उद्गीत गाने लगे कि हे प्रभु! मैं अपनी इस स्थली से उपराम होना चाहता हूँ मुझे वह मोक्ष कब प्राप्त होगा। मैं इस संसार को दृष्टिपात करना ही नही चाहता मैं तो आप के उस संसार में ही दृष्टिपात करता रहता हूँ निहारात रहता हूँ हे प्रभु! जब मेरी इच्छा बन गई कि मैं जब आपके समीप जाना चाहता हूँ हे प्रभु! मैंने ममता को अब त्याग दिया है और मेरा वह संकल्प समाप्त हो गया है मेरा वह संकल्प मानो महानता को प्राप्त हो गया हैं ब्रह्मे आप लोकां आपं रुद्रो आपं ब्रहे कृतं हे प्रभु! मुझे आप ही आप दृष्टिपात ओते हैं रुद्र भी आप हैं मानो चेतना में रत्त रहने वाले हैं हे प्रभु! आप तो महान चेतनित हैं, मुझे भी चेतना के क्षेत्र में ले जाईएं जहां मैं चेतना से जड़वत को प्राप्त हो गया था मैं जब जड़वत नही रहना चाहता मैं चेतना में

रत्त रहना चाहता हूँ हे प्रभु! आपका एक एक परमाणु गमन कर रहा है एक एक लोक लोकान्तर मानो आपकी सूत्र में पिरोया हुआ है प्रभु और यह जो लोक लोकान्तर मानो आपकी सूत्र में पिरोया हुआ है प्रभु और यह जो लोक लोकान्तरों की एक माला बनी हुई है हे प्रभु! मुझे भी माला बना करके अपने में धारण कर लो। हे प्रभु! मैं मानो माला का एक मनका बनना चाहता हूँ जैसे आपने सूर्य को एक महना बनाया है। एक मनका चन्द्रमा है एक बृहस्पति मनका है एक मानो आरूणि मण्डल मनका है ऐसे ही एक ध्रुव मनका है और इसकी माला बन करके मानो ये मनके आप सूत्र रूपी आप में पिरोऐ हुए हैं। आप ही तो उनके सूत्र बने हुए हैं। ये तो केवल मनके है और मनके ही आप में पिरोऐ जाते हैं तो उस माला को आप ही तो धारण कर रहे हैं, इन्हें धारयामि बनाएं हुए हो। हे प्रभु! मैं भी आपकी माला का एक मनका बनना चाहता हूँ

मेरे प्यारे! देखो, महाजा जड़ भरत इस प्रकार अपनी उपासकना करते हुए देखो, नेत्रों से अश्रुपात हो रहे हैं वाणी मानो अपनी स्थलियों में वाणी नही रही, घ्राण इन्द्रिय अपने में सुगन्ध से वंचित होने लगी है। नेत्र दृष्टि से वंचित होने लगे हैं देखो, हृदय में हृदय को समेटना चाहता हूँ यही तो आध्यात्मिक और उपासना का एक मूल कहलाता है जिसके ऊपर बेटा! ऋषि मुनि परम्परागतों से अन्वेषण करते रहते हैं। अनुसन्धान करते रहते हैं उस अनुसन्धान की बेला में यह ब्रह्माण्ड उनके लिए खिलवाड़ है और यह ज्ञान और विज्ञान को त्याग करके आध्यात्मिकवाद में आध्यात्मिकवेत्ता बन करके अपने में रत्त हो रहे हैं। तो आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नही आया हूँ। विचार केवल यह कि वे परमपिता परमात्मा अनन्तवान है और उनका ब्रह्माण्ड भी अनन्तवान में देखो, सर्वत्र यह ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है और यह ब्रह्माण्ड को साधना करने वाला प्राण और अपान में रत्त हो करके उसको अपने में दृष्टिपात कर लेता है।

तो आओ मेरे प्यारे! आज का विचार क्या कह रहा है। आज बेटा! मैं बहुत दूरी चला गया हूँ अपने विचार देते हुए। मेरे प्यारे! जैसे ही उनका अनुष्ठान समाप्त हुआ, उसी अनुष्ठान की उपासना को और उसके पश्चात जो उनके उदगार थे उनको श्रवण करते हुए महाराजा नहुष उनक चरणों में आलींगन हो गए। और वे चरणों की वन्दाना करने

लगे। महात्मा भरत भी मौन हैं, राजा भी मौन हैं देखो, प्रभु में प्रभु की उपासना करते हुए महाराजा नहुष ओर वे जड़भरत देनों एक दूसरे में प्रभु के उपासक बन गए। तो यह विचार क्या रहा है? विर यह कह रहा है कि मानव आध्यात्मिकवेत्ता बनने के लिए नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहता है ओर उसे अनुष्ठान करने चाहिए। अनुष्ठान उन्हें कहते हैं जो मानो अपने में कटिबद्ध हो जाता है जैसे वृष्टि होती है ओर वह वृष्टि भी मानो अपनी एक स्थली पर विद्यमान है ओर वृष्टि में ही अपने को कटिबद्ध कर लेता है इसी प्रकार जो मानव प्रभु की साधना में इतना रत्त हो जाता हो जाता है कि अंग संग में मानो उसी को दृष्टिपात करता है प्राणों में अपान में, व्यान में समान में उदान में वही रत्त रहने वाला है उसके ये भिन्न भिन्न प्रकार के स्वरूप उसे दृष्टिपात आते हैं ओर उन्हीं को एक एकता में अनेकता ओर एकता को अपने में धारण करता रहता है वही बेटा! व्यष्टि ओर समष्टि में प्रवेश कर जाता है। और व्यष्टि को समष्टि में ले जाना ही बेटा! ब्रह्माण्ड है ओर समष्टि को व्यष्टि में ले जाना ही संसार हैं वही मोह है वही देखो, क्रोधाग्नि जागरूक होती रहती है तो यह है बेटा! आज का वाक्।

आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हे मानव! तू संसार में मोह ममता में इनता रत्त न हो जिससे मोह ममता मानो तेरे नाना जन्म जन्मान्तरों के संस्कारां का मूल बनता रहे तू सदैव अपनी ममता में इतना रत्त न हो। हे मानव! तू अपनी आत्मा से ही ममता को धारण कर आत्मा को ही आत्मतत्व रमण करने वाला बन जिससे तेरा आत्मोद्धार हो जाएं। तो यह है आज का वाक् आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः क्या कि जड़भरत ओर महाराजा नहुष की आत्म चर्चायें होती रहती, आत्मा में वे सदैव लीवन रहने का प्रयास करते। वे अब पुनः से अपनी एक पहरी दूसरी पहरी पर जाना उन्होंने प्रारम्भ किया जैसे ओ३म् भू भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम ये सात प्रतियां पहरियां कहलाती हैं ओर इन्हीं सात प्रतियों के उपरान्त प्रभु का अन्वती दर्शन हो जाता है विचार आता रहता है कि वह मोक्ष के निकट जाना प्रारम्भ कर देता है ओर अपने में ही अपनेपन को वह रत्त हो जाता है आज का विचार क्या? हम अपने में महान बनने के लिए मानो अपने में ममता में क्रोधाग्नि में न परणित हो जाएं और हम मोह

में इतने घनिष्ट न चले जाएं जिससे वे हमारी मृत्यु व अज्ञान का कारण बन जाएं। इसीलिए हे मानव! तू ज्ञानी है, परमात्मा ज्ञानियों का भी ज्ञानी है क्योंकि परमात्मा ज्ञानी है तो तुम्हें भी ज्ञानी बनना चाहिए परमात्मा विज्ञानवेत्ता है तो तुम भी विज्ञानवेत्ता बनो परमात्मा अकाय है तो मानो एक चेतना है तुम भी चेतना में रत्त हो जाओ। बेटा! प्रभु निरभिमानी है मानव को भी निरभिमानी बन करके रमण करना चाहिए। परमात्मा मोह नही करता, इसीलिए परमात्मा के समीप जाना है तो मोह को तुम्हें त्यागना होगा। परमात्मा को कभी क्रोध नही आता, इसीलिए मानव तुम्हें भी क्रोधाग्नि को और अभिमान को तग करके जाना होगा। वह प्रभु निरच्छा है मानव को इच्छा में नही रहना चाहिए। हे मानव! तुम्हें निरइच्छित हो करे परमात्मा के राष्ट्र में गमन करना है यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट कर सकूंगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः हमारा यह है कि वे परमपिता परमात्मा अनन्तवान हैं और उसका क्रियाकलाप भी अनन्तवान है हे मानव! तू इस पर विचार विनिमय कर। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा।

१५ 14 04 1990 पुष्प 62 पृथ्वी की नाभि याग

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते रहते है। क्योंकि वह वेदमन्त्र अपने में बड़ा अद्बितीय माना गया है। और जितना भी संसार की प्रतिभा अथवा ज्ञान और विज्ञान वह अपने में सदैव मानो रत्त रहा है, और प्रत्येक मानव अपने में मानवीयता को चाहता रहता है। और ये विचारता रहता है कि मेरा मनस्तव एकाग्रित हो करके परमपिता परमात्मा के अमूल्य क्षेत्र में प्रवेश हो जाएं, परन्तु यहाँ वेद का मन्त्र ये साधना की प्रेरणा दे रहा है, वहीं वेद का मन्त्र कहता है यज्ञं भवि ब्रह्मणां ब्रहा वेद का मन्त्र कहता है कि मानव को अपने में याज्ञिक बनना चाहिए। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा तो सर्वत्र याग

में परणित रहने वाले हैं। और हमारे ऋषि मुनियों ने, वेद के सम्बन्ध में, अन्वेषण किया। और नाना प्रकार का अपना विचार देते हुए कहा है, कि सम्भव ब्रह्मणा सम्भव व्रीति देवाः कि वे परमपिता परमात्मा एक अनूठा है, और ये संसार रूपी जो एक यज्ञशाला है, बेटा! ये एक महानता में गमन करती रहती है।

बेटा! जब ऋषि मुनि अपने में विद्यमान हो करके अपने में यह विचार विनिमय करने लगे कि याग क्या है? तो आचार्यों ने कहा कि यागां ब्रह्मणां ब्रहे नाभ्यां क्या यह जो याग है, यह नाभि है, मानो यह पृथ्वी की नाभि कहलाता है। जब आगे ये उनसे प्रश्न किया गया कि महाराज! ये याग क्या है? उन्होंने कहा कि यह ब्रह्माण्ड की नाभि कहलाती है। मेरे प्यारे! देखो, जब यह कहा गया, कि यज्ञं भवितं कि महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज और नाना ऋषियों के मध्य में ये प्रसंग आता रहता है, और विद्यार्थी जन ब्रह्मचारी ये प्रश्न करते रहते थे क्या भगवन! नाभि क्या है? तो उन्होंने कहा नाभि उसे कहते हैं जब मध्यं भुवः ब्रहे कृतं मानो जो मध्य में रहने वाली, उसका नाम नाभि है। जैसे माता के शरीर में नाभि है, और नाभि से ही मुनिवरों! देखो, सर्व स्रोत बह रहा है। और इसी प्रकार यह जो ब्रह्माण्ड की नाभि पृथ्वी है और पृथ्वी के ऊपर मानव अन्वेषण करता रहता है और अन्वेषण करता हुआ, और नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों को मापने लगता है। तो मेरे प्यारे! देखो, नाभि अमृतं पृथ्वी ये पृथ्वी नाभि कहलाती है। परन्तु देखो, याग नाभि ब्रह्माण्ड की है, याग उसे कहते हैं, जहाँ जो भी ब्रह्माण्ड में अथवा सुक्रियाकलाप हो रहा है, और वह जो क्रियाकलाप उसका नाम नाभि कहलाता है। मानो देखो, नाभ्यां भवितं ब्रह्मा ये ब्रह्माण्ड की नाभि है, और ये मानो देखो, यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, बेटा! अपने में बड़ा अद्वितीय क्रियाकलापों में सदैव तत्पर रहा है। आचार्यों ने बेटा! अपनी स्थलियों में विद्यमान हो करके, याग के ऊपर अन्वेषण किया, कि ये जो ब्रह्माण्ड है, यह परमपिता परमात्मा का यज्ञोमयी स्वरूप का नृत्त हो रहा है। अथवा अपने में क्रियाकलाप हो रहा है, ये पञ्च महाभूतों की प्रतिभा अथवा उनके उग्रतव आने पर ही मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार के रूपों में रचना हो जाती है।

और उसी रचना के आधार पर, ऋषि मुनि अपने में विचार विनिमय करते रहे हैं। बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है मैंने तुम्हें पुरातन काल में भी इन वाक्यों के ऊपर अपना विचार दिया। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि, बहुत समय से शाकल्य मुनि की चर्चा कर रहा था, और महर्षि शाकल्य मुनि महाराज ने जब महाराजा नहुष को उपदेश दिया, तो महाराज नहुष ने यह कहा कि यज्ञं ब्रव्हा कृतं क्या जब तुमने अपने गृह को त्यागा, तो तुमने नाभि को दृष्टिपात किया। जब महात्मा भरत ने ये कहा कि तुमने नाभि को दृष्टिपात किया तो वह बोले कि प्रभु! मैंने किया है उन्होंने कहा नाभि क्या है? उन्होंने कहा यज्ञां भूतं ब्रह्मणा देखो, याग ही नाभि कहलाती है। तो मानो देखो, स्वाहा उच्चारण कर रहा है, वह मानो देखो, ब्रह्माण्ड की नाभि बन करके रहता है। तो इसीलिए देखो, नाभ्यां ब्रह्मणा, जब ये उन्होंने बेटा! प्रसंग को लिया तो महाराजा जड़ भरत बड़े प्रसन्न हुए, उन्होंने कहा प्रभु! चलो आज यहाँ से गमन करते है। और भ्रमण करते हुए याग में परिणत होंगें। तो मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, महर्षि मानो देखो, महात्मा जड़ भरत और उनके प्रियतम राजा महाराजा नहुष, उनका नामोकरण उन्होंने किया। और नामोकरण के पश्चात उनका नामोकरण मानो देखो, मृचिका, उन्होंने निहित किया। तो महर्षि मृचिका और मुनिवरों! देखो, महात्मा भरत वहाँ से गमन करते हैं, और भ्रमण करते हुए मुनिवरों! देखो, वह वैशम्पायन का, एक आश्रम था निकटतम, उस आश्रम में पंहुचें। तो महर्षि वैशम्पायन ने, उनको आसन दिया, और वह विराजमान हो गएं। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा ने देखो, महर्षि वैश्मपायन ने उनके नेत्रों से उनके क्रियाकलापों से यह जान लिया, कि यह तो पूरबले जन्म के शाकल्य मुनि है। तो मोक्ष के निकट चले गएं थे, और यह पुनः विवेकी बन गएं। मानो देखो, उन्होंने कहा कि चरणं ब्रहे हे ऋषिवर! अब तो आप साधक बन गएं हैं पुनः से, और मोक्ष के निकटतम जाना चाहते हो यह बड़ा हर्ष का विषय है। तो महात्मा जड़ भरत ने कहा कि मैं आत्म तत्त्व में अभी इतना नहीं पंहुच पाया हूँ, कि जितना मैं मानो गतिवान हो गया था। वह महर्षि वैशम्पायन बोले कि ऐसा तो अभी मानो देरी लगेगी, परन्तु तुमने अपनी पगडण्डी को अपना लिया है। इस पगडण्डी पर गमन करने वाला, कोई मानो साष्टांग मानो

परणित हो ही जाता है। अथवा अपने इस स्थितियों पर रत्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा ब्रह्मणे हम देखो, वहाँ जाना चाहते हैं। जहाँ महर्षि शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ, नाना प्रकार का अध्ययन होता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वैशम्पायन बोले, कि चलो भगवन! मैं भी आपके सहित गमन करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, वहाँ से उन्होंने प्रस्थान किया, और वह भ्रमण करते हुए, मुनिवरों! देखो, महर्षि अगस्त मुनि महाराज का आश्रम उन्हें प्राप्त हो गया, तो महात्मा अगस्त के द्वार पर पंहुचे। और तो महात्मा अगस्त मुनि महाराज उस समय मानो देखो, हृदय रूपी यज्ञशाला में लगे हुए थे, तो उन दोनों ने बेटा! त्रिवर्णनं ब्रह्मा उन तीनों में ऋषियों के चरणों की वन्दना की और महात्मा अगस्त से कहा कि कहो भगवन! आप कहाँ परणित हो रहे हैं। उन्होंने कहा देखो, मैं हृदय रूपी यज्ञशाला में याग कर रहा हूँ। उन्होंने कहा हृदय रूपी यज्ञशाला किसे कहते हैं? उन्होंने कहा हृदय रूपी यज्ञशाला उसे कहते हैं जहाँ प्रत्येक इन्द्रियों के साकल्य को एकत्रित किया जाता है। मानो जहाँ देखो, रसना से रसों का साकल्य और त्वचा से प्रीति का साकल्य घ्राण इन्द्रियों से मध्य सुगन्ध का साकल्य ओर श्रोत्रों से शब्दों का साकल्य और नेत्रों से मानो अप्रतं रूप का साकल्य मैं एकत्रित कर गया हूँ और यह जब मैंने एकत्रित कर लिया है, तो इसको वेश्यं ब्रह्मा मानो देखो, इसका साकल्य बना करके हृदय रूपी यज्ञशाला में मैं प्रवेश हो गया हूँ, और मैं मानो याग कर रहा हूँ, हृदय रूपी यज्ञशाला में, मैं हृदय में ही तो साकल्य निहित होता है, जैसे एक मानव देखो, रूप को दृष्टिपात करता है, क्योंकि नेत्रों का देवता अग्नि है, और अग्नि का जो मौलिक गुण है, वह रूप है, वही मुनिवरों! देखो, उसकी स्थिति कहाँ? हृदय में हो जाती है। मानो देखो, शब्द और श्रोत्र जिससे वह शब्द श्रवण किया जाता है, और उसका जो देवता है वह दिशाएं कहलाती है। परन्तु सर्वत्र दिशाएं, देखो, समाहित हो करके, समावेश हो करके उनका साकल्य बन करके, मानो देखो, शब्द की स्थिति भी मानव के हृदय में निहित रहती है। इसी प्रकार, मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने कहा सम्भव ब्रहे नेत्राणिं गच्छतं ये जो नेत्र हैं, इनका देवता अग्नि है, मानो देखो, ये नेत्र अग्नि के स्वरूप में रूप को दृष्टिपात करते रहते हैं और उनका साकल्य

क्या मानो देखो, उसकी स्थिति भी हृदय में हैं। अरे, रूप और रस गन्ध इत्यादि यह सब हृदय से ही तो मानव उद्गीत गाता रहता है। आज मुझे मेरे हृदय को प्रियता को प्राप्त नही हुआ है, और न ही मुझे मेरे यह नही लगा ऐसा मानव कहता रहता है कि परन्तु देखो, मैंने इस पञ्चीकरण साकल्य को ले करके, मैंने एकत्रित किया, उसका साकल्य बना करके, और उसे हृदय रूपी यज्ञशाला में मैं हूत करना चाहता हूँ। मानो यही प्रसंग ले करके और मेरा हूत नही हो रहा है, उसी हूत के लिए मैं आज देखो, महर्षि उद्दालक गोत्र में मैं प्रवेश करना चाहता हूँ मेरे प्यारे! देखो, वहाँ से उन्होंने गमन किया और वह मुनिवरों! देखो, महर्षि अगस्त मुनि महाराज ने भी उनके समीप प्रस्थान किया। क्या महाराज! मैं भी इसे जानना चाहूँगा तुम्हारी तो उत्कट इच्छा केवल मिलन की है, मेरे हृदय में एक ग्रन्थि लगी हुई है, उसे मैं स्पष्टीकरण करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि भारतं ब्रहे मुनिवरों! देखो, महर्षि वैशम्पायन और महर्षि मृचिका और महात्मा जड़ भरत और मुनिवरों! देखो, मंगलं ब्रहे कृतं देवत्वां ब्रह्मे महात्मा देखो, अगस्त मुनि महाराज, इन्होंने यहाँ से भ्रमण किया, और भ्रमण करते हुए, मुनिवरों! देखो, महर्षि उद्दालक गोत्र में पंहुचे। क्योंकि हमारे यहाँ उद्दालक गोत्र बड़ा विज्ञानवेत्ताओं का माना गया है। बेटा! जहाँ भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान दोनों को मापा गया है, तो मुनिवरों! देखो, जब उनके द्वार पर पंहुचे, तो उनकी पत्नी रम्भेश्वरी ने और महर्षि शिकामकेतु उद्दालक ने उनके चरणों की वन्दना की, वह अतिथि थे, और अतिथि के होने से मानो ऋषि भी थे, और ब्रह्मवेत्ता भी कहलाते थे, जो सदैव ब्रह्म के ऊपर ही चिन्तन करते रहते थें। मेरे पुत्रों! जब वह अमृतं उनका स्वागत किया, मानो कुछ कन्दमूल लाए, और कन्दमूलों के द्वारा यज्ञ जल इत्यादि से उनका स्वागत किया, वह बड़े प्रसन्न हुए और प्रसन्नचित हो करके बोले कि सम्भूति ब्रह्मणे वृतं हे ब्रह्मवेत्ताओं कैसे तुम्हारा आगमन हुआ है उन्होंने कहा कि हे प्रभु! हम इसीलिए आए हैं, क्या हम मम ब्रहे कृतं देवत्वां ब्रह्मा हे प्रभु! मैं एक याग कर रहा हूँ, सबसे प्रथम महर्षि अगस्त मुनि महाराज ने, ऋषि से यह प्रश्न किया क्या महाराज! ये बहुत समय से याग कर रहा हूँ, और मैं हृदय के साकल्यों को तो जान गया हूँ, परन्तु साकल्य जब हृदय में समाहित

हो जाता है। जब मैं उसका हूत कर लेता हूँ, तो उसकी क्या गति होती है, यह भगवन! मैं नही जान पाया हूँ। और मैं इसीलिए आपके चरणों की वन्दना कर रहा हूँ, कि मेरे मानो हृदय में मानो ग्रन्थि लग गई है, मानो देखो, उसका भी स्पष्टीकरण किया जाएं, मेरे पुत्रों! देखो, महात्मा अगस्त ने, जब ऐसा कहा, तो महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि बोले कि भगवन! आप इतने समय से साकल्य बना रहे हो। उन्होंने कहा प्रभु! मुझे बहुत समय हो गया और मैं साकल्यों को तो जान गया हूँ मानो देखो, मानो देखो, इनकी स्थिति सब हृदय में समाहित हो जाती है। वह हृदय का धर्म और मनोवृत्तियां कहलाती है, तो हे प्रभु! मैं ये और जानना चाहता हूँ, कि इसकी स्थिति क्या हो जाती है? मेरे प्यारे! देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि ने कहा कि हे प्रभु! अमृतां दिव्यां ब्रह्मणे लोकां वायु सम्भवा ब्रह्मा वर्तो मेरे प्यारे! देखो, महात्मा अगस्त मुनि महाराज के प्रश्नों के द्वारा शिकामकेतु उद्दालक ने कहा है क्या हे भगवन! हे ऋषिवर! हे ब्रह्म को जानने वाले ब्रह्मनिष्ठ! मानो देखो, उनके हृदय की जो स्थिति है, वह मानो जब आघात मानो विवेक में हृदय में प्रवेश हो जाता है, तो हृदय से हृदय का मिलान होता है, और वह हृदय दूसरा हृदय क्या है? मानो परमपिता परमात्मा का जिज्ञासु का हृदय एक ऋषि का हृदय और परमात्मा के हृदय का दोनों का दोनों का मिलान होता है, और वह जो स्थिति है, मानो वह जो मानो प्रकाश की स्थिति है, और वह राष्ट्र की स्थिति है, क्योंकि परमात्मा का राष्ट्र सार्वभौम कहलाता है, मानो देखो, विश्वभान कहलाता है। इसी प्रकार मनं प्रमाणं ब्रहे मानो देखो, ऋषि ने कहा है कि हम परमात्मा में स्थित हो जाएं, मेरे प्यारे! देखो, महात्मा अगस्त मुनि महाराज का हृदय, मानो उनकी वार्त्ताओं से मुनिवरों! देखो, सन्तुष्ट हो गया, उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! परमात्मा के हृदय का मानव के हृदय का जहाँ समावेश हो जाता है, वहीं तो उत्पति का मूल बनता है। और वहीं एक जगत अपने में स्थित हो जाता है। ऐसा बेटा! देखो, ऋषि ने वर्णन किया, महात्मा अगस्त मुनि महाराज तो शान्त हो गएं, और मुनिवरों! देखो, महात्मा भरत ने एक प्रश्न किया, क्या महाराज! देखो, यह जो ऋषि है, इन ऋषि के हृदय में मानो एक शंका और मानो देखो, ग्रन्थि लग गई है, और एक जिज्ञासा है मेरे प्यारे! देखो, महात्मा

शिकामकेतु उद्दालक ने कहा क्या हे भरत! तुम्हारे हृदय में तो कोई ग्रन्थि नही हैं, क्योंकि आप तो जन्म जन्मान्तरों में देखो, ग्रन्थियों का स्पष्टीकरण करते चले आए, हो तुम्हारे हृदय में तो कोई ग्रन्थि नही हैं। उन्होंने कहा नही प्रभु! तो उन्होंने कहा तुम जिज्ञासा अपने में क्यों प्रगट कर रहे हो? इसको जिज्ञासा हो, वह मेरे से प्रश्न कर सकता है। महात्मा जड़ भरत बेटा! अपनी आत्मा में लीन हो गएं, वह तो आत्मा का चिन्तन करने लगे, परन्तु देखो, वह उन्होंने नही यह प्रश्न किया, जिज्ञासा प्रगट की, मेरे प्यारे! उन्होंने कहा प्रभु! मैं इससे पूर्व काल में मानो देखो, मैं अपनी उपाधियों से अलंकृत है, जो राष्ट्रीय उपाधि मेरा नामोकरण महाराजा नहुष है और इन्होंने मेरा नामोकरण मेरे पूज्यपाद ने मानो देखो, मेरा नामोकरण देखो, मेरे जीवन का देखो, शरीर का परिर्वतन किया है, उसी परिवर्तन के आधार पर मैं मानो अपना उद्गीत गा रहा हूँ, उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। तो उच्चारण करो तो मैं इनके चरणों में विद्यमान हो करके, तो इन्होंने मुझसे प्रश्न किया था क्या तुम्हारी नाभि क्या है? मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने कहा प्रभु! जब उन्होंने कहा प्रभु! मैं नाभि को जानना चाहता हूँ मेरे पुत्रों! देखो, शिकामकेतु उद्दालक ने कहा, कि कौन सी नाभि को जानना चाहते हो? उन्होंने कहा जिस नाभि से, मानव को अमृत प्राप्त होता है उस नाभि को जानना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा देखो, इस नाभि को तुम जानना चाहते हो, वह मध्य में रहती है, और मध्यानं भू वर्णानं ब्रह्मे कृतं मानो देखो, मध्य में रहने वाली नाभि है, उस नाभि को जानने के लिए तुम आए हो, और यह नाभि अमृतं कहलाती है मानो जिससे अमृत प्राप्त होता है। सबसे प्रथम नाभि से मानव का जीवन है, माता के शरीर में एक नाभि है और नाभि के द्वारा रसों का स्वादन होता है, बाल्य की नाभि और माता की नाभि का एक ही समन्वय होता है तो वहाँ अमृत प्राप्त होता है। तो माता की नाभि और अपनी नाभि अपने में ही मानो देखो, रसों का स्वादन करते रहते हैं। और एक नाभि वह कहलाती है, जो मानो देखो, परमपिता परमात्मा के आंगन में ब्र्व्हे देखो, ब्रह्माण्ड की नाभि यह जो पृथ्वी है, यह ब्रह्माण्ड की नाभि है, क्योंकि जब भी वैज्ञानिक जन, अपने में देखो, गतिवान होते हैं, परमात्मा के

देखो, इस विज्ञान में रत्त होना चाहते हैं, तो उसी समय नाभ्यां भवितं ब्रह्मणे कृतं वह नाभि के ऊपर अन्वेषणा करते हैं, और देखो, वह अपने में नाभ्यां ब्व्हे मानो देखो, विज्ञानवेत्ता जब आता है तो वह पृथ्वी को जानता है क्योंकि पृथ्वी के गर्भ में, नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थ होने से ही, देखो, मानो देखो, वह नाभि अप्रतं वह नाभि बन करके वह यज्ञशाला कहलाती है, यज्ञ के द्वारा देखो, नाना प्रकार की सुगन्धियां उत्पन्न होती है, और वह सुगन्धि भी वायुमण्डल में ऊर्ज्वा में प्रवेश होती हैं। और वही तरंगें मानो देखो, पृथ्वी के गर्भ में नाभ्यां ब्रहे नाना प्रकार की तरंगों में तरंगों का मिलन होता रहता है, और वही मानो देखो, नाभि कहलाती है। जिससे ज्ञान और विज्ञानवेत्ता मानव बन जाता है। और विज्ञान में रत्त हो करके अपनी आभा में परणित हो जाता है। तो मुनिवरों! देखो, विचार आता रहता है, वेद का मन्त्र कहता है, नाभ्यां ब्रह्मे मुनिवरों! देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्दालक ने कहा क्या ये नाभि है, और यज्ञ की एक नाभि और है, मानो जिसे अग्नि कहते हैं, जो देवताओं की नाभि कहलाती है, देवां भूतं देवत्वां ब्रह्मणे मेरे प्यारे! देखो, अग्नि में जब यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके और हूत करता है अग्नि को समर्पित करता है तो यही अग्नि बेटा! देवताओं की नाभि कहलाती है। देवताओं का मुख कहलाता है। जैसे बाल्यकाल में नाभि के द्वारा रसों स्वादन होता रहता है, इसी प्रकार बाह्य जगत में मानो देखो, इस नाभि से, यह जो अग्नि है, यह मानो देखो, देवताओं का मुख कहलाती है, जहाँ नाभि है, वहीं देवताओं का मुख है, हूत कर रहा है, और हूत करके वही मुनिवरों! देखो, देवताओं को प्राप्त होता है, जब पृथ्वी को प्राप्त होता है, तो ये नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बन जाती है, और यह नाना प्रकार के व्यंजनों से रत्त हो जाती है, और रत्त हो करके बेटा! नाभि बन करके, ये नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बन करके, देवता जागरूक हो जाते हैं। और उसी देवतव को प्राप्त हो करके मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मणे व्रतं अमृतं जिस नाभि से देखो, हम ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ने लगते हैं। और परमात्मा के अमूल्य जगत को दृष्टिपात करने लगते हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेषता में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, विचार केवल ये प्रगट कराना चाहता हूँ, क्या नाभ्यां ब्रह्मणे कृतं मानो देखो,

उस समय महाराजा नहुष ने वह ग्रन्थि स्पष्टीकरण हो गई, और उन्होंने कहा उसका समन्वय, नाभि से समन्वय हो जाता है परमात्मा की नाभि से अमूल्य मानो देखो, उसका समन्वय हो करके, अपने में धारयामि बन जाता है। तो विचारता रहता है तो नाभि अमृतं वही परमपिता परमात्मा सर्वत्र नाभि है। वह मानो चेतना में बद्ध है। यज्ञमयी स्वरूप है, तो मेरे पुत्रों! देखो, यज्ञं ब्रह्मणा देखो, याग ही संसार की नाभि कहलाता है, ब्रह्माण्ड की नाभि है, जहाँ से मुनिवरों! देखो, चंहुमुखी तरंगें तरंगित हो करके, और वायु मण्डल में प्रवेश हो करके, द्यौ को प्राप्त हो जाती है, और वह मानव का चित्र मानव के शब्द और मुनिवरों! देखो, मानव का जो क्रियाकलाप है, वह अग्नि की धाराओं पर, मानो देखो, देवतव को प्राप्त हो करके द्यौ में प्रवेश हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, शिकामकेतु उद्दालक ने, यह जब अपना निर्णय दिया, तो वह बड़े प्रसन्न हुए, तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कहो हे महात्मन भरत! आप तो जड़ भरत हैं, आप तो जड़ की भांति रहते हैं संसार में और ब्रह्म विद्या में लीन रहते हैं, हे प्रभु! आपकी कोई जिज्ञासा हो तो महात्मा जड़ भरत ने कहा प्रभु! मुझे जिज्ञासा नही होती हैं, मैं मानो देखो, अपने में जिज्ञासा का समाधान कर लेता हूँ, यदि कोई होती भी है, तो मैं अपने में समाधान कर लेता हूँ, मुझे तो प्रभु! मोह हो गया था, और मोह के कारण मैं कहाँ चला गया। मानो देखो, प्रवृत्तियों में रत्त हो गया हूँ, **मेरे पुत्रों! देखो, महात्मा ने कहा हे राज ब्रहे हे महात्मन! हे आत्म ब्रह्मे! तुम तो आत्मा में लीन पुनः हो जाओगे, परमात्मा में तुम्हारी स्थिति हो जाएगी, और मानो तुम मानो देखो, बहुत काल में कल्प कल्पान्तरों में रमण करते हुए, मानो तुम परमात्मा के आनन्द में पुनः चले जाओगे** मेरे प्यारे! देखो, जब यह ऋषि ने पुनः वाक् प्रगट किया, तो उसकी शंकाओं का निवारण हो गया और देखो, हृदय में जो ग्रन्थि होती है, उसका स्पष्टीकरण होना बहुत अनिवार्य है। अब मैं अपने विचारों को विराम दे रहा हूँ, अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें।

पूज्य महानन्द जी

ओ३म् देवाः हिरण्यं रथां विश्वा रूपं ब्रहौ कृताः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! और मेरे भद्र

ऋषि मण्डल! अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे, मानो कई समय से उनका आवागमन और अगले जन्म के ऋषि की चर्चा कर रहे थे, और वह चर्चा कितनी भव्य है जीवन मानव का कहीं का कहीं चला जाता है। और मानव के जीवन में नाना प्रकार के ध्रुवा और ऊर्ध्वा में गमन करने की प्रवृत्तियां उत्पन्न होती रही हैं। आज मैं विशेषता में नही जहाँ हमारी यह वाणी जा रही है, वहाँ एक याग का आयोजन हुआ, क्योंकि यह जो काल है, वर्तमान का ये वाममार्ग काल कहलाता है। वाममार्ग उसे कहता हूँ, जब बहुतायात में, और राष्ट्र में जब वाममार्ग की प्रतिक्रिया आ जाती है। तो मानवीयता का ह्रास होना प्रारम्भ हो जाता है। तो उसको हमारे यहाँ वाममार्ग काल कहते हैं जो उल्टे मार्ग पर गमन करने वाला है इसीलिए मैं इस सम्बन्ध में कोई चर्चा नही करूंगा, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे सूक्ष्म सा समय दिया, उसमें केवल यही है, कि मेरा जो अन्तर्हृदय है, वह यज्ञमान के साथ रहता है। यज्ञमान के जीवन का सौभाग्य सदैव अखण्ड बना रहे, और उनके हृदय में और उनके गृह में मानो देखो, द्रव्य की सदुपयोग की प्रवृत्ति बनी रहे, जिससे गृह में उन्नत होवे और गृह में उन्नत हो करके, जब यह जीवन को महान बनाता रहे। और परमपिता परमात्मा शिक्षा हो और देखो, उसके ऊपर आचरणीय जीवन बना। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कैसी वेद की ग्रन्थियों के ऊपर अपने विचार देते रहते हैं, मानो देखो, जैसे महात्मा साकल्य की चर्चाएं तीन दिवस से प्रगट कर रहे हैं। और वह नाना प्रकार की वृत्तियों में रत्त हो गएं, हमारे ऋषि मुनियों का एक बड़ा विचित्र मन्तव्य रहा है, क्या यदि हमारे विचार में कोई वाक् नही आया तो दूसरे ऋषि के द्वार पर पंहुचों, वहाँ उसका निर्णय करो और यदि वह वहां भी निर्णय न हो तो द्वितीय स्थान में जाओं, वहाँ उसका निर्णय करो यह आध्यात्मिकवाद कहलाता है। और इस आध्यात्मिकवाद की प्रवृत्तियों में मानव अपने में महान बना रहे तो विचार आता रहता है कि आध्यात्मिकवाद मेरे यज्ञमान के हृदय में प्रवेश होता रहे, और द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, और देखो, उनके जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, आज मैं विशेष चर्चा नहीं प्रगट करूंगा, क्योंकि मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से मुझे इतना ही वाक् उच्चारण करना था, विचार केवल यह कि देखो,

विचार तो बहुत है संसार में, मानो परन्तु देखो, इन विचारों में मैं पुनः से जाना नही चाहता हूँ। विचार केवल यही कि देखो, हमारे जीवन में महानता की प्रवृत्ति का जन्म होता रहे और हमारा जीवन एक महान बन करके इस संसार सागर से पार हो जाएं, क्योंकि प्रत्येक मानव अपना उत्थान चाहता है, जैसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव प्रगट करा रहे थे। प्रत्येक मानव प्रकाश में रहना चाहता है, अन्धकार से दूरी होना चाहता है, राष्ट्रवेत्ता भी प्रकाश में जाना चाहता है वह अन्धकार में रहना नही चाहता है परन्तु देखो, जब स्वार्थपरता आ जाती है, तो मानव में अन्धकार में प्रविष्ट हो जाता है, और अज्ञान आ जाता है क्योंकि जो अपना व्यक्ति का स्वार्थपरता है, और उसमें बलवती हो जाएं तो मानो देखो, वही वाममार्ग की परम्परा पर चला जाता है।

तो विचार आता रहता है देखो, स्वार्थपरता समाप्त हो करके और राष्ट्रवेत्ता अपने राष्ट्र को उन्नत बनाते रहे हैं। यह प्रत्येक मानव का कर्तव्य बना हुआ है और यही आभा में परणित होने के लिए तत्पर तो आओ देखो, आज का विचार क्या हम अपने देव को अपने पूज्यपाद गुरुदेव की वन्दना करते हुए अपने नाना रूपों में विचार देते रहते हैं जिससे हमारा जीवन नवीन होता रहता है मानव के विचारों से ही विचारों से विचारों का परिवर्तन होता है और वही महान बना देता है तो आज का विचार अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा केवल हमारा यही वाक् है कि हे यज्ञमान! तुम्हारे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे और मानो देखो, आत्मा से समन्वय होना चाहिए यह आज का वाक् अब समाप्त मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपना विचार दिया इनके विचारों में उदारता मानो देखो, हृदय ग्राही रही आज का यह विचार क्या कह रहा है कि हम अपने में मानो देखो, याग की नाभि के ऊपर विचार विनिमय करते चले जाएं क्योंकि आध्यात्मिक और भौतिक याग दोनों का अपने में समन्वय हो जाता है यह पृथ्वी नाभि है वैज्ञानिक रूपों से मानव के शरीर में नाभि है पालना के रूपों में और देखो, यह जो नाभि ब्रह्माण्ड की है यह ब्राह्मण को जानने के लिए है और यज्ञ रूपी जो नाभि है इससे विचार

विनिमय करने पर देखो, अपने को नाभि स्वीकार करके अपने जीवन को उन्नत बनाएं यह आज का विचार अब सम्पन्न होने जा रहा है। समय मिलेगा शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें। आज का विचार यह कि परमपिता परमात्मा महान है, पवित्रतं है, महानता की वेदी पर रमण करने वाला है। यह है आज का वाक्, अब समय मिलेगा, तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मना वाचन्न ब्रीहि गन्धर्वा वायां। अच्छा भगवन्! आज्ञा।

१६ 16 05 1990 पुष्प 60 पुरोहित

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परगतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं और जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं। तो हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसका जो अग्निमयी स्वरूप है, वह तेजोमयी कहलाता है। तो आज हम उस तेजोमयी परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का गुणवादन करते रहें, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं। और वह हमारे पुरोहित है।

पराविद्या

जो पराविद्या को प्रदान करने वालें हैं मानो वे पुरोहित कहलाते हैं। इसीलिए हमारे यहाँ, उस परमपिता परमात्मा को पुरोहित के रूप में वर्णित किया गया है और प्रत्येक मानव उसे वर लेता है और उसे अपना पुरोहित बना करके उसकी पराविद्या को अपने में धारण करने वाला है, तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा जो परा विद्या के देने वाला है जिस विद्या को धारण करने के पश्चात मानव का जीवन पवित्र बन जाता

है। और उस विद्या के अनुपम रहस्यों को जानता हुआ, मानव अपने कर्मकाण्ड की और भी नाना पद्धतियों को अपनाने के लिए तत्पर हो जाता है। इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का गुणवादन करते चले जाएं, तो वे परमपिता परमात्मा हमारा पुरोहित है। और पुरोहित उसे कहा जाता है जो पराविद्या के जानने वाला है जो पराविद्या में रत्त रहने वाला है मानो उसी का दिया हुआ ये अनुपम ये ज्ञान और विद्या है मानव उसी के आश्रित रहता हुआ, और अपने मानवीयतव को वह पवित्र बनाता रहता है। तो आओ, मुनिवरों! आज हम उस अपने परमदेव पुरोहित के लिए सदैव हम गान गाते रहें, क्योंकि यहाँ तो प्रत्येक मानव अपने पुरोहित के लिए, पराविद्या को जानने के लिए मानो सदैव तत्पर रहा है। और ये विचारता रहा है कि मैं आज, पुरोहिततव को अपने में अपनाता हुआ और मैं परमपिता परमात्मा के अनुपम क्षेत्र में रमण करने वाला बनूं, तो मेरे प्यारे! वे परमपिता परमात्मा जो पुरोहित है, जिस भी विद्या को जानने के लिए मानव समाज उत्सुक रहा है, और भी नाना महापुरूष भी उसके लिए मानो तत्पर रहे हैं। यह जानने के लिए कि वे परमपिता परमात्मा जो मानो हमारा पुरोहित है। और मानो इस ब्रह्माण्ड का जो पुरोहित है, जो पराविद्या विद्या को मानव को प्रदान करने वाला उसे पुरोहित कहा जाता है। आज अपने पुरोहित के लिए हम सदैव गुणगाते रहें, और पुरोहितानां भवितं ब्रह्मा, वह भी पुरोहित है, जो पर ब्रह्म परमात्मा के स्वरूप में, मानो जो विद्यमान है, वही तो पुरोहित कहा जाता है। मानो पुरोहित देखो, हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के देखो, पुरोहितों के सम्बन्ध में विवेचना की गई है, बेटा! जब हम पुरोहितों के लिए, अपनी विवेचना, अथवा अपने लिए सदैव तत्पर होते हैं, तो वह पुरोहितानां भवितं ब्रह्मा जो पुरोहित बन करके, मानव के जन कल्याण के लिए विचारता रहता है, और अपने सम्पर्क में जाता हुआ अपने को मानो देखो, अपने को उसमें हूत कर देता है।

पुरोहित की उपासना

तो आओ मुनिवरों! देखो, विचार विनिमय क्या, क्या हम मुनिवरों! देखो, हम पुरोहित

की उपासना करने वाले बनें, और उस पुरोहित को जानते हुए, यह जो पराविद्या को देने वाला है, जो मानव को मानवीयता की आभा में परणित कर देता है, तो मानो बेटा! वह पुरोहित कहा जाता है, हे पुरोहिता नाम यज्ञं भवितां ब्रह्मणा ये जो संसार रूपी मानो जो एक प्रकार की यज्ञशाला है, इस इस यज्ञशाला में मानो आप ही तो पुरोहित बने हुए हैं, जो पराविद्या के अंकुरों को हमें परणित करते रहते हैं, और उसी पराविद्या को हम धारण करते हुए सागर से पार हो जाते हैं, मेरे प्यारे! पुरोहितजन जब, प्रत्येक गृह में परणित होता है, आज मैं आओ बेटा! देखो, भगवान मनु जी के विचारों में जाना चाहता हूँ, मेरे प्यारे! देखो, भगवान मनु ने जिस समय पद्धतियों का निर्माण किया, तो उन्होंने उस समय इसका बड़े विशुद्ध रूपों से इसका विश्लेषण किया है और कहा है पुरोहिता नाम ब्रह्मणां ब्रह्मा वृत्ति देवाः भगवान मनु ने ये कहा क्या ये पुरोहित जो परमपिता परमात्मा के नामों से वर्णित किया जाता है, और वह पुरोहित हो परा विद्या के देने वाला है, जिस पराविद्या को अपने में धारण करने वाला वही तो पुरोहित है, जब भगवान मनु ने बेटा! इस राष्ट्र की पद्धतियों निर्माण किया, और उन्होने बेटा! देखो, उन्होंने राष्ट्रीयता में इस मानवीय समाज को उसमें परणित करना चाहा, तो भगवान मनु ने बेटा! कालेत्वर ऋषि से ये कहा हे प्रभु! मैं क्या करूं मानो देखो, मैं पुरोहितां भूतं ब्रहे क्या राष्ट्र का जब निर्वाचन होता है, तो कोई पुरोहित की आवश्यकता है? मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनियों ने कहा कि वास्तव में पुरोहितों की आवश्यकता तो जब भी रहती है, जब कोई वस्तु हमारे समीप नही होती। एक केवल मानो देखो, पुरोहित होता है, और पुरोहित हमें मानो देखो, विद्या के देने वाला है, वह ब्रह्मचारी को और हमें मानो यदि उसमें कर्तव्य के रूप में मानो देखो, हमें परणित कर दिया, तो हमारा सौभाग्य होगा।

पुरोहित

तो मेरे प्यारे! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है कि मुनिवरों! देखो, भगवान मनु ने ये कहा है कि हमें पुरोहित की आवश्यकता रहती है। मेरे पुत्रों! देखो, वहाँ पुरोहिता नाम

भवतं वह पुरोहित बन करके, मानो देखो, अपने राष्ट्र को उन्नत बनाना चाहते है, राजा के राष्ट्र में वास्तव में पुरोहित होने चाहिए, और पुरोहित उन्हें कहा जाता है। जो पराविद्या के देने वाले हैं। पराविद्या पवित्र विद्या हमें परणित करा देते हैं। तो वह पुरोहित कहलाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ दो प्रकार की विद्या का प्रायः परम्परागतों से बेटा! वर्णन किया गया है। एक विद्या वह जो भौतिकवाद में हमें परणित कर देती है, और दूसरी विद्या वह कहलाती है जो आध्यात्मिक विज्ञान में परणित कर देती है। मेरे प्यारे! देखो, भौतिक विज्ञान की कल्पना करते हुए ऋषि ने यह कहा ब्रह्मणे व्रतं देवतवां ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा कि ये पुरोहित का राष्ट्र में अपना क्या महत्व माना गया है? तो महात्मा कालेत्वर ने कहा कि हे भगवन! हे मनु! संसार में पुरोहित वह होता है। जो पराविद्या के देने वाला है जैसे याज्ञिक। यज्ञमान जब याग करता है, यज्ञशाला में तो यज्ञशाला में, एक पुरोहित भी होता है। और वह पुरोहित इसीलिए होता है, जो पराविद्या के देने वाला है और जो पराविद्या को प्रदान करता है। मानो वही पुरोहित कहा जाता है। हमारे यहाँ परमपिता परमात्मा का नामोकरण वह पुरोहितों के नाम से वर्णित किया गया है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह जो पुरोहितां भूतं ब्रह्मा पुरोहित वास्तव में वह कहलाता है, जो पराविद्या को देने वाला है, भगवान मनु से कालेत्वर ऋषि कहते हैं, कि कहो राजन! पुरोहित किसे कहते हैं? उन्होंने कहा पुरोहित परमपिता परमात्मा को कहा जाता है जो परमपिता परमात्मा मानो सर्वत्र विद्यमान है, वह पुरोहित कहलाते हैं। मैं पुरोहिता नाम भवतं ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार कहा, तो पुनः ये प्रश्न किया गया कि महाराज! ये पुरोहित कौन है? उन्होंने कहा कि पुरोहित नाम जो मानो पराविद्या को देने वाला है, हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में तीन प्रकार की विद्या का वर्णन होता रहा है। एक वह है जो वर्णनं ब्रह्मा कृतं देवाः मेरे प्यारे! देखो, वह वरणीय आभा में निहित रहने वाले हैं। उन्होंने कहा पुरोहित उन्हें कहा जाता है, जो पराविद्या को धारण करने वाले पराविद्या के ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहना है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह पुरोहित कहलाता है। भगवान मनु ने कहा है कि राजा के राष्ट्र में एक पुरोहित होना चाहिए। जो पराविद्या को समय समय पर प्रदान करता रहे। वह

मानो देखो, वह पुरोहित कहा जाता है। पुरोहिता नाम भूतं ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, पुरोहित वह कहलाता है। जो भगवान मनु ने वर्णन किया भगवान मनु ने यह कहा है कि पुरोहित उसे कहा जाता है, जो पराविद्या के देने वाला है पराविद्या में परणित करा देता है। वही मुनिवरों! देखो, पराविद्या है। उसे अधिकार प्राप्त हो जाता है, तो विचार आता है कि पुरोहित कौन है? प्रत्येक गृह में पुरोहित प्रत्येक मानो सर्वत्र गृहों में मुनिवरों! देखो, पुरोहित रहने चाहिएं। परन्तु पुरोहिता नाम भवितं बेटा! पितर का नाम भी पुरोहित कहलाता है। परन्तु जहाँ पुरोहितों की चर्चा आती हैं, वहाँ परमपिता परमात्मा को पुरोहित कहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, पुरोहित वह होता है, जो पराविद्या में भी पराविद्या को प्रदान करता है, जो मानव को उपलब्धि कर देता है। मानो वही तो पुरोहित कहलाता है। जो सर्वत्र राष्ट्र का स्वामीतव अथवा निर्माण करने वाला है। और उससे निर्माण में परणित करते हुए अपने मे महानता को जन्म देना है। तो मेरे प्यारे! देखो, पुरोहितों की जहाँ इस प्रकार की विवेचना आती रहती हैं।

मेरे प्यारे! देखो, पुरोहितों से राष्ट्र ऊँचा बनता है, पुरोहितों से ही जन समाज ऊँचा बनता है, जब प्रत्येक गृह में मानो देखो, माता के आंगन में, पुत्र पुत्रियां विद्यमान होते हैं, तो वह मुनिवरों! देखो, पुरोहित मानो अपने अधिकार का वह उपयोग करना चाहता है, और वह उपयोग को अपने में पान कर रहा है। मुनिवरों! देखो, वही उपयोगां भू वर्णसुते वही तो अपने में धारण कर रहा है, तो मेरे प्यारे! देखो, वह पुरोहितां भूतं वह पुरोहित कहलाता है। जो गृह को उन्नत बनाता है, जो गृह में महानता को जन्म देता है, वही तो पुरोहित है। तो मेरे प्यारे! इस प्रकार का विचार, हमारे प्रायः वैदिक साहित्य में आता रहा है, वैदिक साहित्य में भिन्न भिन्न प्रकार की विवेचनाएं, भिन्न भिन्न प्रकार के क्रियाकलाप, उनके मुखारबिन्दु से उत्पन्न हो रहे हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, वह पुरोहितां भूतं ब्रहे वेद का आचार्य कहता है, कि हमारे जीवन में यदि कोई हमारे जीवन में उन्नति दे सकता है, तो वह पुरोहित कहलाता है, भगवान मनु ने यही कहा कि राजा के राष्ट्र में पुरोहित होना चाहिए। उसका अपने में बड़ा महत्व माना गया है। मेरे प्यारे! देखो, पुरोहिता नाम भूतं ब्रह्मणा लोकां ब्रहे वह पुरोहित कहलाता है। जो राष्ट्र और समाज

को उन्नत बनाता है।

मेरे प्यारे! देखो, मेरे प्यारे! देखो, महात्मा ब्रह्मणो मनु रघुकुल में रघु वंश में बेटा! पुरोहितों की आवश्यकता रहती है। प्रत्येक राष्ट्र में बेटा! पुरोहित की आवश्यकता रहती है। तो मेरे प्यारे! देखो, उनके जो पुरोहित थे, वह महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज थे, और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज बेटा! देखो, पुरोहिता नाम पुरोहितं ब्रह्मा वह बेटा! देखो, पुरोहित कहलाते है, जो पराविद्या की शिक्षा देता है राजा को और राजा उसे अपने में ग्रहण कर लेता है।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है जब मुनिवरों! देखो, त्रेता के काल में, मेरे प्यारे! देखो, राम जब लंका को विजय करने पश्चात, वह अपने गृह में उन्होंने प्रवेश किया उन्होंने लंका को विजय करके अयोध्या में उन्होंने वास किया, और वास करने के पशचात बेटा! अपनी स्थली पर विद्यमान हो गएं, और विद्यमान हो करके, नाना ऋषि मुनियों को निमन्त्रित किया गया और निमन्त्रित करने के पश्चात, उन्हें राष्ट्र का अधिकार मानो देखो, अपना कर्तव्य जान करके राम को प्रदान करना चाहते हैं। वह उस मानो राष्ट्रीय धरोहर को वह राम को प्रदान करना चाहते हैं। तो बेटा! देखो, राम से ये प्रार्थना की प्रभु! आईए आप अपने राष्ट्र को अपनाईए, मानो इस राष्ट्र को मुझे कोई अधिकार नही हैं, मैं इसका अधिकारी नही हूँ, उन्होंने कहा राम! मुझे इसकी अमृतां ब्रह्मे मानो इसको तुम ही भोगो, मुझे नही चाहिए। उन्होंने कहा नहीं, मैं नही चाहता हूँ, प्रभु! मैं आपको समर्पित करना चाहता हूँ राष्ट्र स्थली को अपनाईए। मेरे प्यारे! राम ने भरत से कहा कि भगवन! सबको निमन्त्रित किया जाएं, राष्ट्र के जितने अधिकारी हैं, जितने भी मानो देखो, इस राष्ट्र का अधिकार है, जिन्हें और देखो, ऋषि मुनियों का सबका आगमन हो जाना चाहिए, बेटा! देखो, सबको निमन्त्रित किया ओर निमन्त्रित करने के पश्चात, सब देखो, उस राज सभा में मेरे प्यारे! देखो, नाना ऋषिवर, नाना विज्ञानवेत्ता मानो सर्वत्र राजा निमन्त्रण के कथानानुसार अयोध्या में उनका आगमन हुआ, और उन्होंने बेटा! देखो, अगले दिवस प्रातःकालीन बेटा! देखो, सबके आसन लग गए, आसनों पर वह विराजमान हो गएं, मेरे प्यारे! देखो, राम ने उपस्थित हो करके कहा, हे ऋषि

मुनियों! आप भरत मुझे अपना राष्ट्र देना चाहते हैं। परन्तु मैं इस राष्ट्र को अभी नही चाहता हूँ। उन्होंने कहा भगवन! क्यों नही चाहते? उन्होंने कहा मैं तपस्या करने जाऊंगा। मेरे प्यारे! देखो, महाराजा शिव ने कहा क्या हे भगवन! आप तपस्या करते आप अपनी क्रियाओं से निवृत्त होने के लिए तपस्या आपकी ज्यों की त्यों हैं। मेरे प्यारे! देखो, राम ने कहा प्रभु! ये तुम्हारा वाक् यथार्थ है, महाराजा शिव ने बहुत प्रार्थना करने के पश्चात, मेरे प्यारे! जब महात्मा पुरोहित से यह कहा गया हे पुरोहित जनों! मैं तपस्या करना मैं राष्ट्र को नही चाहता हूँ, मैं तप में जाना चाहता हूँ। महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज ने ब्रह्मवेत्ता ने कहा हे राम! तुमने यह राष्ट्र तो भोगना ही है। परन्तु त्याग पूर्वक इस राष्ट्र को भोगने वाले बनो। मेरे प्यारे! देखो, राम ने कहा प्रभु! मैं इस राष्ट्र को नही चाहता मैं जब तक मानो देखो, तमोगुण और रजोगुण और सतोगुण जो हमारे शरीरो में व्यापा है। उसको नष्ट करना चाहता हूँ। मैं तपस्या में परणित होना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, राजा और महात्मा जन मानो विशेषकर मौन हो गएं, और मौन हो करके ये विचारने लगे, कि इसको कैसे कार्य रूप दिया जाएं। जो राम राजा बने, और भरत तपस्वी बन जाएं, और या भरत ब्रव्हे देखो, जब तक राष्ट्र का पालन चल रहा है, दोनों तपस्या में परणित हो जाएं, मेरे प्यारे! देखो, जब ये वाक् कहा गया सम्भव ब्रहे, मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है, पुत्रों! क्या मुनिवरों! देखो, राम ने कहा, कि मैं राष्ट्र को नही चाहता, मैं भयंकर वन में जा करके, तप करना चाहता हूँ। क्योंकि तप से ही मानव का जीवन उन्नत होता है, और तप से ही मानो देखो, रजोगुण की तरंगें तमोगुण में परणित हो करके सतोगुण में प्रवेश कर जाती हैं। मैं अपने में मानो देखो, तपस्वी बनना चाहता हूँ, तो मेरे प्यारे! देखो, ये वाक् उन्होंने स्वीकार कर लिया, और स्वीकार करके उन्होंने कहा भरतं ब्रव्हे हे विधाता! भरत इस राष्ट्र को भोगो, उन्होंने कहा प्रभु! मुझे तो कोई अधिकार नही हैं ये तो आप देखो, आपका यह राष्ट्र है इसे भोगिए प्रभु! उन्होंने कहा हे भरत! मैं तपस्या करने जा रहा हूँ, जब तक मैं तपस्वी नही बनूंगा, मैं राष्ट्र का अधिकारी नही हूँ, क्योंकि तप करने के पश्चात ही मानव को राष्ट्र का अधिकार होता है, मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने ऐसा कहा उन्होंने कहा तपं ब्रह्मे आचार्य से कहा महात्मा

भरत ने कहा आचार्य से हे आचार्यजन! इसका निमटारा कीजिए यह क्या कह रहें हैं, मेरे प्यारे! उन्होंने कहा हे राम! मैं इनको पूर्णता को प्राप्त नही करा सकूंगा, भरत ने भी यही कहा मैं राष्ट्र का अधिकारी नही हूँ, तो मैं भी तपस्वी करूंगा।

तप

परन्तु देखो, उन्होंने उसे शिक्षा दी, और शिक्षा देने के पश्चात वह अध्ययन करने लगे मेरे प्यारे! राम अयोध्या को त्याग करके, वह भयंकर वन में चले गएं। और भयंकर वन में जा करके बेटा! तपस्या करने लगे, और वह तपस्या ही क्या है मेरे प्यारे! देखो, जो अन्न दूषित को नही पान करने का नाम तपस्या कहा जाता है। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, कि राम ने उस अन्न को पान किया, जिस अन्न पर अधिकार नही था। उसे एकत्रित करके उसका दुग्ध और अग्नि में तपा करके और खरल बना करके उसको पान करते हैं। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने बारह वर्ष का इस प्रकार का कठोर तप करने का निश्चय किया। मेरे प्यारे! देखो, राम, प्रातःकाल और सायंकाल तक रात्रि के काल में प्रभु के ऊपर मनन करते रहते थे। और यह प्रार्थना करते रहते थे कि हे प्रभु! कैसा तेरा ऊर्ध्वा में ये जगत है ये कैसी भव्य मानो शाला है। जिसमें आपको पुरोहित बना करके, देखो, हम तपस्या में परणित होने जा रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार देखो, राम के यहाँ ऋषि मुनियों का आगमन होता रहता और तपस्या में परणित होते रहतें। मेरे प्यारे! देखो, उनका जीवन बड़ा भव्यता में परणित होता रहा है।

आओ मेरे प्यारे! राम ने बारह वर्ष का अनुष्ठान किया और बारह वर्षों में मुनिवरों! देखो, वह अध्ययन करते, अन्न को पान करने के लिए शिलस्थ अन्न को एकत्रित करते मेरे प्यारे! देखो, राम का जीवन बड़ा मानो संचालित हो रहा है। विचार में मग्न हैं, महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज माता अरूणधती एक समय बेटा! तपस्वी के दर्शन करने जा पंहुचें। और उन्होंने राम ने बेटा! उनके चरणों की पादुका मेरे प्यारे! देखो, जल से स्पर्श करके उसका आचमन किया। और आचमन करने के पश्चात राम बेटा! तपस्या में

परिणत हैं। वह तपस्या कर रहे हैं। वह तप मानो देखो, मन को मानो पवित्र बना रहे हैं। क्योंकि मन को पवित्र बनाने का नाम ही तप कहा जाता है। प्राणों को शोधन करने का नाम ही तप कहा जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, तपश्चं ब्रह्मा कृतं लोकाः वह तपस्या में परिणत हैं। परन्तु महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज और माता अरूणधती दोनों अपने आश्रम से भ्रमण करते हुए राम के समीप पंहुचें। राम बेटा! उन्हें दृष्टिपात करते हुए उनके हर्ष की कोई सीमा न रही। मेरे प्यारे! देखो, रामं ब्रव्हे कृतं ऋषि के चरणों को महात्मा के चरणों के स्पर्श करके बोले कि प्रभु! मेरा यह कैसा अहोभाग्य है, भगवन! जो ब्रह्मवेत्ता का मुझे दर्शन हो रहा है, मानो देखो, वह दर्शनं ब्रह्मा वह विचार विनिमय कर रहे थे। और अपने को विचारशील बनाते हुए इस सागर से पार होना चाहते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, वह अनुपम सागर है। जिस सागर के लिए प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, महान से महान कल्पना करता रहा है। राम बेटा! देखो, उस अन्न पान करके देखो, तपस्यां और राम देखो, वशिष्ठ मुनि ने कहा राम! तुम इस प्रकार जो तप क्यों कर रहे हो? उन्होंने कहा प्रभु! मैंने लंकापति से संग्राम किया है, और मानो देखो, संग्राम में मेरे मानो रजोगुण और तमोगुण को प्रवृत्ति विशेषकर रही है। रजोगुण की उन रजोगुणियों में मानो लंका के प्राणियों को नष्ट किया है। तो मैं इसके देखो, पापाचार में परिणत हो रहा हूँ। विचारने से यह प्रतीत होता है कि जो अन्तःकरण में हृदय में जो संस्कार विद्यमान हो गएं हैं। मानो जो संस्कारों की उपलब्धियां हो गई हैं। उन्हें नष्ट करना मेरा कर्तव्य कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, राम ने बाहर वर्ष तक ऐसे अन्न को ग्रहण किया जिससे उनका मन पवित्र हो गया, और प्राणों में एक महान धारा का जन्म होने लगा। मेरे प्यारे! देखो, हूत और प्रहूत में वह परिणत होने वाला जगत बन गया। मेरे प्यारे! देखो, राम जब तपस्या करते रहते नाना ऋषि मुनि आते चर्चायें होती और वह चर्चाएं मानो देखो, आध्यत्मिकवाद की चर्चा कर रहा है। कोई आत्मा की चर्चा कर रहा है। कोई मानो राष्ट्रवाद की विवेचना कर रहा है। कोई मेरे प्यारे! देखो, उसी में

रत्त हो करके उसी में अपने पिता का ध्यानावस्थित हो गया है।

तपश्चर

तो मेरे प्यारे! देखो, वह अपने में अपनेपन को ही विचारना ही देखो, तपश्चर कहलाता है। मेरे पुत्रों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है मुझे वह आख्यिकाएं स्मरण है जहाँ मेरे प्यारे! देखो, मानव तपस्वी बन करके तपों में लीन होना चाहता है। मेरे प्यारे! देखो, बारह वर्ष का वह अनुष्ठान उनका पूर्णतव को प्राप्त हुआ, और वह वेदों का गान गाते रहते थे। वेदों की महानता में रमण कर जाते थे। मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! भगवान राम का वह जीवन जिसमें वह अपने में ही मानो देखो, अपनेपन को दृष्टिपात करते रहते थे। यह सृष्टि का जो चक्र है, यह बड़ा विचित्रतव माना गया है, परन्तु देखो, इसके ऊपर विश्लेषण प्रत्येक मानव करता रहता है। आओ मेरे प्यारे! देखो, मैं तुम्हें विशेष विवेचना में नही ले जा रहा हूँ, विचार केवल यह कि परमात्मा देखो, अपने में ही अपनेपन को क्या परमात्मा की प्रतिभा बड़ी विचित्र है। परन्तु देखो, भगवान राम बारह वर्ष का कठोर उन्होंने तप किया और उन्होंने शिलस्थ अन्न को ग्रहण करते हुए अपने मन को पवित्र बनाने के लिए बेटा! वह तपस्या के सुयोग्य बने। वह तपश्चं ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, वह जब बारह वर्ष का तप पूर्ण हो गया तो भयंकर वनों में ही मुनिवरों! देखो, एक मानो धारा उस मानव समाज उपस्थित हुआ। और वह मानव समाज जब उपस्थित हुआ तो उन्होंने कहा राम अब तुम देखो, अब राष्ट्र को भोगो।

राष्ट्रवाद

उन्होंने कहा राष्ट्र तो मैं भोगने के लिए तत्पर हूँ। परन्तु मेरे विचार में यह नही आ रहा है कि यह राष्ट्र क्या है? जिसे मैं भोगूं। उन्होंने कहा राष्ट्र है अपने पर अनुशासन करना, राष्ट्र है अपने प्राणों को संयम में लाने का नाम राष्ट्र, परन्तु देखो, यह ऐसा राष्ट्र है, जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से यह टिप्पणियां करता रहता है। विचारधारा में तत्पर रहता है, परन्तु देखो, राम ने यह कहा कि महाराज! मैं राष्ट्रवाद को जानना चाहता हूँ। यह राष्ट्रवाद क्या है? तो मुनिवरों! देखो, उन पुरोहितों ने वेद के कर्मकाण्डी महापुरुषों

ने ये कहा कि यह जो संसार है, यह मानो देखो, बड़ी विचित्रता में एक तपों का क्षेत्र माना गया है। प्रत्येक मानव बेटा! तपस्या में परणित होना चाहता है। और वह अपने को तपश्चर में परणित करता संसार सागर से पार होना चाहता है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने राष्ट्रीयता की घोषणा की। और देखो, वहाँ यह विचार बन गया था कि राम अब इस समय पूर्ण रूपेण मानो देखो, यज्ञ प्रव्हा जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान विद्यमान हो करके, वह धिपति कहलाता है। इसी प्रकार राष्ट्र को उन्नत बनाने के लिए, मानो उसी प्रकार का नृत्त होना बहुत अनिवार्य है। मेरे प्यारे! देखो, राष्ट्रां भूतं ब्रह्मा भगवान राम ने बेटा! ये स्वीकार कर लिया, परन्तु ऋषि मुनियों के उपदेश होने लगे क्या राम ने यह कहा कि हे ब्रह्मवेत्ताओं! मुझे निर्णय कराओ, कि यह राष्ट्रवाद क्या है? जिसके लिए इतना बल दिया जा रहा है। महात्मा वशिष्ठ मुनि बोले कि प्रजा को अनुशासन में लाने के लिए उन्होंने कहा राम ने कहा जब सबको ज्ञान हो जाएगा। ब्रह्मज्ञानी बन जाएंगें। और देखो, कर्मठ कर्मकाण्ड में समाज परणित हो जाएगा। तो यह पुनः ही मानो देखो, अनुशासन की आवश्यकता नही रहेगी। मेरे प्यारे! देखो, राम ने यह कहा कि अनुशासन वहाँ होता है। जहाँ मानो कुरीतियां आ जाती है। विकृत्तियां आ जाती हैं। वहाँ अनुशासन की आवश्यकता है, और जहाँ मानो देखो, मानव अपने में अपनेपन को चिन्तन में ला रहा है। उसके राष्ट्रवाद की आवश्यकता होना न होना उसका प्रश्न ही नही उत्पन्न होता। मेरे प्यारे! देखो, जब राजा अपने कर्तव्य का पालन करता है। प्रजा अपने कर्तव्य का पालन करती है। और विज्ञानवेत्ता मानो उनमें सदुपयोग होते रहते हैं, तो समाज में एक महानता का जन्म हो जाता है। राम ने कहा कि जब प्रत्येक मानव देखो, एक दूसरे एक दूसरे में रत्त हो जाएगा। मानो देखो, उसी का नाम राष्ट्रवाद कहा जाता है। क्योंकि उस राष्ट्रवाद में अपनी अन्तरात्मा की पवित्रता होती है। और जहाँ मानव की इन्द्रियों में पवित्रता नही आयेगी, उस समय मानो देखो, द्वितीय राष्ट्र के निर्वाचन से कोई लाभ नही होना है, संसार में। जब तक प्रत्येक मानव इन्द्रियतव ऊँचा न बन जाएं और विचारधारा पवित्रतव को प्राप्त न हो जाएं मेरे प्यारे! देखो, राम ने कहा मैं इस राष्ट्र को अवश्य भोगूंगा। परन्तु देखो, मेरा अन्तरात्मा यह कहता है कि प्रत्येक मानव को अपने

कर्तव्य में तल्लीन हो जाना है। मानो यदि हम राजा बन करके और राष्ट्र को उन्नत नही बना सकते अपने जीवन चर्या को पवित्रता नही ला सकते और उस पवित्रता को हम धारण नही करेंगें, तो मानो देखो, हमारा राष्ट्रीयतव शान्त हो जाएगा, मेरे प्यारे! देखो, ये भगवान राम ने इस प्रकार जब उपदेश दिया, अथवा राष्ट्रवाद के ऊपर ये कहा क्या देखो, हे कर्मवेत्ताओं! तुम मेरे ऊपर देखो, राष्ट्र की स्थलियों को तुम मानो मुझे प्रदान कर रहे हो। मेरा अन्तरात्मा यह कहता है कि राजा के राष्ट्र में विवेकी पुरूष और वेद के जानने वाले पुरूष होने चाहिएं। क्योंकि उन्हें वेदज्ञ कहते हैं जो मेरे प्यारे! देखो, जिस राजा के राष्ट्र में, वेदों का उद्गीत गाया जाता है। और वेदों के मन्त्रों को उच्चारण करने वाले पक्षी गण भी होते हैं, उस राजा का राष्ट्र तो पवित्र होता है, जिस राजा के राष्ट्र में मानो हिंसा नाम की कोई वस्तु नही होती, क्योंकि हिंसा वहाँ होती है, जहाँ स्वार्थपरता होती है, और जहाँ स्वार्थ नही होता वहाँ हिंसा भी नही हुआ करती है। मानो देखो, जब हिंसा नही होती, अहिंसा में मानव परणित हो जाता है। अहिंसा में राजा है, अहिंसा में प्रजा है, अहिंसा में विद्यालय है, और अहिंसा में स्वतन्त्र हो करके ब्रह्मचारी गमन करता रहता है। मेरे प्यारे! विचार विनिमय ये आता रहता है मैं व्याख्याता नहीं हूँ देखो, राम ने अपना जो उपदेश दिया कर्मवेत्ताओं से कहा हे कर्मवेत्ताओं! तुम अपने राष्ट्र को उन्नत बनाने के लिए सदैव तत्पर हो जाओ। मानो जिससे मैं अपनी आभा में रत्त हो जाऊं। मेरे प्यारे! देखो, राम यह उपदेश दे करके मौन हो गएं, और यह कहा कि वेद के कर्मकाण्ड प्रत्येक गृह में सुगन्धि आना क्योंकि राजा का राष्ट्र जब ऊँचा बनता है। जब प्रत्येक प्रकार की सुगन्धि आने लगती है। मेरे प्यारे! देखो, जैसे यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, वह हूत कर रहा है, अग्नि में स्वाहा दे रहा है, और गृह में वायुमण्डल पवित्र बन रहा है। और गृह मानो देखो, उससे पवित्रता को धारण कर रहा है। यज्ञमान कहता है हे प्रभु! मेरा राष्ट्र एक मानो पवित्रता में परणित होना चाहिए। मेरे यहाँ सुगन्धि होनी चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, सुगन्ध में परणित हो रहा है। मुनिवरों! देखो, यह सुगन्धि भी दो प्रकार की है, जो मैंने पुरातन काल में विवेचना की मानो एक सुगन्धि वह है, जो साकल्य से आती है, अग्नि जिसको विभाजन कर रही

है। अग्नि ही मानो देखो, देवता कहलाती है। और द्वितीय अग्नि वह है जो गृह में सुगन्ध आती है, मानो अग्नि प्रदीप्त हुई, सुगन्ध आने लगी बेटा! प्रातःकालीन प्रत्येक मेरी प्यारी माता और पितर जन ब्रह्मचारी जन मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक गृह में जब वेद का उद्गीत गाया जाता है। वेद के उद्गीत गाने वाले उसके पश्चात प्रत्येक गृह से मानो ध्वनि आ रही है, प्रातःकालीन याग हो रहा है वेदमन्त्रों का प्राण की आहुति दी जा रही है। मानो पवमान की आहुति दी जा रही हैं। और वही हूत बन करके हमारे अन्तःकरण को पवित्र बना रहे हैं। मानो देखो, राष्ट्र को उन्नत बना रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो, बाह्य जगत में भी आन्तरिक देखो, यह जो बाह्य जगत है यह सुगन्धि होना चाहिए क्योंकि राष्ट्रवाद की वेदी हो चाहे वह आन्तरिक चाहे वेद मन्त्रों की प्रतिभा हो, मेरे प्यारे! देखो, उससे राजा का राष्ट्र सुगन्धित हो जाएं, तो मेरे प्यारे! देखो, भगवान राम ने यही कहा है कि मेरा राष्ट्र जो है यह अयोध्या है, यह अयोध्या राष्ट्र बन करके यह विष्णु राष्ट्र की स्थापना करे और मानो देखो, प्रत्येक गृह में सुगन्धि होनी चाहिए। बेटा! जब सुगन्धि साकल्य की होती है, तो प्रत्येक मानव के हृदय में बेटा! एक सुगन्धि विचारों की भी होती है। जब मानव के मानवीय जगत में बेटा! विचार पवित्र हो जाते हैं। तो वही विचार बेटा! ध्वनित हो करके एक दूसरे प्राणी को स्पर्श करते रहते हैं। बेटा देखो, मैंने तुम्हें कई काल में, वर्णन करते हुए कहा था क्या जब मानो देखो, मानव के विचारों की सुगन्धि से सुगन्धि ये प्राणी मात्र हो जाता है, तो बेटा! देखो, विचारों में परणित हो करके हम परमपिता परमात्मा की महती में रत्त हो जाते हैं।

आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष विचार देना नही चाहता हूँ, विचार केवल यह कि भगवान राम देखो, भगवान राम देखो, भयंकर वन में अपने बारह वर्ष के तप से अवऋण हो गएं हैं। और वह मानो देखो, अपने में विचार कर रहे हैं क्या मैं अपने राष्ट्र को कैसा स्थापित करूं, जिससे देखो, राष्ट्र देखो, अपनी आभा में गतिवान होता हुआ और प्रत्येक मानव देखो, राष्ट्र में रहने वाला विचार विनिमय करने लगेगा। और विचारवान बन करके परमपिता परमात्मा के इस अनूठे राष्ट्र में परणित हो करके मानो देखो, ऊर्ध्वा में कल्पना करते चले जाओ मेरे प्यारे! देखो, भगवान राम ने यही कहा

है कि हम अपने को सुगन्धि को ला सकें, जैसे अग्नि विभाजन करती है, प्रत्येक परमाणु का विभाजन का कर देती है उनमें वह तरंगों के रूप में परणित हो जाते हैं, मानो इसी प्रकार जब मुनिवरों! प्रत्येक राजा अपने राष्ट्र में उन्नत होने के लिए, सदैव तत्पर रहेगा, तो वह उन्नत होना ही मानो देखो, मानवीता की आभा में रत्त हो जाएगा। और राष्ट्र अपने में राष्ट्र कहलाएगा। जैसे परमात्मा का राष्ट्र है, मानो देखो, उसी में सूर्य है, उसी में चन्द्रमा है, और उसी में देखो, यह पृथ्वी है और उसी में जल अग्नि अपने में अपने अपने पन में गमन कर रहे हैं और प्राण सत्ता अपने में रुद्र रूप धारण कर रही है, और मेरे प्यारे! अन्तरिक्ष में सब समाहित हो रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है, क्या हमारा जीवन बेटा! सुगन्धित होना चाहिए, और यदि जीवन में सुगन्धि नही है, तो मेरे प्यारे! वह जीवन नही कहलाता है, राजा के राष्ट्र में सुगन्ध नही हैं। बेटा! वह राजा का राष्ट्र भी नही कहलाता इसी प्रकार देखो, बेटा! सुगन्धि वाले बनें प्रत्येक गृह में वेदों की ध्वनियां होनी चाहिएं, वह ध्वनि से ध्वनित होना चाहिए। मेरे प्यारे! अनहद रूप में जब ध्वनि आती है, अनहाद रूप में जब देखो, बेटा! देखो, उससे मानो देखो, अपनी मानवीयता को धारण करता हुआ और वह मुनिवरों! देखो, अपनी अपनी ध्वनियों से मेरे प्यारे! आन्तरिक जगत की ध्वनि को बाह्य जगत में अपने में धारण करता हुआ, बेटा! वह ध्वनि एक यौगिक ध्वनि कहलाती है मेरे प्यारे! इसमें ध्वनियां आती रहती हैं विचार आता रहता है बेटा! दूरी चला गया हूँ, विचार कर रहा था कि परमपिता परमात्मा का अनूठा जगत है। परमात्मा मानो पुरोहित कहलाते हैं, इसीलिए पुरोहितों के द्वारा, प्रत्येक गृह में सुगन्ध होनी चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, राम ने बारह वर्ष का तप किया, जिसमें बेटा! वह अन्नं ब्रव्हे वह अन्न को त्यागते हुए उन्होंने मेरे प्यारे! देखो, शिलस्थ अन्न को प्राप्त किया, जिससे मन पवित्र बन करके, मेरे प्यारे! देखो, रजोगुण में मेरे प्यारे! देखो, मृत्यु दण्ड देने की मृत्युता में परणित करने की एक आभा का जन्म हुआ, उसे नष्ट करने के लिए उन्होंने बेटा! तप किया। क्योंकि बिना तप करके राष्ट्र को भोगने का अधिकार नही हुआ, और तप उसे कहते है जो मानव जितेन्द्रिय बन करके मेरे प्यारे! देखो, अपने आत्मबल को उन्नत बनाता है। मेरे प्यारे!

जो तपस्वी बनता है, वह तपं ब्रह्मे व्रतं वह अन्नाद को पवित्र बना करके मन और मस्तिष्क को ऊँचा बनाता है। या यूं कह लीजिए प्राण मन और विचारों की उपलब्धि हो करके, बेटा! उन्ही विचारों को वह महान बनाता रहता है।

तो विचार विनिमय क्या बेटा! मानव को तपस्वी तप करना चाहिए क्योंकि बिना तप के राष्ट्र और समाज में उन्नति नही होती बेटा! मैं कल समय मिलेगा जो राम ने आध्यात्मिक वशिष्ठ मुनि महाराज राम को जो आध्यात्मिकवाद का जा प्रकरण है, वह बड़ा विचित्र रहा है, उस काल का, मेरे प्यारे! आज का हमारा उपदेश क्या कह रहा है, हमें तपस्वी बनना चाहिए, और बिना तप के राष्ट्र नहीं भोगा जाता। बिना तप के मुनिवरों! समाज को उन्नत नही बना सकते। इसीलिए प्रत्येक मानव को तपस्वी बनना चाहिए, और तप करने के पश्चात बेटा! अपने अधिकार का उपयोग करने वाला हो परमपिता परमात्मा को साक्षी करता हुआ, और मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा की अमृतमयी धारा को जानने वाला बने, तो बेटा! मुनिवरों! देखो, आज का विचार क्या, हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए और वेदज्ञ का उपदेश पाते हम सागर से पार हो जाएं, बेटा! आज का हमारा ये उपदेश क्या कह रहा है? हमारा यह वाक् क्या कह रहा है क्या तपं ब्रह्मा तपं रुद्रो भागाः हे मानव! तू तपस्वी बन और तप करने के लिए पश्चात बेटा! राष्ट्र का अधिकार प्राप्त होता है। मुनिवरों! देखो, राम ने ऐसा ही किया, राम तपस्वी बने, बेटा! वह तप करने के पश्चात मुनिवरों! देखो, वह राष्ट्र को भोगने वाले बने राष्ट्र में जो उनके विचार याज्ञिक बनें उनकें विचारों को कल प्रगट कर सकूंगा आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मानां आभ्यां आभ्यां देवाः।

१७ 18 05 1990 पुष्प 60 राष्ट्रवाद और तपस्या

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परगतों से ही उस मनोहर वेदवाणी प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की

महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा इस ब्रह्माण्ड में सूत्र की भांति रमण करते रहते हैं। जैसे नाना प्रकार के मनके एक ही सूत्र में पिरोने से वह माला बन जाती है। इसी प्रकार वह जो परब्रह्म परमात्मा है, वह वास्तव में सूत्र की भांति है, और यह जो ब्रह्माण्ड है, जो नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों वाला जगत है। और नाना प्रकार के विचारवेत्ता और विचार विनिमय करने वाला पुरूषतव हैं, परन्तु वह सर्वत्र जितने भी मनके हैं। वह परब्रह्म परमात्मा जो सूत्र रूप में विद्यमान है। उस सूत्र में यह पिरोऐ जाते हैं, तो एक यह विचित्र माला बन जाती है। और इस माला को जो भी धारण करता है। मानो वह यह अमृता व्रते वृत्ति बन जाता है। क्योंकि वास्तव में तो माला को धारण करना ही चाहिए। क्योंकि जो परमपिता परमात्मा जो ब्रह्म है, सतं ब्र्व्हे कृतं मानो वह एक सूत्र रूप में हमें दृष्टिपात आते रहते हैं। और उस सूत्र में हम सब सूत्रित रहते हैं। तो विचार आता रहता है हमें उस सूत्र के ऊपर विचार विनिमय करना है, क्योंकि उन सूत्रों की चर्चाएं परम्परागतों से मानवीय मस्तिष्कों में सदैव निहित रही हैं। और नाना विष्णु के मध्य में मानो वह ब्रह्मसूत्र यह जगत एक मनका बन करके उस मानो सूत्र में पिरोने से ही मानो उसकी आभा निहित हो जाती है।

तो विचार आता रहता है हम उस माला को अपने में धारण करते रहें, जैसे एक वेद का मन्त्र है, और वह वेद का मन्त्र वह मुनिवरों! एक एक शब्द मानो जैसे माला में मनका होता है। इसी प्रकार एक एक शब्द और वह भी शब्द नहीं मानो एक एक अक्षर मानो वह माला की भांति ही तो दृष्टिपात आता है। तो इसीलिए हमें उस माला को धारण करना चाहिए। और वह कैसी भव्य माला है। जो ब्रह्मसूत्र में पिरोई हुई है। मानो जो माला को जान लेता है, माला को अपने में धारण कर लेता है, तो बेटा! वह मालावान बन जाता है। और वह अनन्तमयी धारा के ऊपर अपना विचार विनिमय करना प्रारम्भ कर देता है।

तो आओ मेरे प्यारे! वेद का मन्त्र यह क्या कह रहा है क्या हम मानो देखो, सूत्र को जानने वाले बनें, और उस सूत्र में अपनी भावनाओं का मनका रूपी भावना उस सूत्र में पिरो करके बेटा! एक माला बन जाती है। मेरे पुत्रों! उस माला को धारण करने

वाला ही तो मानव अपनी मानवीयता में सदैव निहित रहता है। और अपने में धारयामि बना रहता है। तो आओ मुनिवरों! मैं इस सम्बन्ध में विशेषता नही देने आया हूँ, विचार केवल यह कि मुनिवरों! हम परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में विद्यमान हैं। हमें मानो देखो, बाह्य राष्ट्र और आन्तरिक राष्ट्र दोनों को ऊँचा बनाना है। आज के हमारे वेद के पठन पाठन मानो देखो, उस माला की चर्चा हो रही थी जिस माला को धारण करने के पश्चात वह मालामयी बन जाता है। तो हमें बेटा! देखो, उस माला को धारण करते हुए इस सागर से पार होना जैसे राजा अपने राष्ट्र को उन्नत बनाने के लिए माला को धारण करता है। और उस माला को मानो देखो, प्रत्येक राष्ट्र अवयवों को उसमें पिरो देता है, तो बेटा! वह माला बन जाती है। आज मैं कैसी माला का वर्णन करने चला हूँ, पुत्रों! जिस माला को धारण करने वाला जिज्ञासु बेटा! विवेकी बन जाता है, और राष्ट्रवेत्ता अपने में राष्ट्रीयता को अपने में धारण कर लेता है। तो विचार आता रहता है कि हम सदैव, उस महानता के ऊपर सदैव विचार विनिमय करते हुए, और उस माला को हमें अपने में धारण करना है, जिस माला को धारण करने के पश्चात, मानव को और शेष आवश्यकता नहीं रहती। तो मेरे प्यारे! आओ, मैं तुम्हें विशेषता में नही ले जाना नही चाहता हूँ, विचार केवल यह कि यह संसार एक माला के सदृश्य है। मेरे प्यारे! नाना प्रकार के लोक लोकान्तर पिरोऐ जाते हैं, तो एक माला बन जाती है। मेरे प्यारे! विचारों को एक सूत्र में लाने का प्रयास करते हैं, और पिरो देते हैं, तो माला बन जाती है। बेटा! एक एक परमाणु जब एक परमाणु परमाणु में जब प्रवेश हो जाता है, तो बेटा! वह माला बन जाती है। इसी प्रकार देखो, राष्ट्र एक राष्ट्र दूसरे से स्नहे कर रहा है, और वह स्नहे करता हुआ एक दूसरें में परणित होने का नाम ही मुनिवरों! देखो, माला बननी है। जैसे माता और पिता हैं, पितर जन हैं, आचार्यजन हैं। मानो शिष्य गण हैं, और इसी प्रकार एक प्रकार की विचारमयी माला बन जाती है। उस माला को कौन धारण करता है? जो परमात्मा को जान लेता है। उस माला को कौन धारण करता है बेटा! जिसको हम आत्मा के रूप में परणित करते रहते हैं।

तो आओ मुनिवरों! देखो, मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें विशेषता में ले जाना नही चाहता हूँ,

विचार केवल यह क्या मुनिवरों! देखो, हम उस माला के सूत्रों को अपनी गणना में ला करके ही तो पार होना है। तो आओ मेरे पुत्रों! मैं कहाँ चला गया हूँ, विचार केवल यह बेटा! कई समय से हमारा विचार चल रहा है, क्या राष्ट्रवाद और तपस्या के ऊपर विचार विनिमय हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक मानव ये कहता है कि अपनेपन को कैसे जाना जाएं, और अपने जाने बिना मुनिवरों! देखो, हम परमात्मा की प्रतिभा को नहीं पा सकेंगें। अपनेपन को हम कैसे जानें? मेरे प्यारे! देखो, इन्द्रियों में ज्ञान और विज्ञान समाहित हो रहा है, प्रत्येक इन्द्रियों के ज्ञान और विज्ञान को हम जानने वाले बनें। और वही हमारी जानकारी है। मेरे पुत्रों! जब हम उसे जानकारी में लाते हैं, प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों को, और हृदय से हृदय का मिलान करते हैं, तो मानो देखो, वही मानवीयता की आभामयी एक उपलब्धि मानी गई है। जिस उपलब्धि को प्राप्त करने के पश्चात, मानव नाना प्रकार की तपस्या में परणित हो जाता है। मेरे प्यारे! एक माला बनाना प्रारम्भ कर देते हैं। तो हमें विचारना है कि हम मानो देखो, विचार विनिमय करते चले जाएं, हमारा जीवन, हमारा राष्ट्र, हमारी मानवीयता कैसे ऊँची बनेगी? मेरे प्यारे! देखो, राम जीवन वृताम् राम देखो, राष्ट्र के लिए गमन करने से पूर्व, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज और माता अरूणधती और देखो, यहाँ भगवान राम इत्यादियों की विवेचना हो रही थी। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा ने अमृतां महात्मां ब्रह्मे कृतं देवत्वां ब्रव्हे कृतं मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने ये कहा कि तुम्हें वशिष्ठ बनना है। तुम्हें इन्द्रिय कृति बनना है। हे राम! यदि तुम राष्ट्र का पालन करना चाहते हो। उन्होंने कहा प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ आपसे क्या यह राष्ट्र की जो आप चर्चा कर रहें हैं, कि यह राष्ट्रवाद क्या है? उन्होंने कहा कि राष्ट्रवाद उसे कहते हैं, वास्तव में तो राष्ट्रवाद उसे कहते हैं, जो अपने ऊपर अनुशासन करता है। और अपने ऊपर जब अनुशासन करता है, अपने को जान लेता है तो वह राष्ट्र को इस प्रकार भोगतव्य में लाता है जैसे शब्द आता है इदन्नमं क्या यह संसार यह राष्ट्र मेरा नहीं है। मैं तो कर्तव्य करने के लिए तत्पर रहता हूँ। तो जो कर्तव्य करके स्वीकार करता है वही राष्ट्रवाद कहलाता है। भगवान राम ने पुनः ये कहा कि महाराज! ये राष्ट्रवाद क्या है? उन्होंने कहा राष्ट्रवाद

बाह्य जगत में उसे कहते हैं, जहाँ राष्ट्र की प्रजा में एक महानता हो और शान्ति की स्थापना हो। और राजा के राष्ट्र में मानो प्रजा और राष्ट्र दोनों एक ही रत्त रहने चाहिएं। मानो उसे राष्ट्रवाद कहते हैं। उन्होंने राम ने पुनः कहा कि भगवन! यह राष्ट्रवाद क्या है? उन्होंने कहा कि राष्ट्रवाद वह है जिस राजा के राष्ट्र में वेद के मर्म को जानने वाले पाण्डितव होते हैं, और जिस राजा के राष्ट्र में मानो पाण्डितव हों, वृत्ति वाले हों और मानो देखो, उसमें अपनी आभा और विवेकी पुरुष होने चाहिएं। मेरे प्यारे! जिस राजा के राष्ट्र में विवेकी पुरूष नही होते, जिस राजा के राष्ट्र में त्याग और तपस्या में महापुरूष नही होते, उस राजा का राष्ट्र मानो देखो, नग्न रह जाता है। इसीलिए परम्परागतों से ही, हमारे यहाँ राष्ट्रीयवेत्ता राष्ट्रीय प्रणाली में, महापुरूषों का बड़ा वर्णन आता है। विवेकी पुरूषों के ऋषि मुनि चरणों को स्पर्श करते रहते हैं। और वह अपने किसी न किसी काल में पिपासा को शान्त करते हैं, और वह पिपासा जब शान्त होती है, तो देखो, राष्ट्रीय प्रणाली पवित्र बनती है। क्योंकि जब राजा अशान्त होगा तो कहाँ जाएगा यदि वह गृह में नही जा सकता, वनों में नही जा सकता, क्योंकि उसके ऊपर एक राष्ट्रीय परम्परा है। मानो वह कहाँ जाता है? मानो राष्ट्र में विवेकी पुरूष हों, वेद के मर्म को जानने वाले हों मानो उनके विचार विनिमय करता रहता है। और विचार विनिमय करता हुआ, मानो देखो, अपने राष्ट्र को उन्नत बनाने में लगा रहता है। तो विचार आता रहता है कि वह महापुरूषों की एक बड़ी विचित्र देन रही है। मुनिवरों! महापुरूषों में एक समय ब्रह्मा व्रतं मानो तुम्हारे पूर्वजों में भी इसी प्रकार रहा। महाराजा दिलीप ने जब तपस्या की, राष्ट्र के लिए नहीं वह सन्तानों उत्पति के लिए उन्होंने महान तप किया महाराज दिलीप ने धेनु के पीछे अपने जीवन को बारह वर्षों का जीवन मुनिवरों! देखो, उन्होंने इसके पीछे उपार्जन किया। और मुनिवरों! देखो, वह अपने में महानता का गान गाने लगे तो मानो देखो, इसकी तपस्या के पूर्ण होने तक, देवताओं की मानो देखो, उद्गीत वाली वाणी में और अमोघ वाणी का वहाँ उपयोग होता रहता है। मेरे प्यारे! उसे श्रवण करता हुआ मानव, अपने में मानवीयता की आभा में रत्त हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, विचार आता रहता है, आज मैं विशेष तुम्हें विचार नहीं दूंगा, केवल ये कि

राष्ट्रवाद किसे कहते हैं? यह विचार आ रहा है। मेरे प्यारे! जब उन्होंने इस प्रकार राष्ट्र का विश्लेषण किया, तो पुनः राम ने वशिष्ठ मुनि महाराज से कहा कि महाराज! यह राष्ट्रवाद क्या है? उन्होंने कहा राष्ट्रवाद वह होता है जब प्रजा में अकर्तव्यवाद की बलवती हो जाती है। तो राजा के एक चुनौती लिए हुए होता है, और वह वशिष्ठ बन करके वह ऐसा राजा वशिष्ठ कहलाता है, जो अपनी प्रजा को समय से मुनिवरों! देखो, अपना उपदेश देना प्रारम्भ करे और वह राष्ट्रवाद क्या है? ये विचार प्रसंग है। तो मुनिवरों! देखो, वेदं ब्रह्मा देखो, महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा क्या देखो, राष्ट्रवाद वह कहलाता है, जो मुनिवरों! देखो, राष्ट्रं ब्रह्मा जो धर्म और मानवीयता को ले करके, जो गमन करता है, और अपने राष्ट्र का पालन करता है। मेरे प्यारे! संसार में वह राष्ट्र कहलाता है जिस राजा के राष्ट्र में से देखो, प्राण न चला जाएं धर्म ही तो देखो, राष्ट्र का प्राण कहलाता है, मेरे प्यारे! देखो, जैसे मानव के शरीर से जब धर्म चला जाता है, तो यह आत्मा नग्न रह जाता है। मेरे प्यारे! जब मानव के शरीर से राष्ट्रवाद से धर्म चला जाता है, तो देखो, यह राष्ट्र अपंग बन जाता है। मेरे प्यारे! विचार आता है, कि धर्म क्या है? जिसके ऊपर मानव इतना बल देता चला जा रहा है। मुनिवरों! देखो, वह धर्म कहलाता है जो देवताओं की ध्वनि है, अथवा धरोहर है, और वही तो ध्वनि बन करके मेरे प्यारे! राष्ट्र को उन्नत बनाती है। विचार आता रहता है राष्ट्रवाद वही कहलाता है जहाँ धर्म और मानवीयता को ऊर्ध्वा में गमन करा करके सागर से पार होने का मानव प्रयास करता है वही तो मानो देखो, राष्ट्रवाद कहलाता है। राष्ट्रं ब्रह्मा व्रतं जो विद्यालयों में अध्ययन करने वाला आचार्य ब्रह्मचारी को अनुशासन में लाता है ब्रह्मचारी अनुशासित होता हुआ वह अपने गृह को भी त्याग देता है। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार विनिमय ये हो रहा है महात्मा से यह प्रश्न किया गया कि महाराज! यह राष्ट्रवाद क्या है? जब मुनिवरों! देखो, पुनः ये प्रश्न हुआ कि यह राष्ट्रवाद क्या है? तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कई काल में वशिष्ठ बोले कि हे राम! राष्ट्रवाद उसे कहते हैं जहाँ प्रत्येक मानव शान्ति की जिस राजा के राष्ट्र में अश्वमेध याग होते हों, और अश्वमेध याग इस प्रकार होते हों जहाँ व्यक्ति विद्यमान हों तो देखो, राष्ट्र अपनी आभा में रत्त

रहने वाला है। मैनें तुम्हें कई काल में वर्णन कराते हुए कहा, हे राम! देखो, तुम्हारे पूर्वज थे महाराजा सगर ने जब अश्वमेध याग किया, तो अश्वमेध याग से पूर्व तो उन्होंने संसार में यह जानकारी की कि मेरा कोई शत्रु तो नही हैं। तो मानो जब यह कोई शत्रु नही रहेगा, तो राजा को अधिकार है कि वह राष्ट्र का पालन करे, और राष्ट्र का पालन करता हुआ मानो अश्वमेध याग को रचाने वाला हो। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, महाराजा सगर ने देखो, अपनी चंहुमुखी सेना को कहा कि मानो देखो, तुम मानो देखो, इस घोड़े के पीछे चले जाओ, और जो भी इस घोड़े को अपने आसन पर नियुक्त कर लेगा, वह मानो राष्ट्रं देखो, राजा को विजय करना है। मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् स्वीकार कर लिया, मेरे पुत्रों! देखो, महाराजा सगर ने अपने पुत्र सुखमंजस से कहा सुखमंजस मानो यह मेरा अश्व जा रहा है। अश्वमेध के लिए और मुनिवरों! देखो, इसकी सुरक्षा करना है। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम मेरे प्यारे! देखो, वह महाराजा का जो अश्व था, वह श्रृङ्गार से सुशोभित है। स्वर्णमयी मानो उसका श्रृङ्गार बना हुआ है। और उसके मस्तिष्क पर लेखनी बद्ध कर दी कि अश्वमेध याग का प्रतीक है। और जो भी इसे अपने में धारण करेगा वह भी मानो देखो, विजय करना होगा इसको मेरे प्यारे! देखो, भ्रमण हो रहा था। अमृतां ब्रह्मणे ब्रहा सम्भवं कृता, ऐसा मुझे स्मरण आता रहता है, कि अश्वेमध याग जो करने वाले वेद के मन्त्रों को जानने के लिए, मानव तत्पर रहता है, उसको जानता हुआ, अपने में कृत्त करता रहता है। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, महाराजा सगर का अश्व भ्रमण करता हुआ पृथ्वी पर किसी राजा ने उसको अपने यहाँ स्थिर नही किया। महात्मा कपिल मुनि महाराज अपने विद्यालय में विद्यमान थे, उनके यहाँ जय और विजय दो राजकुमार देखो, अध्ययन करते रहते थे। वह अस्त्रों शस्त्रों में क्या, मानो बड़े धनुर्विद्या को प्राप्त हुए थे। मेरे प्यारे! उन्होंने अश्व अपने यहाँ स्थिर कर लिया अपने विद्यालय में। मेरे प्यारे! देखो, अश्व कहीं दृष्टिपात नही हुआ, तो महाराज सगर ने ये कहा अपने पुत्र सुखमंजस से क्या तुम सेना को चहुंमुखी जो हमारी सेना है, अपना पुत्रवत जो हमारी सेना है उसे जाओ देखो, अश्व को लाया जाएं। मेरे प्यारे! वह भ्रमण करते हुए सर्वत्र पृथ्वी पर वह मानो देखो, वह अश्व को प्राप्त नही

कर सके, मेरे प्यारे! वह राजा सगर के द्वार पर आ गएं। उन्होंने कहा प्रभु! मुझे कहीं ऐसा भान नहीं हुआ जो मं ब्रव्हे कृतं उस अश्व को प्राप्त कर सकें। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा कहाँ गया, क्या प्रभु हमें कोई प्रतीत नही हैं, उन्होंने कहा जानकारी लाओ बेटा! वह पुनः भ्रमण करने लगे मानो पृथ्वी के ऊपर और मानो पृथ्वी पर दृष्टिपात करने लगे भ्रमण करते हुए वह महात्मा कपिल मुनि के द्वार पर पंहुचें। तो महात्मा कपिल ने मुनिवरों! देखो, उन्हें आसन दिया, और उन्होंने यह दृष्टिपात किया कि वह वहाँ विद्यमान। उन्होंने कहा हे कपिल अमृतां भूतं ब्रह्मे वाजसुतां राष्ट्रीय यह विचार रहा है कि तुम्हारा हमारा संग्राम होगा। क्योंकि तुम्हें अश्वमेध याग करने वाले देखो, अश्व को तुमने अपने यहाँ स्थिर किया उन्होंने कहा भगवन! बहुत प्रिय। जय और विजय को जब यह प्रतीत हुआ, तो जय और विजय देखो, परमाणु विद्या के ऊपर यन्त्रों का निर्माण करते थे, वे महात्मा कपिल मुनि महाराज जहाँ बेटा! दर्शनों के मर्म को जानते थे, जहाँ वे तपस्वी थे, वहाँ वह देखो, अस्त्रों शस्त्रों की विद्या भी जानते थे। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, महात्मा कपिल मुनि महाराज ने अमृतां ब्रह्मे वृतं राजसुतां उन्होंने कहा हे राजन! तुम मानो इस प्रकार वृत्तियों में रत्त न हो मानो उन्होंने कहा कि हम संग्राम करेंगें। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रिय उन्होंने जय और विजय को आज्ञा दी और जय और विजय के यहाँ वह धनुर्यागी वह याग करते थे धनुर्विद्या में महात्मा कपिल जी बड़े पारायण थे। मानो वह धनुर्विद्या के आधार पर उन्होंने बेटा! देखो, संग्राम करना प्रारम्भ किया, वहाँ जैसे ही एक दो यन्त्रों का जय और विजय ने प्रहार किया तो देखो, उनकी मुनिवरों! देखो, बहुत सी सेना नष्ट हो गई। सर्वत्र सेना जब देखो, जब नष्ट हो गई तो मुनिवरों! देखो, मातं ब्रह्मे राजा को यह प्रतीत हुआ कि तुम्हारी सेना नष्ट हो गई है। और वह जय और विजय ने की है और वह महात्मा कपिल के यहाँ देखो, जो व्रतं ब्रह्मे अध्ययन होता रहता है, उसमें सब विद्या विद्यमान है। मेरे प्यारे! ऐसा स्मरण आ रहा है महात्मा ब्रह्मणे राजा ने जब यह स्वीकार कर लिया, तो राजनं ब्रव्हा कृतं ब्रोषणां वृतं ब्रह्मे कृताः मेरे पुत्रों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, महात्मा कपिल मुनि के आश्रम में, बेटा! देखो, सर्वत्र इद्धं ब्रहा वहाँ सब विद्यमान हैं, और राजा सगर और

देखो, उनके पुत्र असंमजस वह दोनों ने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते हुए मुनिवरों! देखो, वह अभ्य ब्रहा मुनिवरों! महात्मा कपिल के आश्रम में पंहुचें महात्मा कपिल ने राजा को दृष्टिपात करके उनका नमः किया अभिवादन किया और उनका देखो, जब उनका आगमन अनुवृत्तियों में रत्त रहने लगे तो बेटा! उन्होंने अपनी गाथा का वर्णन किया मेरे प्यारे! महात्मा देखो, सगर ने यह कहा कि हे राजन! हे ब्रह्मे कृतं हे ऋषिवर! आपने आप देखो, महात्मा हैं। मैं भी एक महात्मा के तुल्य हूँ, भगवन! आप मेरे आश्रम में गमन कीजिए। उन्होंने कहा मैं इस समय नही जा पाऊंगा। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा कि यह मेरी सेना मानो किसने नष्ट की हैं, उन्होंने कहा कि मानो देखो, यह जय और विजय ने की हैं। तुम्हारा अश्वमेध याग करने वाला अश्व भी यहीं विद्यमान हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने जय और विजय से संग्राम करने के लिए तत्पर हुए तो उस समय मुनिवरों! देखो, महात्मा कपिल ने कहा हे जय विजय! तुम यन्त्रों में बड़े पारायण हो। तुम मानो देखो, यन्त्रों में तुमने देखो, नाना लोकों की आभा में रत्त रहने के लिए तत्पर रहे। तो मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है जब यहाँ पृथ्वी मण्डल पर महात्मा कपिल और भी नाना प्रकार के देखो, जैसे विद्यालय से जहाँ परमाणु विद्या पर अन्वेषण होता रहता था। आज मुनिवरों! देखो, मंगल मण्डल में देखो, मृचिका नामक एक वैज्ञानिक था जो अपने विद्यालय में धनुर्विद्या में पारायण तो मेरे प्यारे! देखो, महात्मा कपिल ब्रह्मचारी जय और विजय दोनों मेरे पुत्रों! देखो, यह महात्मा ब्र्व्हे यह मंगल मण्डल में पंहुचें। अपने यन्त्रों के द्वारा क्योंकि यन्त्रों में विद्यमान हो करके लोकों में गमन किया जाता है। मेरे प्यारे! देखो, जब वह मंगल में पहुंचे। तो जय और विजय ने देखो, छः छः माह तक मुनिवरों! देखो, मंगल मण्डल में जा करके उन्होंने अस्त्रों शस्त्रों की विद्या का अध्ययन किया था और उसी विद्या को ले करके जब महात्मा कपिल मुनि महाराज से उन्होंने अपना वर्णन कहा कि प्रभु! हम यह विद्या को जान लिया है। वह ऐसे यन्त्रों का निर्माण करना जानते थे जिन यन्त्रों को वायुमण्डल में त्यागने से ही मुनिवरों! देखो, सर्वत्र वायुमण्डल मेरे प्यारे! शून्य गति को प्राप्त हो जाता है। और प्राणी मात्र मुनिवरों! देखो, शून्यता को प्राप्त हो जाता है। बेटा! मुझे उस विज्ञान

में नही जाना है जिस विज्ञान तो अपनी स्थलियों में बड़ा अनूठा बन करके रहा है। परन्तु मैं केवल तुम्हें इतना उच्चारण कर रहे हैं। क्या सम्भवे ब्रह्मणा व्रतं देवत्वां मेरे प्यारे! देखो, महात्मा कपिल और देखो, ब्रह्मचारियों की इस प्रकार की वार्त्ता मानो प्रारम्भ होती है। और वह भी मुनिवरों! देखो, लोक लोकान्तरों में रमण करते रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, जय और विजय ने परास्त कर दिया और यह कहा श्रवम ब्रहे व्रतं राजना हे राजन! अब तुम क्या करना चाहते हो? मेरे प्यारे! राजा ने कहा कि मैं अश्वमेध याग करना चाहता हूँ, महात्मा कपिल ने आज्ञा दी और महात्मा कपिल और उनके जय और विजय उनके सब ब्रह्मचारी जन मेरे प्यारे! देखो, अयोध्या में आ करके उन्होंने अश्वमेध याग किया। अश्व कहते हैं, बेटा! राजा को ओर मेध कहते हैं प्रजा को, जो इसीलिए देखो, वह अश्वमेध याग बनता है। क्योंकि याग का अभिप्रायः यह है कि अपने आन्तरिक जगत में जो भी मानव देखो, रूढ़ियों को त्यागना है। और सुता को ग्रहण करना है जिससे बेटा! मानव का जीवन पवित्र बन जाएं।

आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विज्ञान के युग में नही ले जा रहा हूँ, विचार केवल यह प्रगट करना है क्या हम मुनिवरों! देखो, अपने में अपनेपन को जानने वाले बनें, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने देखो, भगवान राम को और उनके पूर्वजों की गाथा गा वर्णन कराया। मेरे प्यारे! पुनः भी यह प्रश्न बना रहा क्या प्रभु देखो, यह इसका प्रतिस्रोत नही हैं। क्या मैं यह स्वीकार कर लूं कि राजा सगर ने यह शिक्षा दी। कपिल ने यह किया और वह अश्वमेध याग हो गया। हे प्रभु! मैं यह जानना मेरा प्रश्न ज्यों का त्यों बना हुआ हैं कि यह राष्ट्रवाद क्या है? मेरे प्यारे! देखो, राम ने जब यह कहा कि यह राष्ट्रवाद क्या है? तो महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज जहाँ ब्रह्मवेत्ता थे वहाँ वह वशिष्ठ कहलाते थे, अपने में ही मानो देखो, वशिष्ठता का उन्होंने प्राणति जाना मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा हे राम! देखो, यह जो राष्ट्रवाद है यह क्या है? राष्ट्रवाद उसे कहते हैं, जहाँ धर्म और मानवीयता की रक्षा होती हो। और जहाँ देखो, वह राष्ट्र कहलाता है। जहाँ मेरी पुत्रियों को जहाँ पूज्यता की दृष्टि से दृष्टिपात किया जाता है। और राष्ट्र के एक छोर से दूसरे छोर में मेरी पुत्री चली जाएं। वह भी कोई भी उस पुत्री को देखो, कुदृष्टि पान करने वाला

राजा के राष्ट्र में नही होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, जब यह वशिष्ठ ने कहा कि तो राम बड़े प्रसन्न हुए, क्या प्रभु यह तो आप मुझे आप बाल्यकाल में ही यह शिक्षा देते रहे हैं। उन्होंने कहा शिक्षा तो शिक्षा है, चाहे वह बाल्यकाल में प्राप्त हो जाएं चाहे वह युवा काल में प्राप्त हो जाएं। परन्तु शिक्षा अपनी स्थली पर शिक्षा बनी रहती है। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा वशिष्ठ ने कहा क्या तुम यदि अपने राष्ट्र को बनाना चाहते हो, तो प्रियतम है, और राष्ट्र जब ऊँचा बनता है, जब प्रत्येक मानव के अवयव पवित्र बन जाते हैं। मेरे प्यारे! देखो, भगवान राम ने कहा हे प्रभु! मेरी दृष्टि में तो वही प्रसंग बना रहा है, कि यह राष्ट्रवाद क्या है? राष्ट्रवाद किसे कहते हैं? मेरे पुत्रों! देखो, भगवान राम के शब्दों को श्रवण करते हुए महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि राम का देखो, राष्ट्रवाद का यह कर्तव्य कहलाता है, कि वह मोह नही करे, अति मोह पुत्र हो देखो, पुत्री और अपना वह मानो देखो, ऐसे स्वीकार करे जैसे राजा के राष्ट्र मे और अनन्य प्रजा होती हो इसीलिए प्रजा की भांति जब उसे दृष्टिपात करोगे तो वह तुम्हारे राष्ट्र को हितकर बन करके उन्नत करेगा। मानो प्रजा में और पुत्र में दोनों में अन्तर्द्वन्द्व है पुत्र तो कहते हैं ममता की कुंजी को और मानो देखो, ब्रहे सम्भवं ब्रह्मा प्रजा कहते हैं जो अपने कर्तव्य का पालन करते हैं। वही तो प्रजा कहलाती है। मानो देखो, माता पिताओं को सन्तान देने से पूर्व देखो, संसार को सन्तान देने से पूर्व विचारना है, कि उस माता पिता मानो देखो, उस राष्ट्रवाद में यह आया है कि राजा को चाहिए कि वह पुत्र उत्पन्न न करे, प्रजा का उत्पन्न देने वाला हो। और जब प्रजा उत्पन्न मयी बन जाती है। प्रजा जब समाज में आती है, तो वही प्रजा मानव और राष्ट्रवाद का चिन्तन करने वाली बनती है। तो मेरे प्यारे देखो, उन्होंने कहा कि तुम्हारे राष्ट्र में मानो प्रजा होनी चाहिए और पालक उसका राजा होना चाहिए। जिससे राष्ट्र अपनी आभा में उन्नत हो जाएं। मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है भगवान देखो, वशिष्ठ ने कहा कि हे राम! देखो, राष्ट्रवाद वह कहलाता है जो राजा अपने नियम में पूर्णतव में प्राप्त होता है। राजा प्रातःकालीन जब अन्तरिक्ष में तारामण्डल अपनी छठा में हो उस समय राजा को भ्रमण करना चाहिए। और देखो, उसके पश्चात अपनी शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त हो करके उसमें व्यायाम

करने वाला हो, योगारूढ़ हो आस्वति हो मानो देखो, राजा जब इस क्रियाकलापों को करने के पश्चात मुनिवरों! देखो, वह राष्ट्रीय स्थली पर आता है। और वह यह चाहता है कि राष्ट्र मेरा प्रत्येक प्राणी देखो, याज्ञिक बने, और सुगन्ध का देने वाला हो। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा ब्रह्मणा कृतं देवत्वां ब्रहे मेरे प्यारे! राम बड़े प्रसन्न हुए उन्होंने कहा जब तक हम अपनी शारीरिक क्रिया को शारीरिक जीवन को उन्नत नही कर सकते। हम समाज को राष्ट्र को ऊँचा नही बना सकते। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने यह वाक् कहा सम्भव ब्रहे कृतं मेरे प्यारे! देखो, जो वाणी में है, वही क्रिया में हैं, और जो क्रिया में वही वाणी में और जो वाणी में है उसके मानो क्रियाकलापों में और वही उसके हृदय मे छटा बन करके रहती है। मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् जब उद्गीत रूप में गाया और यह कहा कि राजा को सबसे प्रथम नैतिकता होनी चाहिए। नाना प्रकार की विद्याएं वैदिक विद्याओं में मानो रमण करना चाहिए। देखो, जैसे राष्ट्रवादी नाना प्रकार की विद्या का वर्णन आता रहता है। हमारे यहाँ देखो, विद्याओं में मेरी प्यारी माताएं अपने विद्या में पूर्ण हो जाएं सन्तान को जन्म देने वाली हों। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा दुर्वासा जब मैं त्रेता के काल में आता हूँ, तो महात्मा दुर्वासा ने वेदमन्त्रों के वेद का वह दृष्टा रहे हैं। वेद का दृष्टा वह होता है जो वेद के प्रत्येक मन्त्र के गुणों को जानने वाला हो और उसको क्रियावाहक मानो क्रिया में लाने वाला हो। वह मुनिवरों! देखो, वेदमन्त्र दृष्टा कहा जाता है। तो महात्मा दुर्वासा मुनि देखो, उसी प्रकार देखो, अपने में रत्त होते रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो, मैं द्वापर में या दुर्वासा के स्थान में नही जा रहा हूँ। विचार केवल यह कि मैं वशिष्ठ की ही चर्चा कर रहा था वशिष्ठ मुनि महाराज भी इस विद्या को जानते थे, और इस विद्या को मुनिवरों! देखो, महाराजा नल भी जानते थे, इस विद्या को मुनिवरों! देखो, वृत्तिका रेणकेतु भी जानते थे वह विद्या कौन सी है? मेरे प्यारे! देखो, वेदमन्त्रों का उद्गीत गा रहा है, और प्राण की विद्या को जान रहा है। और प्राण विद्या में बेटा! यह आता है कि जब प्राण का अपान से मिलान मिलाया जाता है। और अपान से उदान का और उदान से समान का और समान का मुनिवरों! देखो, प्राण की प्रतिष्ठा में प्रविष्ट किया जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, अग्नि का जो स्वरूप है, वह अग्नि

अपने में प्रचण्ड हो जाती है। और अग्नि देखो, प्राण रूप बन करके मानो देखो, वह अग्नि दीपक राग के रूप में परणित हो जाती है। वह दीपावली बन जाता है गृह, उसका राष्ट्र भी दीपावली बन जाता है। जो मुनिवरों! देखो, दीपमालिका बन करके एक माला बन जाती है। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, इस विद्या को महात्मा वशिष्ठ मुनि भी जानते थे मेरे प्यारे! देखो, एक विद्या वह कहलाई जाती है। माता के गर्भस्थल में जब हम जैसे शिशु विद्यमान हो जाते हैं। तो माता यह चाहती है कि मेरा बाल्य पवित्र बन जाएं मानो देखो, वह गुरुओं के समीप जाती है और कहती है हे प्रभु! मैं अपने गर्भ से मानो ब्रह्मवेत्ता को जन्म देना चाहती हूँ। एक तो देखो, वह पुत्र है जो पुत्र है एक वह जो प्रजा है, एक वह है जो मुनि प्रवृत्ति वाले पुत्र को जन्म देने वाली है, मानो देखो, जिसे हम ब्रह्मवेत्ता कहते हैं। ब्रह्मनिष्ठ कहते हैं उस विद्या वाला होना चाहिए। तो मेरे प्यारे! देखो, माताओं जब ब्रह्मे उसी देवता और उसी मन्त्र को ले करके दृष्टा बन करके उसी देवता की उपासना कर रही है। और उपासना करके बेटा! प्राण को अपान से मिलान करती हुई वह अपने गर्भ की आत्मा से वार्त्ता प्रगट करती है तो माता अपने गर्भ में रहने वाले शिशु से वार्त्ता करना जानती है तो वह बेटा! वह देवी धन्य है। और वह मेरी प्यारी माताएं धन्य है। मेरे पुत्रों! देखो, उस माता के गर्भ से महान से महान पुत्रों! का जन्म होता है। मेरे प्यारे! इसीलिए ममत्वां ब्रह्मणा वह माताएं बेटा! ऋषि मुनियों को जन्म दे करके अपने जीवन को प्रकाश बना देती हैं। मेरे प्यारे! देखो, वही तो सौभाग्य झलकने लगता है। तो विचार आता रहता है मुनिवरों! आज मैं विशेष चर्चा देने नही आया हूँ, केवल विचार यह महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज ने राम को उन्होंने कहा यह विद्या राजा के राष्ट्र में होनी चाहिए। राजा के राष्ट्र में जब यह विद्या होती है, तो हम उसको राष्ट्रवाद कहते हैं, मेरे प्यारे! यदि यह विद्या नही है, मानो वह ब्रणां ब्रहे वह भी विद्या होनी चाहिए। जब वह तपस्या में परणित होता हुआ अपनी आत्मा को परमात्मा से मिलान करता हुआ, और ब्रह्माण्ड की उसमें पुट लगा करके ब्रह्म की चरी को जानने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, वही तो ब्रह्मणतव कहलाता है।

तो विचार आता रहता है मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं देने आया हूँ, केवल

विचार विनिमय यह क्या देखो, राष्ट्रवाद अपनी आभा में गमन करता रहा है। यदि राजा के राष्ट्र में विवेकी पुरूष नही हैं, महापुरूष नही हैं, मेरी पुत्रियां बुद्धिमान नहीं है, तो मानो देखो, वह अपने राष्ट्र को राजा उन्नत नहीं बना सकता है। मेरे प्यारे! देखो, यह विद्याएं परम्परागतों से ही, मानवीय मस्तिष्कों में पाण्डितव के रूप में रमण करती रही हैं। ब्रह्मवेत्ता जो बेटा! संसार से उपराम हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, मैं इस सम्बन्ध में नही मुनिवरों! महात्मा वशिष्ठ ने कहा राम से राष्ट्रवाद कहते हैं, जिस राष्ट्र की तुम चर्चा कर रहे हो, मेरे प्यारे! देखो, उसके पश्चात उन्होंने कहा प्रभु! ये तो मैंने जान लिया कि इसे राष्ट्रवाद कहते हैं, परन्तु इसको कार्य रूप कैसे दिया जाएगा। उन्होंने स्वतः इस प्रकार के बन जाओ। तो कार्य रूप देखो, स्वतः दिया जाएगा। मेरे प्यारे! जब अपने में सूक्ष्मता रहेगी, तो जगत सूक्ष्म बनेगा, अपने में जब मानवता रहेगी, तो जगत मानव बनेगा, जब देखो, अपना दार्शनिक बन जाएगा तो मानव दार्शनिक बन जाएगा। जब मुनिवरों! देखो, अपनेपन में मृत्यु को विजय करने वाले बनेंगें। तो यह संसार मृत्युञ्जय बन जाएगा। मानो देखो, अपने में हम मुनिवरों! देखो, ब्रह्म ज्ञान की चर्चा करेंगें। ब्रह्म ज्ञानी बनेंगें तो संसार ब्रह्म ज्ञानी बन जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, अपने पन को विचारते हुए और परमपिता परमात्मा के जगत को अपने में स्वीकार कर लें इसीलिए राष्टं ब्रह्मा वह राष्ट्र पवित्र बनता है। प्रजा उसी के अनुसार बरतने लगती है। और जब राजा इस प्रकार नही होगा तो प्रजा नही बरतेगी और प्रजा नही बरतेगी, तो देखो, केवल राजा अपने आलस्य और प्रमाद में परणित हो जाएगा। तो समाज भी उसी प्रकार के अधिकार की पुकार करने लगेगी और अधिकार ही चाहने लगेगी परन्तु देखो, कर्तव्यवाद नष्ट हो जाएगा। और जब अधिकार ही अधिकार को पूर्ण करेगा आज सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके कोई भी मानव किसी के अधिकार को पूर्ण नही कर सका है। **कर्तव्यवाद करते रहो तो अधिकार उसे स्वतः प्राप्त होता रहता है, उसे आवश्यकता नही हैं पुकारने की, परन्तु जब कर्तव्य करता है, तो उस आत्मा को प्रसन्न करता है, आत्मा प्रभु से मिलान करती है मानो देखो, उसके मनों में जो इच्छित फल होते हैं। वह प्राप्त हो जाते हैं।** आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा नहीं प्रगट करने आया हूँ,

मैं व्याख्याता नही हूँ मैं तो मानो सूक्ष्म सा परिचय देने चला आता हूँ। क्या गुरु शिष्यों का इस प्रकार का सवांद रहा है। और उस संवाद का परिणाम यह होता है कि वह राष्ट्र को नही चाहते वह केवल कर्तव्यवाद को चाहते हैं। और जो कर्तव्यवादी होते हैं वही तो देखो, संसार को उन्नत बनाते हैं।

आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने आया हूँ, आज मैं तुम्हें सूक्ष्म सा परिचय देने के लिए आया हूँ और परिचय यह है क्या हम मुनिवरों! देखो, अपने में अपनेपन को जानते हुए और इन्द्रों वर्णासुतं अपनी इन्द्रियों के विषयों को जानते हुए इस सागर से हृदय में प्रवेश होते हुए और वही हृदय का मिलान परमात्मा के हृदय से आलिंगन होने से प्राप्त हो जाता है। आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नही आया हूँ, आज का विचार यह क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाऐ। क्योंकि राष्ट्रवाद अपने में महान पवित्रतव कहलाता है। यह है बेटा! आज का वाक् आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि राजा के राष्ट्र में विज्ञान भी इतना ऊर्ध्वा में होना चाहिए जिस विज्ञान को जान करके सागर से पार हो जाएं मेरे प्यारे! देखो, विज्ञान एक नहीं अपने पूर्वजों का दर्शन करना है। विज्ञान के माध्यम से राष्ट्र की रक्षा करनी है। विज्ञान के माध्यम से अपने क्रियाकलापों में तत्पर रहना है विज्ञान के माध्यम से नाना प्रकार के यन्त्रों का बखान करते हुए वह नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों का यात्री बन जाता है। यह है बेटा! आज का वाक् समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं माना वायु गतं आपा म्। ओ३म् यश्शचाहं रेवं भद्रा आपाहाम्। ओ३म् यमम रथं श्वा रेवाः भद्रा मां गता म्। अच्छा भगवन्! आज्ञा।

१८ 19 05 1990 पुष्प 60 सुविधा न होने पर याग कैसे करें

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर

वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं, और वे यज्ञोमयी स्वरूप माने गएं हैं, मानो वे परमपिता परमात्मा यागों में परणित रहते है। क्योंकि याग उसका आयतन है, उसका सदन है, उसका गृह है, और वह उसी में वास कर रहा है। इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्वरूप वर्णन करते रहते हैं। और वह वास्तव में इस बाह्य और आन्तरिक जगत दोनों में निहित रहने वाला है। हम उस परमपिता परमात्मा की जो अनन्तता है, अथवा उसका जो ब्रह्माण्ड एक प्रकार की यज्ञशाला के रूप में, प्रायः हमें दृष्टिपात आ रहा है। ये याग अपने में बड़ा अनूठा है, अनुपम है। तो आओ मुनिवरों! देखो, आज का हमारा वेदमन्त्र ये कह रहा है कि वह अग्निमयी स्वरूप है। मानो अग्नि प्रत्येक पदार्थ का विभाजन कर देती है, और उसमें भेदक करने की सत्ता विद्यमान रहती है। तो इसीलिए हम अग्नां ब्रह्मा वह जो अग्नि है वह ब्रह्मणे बन करके रहती है वही अग्नि बेटा! जब वेदों का उद्गीत गाने वाला पाण्डितव होता है। मानो उसकी भी वाणी उसके प्रकाशीय हो करके ओर वह मुनिवरों! देखो, अग्निमयी स्वरूप बन जाती है। तो मुनिवरों! देखो, अग्नं ब्रह्मा वह अग्नि मानो नाना प्रकार की अग्नियां बन करके रहती है, जैसे हमारे यहाँ ब्रह्माग्नि भी मानी गई है। तो पाण्डितव ब्रह्म का बखान करता है, अथवा ब्रह्म की प्रतिभा में रत्त हो जाता है। तो वह ब्रह्मण मानो देखो, वेद के मन्थन करने वाला, पाण्डितव अपने में बेटा! महान बनता हुआ अपने में बेटा! अग्नि के स्वरूप में परणित हो जाता है वह अग्निमयी स्वरूप माना गया है। तो इसीलिए ये जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड है, यह अग्निमयी सजातीय हो रहा है, जिसके ऊपर हम परम्परागतों से ही, आचार्य जन बेटा! इसके ऊपर विचार विनिमय करते रहे हैं। आज मैं इस सम्बन्ध में विशेषता में ले जाना नही चाहता हूँ विचार केवल यह कि हम आज बेटा! उस अग्निमयी स्वरूप को अपने में धारण करते चले जाएं, और जब भी मानो देखो, बुद्धिमता और वह पाण्डितव और विवेक में परणित हो जाता है, तो वह मानो देखो, अग्निमयी स्वरूप बन जाता है।

तो आओ मेरे प्यारे! विचार ये चल रहा है यागां भूतं ब्रह्मणा कहीं से मुझे ये प्रेरणा आ

रही है, क्या याग के ऊपर कुछ विचार विनिमय दिया जाएं। बेटा! हमारे यहाँ संसार, एक यज्ञमयी स्वरूप माना गया है। ये जो ब्रह्माण्ड है, ये एक प्रकार की यज्ञशाला है, ये जो मानवीय शरीर है, ये भी एक प्रकार की यज्ञशाला है। और इस यज्ञशाला का और ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञशाला का, जब दोनों का समन्वय कर दिया जाता है, तो मानो वह भव्य याग बन करके याग में परणित हो जाता है। तो आओ मेरे प्यारे! देखो, विचार विनिमय ये कि हम परमपिता परमात्मा के अनन्तमयी याग को जानने वाले बनें, मानो जिसमें स्वयं परमपिता परमात्मा ब्रह्मतव को लिए हुए, अपने संरक्षण में इस ब्रह्माण्ड को मुनिवरों! देखो, जो गतिवान बना रहा है। तो आओ मेरे प्यारे! देखो, यह आज का हमारा वेदमन्त्र ये कहता है कि यज्ञं ब्रव्हा आओ, बेटा! मैं तुम्हें महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ विद्यालय में बेटा! देखो, नाना ब्रह्मचारी विद्यमान हैं, और वह ब्रह्मचारी मुनिवरों! यज्ञं ब्रव्हा प्रातःकालीन नैतिक शिक्षा लेते हुए, ब्रह्मचारियों से याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा ब्रह्मणे यागां भवितं ब्रव्हा कृत लोकां उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारियों! देखो, याग अपने में कितना विशिष्ठतव माना गया है वेद का एक एक वेदमन्त्र उस यागों का बखान कर रहा है, जिन यागों से मानव जीवन में महानता का जन्म होता है, और वह जिज्ञासा उत्पन्न हो जाती है, और वह जिज्ञासु बन करके अपने स्वरूप में रमण करने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, वेदां भू वर्णसुताः यागां ब्रहे प्रातःकालीन बेटा! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज बेटा! याग की चर्चा कर रहे थे, चर्चा करते हुए एक ब्रह्मचारी यज्ञदत्त ने कहा, प्रभु! आप याग को क्या अप्रते यज्ञशाला का भव्यता में निर्माण होना चाहिए जैसे परमपिता परमात्मा ने देखो, मानव को सजातीय रूप में प्रगट किया है। आत्म तत्त्व जिसमें विद्यमान हैं। परन्तु देखो, वह अपने भव्य याग की विशेष कृतियां मानी जाती हैं। परन्तु देखो, उन्होंने कहा सम्भव ब्रहा सम्भवा ब्रहा वर्णसुतं देवत्वां यागाः मेरे प्यारे! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने, जब ऐसा कहा तो उन्होंने कहा प्रभु! यज्ञशाला होना ब्रह्मचारियों! साकल्य होना चाहिए, समिधा होनी चाहिएं मानो देखो, उसमें यज्ञमान का संकल्प भी होना चाहिए। मानो देखो, उन्होंने यह स्वीकार कर लिया ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभु! यह वाक्

तो आपका बड़ा प्रियतम। मुझे दृष्टिपात आ रहा है, परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि कहीं हमें याग की इच्छा है और यह कोई भी सुविधा उसे प्राप्त न हो, मेरे प्यारे! देखो, अमृतां तो ब्रह्मचारियों ने कहा तो प्रभु! उस समय हम याग कैसे करेंगें? तो उस समय कहा कि हे ब्रह्मचारी! यागां ब्रह्मयागसुतं ब्रह्मे मानो यज्ञशाला भी नही है, और तुम्हारे यहाँ साकल्य भी नही हैं, तो यज्ञमान याग करता है, नाना प्रकार अमृते देखो, अग्नि को प्रदीप्त करता हुआ, और वह समिधा ले करके कहता है अग्नेय स्वाहा, प्राणाया स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा मेरे प्यारे! देखो, वह सर्वत्र प्राणों की आहुति देता है, वह हूत कर रहा है, वह समिधा के द्वारा अपने में मुनिवरों! परणित कर रहा है। अग्नं ब्रह्मा वही अग्नि हमारे यहाँ, प्रत्येक वस्तु का विभाजन कर देती है, जो काष्ठ में वास करने वाली अग्नि है, वही अग्नि है मानो जो पृथ्वी को तपायमान कर देती है, वही अग्नि है, मेरे प्यारे! जो मानव के हृदयों में प्रवेश हो करके प्रदीप्त रहती है, वही अग्नि है, मेरे प्यारे! जो माता के गर्भस्थल में शिशु का निर्माण करती है, उससे तेजोमयी का आह्वान करती हुई, माता अपने में धन्य धन्य हो जाती है। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कि यज्ञं ब्व्हा देखो, यज्ञं ब्रहे कृतं समिधा के द्वारा याग होना चाहिए, और वह मानो देखो, अग्नि में इसकी आहुति देता हुआ अपने जीवन को और गृह को उन्नत बनाना चाहता है। मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी यज्ञदत्त ने कहा हे भगवन! यह वाक् भी मैंने स्वीकार कर लिया है। परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ हे प्रभु! यदि वह अमृतां देखो, अग्नि भी न हो और देखो, समिधा भी न हो तो यज्ञमान याग कैसे करेगा? प्रभु!।

उन्होंने कहा देखो, अग्नि भी नही हैं, साकल्य भी नहीं हैं, निर्माणशाला भी नही है, तो हे ब्रह्मणे हे प्रहा वृतं देखो, तुम मानो देखो, याग करो तो जल का प्रोक्षण करो। मानो देखो, जल से उसे आहुत करने वाले बनो अग्नि प्राणाया स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहाः नाना प्रकार के आहुति करता हुआ बेटा! अग्नं ब्रह्मा अग्नि रुद्रो भागा वह अग्नि में देखो, हूत करता रहे, अग्नं ब्रह्मे देखो, अग्नि अस्तुता न वृत्ति हो तो मानो देखो, जल को प्रोक्षण करके, और जल को ले करके देखो, वह प्राण को परणित करता हुआ हूत

करता है, क्योंकि देखो, यह जो जल है यही तो आपो में कहलाता है, आपोमयी ज्योति कहलाता है, अग्नि में परणित होता हुआ, मुनिवरों! देखो, वह अपनी आभा में रत्त हो जाता है। तो विचार आता है बेटा! देखो, जल का प्रोक्षण करना चाहिए क्योंकि परमपिता परमात्मा ने जब इस सृष्टि का निर्माण किया, तो उस समय प्रभु ने मानो देखो, जब पृथ्वी का निर्माण होने लगा, तो पृथ्वी भी मानो देखो, जल में ही जल मग्न रहती है, परन्तु वह जल को ले करके आपोमयी कह करके अग्नि में मानो देखो, पूर्ति करता रहता है, और वह कहता है अग्नेय स्वाहा अग्नं ब्रह्मा वह जल से प्रोक्षण कर रहा है। जो जल आपोमयी ज्योति बन करके रहता है, तो मेरे प्यारे! देखो, जब यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान होता है, तो अपनी दिव्या से कहता है कि हे दिव्या! आओ तुम आचमन करो। सबसे प्रथम मानो देखो, वह अग्ने ब्रहा वह मानो देखो, सबसे प्रथम श्री की कामना करता है, वह सत्य की कामना करता है, मानो श्री की कामना कर रहा है, और वह यज्ञमान मेरे प्यारे! देखो, हूत कर रहा है, अपने में आचमन करता है, उसका क्या अभिप्रायः है? मानो परमपिता परमात्मा ने बेटा! सृष्टिमयी के अन्तर्गत मानो देखो, जल प्रोक्षण रूप में परणित किया है, ये जल ही मुनिवरों! देखो, माता के गर्भस्थल में जब हम जैसे शिशु विद्यमान होते हैं, तो यही आपोमयी ज्योति है, मानो देखो, जल है, जो जल मेरे प्यारे! देखो, उस बाल्य शिशु का ओढ़न और बिछौना बन करके ओर पांशे बन करके मेरे प्यारे! देखो, उसमें वह गृत विद्यमान रहता है। अमृत को पाता रहता है, परन्तु देखो, प्रभु कितना विचित्र विज्ञानवेत्ता है। मेरे प्यारे! देखो, वह अपने अप्रता कृतं वह अपने में हूत कर रहा है, वह कह रहा है आत्म ब्रहे यह आपो ही तो मेरे प्यारे! हम रहते हैं। आपो ही हमारा ओढ़न आपो ही हमारा बिछौना है जिसमें मुनिवरों! देखो, आपो में ज्योति की हम कल्पना करते रहें, और विचारते रहें मानो देखो, ममं ब्रहे कृतो समर ब्रहा मेरे प्यारे! देखो, वह कृति को प्राप्त करता हुआ उसी में महानता का दर्शन करता रहे तो विचारवेत्ता कहते हैं कि बेटा! विचारक कहते हैं कि वह अग्न्याधान हो रहा है, वही मानो देखो, अग्नि प्रचण्ड हो करके और जल के रूप में परणित रहती है, वही आपोमयी ज्योति है, जिस आपो में बेटा! देखो, हूत कर रहा है,

आहुति दे रहा है, और कह रहा है अग्ने स्वाहा प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, और ब्रहे असुतं स्वाहा मेरे प्यारे! देखो, पवमान की आहुति प्रदान करता रहता है। तो विचार आता रहता है पुत्रों! क्या मानो देखो, वह भव्य याग हो रहा है, यागां रुद्रा यागां मया वृद्धं ब्रह्मे यागा मेरे प्यारे! वह पवित्र याग हो रहा है, परन्तु देखो, ऋषि ने कहा हे ब्रह्मचारियों! तुम जल से प्रोक्षण कर सकते हो, जल से ही हूत कर सकते हो, क्योंकि जल प्राणों का रक्षक है, ये जल ही मानो देखो, एक संसार का प्राण बना हुआ है, हम मानो देखो, उस याग में हूत हो जाते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो आगे उन्होंने कहा कि प्रभु! कहीं ऐसा हो जल भी प्राप्त न हो, तो हम कैसे याग करें? उन्होंने कहा कि कहीं जल भी नही है तो पृथ्वी के रजों को ले करके इसको प्रोक्षण करो। और मुनिवरों! देखो, यज्ञशाला में याज्ञिक याग करने वाला, सर्वत्र देवताओं का पूजन करता रहता है, उसका आज भी एक पूजन है। और वह देव पूजा करता रहता है, तो हम अपने में अपने वृतो सम्भव ब्रहे मानो देखो, उसी में हम रत्त हो जाएं। जो हूत करने वाला है, अग्रणीय बन रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहता है याज्ञं भू अव्रहे याज्ञवल्क्य और देखो, ब्रह्मचारी के संवाद में यह आ रहा है, ब्रह्मं ब्रहे कृतं देवाः मानो देखो, याग करना है, मेरे प्यारे! देखो, यदि वह रज से हम देखो, यज्ञ करें, पृथ्वी में प्रोक्षण करते चले जाएं, मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने कहा कि हे ब्रहे यदि ये सुविधा भी कहीं प्राप्त न हो, तो जल भी और आपो भी देखो, ये पृथ्वी के कण भी प्राप्त न हों, तो उन्होंने कहा यदि ऐसा न हो, तो मानो तुम हृदय से याग करो हृदय में शान्त मुद्रा में विद्यमान है, मन्त्रों से अपने में प्रोक्षण कर रहे हैं। प्राण की आहुति प्राण को प्रदान कर रहे हैं। व्यान की आहुति व्यान में प्रविष्ट हो रही है। समान की पूर्ण आहुति मानो समानता में लाने के लिए सदैव तत्पर है। प्राण भी इसमें ओत प्रोत रहता है। सामान्य प्राण मानो देखो, इसकी आभा को लिए हुए रहता है। तो बेटा! ये कैसा विचित्र जगत है? ये कैसी विचित्रता मानो एक दूसरे से कटिबद्ध होने वाला है। सारस्वत माला बन करके, मेरे पुत्रों! वह हृदय में प्रविष्ट हो जाती हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, विचारवेत्ता अपना मन्तव्य अवश्य प्रगट करता है, इसीलिए मैं आज

तुम्हें ये वाक् प्रगट करने के लिए आया हूँ, कि हम अपने जीवन में, एक महानता को जन्म देने वाले बनें, हम एक महानता की प्रतिभा में रत्त हो जाऐ। ऐसा बेटा! देखो, ऋषि ने जब वर्णन किया, तो ऋषि अपने अपने आसनों पर निहित हो गएं। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है कि यागां ब्रव्हे ऐसा क्यों? मेरे प्यारे! देखो, इसका एक दूसरे से तारतम्य लगा रहता है, एक दूसरे से कटिबद्ध रहता है इसीलिए ये माला है, और इस माला को धारण करने वाला बेटा! अपने मानवतव में रत्त हो जाता है। आओ, मेरे प्यारे! मैं इस सन्दर्भ में विशेषता में ले जाना नही चाहता हूँ, विचार केवल ये क्या हमारा जीवन महानता की वेदी पर रमण करना चाहिए, जिससे हमारे जीवन में एक महानता की उपलब्धि हो जाएं, मेरे प्यारे! देखो, जितना भी हम खाद्यं ब्रव्हे वर्णित करते रहते हैं, उतनी मानो देखो, कुछ न कुछ दशा जगत की परिवर्तित होती चली जा रही है। तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तो तुम्हें प्रगट करने नही आया हूँ। विचार केवल यह क्या मुनिवरों! देखो, याज्ञिक बनना चाहिए। और याग में परणित होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, याग अपनी आभा में सदैव निहित रहता है। और याग करने वाला मानो मृत्युंजम ब्रव्हा कृतं देवाः वह मृत्यु को प्राप्त नही होता है, वह मानो मृत्युञ्जय बन जाता है। मृत्यु को अपने में धारण करता हुआ सागर से पार होने का प्रयास करता है। आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा देने नही आया हूँ, याग के सम्बन्ध में तो बहुत कुछ विचार आते रहते हैं परन्तु अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् देवाः भद्राणि भव्यं ब्रह्मणा रुद्रा हसं ब्रहौ गायन्त्वाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव नाना यागों के सम्बन्ध में अपने विचार दे रहे थे। क्योंकि याग में ही परम्परागतों से ही मानव अपने में निहित रहा है और मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी ये प्रगट कराया क्या अपने में बडा विचित्र है। जहाँ हमारी ये आकाशवाणी जा रही है, वहाँ एक याग का आयोजन हुआ, और याग अपने में मैं यह जानता हूँ कि याग अपने में बड़ा विचित्र ऊर्ध्वा में कर्म है, मैं अपने यज्ञमान को कहता हूँ कि हे यज्ञमान! क्योंकि मेरा अन्तरात्मा

यज्ञमान के साथ रहता है, और मैं ये कहता रहता हूँ कि हे यज्ञमान! तुम्हारे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। मानो तुम्हारा अव्रतं देखो, यह जो काल चल रहा है इस काल को मैं वाममार्ग काल कहता रहता हूँ, वाममार्ग उसे कहते हैं, जो उल्टे मार्ग पर गमन करता है। याग इत्यादियों का खण्डन करता है, और उसे खण्डन करने के पश्चात उसकी कृति में नही रहना चाहता। तो विचार आता रहता है पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे, कई कालों में यह प्रगट कराते हुए कहा, आज भी मुझे स्मरण है कि याग अपने में एक बड़ा अनूठा क्रियाकलाप है, बड़ी अनूठी एक विचित्र धारा है, परन्तु देखो, वह अमृतां वह अपने में ही आभा कृतियों में रत्त होने वाला है तो विचार आता रहता है हे पूज्यपाद गुरुदेव! ये जो वर्तमान का काल चल रहा है यह वाममार्ग का है और वाममार्ग उसे कहते हैं, जो सुल्टे से उल्टे मार्ग पर जो गमन करता है। मुझे आश्चर्य होता रहता है, कि ऐसे मानव की आभा कैसे विकृत हो जाती है, और विकृत हो करके अपनेतव को और अपनेतव को वह शान्त कर देता है। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है कि इन विचारों में मैं आज तुम्हें विशेषता में नही ले जा रहा हूँ मैं कोई विशेषता व्याख्याता नही हूँ, केवल परिचय देने के लिए चला आता हूँ, वह परिचय क्या? मेरे प्यारे! देखो, मैं यही परिचय दे रहा था कि हे मानव! तू अपने मानवता के ऊपर विचार विनिमय कर और मानो देखो, याग जैसे ऊर्ध्वा क्रियाकलापों को अपने से दूरी न होने दे। हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य और जीवन की प्रतिभा बनी रहे। ऐसी मेरी कामना रहती है। तो इसीलिए मैं उच्चारण कर रहा था मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, मुझे कहीं राष्ट्रवाद की चर्चा करते हैं, तो कहीं राम की तपस्या की चर्चा करते हैं, पूज्यपाद गुरुदेव बड़ेबडे अनुष्ठानों की विवेचना अपने मन ही मन मे करते रहते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, इन्होंने कहा सम्भव कृता क्या मानो देखो, हम उसी आभा में रत्त रहना चाहते हैं, क्या जहाँ मानो देखो, जहाँ मार्ग में देखो, एक महानता की उपलब्धि हो जाती है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे कई समय से वर्णन करा रहे हैं, कहीं राम की तपस्या का वर्णन करते रहते हैं, कि राम इतने विशाल तपस्वी थे, और कहीं देखो, विश्वभान चर्चाएं होती रहती हैं। परन्तु वेद के माध्यम से विचार आता रहता है कि यज्ञमान अपने में महान

बने, परन्तु देखो, आज मैं इन वाक्यों को उद्गीत गाने नही आया हूँ, विचार केवल ये कि मैं राष्ट्रवाद के ऊपर अपने विचारधारा व्यक्त करना चाहता हूँ। कि राष्ट्रवाद अपने में कितना अनूठा है। राष्ट्र कितना विचित्रतम माना गया है। मेरे प्यारे! सम्भवं कृतं लोकां पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में प्रगट कराते हुए कहा है, परन्तु देखो, उस काल की वार्त्ताएं मुझे स्मरण आती हैं तो हृदय में अमृता आ जाती है हृदय में अमृता का उत्पादन होने लगता है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि अपनी वार्त्ता प्रगट कर रहा है, ऋषि कहता है सम्भवे सम्भवा कृतं देवा हे यज्ञमान! तेरे जीवन की आभा सदैव बनी रहे, तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। परन्तु देखो, मैं राष्ट्रवाद की जहाँ चर्चा करता रहता हूँ, यदि तू अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है, तो तेरे राष्ट्र में रूढ़िवाद नही रहना चाहिए। ईश्वर के नाम पर भिन्न भिन्न प्रकार की रूढ़ियां बन जाती है एक समय वह आता है कि जब रूढ़ियां ही विनाश का एक मूल बन जाती है। मानो देखो, रूढ़ि नही होनी चाहिए, और रूढ़िवाद का प्रसार करना हो, प्रसार में जाना हो तो मानो देखो, उस रूढ़ि को प्रथम विचारों, कि वह रूढ़ि तुम्हारे समीप आना चाहती है तो विचार आता है रूढ़ि ब्रह्मे कृतं देवाः हे मानव! तू रूढ़िवाद में परणित न हो। हे राजन! यदि तू रूढ़िवाद में चला गया, तो राष्ट्र का विनाश हो जाएगा। मानो देखो, इस प्रकार, यदि आधुनिक काल का जो यह समाज है, यह जगत है, ये अपने में बिखरा हुआ मुझे दृष्टिपात होता है पूज्यपाद! मानो देखो, ईश्वर के नाम पर रूढ़ि नही होनी चाहिए। मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण आता रहता है राम का जीवन कितना भव्यता में रमण करता रहा मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है, सम्भवं ब्रहे सम्भवं लोकां ब्रहे कृतं हे राजन! तेरे राष्ट्र में रूढ़ि नही रहनी चाहिए, रूढ़ि क्या ईश्वर के नाम पर नाना प्रकार की रूढ़ियां न बनें, और धर्म एक है धर्म अनेक नही हुआ करते हैं, एक ही मानो धर्म की पूजा होनी चाहिए। जब धर्म अपनी आभा में रक्त हो जाता है, तो मानव के जीवन में एक प्रकाश आ जाता है इसीलिए मेरा तो यह विचार रहता है कि यज्ञमान के गृह में रूढ़िवाद का प्रसार न हो, जिन रूढ़ियों से मानव समाज अपने से दूरी हो जाता है। पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में मुझे ये प्रगट कराते हुए कहा था कि हे ब्रह्म सम्भवं

ब्र्व्हे यह जो रूढ़िवाद है, ये परम्परागतों में भी रहा है, परन्तु वर्तमान में भी हैं। राजा रावण के यहाँ मत बन गएं थे, वह रूढ़ियां बन कर ही तो राजा रावण विनाश को प्राप्त हो गया था, उसके मूल में रूढ़िवाद था, इसी प्रकार वर्तमान के काल में यह रूढ़ियां प्रतीत हो रहा है, रूढ़ियों में मुझे ऐसा प्रतीत होता है जैसे अग्निकाण्ड दृष्टिपात आ रहे हों । क्योंकि रूढ़िवाद विनाश का कारण होता है। जब भी ईश्वर के नाम पर भिन्न भिन्न प्रकार की रूढ़ियां बन जाती हैं, वह रूढ़ियां राष्ट्र के विनाश का एक मूल बन करके रहती है।

मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रगट करते हुए कहा था पूज्यपाद! यह समाज जाने कहाँ जा रहा है, मैं इसको नही जान पा रहा हूँ। मेरे प्रहा धम मन्म ब्रहे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे शिक्षाऐं दी, और विचार दिए कि यदि राष्ट्र को उन्नत बनाना है, तो अग्नि से दूरी कर देना है, नम्रता में लाना है, तो राजा को चाहिए कि वह ब्रह्म ज्ञान का अध्ययन करे, तपस्वी बने। जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कई समय से देखो, राष्ट्रवाद और राम की चर्चा कर रहे थे। पूज्यपाद ऋषिवर विद्यमान हैं, परन्तु वह चर्चा कर रहे हैं महान बनने की, और वह चर्चा जब क्रियावान बन जाती है, तो वही चर्चा महान बन करके राष्ट्र में एक माधुर्यता को जन्म देती है। विचार आता रहता है, कि मैं पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय करा रहा हूँ, आधुनिक काल में वर्तमान में जो काल चल रहा है यहां राष्ट्र को मैं दृष्टिपात करता रहता हूँ, ब्रह्म ज्ञानी तो ज्ञानी परन्तु वह ज्ञानी भी नही हैं, ब्रह्म ज्ञान तो बड़ा प्रिय देखो, आसन की लोलुपता में ये समाज रत्त हो रहा है। वह द्रव्य में और वह गृहस्ता में अन्य में रत्त हो रहा है। विचारता रहता है कि मेरा जीवन कैसे ऊँचा बने? परन्तु मैं यह कहा करता हूँ कि राजा से कहो, हे राजन! तेरे राष्ट्र में रूढ़ि नही रहनी चाहिए, तुम ब्रह्मवेत्ता बन करके उसका निराकरण करो। और अपनी राष्ट्रीय प्रणाली को पवित्र बनाओ। इस प्रकार मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे उपदेश दे रहे हैं, कई समय हो गए हैं, राम की चर्चा करते हुए राम जैसे महान सखा की चर्चा, जिसका जीवन सदैव आभा में निहित रहा है, और वह अपने में अपनेपन की

वृत्तियों में रत्त रहने के लिए तत्पर रहे।

तो विचार आता रहता है, मैं यह उद्गीत गाता रहता हूँ, हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मानो ये जो वर्तमान का काल चल रहा है, ये सुरा सुन्दरी और वाममार्ग का काल चल रहा है, इसलिए मैं अपने यज्ञमान को कहता हूँ, हे यज्ञमान! तुम्हारे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे परन्तु देखो, तुम्हारे गृह में द्रव्य का सदैव सदुपयोग होता रहे, देवताओं की पूजा करना ही तुम्हारा कर्तव्य है। यदि समाज को ऊँचा बनाना चाहते हो। **अग्नि विभाजन करती है, अग्नि भेदन करके तुम्हारी प्रवृत्तियों को महान बना सकती है**, परन्तु इसी प्रकार वेदां भूतं व्रतं ब्रथं पूज्यपाद ने मुझे वर्णन कराया कि भू व्रतं ब्रव्हा ये सर्वत्र एक आभा में निहित होने वाला जगत है। तो मुनिवरों! देखो, अमृतां भूतं ब्रहे मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह उद्गीत गाने के लिए आया हूँ, हे प्रभु! आज राष्ट्रवाद न होने से मानव मानव रक्त का भक्षक बनने के लिए तत्पर हो रहा है। यहाँ धर्म के नाम पर नाना प्रकार की मान्यताएं हैं। और वे मान्यताएं ऐसी बन गई हैं कि जो राष्ट्र का विनाश कर सकती हैं। इसीलिए मैं कहता हूँ कि हे राजन! तू ब्रह्म ज्ञानी बन, और तेरे अंग संग विद्यमान होने वाले रूढ़ियों के आचार्यों का शास्त्रार्थ हो और राजा स्वयं निर्णय देने वाला हो। जब यह निर्णायक बन जाता है तो समाज में पवित्रता आ जाती है। और वह निर्णयाक को प्राप्त करता हुआ सागर से पार होने का प्रयास करता है।

मुझे विचार आता रहता है कि मैं प्रायः इस विचार में नही ले जाना चाहता हूँ मुझे इससे विपरीत ही जगत दृष्टिपात आता है। जब मैं उसके आन्तरिक जगत में प्रवेश होता हूँ, तो मुझे यह संसार अप्रियता में दृष्टिपात आता है, विचार आता रहता है, कि यहां इस समाज में, जो वर्तमान का काल चल रहा है, नाना प्रकार की रूढ़ियां है, और रूढ़ियों को नष्ट कर देना चाहिए, राजा के विचारों से राजा अपने में इन विचारों को ले करके महान बनाने की उसे प्रबल इच्छा हो जाती हैं। तो आज अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये निर्णय करा देना चाहता हूँ, कि यागां ब्रह्मे यागां रुद्रो भागाः याग अपनी स्थलियों में बड़ा विचित्रतव में गमन करता रहता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अपनी अपनी रीतियों में अपनी अपनी आभा में सदैव तत्पर हो जाते हैं मेरे तम्म ब्रहे हे मेरे पूज्यपाद

गुरुदेव! राजा जब ब्रह्मवेत्ता होता है तो राष्ट्र पवित्र बनता है, रूढ़िया नही पनपा करती हैं। जब रूढ़ि नही पनपती तो मानव समाज अपने कर्तव्य का पालन करता है। आज समाज में रूढ़ियां बलवती हो गई है। विज्ञान का दुरूपयोग हो रहा है विज्ञान के दुरुपयोग होने से राजा के राष्ट्र में विज्ञान का दुरुपयोग होना ही मानो देखो, राष्ट्र का एक विनाश माना गया है। मानो यह राष्ट्र विनाश के मार्ग में गमन करना चाहता है मैं आज इस इम्बन्ध में विशेष विवेचना नही दूंगा। आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना नहीं केवल ये अपने यज्ञमान को आशीर्वाद के रूप में, अपनी उदगारमयी वाणी को उद्गीत रूप में गाना चाहता हूँ हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, और तेरे जीवन में महानता की उपलब्धि होती रहे, और गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे **जिससे गृह में सदुपयोग होने से बलवती अग्नि आभा में रत्त होने लगती है।** आओ मैं विशेषता में नही ले जाना चाहता हूँ केवल ये यज्ञमान मेरे लिए अन्तर्प्रिय होता है, क्योंकि अमृत को देने वाला चैतन्य है, और अमृत देना हमारा कर्तव्य है आज मैं विशेषता में न जाता हुआ केवल ये कि हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, तू जीवन में महानता की आभा में रत्त होता रहे। यह आज का वाक् अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से विराम चाहता हूँ मैने बहुत पुरातन काल में कहा है क्या इस समाज में एक अग्नि प्रचण्ड होने जा रही है जो क्रान्ति नई अग्नि कहलाती है जिससे राष्ट्र में अकृणमयता आ जाती है उसी के आने पर मानव अपनी मानवता को ऊंचा नही बना सकता आज मैं विशेष चर्चा न करता हुआ केवल ये उदगीत गाना चाहता हूँ क्या यज्ञं भूतं ब्रह्मा क्या गृह में द्रव्य का सदुपयोग होना ही देवपूजा कहलाती है यह लक्ष्मी है, यदि इसका दुरूपयोग किया जाता है, तो एक समय आता है कि लक्ष्मी उसे त्याग देती है, जब लक्ष्मी का सदुपयोग करते हो तो वह तुम्हारे समीप बनी रहेगी। और वह तुम्हारा पूजन नही तुम्हारा साहस वर्धन करती रहेगी। तो इसीलिए आज का विचार ये आज मैं यह उच्चारण कर रहा था कि हे यज्ञमान! अपने जीवन को महान बनाने के लिए सदैव तत्पर रहो हे यज्ञमान! तुम्हारे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और अखण्डता में सदैव तुम रमण करते रहो। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञ

पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी अभी मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने कुछ उदगार दिए। उन उदगारों में परमपिता परमात्मा की महती विद्यमान है, अमृतं देवाम् ब्रहे हे यज्ञमान! तुम जीवन में सदैव महानता की वेदी पर रमण करते रहो। जैसा महानन्द जी ने कहा है, आज का विचार केवल ये कि राजा ब्रह्मवेत्ता हो, जो ब्रह्मनिष्ठ हो करके निर्णय देने वाला हो, और महानन्द जी ने कहा हमारा यह वाक् चल रहा है कि याग अपने में एक अनूठा क्रियाकलाप है, एक अनूठा कर्म है, उसी कर्मबन्धन से अपने में क्रियात्मकता क्रिया कलापों में सदैव रत्त रहें। आज का वाक् अब समाप्त होने जा रहा है समय मिलेगा शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें आज का वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि यागां ब्रव्हे हम याग में परणित हो जाएं आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मना वायाः। ओ३म् तन्नु गन्धर्व वाचन्नमाः। अच्छा भगवन! आज्ञा।

१९ 02 09 1990 पुष्प 61 शिव की विवेचना

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, अपनी आभा को प्रकट करते रहते हैं। क्योंकि यह जो पाठय क्रम है इसमें प्रत्येक ब्रह्मचारी और प्रत्येक मानव इसकी आभा में परणित होता रहा है, क्योंकि हमारे यहाँ जब वैदिक पाठय क्रम मानो वह महानता में परणित होता है, तो वेदमन्त्र अपने में सजातीय बन जाता है। तो इसीलिए हमारा जीवन उस वेदवाणी में इतना महानता में रमण करता रहे। जिससे हमारा प्रत्येक मानवीय जो स्वर संगम है। चाहे वह वेदमन्त्रों के माध्यम से है, चाहे वह अपने व्यवहार के माध्यम से, परन्तु वह जो स्वर संगम है। उसका समन्वय मानो देखो, उस महानता में रत्त रहता है। जिससे हमारे जीवन में एक महान ज्योति की जागरूकता

हो जाती है।

शिव की विवेचना

मुझे बहुत सा काल स्मरण आता रहता है, जब मानव अपने में गान गाता रहा है वह गान गाने वाला जटा पाठ में गाता है। और वह घन पाठ में गान गाने वाला है। हमारे यहाँ यह माना गया कि महाराजा शिव ने एक समय दाण्डवत नृत्य किया माता पार्वती और शिव ने दोनों ने जब यह मानो देखो, नृत किया दाण्डवत मानो उसमें शब्दों और स्वरों की ध्वनियां उत्पन्न होती रही हैं। परन्तु देखो, इन विचार तो बहुत पुरातन काल में भी आया आज भी एक वेदमन्त्र आ रहा था, कि शिवा सुन्दर ब्रहे कृतं प्रमाणं ब्रहे मानो वह जो शिव है। उसकी हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में बहुत से पर्यायवाची शब्द है। मानो शिव नाम राजा को कहा गया है। और शिव नाम परमपिता परमात्मा का वाची है, और शिव नाम उसे कहा जाता है जो ब्रह्मवर्चोसि मानो अपने में अधिपथ्यवादी होता है, उसे शिव कहते हैं। जो संकल्पवादी होता है। और जिसका संकल्प महान बना करता है, वह शिव कहलाता है। तो हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के पर्यायवाची की विवेचना होती रही है। मानो शिव नाम सूर्य का है, जो प्रकाश के देने वाला है। और यहाँ मुनिवरों! देखो, शिवं ब्रह्मण वृतं राजा का नाम शिव कैसे कहलाता है ये प्रसंग आता है। हमारे यहाँ जब वैदिक साहित्य में और जहाँ शिव का वर्णन आता है, और वहाँ विद्यालय में ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारियों को शिव संकल्प कराते हैं। और यह कहते हैं कि हे ब्रह्मचारियों! तुम्हें शिव संकल्पवादी बनना चाहिए। तो विचार आता है कि शिव का वह कैसे संकल्प है, जो शिव संकल्पवादी कहलाता है, तो हमारे यहाँ नाना प्रकार का विचार विनिमय होता रहा है। परन्तु विचार यही आता है कि शिव नाम राजा का है, और उस राजा को शिव कहा जाता है, जो हिमालय का राजा कहलाता है। वह ऊँचा हैं, महान है, इसी प्रकार राजा जब अपने राष्ट्र में प्रजा को अपने में संकल्पवादी बनाता है, और ये कहता है हे प्रजाओं! आओ, तुम अपने में संकल्पवादी बनो। प्रजा इतने ऊँचे विचारों की होनी चाहिए, जैसे कैलाश। मानो पर्वातं

रोहिणी व्रतं हम कैलाश की उपमा देते रहे हैं। और ये उद्गीत में गाते रहे हैं, कि शिव को राजा कहते है। और वह राजा जिसकी प्रजा शिव संकल्पवादी होती है। और वह राजा मानो शिव कहलाता है, जिसकी प्रजा में एक महानता की ज्योति जागरूक रहती है। जैसे हिमालय ऊँचा होता है, ऐसे ही ऊर्ध्वा में विचारवेत्ता ही मुनिवरों! देखो, हिमालय की सन्तुलना कर सकते हैं। तो विचार आता रहता है उस राजा का नाम शिव है, जहाँ प्रजा इस प्रकार की ऊर्ध्वा में विचारवान होनी चाहिए। जिन विचारो में महानता की ज्योति जागरूक हो जाती है। और वह हिमालय के तुल्य होनी चाहिए, जिससे वह ऊर्ध्वा में गमन करता है मेरे प्यारे! देखो, ये शिव संकल्प ब्रह्मणा व्रतं हमारे यहाँ देखो, यहाँ राजा को जहाँ शिव की उपाधि प्रदान की है वहाँ परमपिता परमात्मा का नाम भी शिव कहलाता है। जो बेटा! प्रजा का स्वामी, जो वेदमन्त्रों पर अधिपथ्य करने वाला हो और प्रत्येक प्राणी के हृदय में एक महानता की प्रेरणा जागरूक होती हो, ऐसा जो प्रजा का नेतृत्व करने वाला है, इस प्रकार की प्रजा का तो उसे शिव कहते हैं। तो हमारे यहाँ शिव अपने में संकल्पमयी कहलाता है। मेरे प्यारे! मुझे मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराते हुए कहा था, शिव नाम राजा है। जो हिमालय का राजा, और वह देखो, त्रेता के काल में भी वह राजा रहे। परन्तु देखो, राजा रावण ने बहुत सी शिक्षाओं का अध्ययन किया। क्योंकि वह उनके आचार्य भी थे और देखो, राज्य सभा को नीति देने वाले थे। और वह मानो देखो, अपने उदगार देते ही रहते थे मेरे प्यारे! वह शिव कहा जाता है, जो शिव विज्ञानवेत्ता हो, और माता पार्वती ओर शिव दोनों गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर मुनिवरों! भयंकर वन में मनन और चिन्तन करते रहें हैं। और उनके मनन और चिन्तन करने की शैली बड़ी विचित्र रही है। उनका जो मनन और चिन्तन है। वह अपने में बड़ा सार्थक रहा है।

आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें ऐसे काल में ले गया हूँ, जहाँ मैं साहित्य के पृष्ठों को अपने समीप लाता लाता चकित हो जाता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, माता पार्वती भी मानो सतो अमृतं वह भी अपने में अनुसन्धान कर रही है, और शिव भी संकल्प सहित अपना अनुसन्धान कर रहे हैं। और प्रजा भी मानो देखो, उनके यहाँ अनुसन्धान का अनुशरण

करते रहें हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था, किसी काल में जिस यन्त्र में यह विशेषता रही है, क्या उस यन्त्र को ले करके वह मानव संग्राम कर रहा है, और संग्राम करते हुए मुनिवरों! उसका वध करना चाहता है तो वह मुनिवरों! देखो, उसकी जो शक्ति है वह मानो कई गुणी बन करके वह उस राजा को अपने में विजय कर लेती है। मानो वह आर्कषण शक्ति कहलाती है। और जब तक वह सत्ता रहती है जब तक उस मानव के या वैज्ञानिकों के प्राणों का हनन नही कर सकता। मेरे प्यारे! देखो, यही अप्रतां यन्त्र माता पार्वती और शिव ने मेरे प्यारे! देखो, महात्मा मार्कण्डेय मुनि महाराज को आश्रम में प्राप्त किया था मार्कण्डेय वह ऋषि कहलाते थे जो बेटा! देखो, अपने में विज्ञानवेत्ता थे, और विज्ञान की तरंगों को ले करके मुनिवरों! देखो, पृथ्वी और चन्द्रमा के जहाँ दोनों की आकर्षण शक्ति एक ही रूप में हो जाती वहाँ वह अपना देखो, उन्होंने आश्रम का निर्माण किया और वह मुनिवरों! देखो, उसी आर्कषण शक्ति पर स्थिर रहे। और यन्त्रों का समूह भी वृत्त किया मेरे प्यारे! देखो, मुझे कुछ ऐसा श्रवण हमने किया ऐसा स्मरण भी आता रहा है, क्या विज्ञानवेत्ता बेटा! अपने में बड़े महान रहे हैं, राजा वह शिव जो विज्ञानवेत्ता है, अपने में विज्ञान की उड़ाने उड़ रहा है और कैसी विचित्र उड़ाने हैं, उसकी मेरे पुत्रों! वही शिवा सुन्दरं ब्रह्मणा कृतं देवत्वां ब्रह्मणे मेरे पुत्रों! देखो, वह शिव कहलाता है जो विज्ञानवेत्ता है और उनके यन्त्रों में विद्यमान हो करके बेटा! अपने में अनुसन्धान करते हैं। उन्होंने ऐसे ऐसे यन्त्रों का जाना, जो परास्त नही हो सकता है। परन्तु ऐसी ऐसी विचारधाराएं वैदिक साहित्य में आती रहती हैं, जहाँ ज्ञान और विज्ञान अपने में बड़ा सार्थक बन करके रहा है। मेरे प्यारे! देखो, राजा अमृतं ब्रह्मणा जब यन्त्र का निर्माण कर लिया, तो हिमालय के धिराज थे, परन्तु देखो, उन्होंने नाना प्रकार की, इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया, मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण है एक समय देखो, महात्मा गणेश जो उनके पुत्र कहलाते थे, परन्तु हनुमान की सहायता से, उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था जिस यन्त्र में विराजमान हो करके, बेटा! वह चन्द्रमा की यात्रा करते रहें। और चन्द्रमा की यात्रा में सफलता को प्राप्त हो करके वहाँ से, ज्ञान और विज्ञान की बहुत सी आभाओं को ले

करके, अपने मानो पृथ्वी मण्डल पर आ पाएं। तो विचार आता रहता है। उन्होंने मंगलं ब्रव्हे महाराजा शिव ने एक यन्त्र का निर्माण किया था जिसमें स्वर शक्ति थी, मेरे पुत्रों! देखो, वह एक समय जब रावण को यह प्रतीत हुआ कि महाराजा! शिव के द्वारा एक ऐसी अमोघ शक्ति है और वह यन्त्र उन्होंने महर्षि मार्कण्डेय की सहायता से प्राप्त किया है। जो मानव संग्राम कर रहा है, परन्तु जब तक वह यन्त्र उनके सहित रहता है। उनकी तरंगें आती रहती हैं वह तरंगों से शरीर का कोई भी मानव वध नही कर सकता। बेटा! देखो, वही शक्ति हमारे यहाँ देखो, जब महाराजा शिव ने जानी तो रावण को यह प्रतीत हुआ कि ऐसी शक्ति उनके द्वारा है ऐसा यन्त्र है। तो मेरे प्यारे! देखो, यन्त्र को ले करके अमृतं ब्रह्मणा देखो, उन्होंने यन्त्र को स्वीकार किया, किसी रूप में और स्वीकार क्या वह शिव के द्वारा प्रार्थना की, चरणों की वन्दना की वह सखा होने से वह यन्त्र उन्होंने प्रदान कर दिया। इसका नाभि से समन्वय होता है। जिसका हृदय से समन्वय होता है। वह यन्त्र ला करके मेरे प्यारे! देखो, अपने यहाँ अपने गृह में एक स्तम्भ के मध्य में, उस यन्त्र को स्थिर कर दिया, परन्तु यन्त्र की तरंगें मानव को तरंगित करती रहीं, जब तक तंरगें उसमें हैं, मानो तब तक वह नाभि और हृदय केन्द्र को सत्ता प्रदान करता रहता है, उसका वध नही कर सकते।

तो बेटा! मुझे स्मरण आता रहा है क्या इस प्रकार का विज्ञान मानवीय मस्तिष्कों में बड़ा तत्पर हो करके रहा है। और वह उसी में तन्मय हो गएं हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, आज मैं तुम्हें विशेषता में नही ले जा रहा हूँ, मेरे प्यारे! देखो, शिव महाराजा, रावण के आचार्य भी थे और वह गुरु भी कहलाते थे। उन्होंने यन्त्र प्रदान कर दिया। तो बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है जब राजा रावण और देखो, भगवान राम का संग्राम हुआ था किसी काल में बेटा! उसमें ये विशेषता रही क्या रावण की नाभि से उस यन्त्र का समन्वय रहता था और वह राम से नष्ट नही होता था। मेरे प्यारे! जब कई समय हो गएं, राजा रावण और राम के संग्राम को, जब बारह दिवस हो गएं थे संग्राम होते हुए दोनों का। राम आश्चर्य में हैं, और राम ने यह कहा अपनी सभा की, एक सभा एकत्रित की कि भई! ये तो बड़ा आश्चर्य जनक है। क्या मानो देखो, रावण का वध नही हो रहा

है। उन्होंने कहा तो भगवन क्या करें? मुनिवरों! देखो, हनुमान और जामवन्त से कहा हे जामवन्त! तुम जानते हो महाराजा शिव को, उन्होंने कहा प्रभु! जानता हूँ। हनुमान से कहा प्रभु! मैं उन्हें भी जानता हूँ, और उनके जो जेठे पुत्र हैं। वह मेरे सखा रहे हैं। मैं उन्हे भी जानता हूं। मेरे प्यारे! विभिषण से कहा हे विभिषण! यह रावण का वध क्यों नही हो रहा है? उन्होंने कहा प्रभु! इसका उत्तर महाराजा शिव देंगें। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रिय। तो उन्होंने कहा शिव के द्वारा कौन जा सकता है? उन्होंने कहा शिव के द्वारा देखो, जामवन्त और हनुमान को दोनों को ब्राह्मण का रूप धारण करके यह जाने चाहिएं। मेरे प्यारे! ये राम ने यह स्वीकार कर लिया। और मुनिवरों! देखो, जामवन्त हनुमान को ये आज्ञा दी कि जाओ तुम शिव से यह प्रतीत करके आओ कि इसका वध क्यों नही हो रहा है? क्या राष्ट्र में अन्धकार ही रहेगा प्रकाश नही आ पाएगा। जब तक मानो यह रहेंगें अभिमान तो तब तक देखो, राष्ट्र में प्रकाश नही आ सकेगा, अन्धकार की उपलब्धि होती रहेगी। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। मेरे प्यारे! महारजा जामवन्त और हनुमान दोनों ने प्रस्थान किया, और भ्रमण करते हुए बेटा! कैलाश पर पंहुचें जहाँ वह राजस्थली में वह राज करते थे मेरे पुत्रों! देखो, जब उनके समीप पंहुचें, तो उन्होंने बेटा! उनका स्वागत किया, आओ, भगवन! उन्हें आसन दिया। विराजमान हो गएं। उन्होंने कुछ अतिथि सेवाए कीं, और अतिथि कन्द मूल पाने के पश्चात, उन्होंने शिव ने कहा कहो जामवन्त! अब तुम्हारा आगमन कैसे हुआ है? उन्होंने कहा कि प्रभु मेरा आगमन इसीलिए हुआ है, क्या आपसे से कुछ प्रश्न करने हैं? उन्होंने कहा कि मैं तो प्रश्न के सुयोग्य नही हूँ। तुम मंगलं ब्रह्मे तुमने बड़ा अध्ययन किया है। उन्होंने कहा नही भगवन राष्ट्रीय विचार गोष्ठी में विद्यमान होना चाहते हैं। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम तो वह विचारधारा उनके रात्रि के काल में ही मुनिवरों! देखो, विचार गोष्ठी हुई और विचार गोष्ठी में यही हुआ कि हम कैसे विजय हो सकते हैं? राजा रावण ने कहा कि मेरा तो सब कुटुम्ब समाप्त हो गया है। परन्तु मैं एक रहा हूँ विजय को प्राप्त करने के लिए विजय कर पाऊंगां मेरे प्यारे! देखो, जामवन्त ने कहा भगवन! मैं आपको यह प्रश्न जिज्ञासा मेरी जिज्ञासा है कि हे प्रभु! रावण को आप जीवित दृष्टिपात करना चाहते

हो? उन्होंने कहा नही जामवन्त, ऐसा कोई हमारे समीप, ऐसा विचार नही आ पाया है। तो उन्होंने कहा प्रभु! मैं राम का सखा हूँ और राम ने यह कहा कि महाराजा! शिव से ये जान करके आओ, क्या इस रावण का वध कैसे होगा? आज बारह दिवस हो गएं हैं संग्राम करते करते और बारह दिवस में भी इनका ये शरीर मृतक नही हुआ है। उन्होंने कहा बहुत प्रिय! तो महाराजा शिव ने कहा क्या मेरा निर्माणित किया हुआ एक यन्त्र है, जो मुझे महर्षि मार्कण्डेय मुनि महाराज ने मुझे प्रदान किया। जब मैं उनके यहाँ अन्तरिक्ष में पंहुचा, जहाँ चन्द्रमा और पृथ्वी की सीमा आकर्षण शक्ति में जहाँ बद्ध रहती है वहाँ पंहुचें हैं और मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणे कृतं देवत्वां ब्रह्मा हे प्रभु! यही प्रसंग बना रहता है कि उनका कैसे वध हो, उन्होंने कहा मुझे मार्कण्डेय से ये मानो सत्ता प्राप्त हुई है और वह राजा रावण को मैंने प्रदान कर दी है। जामवन्त बोले कि महाराज! इसका क्या नृत्त होना चाहिए? इसका क्या मानो विकल्प होना चाहिए? उन्होंने कहा भई! वो यन्त्र नष्ट हो तो ये रावण नष्ट हो सकता है। उन्होंने कहा भगवन! वह यन्त्र कैसे नष्ट होगा? उन्होंने कहा रावण के जो महर्षि भारद्वाज से महर्षि विश्वमित्र से जो यन्त्र प्राप्त हुए हैं, उनमें एक यन्त्र है इस प्रकार का और वह यन्त्र जब तक समाप्त नही होगा, तो रावण के नाभि हृदय केन्द्र में शक्ति प्रदान होती रहेगी, और वह इसका शरीरान्त नही होगा। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा तो ऐसा ही किया जाएं। तो मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा कहाँ वह यन्त्र? यन्त्र तो महारानी मन्दोदरी और रावण को प्रतीत है, और किसी को नहीं। और वह उनका जो गृह है उनका विश्राम करने का उनका जो निचला जो स्तम्भ कहलाता है। इसीलिए मानो देखो, उसके मध्य में वह यन्त्र स्थिर रहता है। और यह यन्त्र देखो, ब्रह्मणे उसे शक्ति देता रहेगा, रावण का वध नही होगा। तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। यह वार्त्ता ले करके और वहाँ से दोनों ने गमन किया महाराजा शिव ने कहा कि एक वाक् और मेरे से रह गया है। महाराजा हनुमान बोले कि प्रभु! उच्चारण कीजिए? उन्होंने कहा तुम गणेश जी को जानते हो। हां प्रभु! जानते हैं गणेश जी, हमारे शिक्षा में मानो दोनों का एक ही पाठय क्रम रहा है। हनुमान जी ने कहा वह उनके द्वारा चले जाओ। और उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया है। और यह यन्त्र मानो

यन्त्रित हो करके मानो सर्वत्रता को समाप्त कर सकता है। उन्होंने कहा नही प्रभु! जो न्याय है वह यही कहता है जो उच्चारण कर दिया, आपने प्रश्न का तो बेटा! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आता रहता है, क्या मुनिवरों! देखो, महाराजा हनुमान और जामवन्त दोनों भ्रमण करते हुए, वह लंका में उनका प्रवेश हुआ और महाराजा राम के मानो देखो, कक्ष में पंहुचे और राम नामं ब्रव्हे कृतं देवाः रावण को यह प्रतीत था क्या कोई अतिथि आ सकता परन्तु वह सर्वत्र लंका में भ्रमण करते हुए उनके गृह का निरीक्षण करते हुए और वह भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, राम के कक्ष में पंहुचे, जो राम देखो, रावण के सम्बन्ध में चिन्तित हो रहे थे। और यह विचार विनिमय कर रहे थे कि यह तो बड़ा बलिष्ठ है उन्होंने कहा जामवन्त और हनुमान जी दोनों राम के द्वार पर पंहुचे राम ने कहा कहो सखाओं! तुम क्या सूचना लाओ हो? उन्होंने कहा प्रभु! महाराजा शिव ने ये कहा है कि उन्होंने यत्र को शब्दों से घोषित कराया है, और वे शब्द मानो उनके गृह में स्थित है, जब तक वह मानो यन्त्र रहेगा तब तक उसे शक्ति प्राप्त होती रहेगी वह नष्ट नही होगा। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। उन्होंने बेटा! अपना क्रियाकलाप बनाया, और यह कहा कि यह कैसे नष्ट हो सकता है? क्या इसमें विचारधारा विचित्र होनी चाहिएं। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा हे हनुमान! हे जामवन्त! जाओ यन्त्र को किसी प्रकार से ले करके आओ। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। यत्न करेंगें प्रभु! वह भ्रमण करते हुए वह मुनिवरों! देखो, रावण के कक्ष में आए और रावण को दृष्टिपात किया वह चिन्ता में थे। कि मेरा कुटुम्ब चला गया, और अब मैं राम को नष्ट कर दूंगा, तो मैं इकला राज करके क्या करूंगा यह भी चिन्ता थी उन्हें, यह उनके हृदय में नाना प्रकार की क्रिया उत्पन्न हो रही थीं। मेरे पुत्रों! जब वह पंहुचे तो उनका बड़ा स्वागत किया। उन्होंने कहा आओ विराजो। उन्होंने कहा प्रभु! आपं ब्रव्हे कृतं कैसे दुखित हो रहे हो। उन्होंने कहा प्रभु! मैं इसीलिए चिन्तित हो रहा हूँ क्या मैं लंका के राष्ट्र में अपना क्रियाकलाप करके क्या करूंगा? मैं चिन्तन कर रहा हूँ मेरा निमटारा नही हो रहा है। हनुमान जी बोले उनकी एक कृति ले करके उन्होंने कहा हे भगवन! आप रावण हैं एक राशि है राम और रावण की राम के तुम आश्रय क्यों नही लेते? रावण ने कहा प्रभु!

ऐसा नही हो सकता। मैं उनसे अपनी सन्धि नही करूंगा। मेरे प्यारे! ये विचारधारा उनकी सम्पन्न वृत्तियों में रत्त हो गई। मेरे प्यारे! देखो, एक समय अमृतं कुछ समय वहाँ वास करने के पश्चात, वह बेटा! एक समय बेटा! महारानी मन्दोदरी के समीप पंहुचें, और महारानी मन्दोदरी ने कहा आईए भगवन! विराजिए वह ब्राह्मण थे, वह जान नही सकीं। और यह मंगलं ब्रहे जब गृह में उनका स्वागत किया गया। उन्होंने कहा भगवन! आईए, कुछ पान कीजिए। उन्होंने कहा जामवन्त बोले कि हम ब्राह्मण हैं। हनुमान जी ने भी कहा हम ब्राह्मण है। हम मानो देखो, कुछ नही पान करेंगें। उन्होंने कहा क्यों प्रभु! ऐसा क्यों? उन्होंने कहा हम कुछ दान प्राप्त करने आए है। दान हमें प्राप्त होगा तो हम तुम्हारे यहाँ अन्न इत्यादि का पान कर सकते हैं। उन्होंने कहा प्रभु! मेरे समीप क्या दान देने को है? मेरा तो लंका मानव का मानो विनाश के मार्ग पर जा रहा है। हे प्रभु! अमृतं ब्रह्मा आप अन्न का पान कीजिए, हमारे यहाँ यह कहते हैं, कि जिस देखो, जिस गृह में, बुद्धिमान ब्रह्म का चिन्तन करने वाला, गृह में आ जाता है, और गृह में आने के पश्चात, यदि उसका स्वागत नही किया जाता। उसको अन्न इत्यादि पान नही किया जाता है। तो वह अपने पापों को त्याग देता है और गृहस्थियों के पुण्यों को ले जाता है। हे प्रभु! आप अपने पाप त्याग देंगे और मेरे पुण्य ले जाएंगें और मैं दीन बन जाऊंगीं। उन्होंने कहा तो देवी! हम अन्न नही पान करेंगें जब तक हमारी इच्छा पूर्ण नही होगी। उन्होंने कहा प्रभु! तुम उच्चारण करो क्योंकि प्रतिज्ञा बद्ध वही प्राणी होता है, जो चाहता है कुछ प्रदान किया जाएं, तुम भिक्षुक हो और हम गृहाश्रम में वास करते है। क्योंकि गृह वही कहलाता है जो मानो देखो, सबका स्वागत करता है। हे प्रभु! हम आपका स्वागत करते हैं वह स्वीकार करो। उन्होंने कहा तो हे माते! हे दिव्या! तुम्हारे ये जो खम्ब विराजमान है इस खम्ब के मध्य में एक यन्त्र विद्यमान है और हम उस यन्त्र को चाहते हैं। अन्यथा हम भोजन नही करेंगें। मेरे प्यारे! देखो, महारानी मन्दोदरी, जहाँ वेद के मर्मज्ञ विचारों वाली थी कि उन्हें विचार विनिमय करने लगी कि यह तो मेरा सुहाग है, उन्होंने कहा हे ब्रह्मवेत्ताओं! मैने तो तुम्हें यह किसने कहा है कि यन्त्र वहाँ स्थिर है तो मुझे यह तो और मेरे स्वामी को प्रतीत है उन्होंने कहा हे भगवन!

हे ब्रह्मणो तुम मुझे जानो कि हम ब्राह्मण हैं, आपकी दृष्टि में परन्तु महाराजा शिव ने निर्णय दिया मुझे शिव ने कहा है उन्होंने कहा कि जब शिव मेरे सुहाग को नही चाहते तो मैं यन्त्र को प्रदान कर सकती हूँ। क्योंकि शिव तो हमारे राष्ट्र के सखा है और मानो देखो, इस लंका के वह सर्वत्र कहलाए गएं हैं, जब मेरे पूज्यपाद जो मानो देखो, वह क्रीति धर्मा के पुत्र कहलाते थे मानो देखो, महाराजा शिव के जो पिता थे वह क्रीति धर्मा थे और क्रीति धर्मा के वह पुत्र कहलाते थे ये हमारा व्रत है वे भी इस वंशलज के लंका के बड़ेमर्म को जानते हैं, और जो भी हिमालय का राजा बनता है, उसी को शिव कहते हैं। आपको यह तो प्रतीत है कि वह जो क्रीति धर्मा शिव कहलाते थे उनके पिता और जो आज राजा शिव हैं, उनको मानो मारूति नाम का राजा कहलाते हैं। और मारूति नाम का राजा जब हिमालय में आ गया तो वह शिव कहलाया यह शिव एक उपाधिवत है। और यह उपाधि मानी गई है जिसके राष्ट्र में इतने ऊँचे विचारों वाली प्रजा हो, पर्वतीय क्षेत्रों में जो राज करने वाला हो, उसे शिव कहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, महारानी मन्दोदरी ने कहा कि वह जो शिव है, यदि वह सखा मेरे सुहाग को नही चाहते तो मैं यन्त्र को प्रदान किए देती हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, महारानी मन्दोदरी ने शिव की आज्ञा का पालन किया और उन्होंने बेटा! जो खम्ब विद्यमान था, खम्ब के मध्य में जो यन्त्र था, उसे निकास करके बेटा! देखो, उन्हें प्रदान किया। उन्होंने कहा धन्य है मातेश्वरी! तुम्हारे वाक् को तुम्हें धन्य है तुम्हारे इस दान के लिए, जो तुमने हमें यह दान दिया, यह दान मैं नही ये तुम्हारा सुहाग है, महारानी बोली प्रभु! मैं इसको जानती नहीं परन्तु तुम इतने प्रसन्न हुए यन्त्र को ले करके, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि तुम ब्राह्मण नही हो, मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है, बेटा! दोनो वह मौन हो गएं और दोनों मौन हो करके कहा हां मातेश्वरी! तुम सत्य हो, मेरा नाम जामवन्त है, और यह महाराज हनुमान है, जब मुनिवरों! देखो, यह महारानी मन्दोदरी ने स्वीकार किया तो मेरे प्यारे! अपने में मौन हो करके कहा कोई वाक् नही अमृतां भू वर्णनं ब्रह्मे कृतं कुटुम्ब तो मेरा चला गया परन्तु पति रहा है, मैं सुहाग की रक्षा करना चाहती थी। परन्तु जब सर्वत्र राजा महाराजा भी नही चाहते रावण

को तो मानो देखो, इसका वध तो होना ही था। तो मेरे प्यारे! अपने में इस प्रकार की वार्त्ता सु गतं ब्रह्मणो वर्णन करती हुई यन्त्र को प्रदान कर दिया। मेरे प्यारे! यन्त्र को ले करके, वह यन्त्र मुनिवरों! देखो, वह ब्रणो कृतं मुझे शिव के यहाँ से आकशवाणी हुई, बेटा! यन्त्रों के द्वारा, उन्होंने कहा हे जामवन्त! इसे समुद्र मे समर्पित कर दो, अन्यथा ये उसे शक्ति देता रहेगा। तुम्हारे आश्रम में भी विद्यमान रहेगा, तो यह रावण को संग्राम के संग शक्ति देता रहेगा। मेरे पुत्रों! उस समय यन्त्र को ले करके नाभि केन्द्र को सत्ता देता है। मेरे प्यारे! देखो, जामवन्त, हनुमान ने उसके मध्य में विद्यमान कर दिया मेरे प्यारे! देखो, वह यन्त्र समाप्त हो गया। जब रावण से संग्राम हुआ तो बेटा! वह शक्ति आनी समाप्त हो गई मेरे पुत्रों! देखो, जब वह उन्होंने यन्त्रों का प्रहार किया तो राजा रावण ने विचारा कि आज मुझे कोई शक्ति प्राप्त नही हो रही है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा राम ने कहा रावण आज तो तुम्हारा वध होना ही है। उन्होंने कहा प्रभु! यह क्यों उन्होंने कहा क्योंकि देखो, यह आज तुम्हें प्रतीत भी हो रहा होगा, मेरे प्यारे! देखो, उनके शस्त्रों से वध कर दिया रावण देखो, अपने रसातल को चला गया। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार क्या है हमारे यहाँ देखो, विदुषी दिव्या ऐसी ऐसी माताएं हुई हैं। जो इतना त्याग कर सकती हैं। वह त्याग और तपस्या की महान मूर्ति कहलाती हैं। मेरे प्यारे! देखो, आज मैं तुम्हें विशेषता में नही ले जा रहा हूँ, यह मैं साहित्य के पृष्ठों को तुम्हारे समक्ष नियुक्त इसीलिए कर रहा हूँ। क्या मुनिवरों! देखो, इस प्रकार का विज्ञान शिव के राज में रहा है शिव नाम राजा को कहते हैं। जो हिमालय का राजा है। और शिव नाम मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ परमपिता परमात्मा को भी कहते हैं लिंगमयी ज्योति कहलाता है। मेरे प्यारे! वह ज्योति है, और वह ज्योति को प्रदान करने वाला क्योंकि परमात्मा के पर्यायवाची शब्द हैं। मानो उनके गौणिक नामों का वर्णन आता रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, शिव नाम जो कल्याणकारी भी है, और वही मानो संघार करने वाला है। हमारे ऋषि मुनियों ने बड़ी ऊर्ध्वा में कल्पनाएं की हैं कि मानव

का जो जीवन है वह त्रि वाद कहलाता है।

मानव में तीन गुण

ये सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण में रत्त रहने वाला है। मानो सतोगुण में विष्णु है, और रजोगुण में शिव है, और तमोगुण में ब्रह्मा है। मेरे पुत्रों! ये तीन प्रतिभावों का जन्म, मानवीयता में उत्पन्न होता रहा है। और विचारवेत्ता इसके ऊपर अन्वेषण करते रहे हैं। मेरे पुत्रों! देखो, मानव में तीन गुण कहलाते हैं, माता में भी तीन गुण कहलाते हैं, देखो, उत्पति का ब्रह्मणे पालना के मूल में सतोगुण रहता है, जो कि मानव पालना करता है, चाहे आचार्य विद्यालयों में मानो पालना कर रहा है शिक्षा दे रहा है चाहे वह माता अपनी लोरियों का पान करा रही है, चाहे वह मानो देखो, किसी भी क्षेत्र में हैं, वह पालना के मूल में यह है, कि वह चाहे वह गो की सेवा कर रहा है, चाहे वह गो धन को एकत्रित कर रहा है, परन्तु वे सब पालना के मूल में है तो वह पालना करने वाला शिव कहलाता है। पालना करने वाला मानो देखो, वह विष्णु कहलाता है। मेरे पुत्रों! देखो, शिव को मैंने पालना के मूल में कहा है, क्योंकि न्याय करना भी पालना कहलाती है, क्योंकि न्याय में जब यथार्थ न्यायाधीश बन करके वह न्याय करता है वह तो वह शिव कहलाता है। और न्याय करना ही मुनिवरों! देखो, वह न्याय उसकी पुण्य कृतियों में रत्त रहने वाला है। यदि उसका यथार्थ रूप में न्याय नही रहेगा तो कर्मों का दण्ड नही दिया जाएगा और कर्मों का यदि दण्ड नही दिया जाएगा तो वह न्याय नही कहलाएगा। और यदि न्याय यथार्थ रूप में नही होगा तो उसमें सतोगुण की भावना नही आ सकेगी। तो मेरे प्यारे! मैं तुम्हें एक विचित्र वार्त्ता प्रगट कर रहा हूँ। आज मुझे वह साहित्य स्मरण आ गया जो बेटा! अन्तःकरण में मानो विद्यमान चित्त मण्डल में बेटा! विद्यमान है मेरे प्यारे! देखो, वह साहित्य अपने में बड़ा विचित्र है। विचार आ रहा है मुनिवरों! देखो, शिवं देखो, सतोगुण में विष्णु है, और रजोगुण में शिव है, मुनिवरों! देखो, यहाँ राजा को शिव कहते हैं, और गुणों में रजोगुण को देखो, शिव कहते हैं। क्योंकि बिना रजोगुण के पालना न्याय नही हुआ करता, न्याय में जो पालना

होती है वह नही होता केवल विष्णु सतोगुण में ही रत्त रहने वाला पालना दया करने वाला मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार और जो उत्पति का मूल है, वह ब्रह्म माना गया है। मेरे प्यारे! उत्पति के मूल में ब्रह्मा है, उत्पति के मूल में उग्रवाद है, उत्पति के मूल में बेटा! देखो, एक महानता की ज्योति है। मेरे प्यारे! देखो, जब प्रवृत्ति उत्पन्न होती है, तो वह बेटा! माता अपने तमोगुण को धारण करती है, जिसमें ब्रह्मा विद्यमान रहते हैं। उत्पति का ब्रह्मणा देवाः और देखो, वह न्याय करने वाली माता है, पुत्र को समय पर ताड़ना देती है, पुत्र को समय पर उसकी पालना कर रही है और समय समय पर उसे मानो लोरियों का पान करा करके अपने ऊँचे विचार मानो तरंगें दे रही है। तो मेरे पुत्रों! देखो, मैं आज सम्बन्ध में कोई विशेषता में नही ले जाऊंगा, विचार केवल ये है कि मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ, हमारे वैदिक साहित्य में नाना प्रकार का विचार विनिमय होता रहा है।

मेरे प्यारे! देखो, राजा रावण मानो देखो, नष्ट हो गया, और जब मृतक शैय्या पर विद्यमान हो गया तो बेटा! वह राम को कहते हैं हे राम! तुमने मेरा वध किया और यह वध नही होना चाहिए था। उन्होंने कहा क्यों नही होना चाहिए था? मानो तुमने अपने जीवन में एक महान पाप किया है, क्या तुम भयंकर वनों से मानो देखो, एक अनाथ देवी को अपने गृह में ले गएं, अनाथ जान करके मानो देखो, वह राजा के लिए देखो, यह महान पाप होता है जो बेटा! देखो, यहाँ कोई भी राष्ट्र में वास करने वाला हो और यह देखो, किसी की कन्या को और किसी की देवी को, कोई भी राजा ले आए राजा से कोई पापी नही होता? जिस राजा के राष्ट्र में राजा देवियों का सतीतव नष्ट करने वाला हो, उस राजा की महानता नहीं कहलाती है, वह राजा तो पामर होता है मानो देखो, धूर्त कहलाता है। उस राजा का वध कर देना चाहिए। प्रजा को परन्तु देखो, जहाँ राजा के इस प्रकार के दूषित विचार हो जाएंगें, इसीलिए देखो, बहुत काल से मुझे महानन्द जी ने यह वर्णन कराया, एक समय में, क्या यह जो वर्तमान काल चल रहा है, यह बहुत समय से मानो देखो, इसी प्रतिभा में रत्त हो रहा है, राजा दूसरों की कन्याओं को हनन करना देवियों का हनन करना परन्तु आज राजा है। तो वह कल

नष्ट होने जा रहा है। आज वह मानो देखो, धिपति है परन्तु देखो, कल उसका समय आ रहा है, वह पर्वतों में चला जाएगा। वह नष्ट हो जाएगा तो ब्रह्मणे कृतं मैं इस सम्बन्ध में विशेषता में नहीं केवल राम ने यही कहा रावण तुम यह पाप स्वीकार करते हो, अथवा नहीं, उन्होंने कहा प्रभु! मैं क्या करता आपने मेरी भगिनी मानो शकुन्तका मानो मुखारबिन्दु को दूषित किया उन्होंने कहा रावण मैंने नही किया, आप मेरे चरित्र को मानवता को आपने जाना नही, आप मुझे जानने के लिए तत्पर होते, तो मैं इसका उत्तर दे सकता हूँ। परन्तु तुमने जाना नही, तुम्हें यह प्रतीत है कि एक समय वह मोहिनी बन गई और मोहनी बन करके मैंने प्रार्थना की परन्तु वह प्रार्थना करने से ही मानो देखो, अपने लिए यह वृत किया और स्वयं नृत्त करके मानो देखो, क्योंकि हम दोनों क्षत्रिय हैं (पुस्तक से) और क्षत्रियों का यह धर्म नही हैं कि हम किसी दिव्या के मुखारबिन्दु को भ्रष्ट कर दें या उसके अंग को हमारे हस्त दूषित तरंगों को लेकर नही जा सकते, माता की दृष्टि से जा सकते हैं, बहन की दृष्टि से जा सकते हैं किन्तु पत्नी जान कर हमारे भुज वहाँ तक नही जा सकते। हम क्षत्रिय है हमारे रघु वंश की परम्परा यह नही कहती।

मेरे पुत्रों! देखो, रावण को उस मृत्यु समय यह जान हुआ उन्होंने कहा कि राम! तुमने मुझे अवगत क्यों नही कराया राम बोले प्रभु! मैं अवगत कैसे कराता क्योंकि आपका जो राष्ट्रीय अभिमान था वह मृत था। मुझे स्मरण है तुमने सम्पाति के राज्य को लिया सम्पाति का राज्य समुद्र के तट पर था। सम्पाति और गरुड़ दोनों विधाता थे और समुद्र के तट राष्ट्र के राष्ट्रपिता थे। तुमने उनसे राज्य ले करके भिक्षुक बनाया था। यथार्थ तुम्हें नही लग सकता था। सुरसा मगध राष्ट्र की राज्यवेत्ता थी। तुमने उस राष्ट्र को ले करके के सुरसा को अपने यहाँ मानव सेवक की अनुवृत्तियां में रत्त कराया। क्या मैं तुम्हारी राष्ट्रीय प्रणाली को नही जानता? तुमने ही सोम वृत्तिका राजा को पातालपुरी को नष्ट करके अहिरावण को वहाँ का अधिराज बानाया। अधिराज बना करके तुमने वहाँ की प्रजा को नष्ट किया। दूसरों की देवियों का हनन करने की तुम्हारी बहुत समय से एक वृत्तिका बन गई। रावण मौन हो गया, और रावण ने कहा कि हे राम! वास्तव में जो

तुम वर्णन कर रहे हो वह यथार्थ है। मुझे क्षमा करो। राम ने कहा तुमने पातालपुरी में ही कीर्ति नाम के राजा को नष्ट करके उनकी पत्नी को तुमने हनन किया। मेरे प्यारे! रावण यहाँ मौन हो गया। राम ने कहा हमारे रघुवंश के राजा सगर से महाराज दिलीप महाराजा भागीरथ से ले करके कोई वंशलज आपको ऐसा नही मिलेगा। जो किसी दिव्या का हनन करने वाला हो। जब भी राजा अभिमानी होता है उसका उस काल में नाश हो जाता है। क्योंकि अभिमान में वह दिव्याओं को हनन करता रहता है। हनन करने का अभिमान राष्ट्र को निगल जाता है रावण ने कहा हे प्रभु! मेरे यह प्राणान्त हो जाएं। मेरे श्रोत्रों से यह शब्द सुनने की शक्ति नही रही। राम लक्ष्मण को ले करके अपने आश्रम में चले आए। जहाँ वे विश्राम करते थे।

मेरे प्यारे! देखो, आज का हमारा विचार यह क्या कह रहा है यह मैंने साहित्य के पृष्ठों को तुम्हारे समीप नृत्त किया है। उनका नृत्त अब ब्रव्हे कृतं देवाः मेरे प्यारे! देखो, स्वागतं ब्रव्हे आज का विचार क्या कह रहा है कि हमारा वैदिक साहित्य क्या कह रहा है कि पृष्ठ क्या कह रहे हैं वह यही कहते हैं कि मानव को चरित्र और मानवीयता पवित्र होनी चाहिए। चाहे वह सतोगुण में रह जाए या रजोगुण और सतोगुण को विशिष्ठ किया जाए जिससे वह ब्रह्म को दृष्टिपात करने लगे। मेरे प्यारे! विचार आता रहता है कि हमारा जीवन महानता में रत्त रहना चाहिए।

२० 08 01 1991 सांय पुष्प 61

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गान गाया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं और जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं। हम उस परमपिता परमात्मा जो अनन्तमयी हैं, उसकी महिमा का सदैव गुणगान गाते रहें क्योंकि वह गुणाध्यानाम्

है, पुरोहित है और पराविद्या को देने वाला है। इसीलिए उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का प्रायः हम गुणगान गाते रहें क्योंकि वह अनन्तमयी है और वह अपने में धारम ब्रह्म ब्रव्हा कृतं देवाः वह अपने में धारयामि कहलाता है इसीलिए हमें उस परमपिता परमात्मा की महती और आभा में सदैव रत्त रहना चाहिए। आज का हमारा वेदमन्त्र नाना प्रकार की अग्नियों का चयन कर रहा है। वह भी एक अग्नि कहलाती है जो मानव अपने उदगार देता रहता है और वह भी अग्नि है जो यज्ञशाला में विद्यमान हो करके यज्ञमान के शब्दों को द्यौ लोक में प्रवेश करा देती है। वह भी एक अग्नि कहलाती है जो द्यौ में प्रवेश करके और ऊर्ज्वा बन करके सर्वत्र को प्रसरण और प्रकाशित करती रहती है। इसीलिए हमें उस अग्नि के ऊपर चयन करना चाहिए जो हमारे अन्तर्हृदयों में प्रदीप्त होने वाली अग्नि है। एक अग्नि वह कहलाती है जो अखण्डाम् भू कृतं देवतव प्रव्हा अखण्ड ज्योति के रूप में प्रदीप्त रहती है और वह अग्नि ही मानव को प्रकाश में ले जाती है संसार को प्रकाशित करती रहती है। उस अग्नि को हमारे यहां वैश्वानर नाम की अग्नि कहते हैं परन्तु मैं तुम्हें आह्वनीय नाम की अग्नि का वर्णन कर रहा था। बहुत समय से चर्चाएं हो रही हैं कि यह जो आह्वनीय नाम की अग्नि है यह मानव को पवित्र बना के राष्ट्र को उन्नत बनाती रहती है। इस अग्नि में, वैश्वानर नाम की अग्नि में और आह्वनीय नाम की अग्नि में राष्ट्र और समाज तपता रहता है। बेटा! मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था कि प्रत्येक मानव जब अपने कर्तव्य का पालन करता है और कर्तव्यनिष्ठ हो जाता है तो परमात्मा की सृष्टि को वह प्रायः अपने में ही निहारने लगता है। क्योंकि प्रभु की सृष्टि जो अनन्तमयी है वह ममता के लिए मानो अपनी आभा प्रगट अवृत्तियों में रत्त करा देती है मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था कि हमारे यहां राष्ट्रवेत्ता को अग्नि में प्रणावर्तम राष्ट्र को अपनी अग्नि का चयन करा देना चाहिए। राष्ट्र वही होता है जो अग्नि में तपायमान रहता है। उसका प्रत्येक क्रियाकलाप मानो अग्निमय होना चाहिए। हमारे यहां वेदों के पठन पाठन में राष्ट्र का बड़ा वर्णन आता रहा है मानवीय जीवन में भी राष्ट्र की बड़ी विचित्रताएं, उसकी आभा उस मानवीयतव में रत्त रही हैं। इसीलिए हमें यह विचारना

चाहिए कि राष्ट्र निर्मोही और क्रियात्मक में आचार संहिता के अवृत्तियां में रत्त रहना चाहिए। क्योंकि जिस राजा के यहां अपनी आचार संहिता होती है वही राष्ट्र अपने आचार से वह अपने को अपनेपन में धारण करता हुआ समाज के क्रियाकलापों से ही प्रभावित हो करके अपने राष्ट्र को वह उन्नत बनाता रहता है।
बेटा! आज मैं राष्ट्रवाद के ऊपर कोई तो कोई चर्चा नही दे रहा हूँ। विचार विनिमय क्या कि हमारे यहां यह जो अग्नियों का चयन है। प्रत्येक मानव के हृदय में यह आकांक्षा बनी रहती है कि मैं स्वर्ग में जाना चाहता हूँ, मैं आनन्दित होना चाहता हूँ, मेरे जीवन में अन्धकार न आ जाए। वह प्रायः अन्धकार से दूरी होना चाहता है। तो अन्धकार से दूरी होना ही मानव के लिए बहुत अनिवार्य है परन्तु यह आकांक्षा उसके मनोनीत हृदय में रहती है। मेरी प्यारी माताएं अथवा पुत्रियां देखो, सर्वत्र प्राणीमात्र अपने में सुखद अनुभव करना चाहता है। परन्तु वेदमन्त्र कहता है सुखद ब्रव्हे वर्णास्सुतं ब्रव्हा यह सुख हमें कैसे प्राप्त होता है, आनन्दित हम कैसे मानो आनन्द की प्रतिभा में हम कैसे रत्त हो सकते हैं। बेटा! हमारे यहां पुरातन काल में आचार्यों ने यह कहा था कि समाज में निर्माणकर्त्ता होने चाहिए। और निर्माण समाज को होना चाहिए। प्रत्येक मानव अपने में निर्माण करने के लिए तत्पर हो जाए तो वह समाज ऊँचा बनेगा। परन्तु निर्माणवेत्ता तो परमपिता परमात्मा कहलाता है या निर्माण में सहायक मेरी प्यारी माता कहलाती है विचार आता रहता है बेटा! बहुत सी मेरी माताओं का जीवन प्रायः स्मरण आता रहता है जैसे माता मल्दाल्सा का जीवन रहा है कि वे अपने बाल्य को प्रायः अपने गर्भस्थल में शिशु रूप में ही अनुपम शिक्षा प्रायः देती रही और उन शिक्षाओं का परिणाम यह होता है कि ब्रह्मवेत्ता बन करके बाल्य मानो राष्ट्रवेत्ता अपने में राष्ट्र को उन्नत बनाता है और ब्रह्मवेत्ता जब माता निर्माणित कर देती है वह अग्रताम भू कृतं देवाः बेटा! वह प्राण से उसको संचय कर देती है। परिणाम यह होता है कि वह ब्रह्मचारी अपने में महान बन करके धिराज बनता है, कोठ ब्रह्मवेत्ता बनता है ब्रह्मवेत्ता राजा को होना बहुत अनिवार्य है और ब्रह्मवेत्ता पुरोहित का होना बहुत अनिवार्य है जो विवेक में रत्त रहने

वाला है विचार आता रहता है कि हमारे यहां विवेक की आवश्यकता है।

आओ बेटा! मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें एक वार्त्ता प्रगट करते हुए कहा था कि समाज कैसे उन्नत होता है, समाज में कैसे महानता आती है आओ बेटा! मैं उस अग्नि का चयन कराने तुम्हें ले जा रहा हूँ जो महर्षि भारद्वाज मुनि के यहां नाना ऋषि अपनी विचारधारा व्यक्त करते रहे हैं। आओ आज मैं तुम्हें महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में ले जाना चाहता हूँ महर्षि भारद्वाज मुनि के यहां बेटा! देखो, विचार विनिमय हो रहा था कि अमृतं ब्रव्हे कृतं देवाः इस वेदमन्त्र के ऊपर विचार हो रहा था कि मानव को अपने में गृहस्थ अपने में धारयामि बनं ब्रहे। मेरे प्यारे! यहां ऋषि मुनियों को एक समूह एकत्रित हो रहा था। ओर ऋषि मुनियों में यह विचार विनिमय हुआ कि हम अपने समाज को कैसे महान बना सकते हैं। नाना ऋषि मुनि इस विचार में व्यस्त हो गए। ओर वे शब्दों के ऊपर विचार विनिमय करने लगे कि शब्द की आभा मानवीयता में वायुमण्डल को पवित्र बना देती है इसी विचार में जब ऋषि मुनि अपने में विचार करने लगे तो अपने में निर्णय देते हुए ऊर्ध्वा में उड़ाने उड़ने अपने में कोई विशेषता में अपने रूप में नहीं प्रविष्ट हुए। ओर न प्रवृत होने के कारण उन्होंने कहा तुम जब निश्चय पर नही पंहुच पाए तो महर्षि प्रवाहण ने यह कहा, भई! मेरे विचार में तो यह आता है कि महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में गमन करते है। औेर वहां यह निर्णय हो ककि हम किसी निश्चय को, किसी आभा को प्राप्त करने वाले बनें।

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलक ओर दालभ्य औेर ब्रह्मचारी वृचिका, ब्रह्मचारी यज्ञदताः ओर भी नाना ऋषि मुनि जैसे वैशम्पायन ओर विभाण्डक इत्यादि मुनियों का समूह वहां से गमन किया। भ्रमण करते हुए महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में पंहुचें। भारद्वाज मुनि महाराज ने उन ऋषि मुनियों का स्वागत किया। उनको उचित असान दिया ओर आसन दे करके उनके अतिथि के लिए प्रार्थना की कि प्रभु हमारे यहां अतिथि सेवा एक विशेष होती है। तो आज हम तुम्हारा अतिथि करने के लिए तत्पर हैं आप स्वीकार कीजिए। ऋषि मुनियों ने कहा बहुत प्रियतम। तो महर्षि भारद्वाज ने अपने ब्रह्मचारी सुकेता ओर कवन्धि से कहा कि अतिथि सेवा होनी चाहिए। अतिथि

याग होना चाहिए हमारे यहां जितने भी याग हैं उन यागों में अतिथि याग भी अपनी आभा में बड़ा विचित्र रहा है क्योंकि ऋषि मुनि परम्परागतों से ही, हमारे यहां अतिथि याग में लगे रहते हैं अतिथि उसे कहते हैं जो बुद्धिमान हो और बिना समय के बिना सूचना के आ जाए। यह सब ब्रह्मवेत्ता हैं ब्रह्म निष्ठ हैं। यह हमारा बड़ा सौभाग्य है। ब्रह्मचारी कवन्धि, सुकेता और रोहणीकेतु ने ब्रह्मचारियों और ऋषि मुनियों का स्वागत किया। स्वागत करने के पश्चात उन्होंने जब उनका अतिथि कर लिया तो उन्होंने कहा कहो भगवान आपका आगमन कैसे हुआ है क्योंकि बिना सूचना के ऋषि मुनियों का आश्रम में आ जाना अथवा उनका आगमन होना, यह एक कोई न कोई रहस्मयी कहलाता है। जब उन्होंने यह कहा तो महर्षि प्रवाहण ने उपस्थित होकर कहा, प्रभु वेदमन्त्रों का अध्ययन कर रहे थे। और वेदमन्त्रों में यह आ रहा था कि अमृतं सुखद ब्रहे वरणासुताः प्रभु वेदमन्त्र यह कह रहा था कि मानव सुखद कैसे अनुभव कर सकता है। हम सुखद के लिए आनन्द को प्राप्त करने के लिए आए हैं। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम, विराजो, वे विराजमान हो गए और एक पंक्ति लग गई।

महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा अप्रतं पिप्लो वरणास्सुतां कि तुम्हारे हृदय में यह जिज्ञासा क्यों जागरूक हुई है कि आनन्द को प्राप्त करना चाहते हैं। क्योंकि वह परमपिता जो परमात्मा है वह सत, चित्त और आनन्द कहलाता है वह आत्म चेतना हामरे अन्तर्हृदयों में वास करती है वह सत है और चित्त भी है परन्तु चित्त होने से वह सुखर को लाना चाहती है। उसके अन्तरात्मा में प्रायः यह प्रेरणा प्राप्त होती रहती है कि मैं स्वर्ग और आनन्द को प्राप्त करना चाहता हूँ क्योंकि आनन्द की अनूभुति उस काल में होती है जब कि वह आनन्द उसे कहीं प्राप्त होता है। वह स्वतः अपने में आनन्द स्वरूप नही कहलाता है, वह सत और चित्त कहलाता है तो आत्मा सत चित्त होने से उसकी पिपासा यही बनी रहती है, कि मैं अमृतां भू वर्णानं मैं अमृत को प्राप्त करूं। और वह अमृत कहां प्राप्त होता है? परमात्मा के समीप । इसीलिए परमपिता परमात्मा के लिए हम अपने पिपासी रूप बने हुए हैं।

महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा बहुत प्रियतम् विराजो। महर्षि प्रवाहण और शिलक दोनों

और महर्षि वैशम्पायन सब विद्यमान हो गए। उन्होंने कहा, भई! सुखद को प्राप्त करना चाहते हो तो तुम अपने में तपश्चर हो जाओ और तपस्या उसको कहते हैं जब मानव प्रत्येक इन्द्रियों का जो विषय है उसे अपने में अनुभव में लाना प्रारम्भ कर दे। उसके ऊपर गमन और चिन्तन होना चाहिए क्योंकि मनन और चिन्तन करने वाली उस आनन्द की अनुभूति कर सकता है और उस आनन्द के समीप जाने के लिए वह तत्पर होता है बेटा! जब ऋषि ने यह वाक्य कहा तो उन्होंने कहा, बहुत प्रियतम। महर्षि प्रवाहण बोले कि प्रभु यह जो आनन्द है वह क्या है? उन्होंने कहा आनन्द कहते हैं जहां मानव में किसी प्रकार की भी विडम्बना से रहित होने का नाम आनन्द है। और वह आनन्द मानो ब्रह्मणे वृतं जहां एक सुखद ब्रहे कृतं देवत्वां ब्रह्माः वह अपने में सुखद कहलाता है जो अपने आनन्द में आनन्दित हो करके अपन ेमें वह धारयामि बनता है । मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार अपना उद्गीत गाया तो वह शान्त होने लगे। उन्होंने कहा आनन्दं ब्रव्हे कृतं देवाः वे परमपिता परमात्मा महान कहलाता है जो सर्वज्ञ है, जो आनन्द का स्रोत है और उसी की पिपासा में मानव लगा रहता है और यह पिपासा बनी रहती है कि मैं उस परमपिता परमात्मा के समीप जाने के लिए सदैव तत्पर हो जाऊं। मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार अपना उद्गीत गाया अथवा वर्णन किया तो वह अपने में मौन हो गए। और मौन हो करके अप्रतं ब्रहे इतने में ऋषियों ने कहा कि प्रभु अमृतां भू वर्णनं मानो एक वाक्य आता है राष्ट्र प्रव्हे कृतं कि राष्ट्र को हम कैसे उन्नत बना सकते हैं, समाज को कैसे महान बना सकते हैं? तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा कि यदि समाज को महान बनाना है तो मानव को अपने कर्तव्य कपा पालन करना चाहिए क्योंकि कर्तव्यवाद ही मानव को ऊँचा बनाता है और कर्तव्यवाद मानव की वृत्तियों में रत्त करा देता है।

मेरे प्यारे! देखो, भारद्वाज मुनि महाराज के यहां बड़े विचित्र विज्ञान में जाने वाले ब्रह्मचारी अपने में अध्ययन करते रहते थे। ब्रह्मचारी अपने में ब्रहा नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते रहते थे और निर्माण को उन्होंने दृष्टिपात किया। चित्रों का दर्शन भी होता रहता और मुनिवरों! देखो, अपनी ऊर्ज्वा में रक्त के एक एक बिन्दु से मानव का

दिग्दर्शन होता रहता। ब्रहे कृतं ऋषि ने कहा कि राजा के यहां इस प्रकार का विज्ञान प्रायः होना चाहिए जो महर्षि भारद्वाज के यहां है तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने यह कहा कि महाराजा! आपका विज्ञान तो बड़ा मार्मिक और बड़ा विचित्र हमें दृष्टिपात आ रहा है। महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा कि मैं बहुत समय से ही, विद्यार्थी जीवन से ही इसमें लगा हूँ और मैं इसके ऊपर प्रायः अध्ययन करता रहा हूँ जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो उस समय प्रवाहण जी ने कहा कि महाराज! कर्तव्य और विज्ञान को आपने इतना जाना कि अन्तरिक्ष में उड़ाने लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ी जाती हैं एक एक रक्त के बिन्दु में मानव के चित्र यन्त्रों में दृष्टिपात आता है, आभा और विचारों में भी इस प्रकार का विज्ञान है। इसमें महर्षि शिलक और महर्षि वैशम्पायन ने यह प्रार्थना की कि महाराज! इस विज्ञान का अन्तिम परिणाम क्या होता है जो विज्ञान तुमने जाना है और हमने इस विज्ञान को दृष्टिपात किया है कि विज्ञान में एक रक्त के बिन्दु में मानव के चित्र विद्यमान रहते हैं और एक एक आभा में एक एक श्वास में इतना परमाणुवाद चला जाता है कि जितने परमाणुओं से माता के गर्भस्थल में शिशु के शरीर का निर्माण हो जाता है हे प्रभु! यह जो विज्ञान है, यह जो अग्नेस्त्र है और भी अस्त्रों शस्त्रों का निर्माण तुमने किया है। हम इसका अन्तिम चरण जानना चाहते हैं।

मेरे प्यारे! महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि हे भगवन! मेरे विचार में यह आता है कि हमने जो विज्ञान अब तक जाना है इस विज्ञान के दो ही परिणाम होते हैं एक सुखद होता है और एक दुखद होता है उन्होंने कहा भगवन! यह आपने क्या कहा। उन्होंने कहा कि मैं यही अनुभव करता रहता हूँ कि मैं मन्त्रों को जानता उनको विस्मृत करता रहता हूँ और उनकी आभा जो उनके गर्भ में हैं उसे जानने के लिए सदैव तत्पर रहता हूँ। जब भी विज्ञान का उदय होता है और विज्ञान का जिस भी काल में उदय हो करके वह प्रकाश में आता है तो विज्ञान के दो ही परिणाम बन जाते हैं एक परिणाम मृत्यु है तो एक जीवन कहलाता है उन्होंने कहा प्रभु! यह आपने ऐसा क्यों कहा? उन्होंने कहा विज्ञान के परिणाम ही दो होते हैं। यदि विज्ञान का दुरूपयोग होता है तो मानो कि समाज की, राष्ट्र की मृत्यु हो गई है। और यदि विज्ञान का सदुपयोग होता है और

विज्ञान में देखो, सतोवर्णा प्रिय वर्ताः वह विज्ञान में सत्य को ही दृष्टिपात करता है, वही विज्ञान मानव का और राष्ट्र का जीवन बन करके रहता है और पवित्रतव बन करके रहता है। मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा कि प्रभु ऐसा क्यों? उन्होंने कहा विज्ञान का जब सदुपयोग होता है तो विज्ञान अपने में महान बनता है और विज्ञान महान बन करके राष्ट्र का अभ्योदय हो जाता है और राष्ट्र का कल्याण हो जाता है और जब विज्ञान का दुरूपयोग होता है तो राष्ट्र का अन्तिम चरण अन्धकार रह जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहते हैं भारद्वाज मुनि ने कहा अमृतां ब्रहे व्रतप प्रव्हा कृतं देखो, विज्ञान का जब दुरूपयोग, नाना प्रकार की चित्रवालियों में मानव जब रत्त होता है और उन चित्रावलियों में नाना प्रकार के चित्र आते रहते हैं और चित्रों को दृष्टिपात करता हुआ देखो, यदि उसमें दुरूपयोगिता आ गई है तो विनाश का एक मूल कारण बन गया है। यदि उसमें सतो अमृतं, देखो, सत और अमृतमयी भरे हुए अभ्यो तरंगों उत्पन्न हो जाती हैं तो वही विज्ञान सार्थक कर्तव्यवाद में आ जाता है मेरे पुत्रों! देखो, कर्तव्यवादी जो प्राणी हैं और नाना प्रकार के यन्त्रों में इसके जो चित्र और चित्रावलियां, मानो देखो, उसमें मानव में जो सार्थक क्रियाकलापाता उसमें जो चरित्र निहित रहता है वह यदि चित्रों में आता रहता है तो उससे समाज ऊँचा बनने लगता है देखो, वही विज्ञान है, उस विज्ञान से मानव अपनी प्रवृत्ति को सात्विक बना लेता है और विज्ञान भी स्तयमय रह जाता है। इसीलिए विज्ञान को सतो कर्तव्यवाद में ले जाना है तो मानो सतोव्यप्रतं अमृतां भू कृतं देवतव प्रव्हा इस विज्ञान में सतोयुग की प्रतिभा आनी चाहिए, सत्य में ही रहनी चाहिए। वही तरंगें देखो, ओत प्रोत हो करके विज्ञानवेत्ता अपने में महान बन जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि भारद्वाज कर्तव्यवाद के बड़े मर्म को जानते वाले, विज्ञान की धाराओं में रत्त रहते थे। उन्होंने कहा कि विज्ञान में अकर्तव्यवाद नही आना चाहिए। सुचरित्र हो करके जब चित्रावलियां आती है तो समाज उसे दृष्टिपात करके महान बनता है। और पवित्रता की आभा में रत्त हो जाता है यदि यही विज्ञान यहां अधिकार अमृतां भूः वर्णानं ब्रह्मे दो वृत्तियां कहलाती हैं एक कर्तव्यवाद है और एक अनधिकार चेष्टा है

अथवा विज्ञान का दुरूपयोग इसके मूल में रहता है। विज्ञानवेत्ता जब वैज्ञानिक आभा में रत्त होता है, ऋषि मुनियों के चित्र आने लगते हैं तो ऋषि मुनियों की गाथायें, उनके क्रियाकलाप आने प्रारम्भ हो जाते हैं तो समाज में उन्नता आ जाती है। और वह समाज मानव को नवीनता को धारण करा देता है क्योंकि ज्ञान सदैव नवीन रहता है, विज्ञान सदैव नवीन रहता है उसमें वृद्धपन नही आता है। देखो, अज्ञानाम् भूः वर्णम् अज्ञान परम्परागतों से उसी रूप में रहता है। इसीलिए वेद का ऋषि भारद्वाज मुनि कहता है, हे ऋषियों अमृत को प्राप्त करने के लिए तुम विज्ञान का सदुपयोग करो। विज्ञान जब सदुपयोग में आ जाता है तो राष्ट्र और सर्वत्र समाज पवित्रता की आभा में परणित हो जाते हैं संसार में कर्तव्यवाद ही मानव को ऊँचा बनाता है क्योंकि अन्धकार अपने में उस कर्तव्य के कारण ही अपने में ही अपने में रत्त रह करके उसमें शान्त चित्त रहता है। जैसे चन्द्रमा समुद्र से नाना प्रकार की तरंगों को धारण करके उसे सोम बना देता है उसे अमृत बना देता है। उसे अमृत बना करके यह संसार अमृतमयी बन जाता है। इसी प्रकार जो विज्ञानवेत्ता होते हैं वह प्रायः कर्तव्य का पालन करते हैं और कर्तव्यवाद में समाज को ले जाते हैं उसे अधिकार प्राप्त हो या न हो परन्तु वह तो कर्तव्य का पालन कर रहा है। काम करने के पश्चात देखो, व्रदं ब्रव्हा व्रदं भू वर्णन देवत्वं लोकां वाचप्रव्हा वाचनोति संधनम् ब्रव्हे कृतां मानो वह कर्णम ब्रव्हे वह संधानी बन जाता है और विचारवेत्ता यह कहते हैं कि ब्रह्मणा कृते व्रतं ब्रव्हे।

मुनिवरों! भारद्वाज मुनि ने कहा कि वह जो अनधिकार चेष्टा है वह समाज को अन्धकार में पंहुचा देती है। इसीलिए वेद का ऋषि कहता है कि आचार्य कहता है कि मानव अपनी पुकार करने लगता है किस काल में करता है कि विज्ञान का दुरूपयोग होता है, विज्ञानवेत्ता मुनिवरों! विज्ञान नम्रते समाज में जब विज्ञानवेत्ता अपने विज्ञान का दुरूपयोग करता है उसमें मेरी पुत्रियों की अश्लील चित्रावलियों आने लगती हैं और वे चित्रावलियां मानव को दूषित कर देती हैं। वही चित्रावली जब अकर्तव्य ब्रव्हा जब ब्रह्मचारिणी हों, ब्रह्मचारी हों छात्र हों, छात्रिकाएं हों, साधारण मानव हों, परन्तु जब उन्हें दृष्टिपात करता है तो उनके ब्रह्मचर्य में दूषितपन आ जाता है। और जब

ब्रह्मचरिष्यामि देखो, वह शब्द कितना प्रियतम है कि ब्रह्मचारी जब महान बनता है तो वह ब्रह्म को एक सूत्र में, ब्रह्म को देखो, अपने में दोनों में एक दूसरे की प्रतिभा में ले जाता है विचार आता रहता है, ब्रह्मचारी कौन है? ऐसा कहता है वेद का मन्त्र, परन्तु इसका उत्तर देता है कि ब्रह्मचारी वह है जो ब्रह्म में विचार करता है जो ब्रह्म में अपनी प्रवृत्तियों को धारयामि बना देता है। वह ब्रह्मचारी है ब्रह्मवेत्ता है और यदि वह ब्रह्मचर्य जिससे हमें परमात्मा से मिलन करना है अथवा उग्रवाद को उग्रवाद में ही परणित कर दिया है यहां पुत्रष्याम् ब्रह्म कृतः अधुनम ब्रही कृतव्हं ब्रव्हा वेद का वाक् कहता है कि जहां उग्रवाद को अपने में उग्रवादी बन करके उग्रवाद को उग्रवाद में परणित कर दिया जैसे परमपिता परमात्मा ने उग्रवादता से नाना प्रकार की रचना में इस संसार को लाया गया। इसी प्रकार मानव भी अपने में विचारधारा को जब उग्र बना देता है तो उसमें नवीनता आ जाती है, प्रतिभा आ जाती हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, जब वह ब्रह्मचरिष्यामि, जब ब्रह्मचर्य दूषित होता है, उस उग्रवाद से जो विज्ञान का दुरूपयोग है मेरे पुत्रों! ब्रह्मचर्य दूषित होने पर आलस्य और प्रमाद आ जाता है। जब आलस्य और प्रमाद आ जाता है तो बेटा! वहां कर्तव्यवाद से मानव विहिन हो जाता है और वह अपने अधिकार की पुकार करने लगता है कि मुझे अधिकार प्राप्त हो जाए परन्तु कर्म किया जाए या न किया जाए। इस प्रकार की जो अधिकार की पुकार है वह अन्तिम चरण में आ करके बेटा! वह प्रहा कृतं देवत्वां वही आलस्य और प्रमाद से अधिकार को चाहने वाला प्राणी संसार में जब से सृष्टि का प्रादुर्भाव हुआ है, कोई राजा, कोई महान ऐसा नही हुआ जो किसी के अधिकार को पूर्णता में ला सके क्योंकि वह अधिकार तो एक समय अन्धकार में ले जाता है परिणाम उसका यह होता है कि अन्धकार ही अन्धकार रह जाता है और वह रक्तभरी क्रान्ति में परिवर्तित हो जाता है वही अधिकार में जब अनधिकार चेष्टा होने लगती है और अधिकारी वह उसका है नही तो एक समय बेटा! रक्तमयी संसार बन जाता है राजा राष्ट्र रक्तमयी बन जाता है। मेरे पुत्रों! इसीलिए मुझे विचार आता रहता है कि प्रत्येक मानव को यदि ऊँचा बनना है तो कर्तव्य का पालन किया जाएं और यदि मानव को समाज को ध्रुवा

में पंहुचाना है अन्कधर में ले जाना है तो अधिकार को देकके अधिकार पूर्ण नही सका है। वह रक्त में ही परिवर्तित हो जाता है और रक्त में परिवर्तित हो करके देखो, राजा का राष्ट्र राष्ट्र नही रहता। उसमें अव्यवस्थाम् भू कृतपः पिपाहाः वह तत्त्वों से रहित हो जाता है। देखो, वहां भी अधिकार रह जाता है और अधिकार को कोई पूर्ण न करने वाला, मेरे प्यारे! सृष्टि के प्रारम्भ से कोई नही कर पाया है इसीलिए विचार आता रहता है कि कर्तव्यवादी बनना चाहिए। अकर्तव्यवादी मानव को कर्तव्य में रत्त रहना चाहिए। विचार आता रहता है कि अनधिकार चेष्टा इस समाज को अन्धकार में ले जाती है जब पुकार ही पुकार रह जाती है तो मानो वह समाज अन्धकार में चला जाता है। राजा का राष्ट्र भी उन्नत नही हो पाता क्योंकि आचार सुतं ब्रव्हे राष्ट्र की आचार संहिता भ्रष्ट हो जाती है।

मेरे पुत्रों! देखो, वेद का ऋषि भारद्वाज कहता है कि हे ऋषिवर आप तो सब जानने वाले हो विवेकी हो। क्योंकि यदि राष्ट्र को, समाज को उन्नत बनाना है तो विज्ञान का सदुपयोग होना चाहिए, विज्ञान में एक महानता होनी चाहिए, विज्ञान अपने में चित्रावलियां हो तो ऋषि मुनियों की धाराएं उसमें परणित हों जिससे समाज में एक महानता की उपलब्धि हो जाए। विचार आता रहता है बेटा! आज का का हमारा वेदमन्त्र एक राष्ट्र की धोषणा कर रहा है राष्ट्रीय चर्चा दे रहा है और कहता है कि राष्टदं ब्रह्मे कर्तव्यवाद को ही राष्ट्रवाद कहते है। कर्तव्यवाद का ही विज्ञानवाद कहते हैं। जो भी कर्तव्य की आभा में रत्त हो जाता है वह समाज को उन्नत बनाता है, वह विज्ञान में रत्त हो जाता है। भारद्वाज मुनि के यहां ऐसे ऐसे यन्त्र विद्यमान थे बेटा! देखो, वैज्ञानिक तथ्यों के आवृत होते हुए कि वह चित्र दृष्टिपात आ रहे हैं। एक रक्त के एक बिन्दु है उसी रक्त के बिन्दु को यन्त्र में प्रवेश करते ही जिस मानव का रक्त का बिन्दु है उसी का चित्र यन्त्रों में दृष्टिपात आता रहता। विचार आता रहता है बेटा! विज्ञान अपनी आभा में बड़ा सार्थक बन करके रहा है।

मुझे स्मरण आता रहता है कि भारद्वाज मुनि ने एक समय वर्णन भी कराया कि एक समय सोमकेतु ऋषि महाराज उनके समीप आ पंहुचें और उन्होंने कहा कि प्रभु मैं अपने

पूर्वजों के चित्रों का दर्शन करना चाहता हूँ। मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा बहुत प्रिय, उनके एक रक्त का बिन्दु कहीं तुम्हें उनके संग्रहलयों में प्राप्त हो जाऐ तो उसको लाओ और मैं यन्त्रों के द्वारा उनका दर्शन करा सकता हूँ। सोमकेतु अपने एक महापिता, जिनको एक सौ चौरासी वर्ष समाप्त हुए हो गए थे, उनके रक्ता का एक बिन्दु वस्त्र पर था उसी बिन्दु को ले करके वह ऋषि के द्वार पर पंहुचें ऋषि ने उस यन्त्र में जैसे ही प्रवेश किया तो उसमें उस मानव का चित्र उनके महापिता जो छटे महापिता थे उनके चित्रों का सोमकेतु को दर्शन हो गया। उन्होंने कहा कि यह रक्तं ब्रव्हा यह विज्ञान है यह विज्ञान अपनी आभा में बड़ा विचित्र बन करके रहता है विज्ञान का सदुपयोग होना चाहिए जो कि समाज और राष्ट्र के लिए कल्याणकारण है यदि कर्तव्य का पालन करते रहे यदि दुरूपयोग हो गया है, उसमें मेरी पुत्रियों के अश्लील चित्रों का दर्शन होने लगा, अश्लीलता आ गई है तो ब्रह्मचर्य दूषित हुए बिना नही रह पाएगा। परन्तु देखो, वेद का मन्त्र कहता है कि वह अधिकार की पुकार है कर्तव्य से विहिन होना है और वही राष्ट्र और समाज को अन्धकार में ले जाता है रक्त में परणित कर देता है। विचार आता रहता है कि विज्ञान हमारा सत्यमय होना चाहिए।

बेटा! मैं आज तुम्हें दूरी नही ले जाऊंगा, विशेषता में नही ले जाऊंगा विचार केवल यह है कि विज्ञान का जहां सदुपयोग होता है, आहार और व्यवहार दोनों पवित्र होते हैं और विज्ञान ही मानव को दूषित प्रतिभा में ले जाता है आज का विचार विनिमय क्या? मैं विशेष चर्चा तुम्हें देने नही आया हूँ विचार केवल यह प्रगट करने के लिए कि हमारा समाज कैसे उन्नत हो। समाज जब उन्नत हो सकता है जब विज्ञान का सदुपयोग हो। विज्ञान का युग आ गया है तो उसी काल में विज्ञान का सदुपयोग होना चाहिए कर्तव्य की आभा में मानव को रत्त रहना चाहिए क्योंकि कर्तव्य स्वतः आ जाता है जब विज्ञान सत्य में परणित हो जाता है। देखो, विनाश्ज्ञ के मार्ग पर भी अपिराहंय कृतियों में रत्त हो करके मानव अधिकार की पुकार करता है विचार आता रहता है कि मानव के जीवन में दूषितपन नही आना चाहिए। मानव के जीवन में सात्विक प्रतिभा का दर्शन उसे आन्तरिक और बाह्य जगत देनो में हो जाना चाहिए। आज के विचार को अब मैं यहां

समाप्त करना चाहता हूँ कि विज्ञान का सदुपयोग होना चाहिए और विज्ञान अपनी मानवीयता में सदैव रत्त रहना चाहिए, विवेक उनके समीप नही रहना चाहिए। हम परमपिता परमात्मा की महती का सदैव गुणगान गाते रहें। परमपिता परमात्मा सर्वज्ञ है, जो हमारा सखा है जो इस सृष्टि का निर्माण करने वाला है, हमें उसको ले करके ही गमन करना चाहिए। अपनी अन्तरात्मा में, उसकी छवि हमारे हृदयों में रहनी चाहिए। आओ मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या आज मैंने तुम्हें सूक्ष्म सा एक उपदेश विचार दिया है कि और वह विचार यह है कि मानव का जीवन अग्निमय होना चाहिए। वैश्वानर अग्नि ही मानव का जीवन अग्निमय होना चाहिए वैश्वानर अग्नि ही मानव को कर्तव्यवाद में आह्वनीय अग्नि बेटा! देखो, स्वर्ग में ले जाती है और मानव का अग्निमय जीवन बना देती है, मानव प्रकाश में चला जाता है। इसीलिए प्रत्येक मानव को प्रकाश में सदैव रत्त रहना चाहिए। प्रकाश की प्रतिभा में मानव को रत्त रह करके, मृत्युञ्जय बन करके इस प्रभु की सृष्टि में अमृत को पान करना है विचार विनिमय क्या? विज्ञान का विराधी नही हूँ। परन्तु विज्ञान का सदुपयोग होना चाहिए। मैंने तुम्हें कई काल में कहा था कि एक समय अश्वपति के यहां यन्त्रों का निर्माण हुआ था, विज्ञान का सदुपयोग किया उन्होंने और उनकी आचार संहिता बड़ी विचित्र रही। मेरे पुत्रों! देखो, विद्यालय में आचार्यजन उपदेश दे रहे हैं और उपदेश ब्रह्मचारियों के अन्तःकरण में प्रवेश कर रहे है। परन्तु वहां चंचलता आती उनके चित्र यन्त्रों में आ जाते और वह राजा के समीप पंहुचें तो कि महाराज! तुम्हारा विद्यालय अशुद्ध हो जाएगा। यदि यहां आचार्यों के विचार कहीं रहेंगें और विद्यार्थी के कहीं रहेंगें तो विद्या सार्थक नही बना करती। विज्ञान का सदुपयोग करो और विज्ञान क्या? देखो, उनके अशुद्ध तरंगों के ऊपर अनुशासन करने वाला ब्रह्मचरिष्यामि बन करके शिक्षार्थी बन करके आह्नीय नाम की अग्नि और गार्हपथ्य नाम की अग्नि दोनों का सार्थक बना दे यह है बेटा! आज का वाक्।

वाक के उच्चारण करने का हमारा अभिप्रायः यह है कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए और विज्ञान का सदुपयोग करते हुए हम इस सागर से पार हो जाना चाहिए। क्योंकि विज्ञान तपं ब्रह्मे यही मानव को कर्तव्यवाद की प्रतिभा में ले जाए

तो समाज में एक महानता का जन्म हो जाए। राष्ट्र अपनी आभा में रक्त हो जाएगा। क्योंकि हमारे यहां वेदमन्त्रों में नाना प्रकार की विडम्बनिता आती रहती है। उस विडम्बना को हम जब भी अपने से दूरी कर सकते हैं जबकि हमारा जीवन सत्यमय हो जाए सत्य भी विज्ञानमय हो जाए और विज्ञान भी विवेक में परिवर्तित हो जाए तो देखो, समाज ऊँचा बनोगा। यह है बेटा! आज का वाक् आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि प्रत्येक मानव को अपने कर्तव्यवाद में रक्त रहना चाहिए। और अपनी विचारधारा को तरंगित बना करके अपने में ही अपनेपन का दर्शन हो जाए। यह है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलगा तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें अब वेदों का पठन पाठन

२१ 12 02 1991 पुष्प 61

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है।

आज का हमारा वेदमन्त्र नाना प्रकार के सूक्तों में अपनी विभा, वृत्तियों को प्रायः वर्णन हो रहा था क्योंकि उस परमपिता परमात्मा को शिशु के रूप में वर्णित किया गया है। वह शिशु कहलाता है क्योंकि वह सूक्ष्म है और हमारे अन्तर्हृदयों में विद्यमान रहता है और जो अन्तर्हृदय में विद्यमान रहता है वह शिशु कहलाता है आज के हमारे वैदिक पठन पाठन में प्रायः शिशुओं का बड़ा वर्णन आ रहा था वह वर्णन किया जा रहा था कि शिशु वर्णानं ब्रह्मणाम् ब्रह्म कृतं देवाः कि वे परमपिता परमात्मा शिशु है और वही शिशु मानं ब्रह्मणा माता अपने बाल्य को भी शिशु रूप में वर्णित करती रही है और यह विचार विनिमय होता रहा है शिशुवं ब्रव्हा हे मां तेरे ही आंगन में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड ओत प्रोत रहता है और यह ब्रह्माण्ड भी प्रायः शिशु के रूप में दृष्टिपात आता रहता है

परन्तु वेद का एक एक मन्त्र हमें बड़ी महान से महान प्रेरणा देता रहता है वेदमन्त्र हमारा प्रेरक है और प्रेरणा को प्राप्त करता हुआ मानव अपनी आभा और अपने ही संसार सागर हो अग्रती है इससे भी वह पार हो जाता है।

विचार आता रहता है और कहीं से मुझे यह प्रेरणा प्राप्त हो रही है कि शिशु के सम्बन्ध में कोई अपना विचार दिया जाए। पुरातन काल में शिशुओं के ऊपर बड़ा मन्तव्य और बड़ी विचारधाराएं मानव की रही हैं शिशु उसे कहते हैं जो सूक्ष्म है और उस सूक्ष्मतम का ना भी देखो, शिशु कहा जाता है। वही माता के गर्भस्थल में विद्यमान रहता है। और वही शिशु बन करके बाह्य जगत में प्रवेश होता है मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब ऋषि मुनियों में यह विचार धाराएं प्रायः रही हैं। एक समय महाराजा अश्वपति के विद्यालय में नाना ब्रह्मचारी विद्यमान थे और आचार्य उन्हें शिक्षित बनाते रहे। एक समय आचार्यों का एक सम्मेलन हुआ वे विचारधाराएं, बेटा! मुझे अब तक स्मरण आती रहती हैं महाराजा अश्वपति भी उस सभा में विद्यमान थे महाराजा अश्वपति ने आचार्यों से प्रश्न किया कि यह शिशु क्या है जो वैदिक साहित्य में इसका वर्णन आता रहता है उन्होंने कहा वेदमन्त्र में तो यह शिशु सूक्त कहलाता है जैसे विष्णु सूक्त है, ब्रह्म सूक्त है इसी प्रकार यह भी सूक्त कहलाता है।

विचार आता रहता है कि शिशु सूक्त है और इसके स्वरूप में यह कि माता का बाल्य शिशु कहलाता है माता की यह प्रेरणा रही है कि मेरा शिशु सदैव महान बने। उसकी जो आन्तरिक भावनाएं हैं, अन्तर्हृदय की जो प्रेरणाएं हैं वे प्रायः हमें प्राप्त होती रही हैं। आचार्यों के मध्य में महाराजा अश्वपति ने कहा कि यह शिशु क्या है। यह शिशु का जो वर्णन आता रहता है इसके सन्दर्भ में क्या क्या वार्त्ता विद्यमान रहती है? इसमें ऋषियों ने अपने अपने विचार दिए। उनका एक ही मन्तव्य रहा है कि सृष्टि के प्रारम्भ में भगवान मनु के काल में भी प्रायः ऐसा होता रहा है ऋषि मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके माता के गर्भ से जिस बाल्य अथवा शिशु का जन्म होता है उसके ऊपर प्रायः विचार विनिमय करते रहे हैं। उन्होंने कहा शिशुं ब्रह्माः मानो शिशु परमपिता परमात्मा को कहा जाता है क्योंकि वह शिशु का निर्माण करने वाला है वह निर्माणवेत्ता होने से

उसे शिशु कहते हैं इसी प्रकार माता के गर्भस्थल में जो पनप रहा है वह शिशु है। मेरे प्यारे! देखो, जो आचार्य के कुल में प्रवेश हो करके आचार्य के द्वारा अध्ययन करता है वह भी शिशु कहलाता है। तो इसीलिए शिशु जब संसार में आता है, मानो जब माता के आन्तरिक जगत से बाह्य जगत में प्रवेश होता है तो माता और पितर जनों की यह हार्दिक प्रेरणा होती है कि हमारा शिशु बाह्य जगत में आकर महान से महान पवित्र होकर इसकी भावनाएं ज्ञान और विज्ञान की ऊँची से ऊँची उड़ान उड़ने लगे। ऐसी भावना के साथ उसका वह दिवास प्रायः दिवस के रूप में उसको वर्णित, उसे स्मरण करते रहते हैं। क्योंकि मानव का स्मरण होना ही अथवा उसकी प्रतिभा उसकी मान्यताएं बलवती होती रहती हैं आन्तरिक जगत में उसका प्रसारण होता रहता है।

विचार आता रहता है कि मग्नं धन दन्म ब्रव्हे माता के गर्भस्थल में वह ध्वनियां अपने में ध्वनित होती हुई बाल्य के अन्तःकरण में प्रविष्ट हो जाती हैं वही तरंगें बन करके द्यौ में प्रवेश हो जाती हैं और द्यौ में जब गमन करने लगती हैं तो वही शिशु आगे चल करके भविष्य में महान बनता है वह अपनी आत्मा, आत्म तत्त्व का चिन्तन करने लगता है आत्मा में आत्मा का दर्शन करता रहता है। मेरे पुत्रों! इसीलिए हम परमपिता परमात्मा को परम आत्मा स्वीकार करते हैं और आत्मा हमारे अन्तर्हृदय में विद्यमान होती है इसीलिए आज का वेदमन्त्र कहता है शिशु वरुणां ब्रह्मे कि शिशु वरणीय है हमारा देवतव कहलाता है सृष्टि के प्रारम्भ में ऋषि मुनि अपनी एकान्त स्थलियों पर विद्यमान हो करके यह विचार विनिमय करते रहे हैं कि महाराजा! अश्वपति के यहां विद्यालय में इस प्रकार की विचारधाराओं का प्रायः वर्णन होता रहा है। वे विचारधाराएं मानवीयतव में प्रवेश हो जाती है और वे शिशु के रूप में ही हमें अपने में दर्शाती रहती है कि मैं अपने में महानता का वर्णित बन करके इस सागर से मुझे पार होना है। मेरे प्यारे! यह सागर बड़ा विचित्र है। इसमें कहीं किसी का मान हो रहा है, कहीं किसी का अपमान हो रहा है। कोई इस सागर के ऊपर ऊँची ऊँची कल्पनाएं कर रहा है। मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण है जहां ऋषि मुनि अपना अपना विचार देते रहते हैं।

महाराजा अश्वपति के यहां अचार्यजन और दार्शनिक विद्यमान थे तो एक दार्शनिक ने

कहा कि यह जो संसार है यह शिशु गृह है यहां प्रत्येक मानव शिशु बन करके आया है और शिशु बन करके ही वह शिशु अवणाम् ब्रह्मा वह शिशु बन करके ही अपने गृह को ऊँचा बनाता है अपने गृह को प्रकाश में लाता है वही शिशु योगेश्वर बन करके आत्म चिन्तन करता रहता है आत्मा मन ओर विचार के सन्दर्भ में प्रवेश हो जाता है शिशु का अभिप्रायः है कि मानव को ज्ञान और विज्ञान के ऊपर अपनी अपनी उड़ाने उड़नी हैं और उड़ करके उस महान यज्ञशाला या विज्ञानशाला में विद्यमान हो करके शिशु अपनी उड़ाने उड़ता रहता है आचार्य कुल में अध्ययन करता हुआ भी आचार्य की भावना ओर उसके अन्तर्हृदय की वेदना को वह स्वीकार करता हुआ अपने विचारों को देता हुआ वह गो मेध याग में परणित हो जाता है। अज्ञानता से प्रकाश में जाना ही मुनिवरों! गो मेध याग कहलाता है। इसीलिए जिन शिशुओं के द्वारा हम अज्ञान से प्रकाश में जाने के लिए प्रेरणा देते रहते हैं। ओर समय समय पर उनके द्वारा याग करते रहते हैं उनके जीवन को स्मरण करके उनकी वृत्तियों को महान बनाने का हमारी अन्तर्हृदय की वेदना बन जाती है।

मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है कि जब यह विचार दिया कि यह संसार शिशु शाला है यहां प्रत्येक मानव शिशु बन करके आया है और शिशु बन करके ही चेना के स्वरूप में वह विद्यमान रहता है। परमपिता परमात्मा भी शिशु कहलाता है क्योंकि वह परमात्मा भू वर्णनं ब्रह्मा वही भू भुवः स्वः में रत्त रह करके इस संसार को जानने की प्रेरणा अपने अन्तर्हृदय में प्रविष्ट कर देता है। हमारे यहां तीन व्याहृतियां कहलाती है ये व्याहृतियां हैं भू भुव स्वः इन तीन में ही यह सर्वत्र जगत निहित हो रहा है ब्रह्मचारी अपने विद्यालय में प्रवेश हो करके आचार्य से तीन प्रकार की व्याहृतियों को जानने की इच्छा प्रगट करता है और वह कहता है कि महाराज! भू क्या है भुवः क्या है स्वः क्या है तो आचार्य उसे अपना निर्णय देता है जो उसने जाना वह कहता है भू कहते हैं गुरूतव को भुव कहते हैं तरलतव को ओर स्वः कहते हैं अग्नि मानो द्यौ को तो यह तीन प्रकार की व्याहृतियां कहलाती हैं जिनसे जगत की सृष्टि अमृता में प्राप्त हो करके उन तीनों ही का एकोकीकरण हो रहा है मेरे प्यारे! भू कहते हैं पृथ्वी को और भुवः

कहते हैं आपो को और स्वः कहते हैं अग्नि को यह तीन प्रकार के परमाणु हैं जिनके ऊपर विज्ञान अपनी आभा में नृत्त कर रहा है।
आचार्य कहता है कि हे ब्रह्मचारियों! तुम्हें तीनों प्रकार के परमाणुओं को जान करके, इनको सुगठित करके तुम्हें वैज्ञानिक बनना है और विज्ञान के युग में जाना है। क्योंकि विज्ञान का युग एक ऐसा युग है जिसमें प्रवेश करके मानव अपनी अन्तरात्मा को जानता है भौतिकवाद और आध्यात्मिकवाद में यही अन्तर्द्वन्द्व कहलाता है कि वह तीन प्रकार के परमाणुओं को जान करके सर्वत्र जगत को जान लेता है। तीन प्रकार के परमाणु होते हैं और वायु उन्हें गतिवान बना करके वह अन्तरिक्ष में गमन करता रहता है। वही परमाणुवाद है, इसी से वह अपनी आभा में अग्रतव को प्राप्त हो जाता है विचार आता रहता है कि भू भुव स्वः यह तीन व्याहृतियां कहलाती हैं व्याहृतियां उसे कहते है। जिनमें सर्वत्र जगत समाहित रहता है। भू में जितना गुरूतव है वह समाहित है और भुवः में मध्यम व्याहृति कहलाता है उमसें निहित रहता है और स्वः में सर्वत्र शुद्धिकरण उसके समाहित हो जाता है। विचार आता रहता है कि मानव का विचार जितना पवित्र होता है, जितनी भी धारणा पवित्र होती है उतना ही वह स्वः में प्रवेश हो जाता है इसी प्रकार इन तीनों से यह जगत व्याप्त हो रहा है इनके द्वारा ही वह अपने में गतिवान हो रहा है।
वेद में तीन प्रकार की विद्याएं कहलाती हैं। ज्ञान, कर्म और उपासना ये तीन प्रकार की विद्याएं कहलाती हैं वेद तीन प्रकार की विद्याओं में कटिबद्ध हो रहा है। सबसे प्रथम ज्ञान उसके पश्चात वह कर्म और उपासना में रत्त होता है, बेटा! अध्ययन करने की तीन मात्राएं होती हैं जिनमें ज्ञान, कर्म और उपासना समाहित रहता है। सबसे प्रथम अ शब्द है उसके पश्चात उ और म हैं यह तीन शब्द कहलाते हैं जो ओ३म् की अकृति बनकरके ही यह तीन शब्दों में, यह तीन मात्राओं में सर्वत्र विद्या के सब शब्दों में समाहित हो रहे हैं। मेरे पुत्रों! तीन ही प्रकार के गुण है। जिन्हें देवतव के रूप में भी वर्णित किया गया है सबसे प्रथम पालना और पालना के पश्चात अनुशासन और उत्पति के मूल में जिन्हें सतोगुण, रजोगुण, और तमोगुण कहते हैं। ये तीन प्रकार के गुण कहलातेत हैं

सबसे प्रथम उसमें भी पालना का प्रसंग आता है पालना में विष्णु कहलाता है और रजोगुण और वह रजोगुण में वह शिव कहलाता है, तमोगुण में ब्रह्मा कहलाता है तो मेरे प्यारे! उत्पति के मूल में ब्रह्म है और अनुशासन के रूप में शिव कहलाता है और पालना के गर्भ में विष्णु कहलाता है विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का है जो हमारा कल्याण करने वाला है वह कल्याण में ही निहित रहने वाला है इसीलिए उसे विष्णु कहते हैं मेरे प्यारे! इसी प्रकार भूः पृथ्वी है भुवः आपो है और स्वः में अमृतं ब्रह्मणा वृतं ब्रह्म में वृतं विष्णु में जिसे हम स्वः कहते हैं उसमें हम रत्त रहते है।
मुनिवरों! देखो, यह तृतीयकरण कहलाता है मेरी प्यारी माता तीन गुणों से अपने शिशु को महान बनाना चाहती है। जब माता के गर्भस्थल में शिशु विद्यमान होता है तो वह गर्भ में उस आत्मा से वार्त्ता प्रगट करती है। मुझे माता मल्दाल्सा का जीवन स्मरण है माता मल्दाल्सा के गर्भ में जब बाल्य विद्यमान हुआ तो माता प्राणों का संचय करती रहती थी। प्राण को अपान में और अपान को समान में जब समान को व्यान में प्रवेश किया जाता है जो इन पांचों प्राणों का पञ्चीकरण बना करके अपने गर्भ के शिशु से वार्त्ता प्रगट कर रही है माता अन्तर्मुखी हो करके कहती है, हे बाल्य! तू कौन है? और कहां से इनम ब्रहा हे बाल्य! तू कस्मो सम ब्र्व्हे कहां से तेरा आगमन हुआ है। तो बाल्य कोई उत्तर नही दे रहा है, वह शिशु माता के गर्भ में हैं, वह भावना तो दे रहा है और इस भावना को जान रही है। माता उसे अपने में ही धारणा कर लेती है माता मलदालसा का यह क्रियाकलाप रहा है इसीलिए मेरी पुत्रियों को यदि सन्तान को महान और पवित्र बनाना है तो उन्हें प्राण का संचय करना चाहिए प्राण का एक दूसरे में मिलान करने की प्रवृत्ति हो जिससे माताएं अपने गर्भ से एक महान और पवित्र शिशु को जन्म दे सके। माता का वह शिशु महान बन करके माता का नामोकरण ऊर्ध्वा को प्राप्त करा देता है। माता की यह भावना होती है कि मेरा बाल्य पवित्र बने परन्तु पवित्र बन पाएगा जब माता की अन्तरात्मा अन्तर्हृदय और आध्यात्मिक और भौतिक दोनों विज्ञान में पारायण होगा और दोनों में गमन करने वाला होगा। इस प्रकार देखो, मम ब्रहे कृतं माता मलदालसा का जीवन मुझे स्मरण है बाल्यकाल में योगाभ्यास का

अध्ययन कर प्राण को अपान में और अपान को व्यान में मिलाने का समन्वय प्रायः माता करती है। तो वह अपने गर्भ से महान पुत्र को जन्म देती है और परमपिता परमात्मा जो शिशु के रूप में हृदय में विद्यमान रहता है उसे वह जान लेती है।

आज का हमारा वेदमन्त्र कह रहा है, वेदमन्त्र कहता है शिशु वर्णाम् ब्रह्मे वही शिशु वरणीय कहलाता है वही विद्यालों को सजातीय बनाता है और वही राष्ट्र को सजातीय बना देता है और जो राष्ट्र को सजातीय बना देता है वही अनुशासन और सतोगुण, पालना के मूल में राजा बन करके उसका राष्ट्रीयकरण करा देता है। जिससे किसी प्रकार की त्रुटियां, अशुद्धियां हमारे जीवन में नही हो पाती। वह महान बन करके हमारे में ही निहित रहते हैं वह जो रजोगुण है वह अनुशासन है और तमोगुण उत्पति के मूल में विद्यमान रहता है। माता के गर्भ के शिशु है परन्तु उसके मन की जो भावना है उग्रवाद के समय ये तीनों गुण अपनी अपनी आभा में रमण करते रहते हैं और माता व पितर की यह इच्छा रहती है कि मैं प्रजापति बनूं मानो मैं प्रजा का स्वामी बनूं। मेरे प्यारे! वह पुत्र पुत्रियां उसकी प्रजा कहलाती है। वे प्रजाएं बन करके अमृतां भू वरणां वह अमृत को प्राप्त करती रहती है। विचार आता रहता है मेरे पुत्रों! प्रजा बन करके गृह को उन्नत बनाया जाता है प्रजा बन करके ही राष्ट्र को उन्नत बनाया जाता है। मेरे प्यारे! ममता से नहीं मोह से नहीं वह कर्तव्यवाद की वेदी पर आने के कलए वह सदैव तत्पर रहता है।

हमारे यहां नाना पुत्रियां इस प्रकार की वेदज्ञ रही है जिन वेदज्ञों के आधार पर सन्तान को, शिशु को जन्म देने वाली रही हैं आज मैं इस सन्दर्भ में विशेष विवेचना तो देने नही आया हूँ। विचार केवल यह कि हमारा वेदमन्त्र यह कह रहा है कि तमोगुण जब विचार होते हैं तमोगुण जब सामान्यतव में होत है तो तीनों गुण सामान्यता में विद्यमान रहते हैं। जब रजोगुण आता है तो रजोगुण अति होने से वह पाप के मूल में प्रवेश करता है और सामान्यता में रह करके वह रजोगुण शिव के रूप में रहता है। जब ममतव से हृदय में सन्तान को जन्म देने की इच्छा होती है तो उसका रूप ब्रह्मा का होता है ब्रह्मा के रूप में उत्पति का मूल कहा गया है। वही रजोगुण बन करके अनुशासन

में लाती है, पुत्र को शिक्षा देती है और अपने आंगन में ला करके उसे गुणों में ही रमण कराती है। उसे कहीं रजोगुण से ताड़ना देती है, कहीं उसी रजोगुण से शिक्षार्थी बनाती है कहीं राष्ट्रीय विद्या देती है तो माता का कितना अहोभाग्य होता है सतोगुणों से लोरियों का पान करा रही है और ब्रह्मज्ञान देती है। ब्रह्म ज्ञान को दे करके लोरियों का पान करा कर उसकी पालना कर रही है पालना के मूल में केवल यह नही हैं कि हम उसका चुम्बन करते रहें और लोरियों का पान कराते रहें। उसे शिक्षा देनी है हे बाल्य! तू मेरे अन्तर्हृदय की भावना है हे बालय तू मेरे अन्तर्हृदय का प्रकाश है, हे बाल्य! मैं तेरा इसीलिए चुम्बन कर रही हूँ क्योंकि तू मेरा अन्तर्हृदय तू हृदय के रूप में प्रविष्ट हो रहा है। माता जब इस प्रकार की शिक्षा देती है वह सतोगुणी लोरियों का पान कराती है लोरियों में बनते उसके आहार में पालना की तरंगें जा रही हैं, विष्णु की तरंगें जा रही हैं मेरे प्यारे! विष्णु कहते हैं सतोगुण को हे बाल्य! तू सत नही हैं तू सत्य है मानो चित्त की तुझे पिपासा रहती है और सत चित्त आनन्द बन करके तुझे आनन्द की पिपासा रहती है तो आनन्द प्रभु के द्वार पर तुझे ब्रह्म ज्ञान में प्राप्त होगा। तो माता अपने हृदय से उसे ब्रह्म ज्ञान करा देती है जब वृत्ति एकाग्र हो जाती है तो उस समय वह बाल्य को नाना प्रकार की भावना दे करके महान बना देती है वही तीनों गुणों से उपरामता से प्राप्त हो करके बेटा! योगेश्वर बन जाता है।

माता मलदालसा ने अपने पुत्रों! को कहा हे बाल्य! तू तीनों गुणों में ही नही रहना, मानो रजोगुण, सतोगुण से भी उपराम होना है। रजोगुण, तमोगुण से जो उपराम होता है। वह आनन्द को प्राप्त कर लेता है और वह परमात्मा के विशाल ज्ञान में और परमात्मा के गर्भ में वह निहित हो जाता है। विचार करता हुआ वह आनन्द को ग्रहण करता है। क्योंकि आनन्द इन तीनों गुणों से उपरामता से प्राप्त होता है जहां न पालना का प्रसंग है न अनुशासन का प्रसंग है और न उत्पति का ही प्रूसंग आता है उसके उपरामता को प्राप्त हो करके वह अब्र ब्रह्मे ब्रह्म में अपने को दर्शाता रहता है मेरे प्यारे! मैं तुम्हें गम्भीर रहस्यों में नही ले जा रहा हूँ विचार केवल यह है कि हम परमपिता परमात्मा परमदेव आनन्द में रत्त होते हुए हम शिशु की विवेचना में विवेचित हो जाएं। और अपने में यह

ग्रहरा करने लगें कि हे ममतव जब तेरा हृदय और ज्ञान और विज्ञान में प्रविष्ट हो जाएगा। तो तेरा उपराम ब्रह्म ज्ञान में प्रविष्ट हो जाएगा। मेरे प्यारे! मानव को ब्रह्मवेत्ता बनना चाहिए और माता जब उसे ब्रह्मवेत्ता बना देती है तो यदि वह राजा बनता है तो राष्ट्र को उन्नत बनाता है यदि वह प्रजा का स्वामी बनता है तो प्रजा को ऊँचा बनाता है।

कोई भी राष्ट्रवेत्ता यदि राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है तो माता का सहयोग उसमें विशेष होता है। आचार्यों का सहयोग भी होता है परन्तु माता का प्रथम होता है। माता जब उसे शिक्षार्थी बना करके और अपने गर्भ में ही प्राणों का संचय करके उसे ब्रह्मवेत्ता बना देती है कि ब्रह्म क्या है? ब्रह्म वह है जो सबमें व्याप्त रहा है, ब्रह्म वह है जो मेरे अन्तर्हृदय में विद्यमान है उसे वह जान लेता है और जान करके प्रत्येक प्राणी को शिक्षा देता है। वह राष्ट्र का स्वामी बनता है तो राष्ट्र में धर्म और तीनों गुणों का सामान्य बना करके, अपने हृदय की भावना दे करके ही राष्ट्र को उन्नत बनाता है। राजा बन करके वह प्रजा को ब्रह्म ज्ञान देता है। इस ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त करता हुआ, विज्ञान को जानता हुआ प्रजा को धर्म में परिणित कर देता है वह धर्म एकोकी धर्म बन करके अन्तर्हृदय से शंका लज्ञा से रहित क्रियाकलाप का नाम ही धर्म कहा जाता है। धर्म को राजा जब स्वयं जानता है, बुद्धिमानों से विवेचनित होता रहता है, ब्रह्मवेत्ता राष्ट्र के विवेकी पुरूषों से अपना सम्पर्क करता है तो राष्ट्र में ईश्वर के नाम पर रूढ़ियां नही पनपा करती। जैसे मुझे एक समय महानन्द जी ने कहा था कि संसार में, राजा के राष्ट्र में रूढ़ि नही रहनी चाहिए। जो राजा ब्रह्मवेत्ता होता है उस राजा के राष्ट्र में रूढ़ि नही होती ईश्वर के नाम पर ब्रह्म के नाम पर रूढ़ि नही होती क्योंकि ब्रह्म तो एकोकी वचन है, एकोकी है धर्म, मानवीयता है और मानवीयता में जो निहित रहता है। वही तो राष्ट्र और समाज को कल्याण के मार्ग पर ले जाता है।

विचार आता रहता है मेरे प्यारे! देखो, ममतव को धारण करने वाली माताओं का सर्वप्रथम सहयोग होता है कि प्रजा के समाज को हम वेद की आभा में कैसे परिणित कर सकते हैं। मेरे प्यारे! मैं बहुत दुरी नही जाना चाहता हूँ विचार केवल यह कि

परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और रजोगुण, तमोगुण से उपरामता को प्राप्त करके ब्रह्मवेत्ता बन करके अपने कर्तव्य का पालन कि जाता है। जहां संस्कारों से संस्कार नही उपजते हैं केवल कर्तव्यवाद रह जाता है और वही कर्तव्यवाद मानव को पवित्रता की वेदी पर ले जाता है। मैं विशेष विवेचना न देता हुआ केवल यह कि मुनिवरों! देखो, उस परमपिता परमात्मा की महती को, आनन्दतव को और स्वयं मानव को क्या बनना है यह विचार विनिमय करने के लिए मैं तुम्हारें द्वार पर जा पंहुचा हूँ कि तुम अपने में जानोकी यह संसार क्या है।

वेद का ऋषि कहता है कि यह संसार एक शिशु शाला है ओैर इसमें शिशु ही रहना चाहिए क्योंकि शिशु में न मान होता है न अपमान होता है, न अभिमान होता है शिशु की भावना उसी प्रेरणा को ले करके जैसे शिशु में न तो किसी के प्रति घृणा होती है और न किसी के प्रति द्वेष होता है वह स्वतन्त्र हो करके विचरण करता है सभी प्राणी उससे प्रीति करते हैं इसी प्रकार शिशु जैसी प्रवृत्ति बना करके हमें इस संसार में गमन करना है संसार में रमण करते हुए परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को जानना है। क्योंकि परमात्मा की सृष्टि में हम सभी शिशु के रूप में रहते हैं क्योंकि वह हमारा पिता है। पिता और रक्षक होने से हम प्रायः शिशु बने रहते हैं यदि हम शिशु नही बनते हैं तो मानो उसमें मान अपमान आ गया तो प्रभु! के राष्ट्र से दूरी चले गए। इस प्रकार हमारा शिशुपन नही रहा, हममें अभिमान की मात्रा बलवती हो गई है। शिशु में मान और अपमान नही होता इसीलिए मानव को मान और अपमान से रहित होना है। माता जैसे शिशु को कहती है कि हे बाल्य! तुझे महान बन करके देवतव को प्राप्त होना है तो माता को स्वयं देवता बनना होगा। इस प्रकार के विचारों के ऊपर वार्त्ता प्रगट करते हुए ऋषि मुनि कहते हैं कि यह संसार एक प्रकार की शिशु शाला है यहां प्रत्येक प्राणी शिशु बन करके आया है, शिशु बनना चाहिए, मान और अपमान से रहित हो करके प्रभु के राष्ट्र में विचरण करना चाहिए। इसीलिए मानव को पवित्रता की आभा ममें वही धर्म होता है, वहीं कर्तव्य होता है और वहीं ज्ञान ओैर विज्ञान की उड़ाने उड़ी जाती हैं। प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, ज्ञान और विज्ञान में रमण करने की भावना लाता रहा

है।

बेटा! आज मैं तुम्हें यह विचार दे रहा हूँ कि परमपिता परमात्मा एक महान अ्रै आेर वह पवित्रतम है जो परमात्मा के समीप जाना चाहता है उसे निरभिमानी बनना होगा। परमात्मा निरभिमानी है रचयिता है वह अकाय है वह व्याप्त है वह अपने में ही रमण कर रहा है। तो इसीलिए हमें उस प्रभु के द्वार पर जाने के लिए सदेव आनन्द के लिए प्रीति को धारण करना है तो इसीलिए हमें उस प्रभु के द्वार पर जाने के लिए सदैव आनन्द के लिए प्रीति को धारण करना है क्योंकि अमृत की तीन मात्राएं है। उसी में सत, चित्त आनन्द को वह ग्रहण करता रहे ग्रहण करने की प्रेरणा को प्राप्त करता रहता है। सत आेर चित्त ही आत्मा का गुण है परन्तु वह इस आनन्द की पिपासा में रहता है मेरे प्यारे! देखो, आनन्द कहां प्राप्त होता है? परमपिता परमात्मा के समीप होता है। परमपिता परमात्मा हमारा देव है हम सब उसके शिशु है शिशु बनें तो माता पिता के हृदय में यह भावना जाग्रत होती है कि शिशुओं को शिशु बनायें बुद्धिमान बन करके याग के माध्यम से अपने क्रियाकलापों के माध्यम से उसको स्मरण करना उसे हम शिशु वृत कहते हैं शिशुपना कहते है। शिशु के अन्तःकरण में संस्कार बनते है। उन्हीं संस्कारों के आधार पर मानव अपने क्रियाकलापों को सदैव अपने में धारण करता रहा है आेर उसी में रत्त रहा है। यह है बेटा! आज का वाक्।

आज के वाक् उच्चारण करने का हमारा अभिप्रायः क्या है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए उनकी महिमा का गुणगान गाते रहें आेर अपने में शिशु बनें। मुनिवरों! देखो, गमनं ब्रह्मे गमनं ब्रव्हा आज मुझे कहीं से यह प्रेरणा भी आई आेर वेद के मन्त्रों में बेटा! शिशु सूक्त का वर्णन आ रहा था जैसे वेद में प्रत्वय सूक्त है पृथ्वी सूक्त है आेर अग्नि सूक्त है इसी प्रकार आपोमयी सूक्त कहलाता है, इसी प्रकार शिशु सूक्त का भी वर्णन है कूरू सूक्त का भी वर्णन आता रहता है इसी प्रकार ब्रह्म विष्णु इन्द्र शिव ये सब सूक्त कहलाते हैं इनके द्वारा बेटा! वेद में जो वर्णन है वह समय समय पर मैं तुम्हें वर्णन कराता रहूँगा। आज मैंने शिशु सूक्त की कुछ चर्चाएं की है। शिशु को कैसा बनना है आेर माता को कैसा बनना है, यह सब माता के ऊपर दायित्व

रहता है। वह विचारती रहती है और शिशु को विवेकी बना करके बेटा! ब्रह्मवेत्ता बना देती है, और वह राष्ट्र का पुरोहित भी बना देती है।
आज का विचार विनिमय क्या कि जहां माता के गर्भ के तीन दिवस के प्रारम्भ से जब माता शिक्षा देना प्रारम्भ करती है तो वह गर्भ में ही शिक्षित बन जाता है। आचार्य के कुल में गो मेध याग करता है। पशुपने को त्याग करके वह वेद में प्रवेश हो जाता है। अपने क्रियाकलापों में सदैव तत्पर रह करके माता अपने शिशुओं को गो मेध याग तक प्रवेश करा देती है। गो मेध याग ऋषि करता है, आचार्य कुल में होता है जब वह गोमेध याग बना देता है उसके पश्चात वह बुद्धिमान बन करे राष्ट्र को ऊँचा बनाता है कोई ब्रह्मवेत्ता बन जाता है। उन्हीं में से कोई राष्ट्रपिता बन जाता है कोई राष्ट्रवेत्ता के क्रियाकलापों में परिणित हो जाता है, कोई वैज्ञानिक बन जाता है, कोई आध्यात्मिकवादी बन करके अपने में अणु और परमाणु को धारण करके लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ने लगता है।
बेटा! आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, केवल विचार विनिमय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। रजोगुण, सतोगुण और तमोगुण से उपराम हो करके आनन्द की पिपासा में चले जाएं क्योंकि प्रभु आनन्दमयी स्वरूप है और आत्मा सत चित्त है और वह आनन्द की पिपासा में लगा रहता है। बेटा! यह चर्चाएं मैं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा।

२२ 24 02 1991 लाक्षागृह और चन्द्र सूक्त विज्ञान

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा के यज्ञोमयी स्वरूप की महिमा की महती का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप हैं, चाहे वह याग भौतिक रूप में हो, चाहे वह आध्यात्मिक

रूप में हो, चाहे वह पिण्ड के रूप में हो, चाहे वह ब्रह्माण्ड के रूप में क्यों न हो, परन्तु यह संसार यह ब्रह्माण्ड मानो एक यज्ञशाला के रूप में हमें दृष्टिपात आती रहती है। जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, अन्वेषण करता रहा है, और अनुसन्धान करता रहा है कि अन्वेषण करना ही मानव की प्रतिभा है।

तो मेरे पुत्रों! आज का हमारा वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा था, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा वरणीय है, और वह यज्ञोमयी स्वरूप है, चाहे परमाणु याग कर रहा है, अणु भी अपने में याज्ञिक बना हुआ है, मानो देखो, प्रत्येक रूपों में प्रत्येक तत्त्व अपने में याज्ञिक बना हुआ है, जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, मानव कहीं विज्ञान के द्वारा कहीं समाधि के द्वार कहीं मानो अध्ययन के द्वारा उसके प्रतिभा को जानता है, और विचार विनिमय करता रहा है, तो इसीलिए हमारा वेद का मन्त्र अपने में अद्वितीय कहलाता है, और मानो देखो, नाना प्रकार यागों के द्वारा अपने मानवीय जीवन को एक आदर्श बनाने का प्रयास करता रहा है, मुझे बेटा! बहुत सा काल स्मरण आता रहता है, मैं उस काल में जब मैं प्रवेश करता हूँ जिस काल में मुनिवरों! मानव अपने में मानवीयता का ह्रास और मानवीयता की वेदी पर सदैव निहित रहता है।

तो आओ, मेरे पुत्रों! आज का हमारा वेदमन्त्र, याग के ऊपर हमें प्रेरित कर रहा है, और प्रेरणा दे रहा है कि प्रत्येक मानव को याज्ञिक बनना चाहिए, और याग में अपने को परणित करते हुए मानवीय तथ्यों में सदैव रत्त रहना चाहिए। तो आओ, मेरे प्यारे! देखो, आज का हमारा विचार, क्या क्या हम देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, और नाना प्रकार के यागों का चयन करते रहें, क्योंकि हमारे ऋषि मुनियों ने इनता अनुसन्धान किया, क्या प्रत्येक याग का कर्मकाण्ड अथवा उसकी भावनाएं और वह मानो देखो, विज्ञान में स्वरूप का उसमें दर्शन होता रहा है। क्योंकि मानवीय सदैव अपने में दर्शन करने के लिए याचना करने के लिए सदैव तत्पर रहता है। और विचारता रहता है कि मानव वर्णनं ब्रह्मा दर्शनं ब्रहे व्रतं क्या यह जो मानवीय दर्शन है, यह देखो, एक महानता में रत्त हो जाता है, जिस महानता को प्राणी अपने में जानना चाहता है, अपने में रत्त

करना चाहता है कहीं वृष्टि याग में उद्बुध हो रहा है, कहीं यह पुत्रेष्टि यागों के स्वरूप में रमण करता रहा है, कहीं और भी नाना प्रकार के यागों का चयन करता हुआ, मानो अपने में मानवीयता के लिए बेटा! देखो, अपनी घोषणा करता रहा है, और घोषित होता रहा है।

तो आओ, बेटा! आज का हमारा वेदमन्त्र मानो यह क्या कह रहा है, मानो तू विज्ञान में रत्त हो जा और विज्ञान को ले करके तू देखो, देखो, याग में रत्त हो जा जब याग में रत्त हो करके, तू विज्ञान के क्षेत्र में चला जा। तो मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार का जो अवृत होता है, अथवा निर्माण की प्रतिभाषिता रत्त रहती है, वही एक मानवीय तथ्य माना गया है, जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से बेटा! अन्वेषण अनुसन्धान में रत्त रहा है, आज का हमारा वेदमन्त्र यह कहता है कि महापुरूषों ने अपने में देखो, अपनेपन को जाना और अपने में ही यागमयी स्वरूप बनते रहे हैं, क्योंकि जितने भी सु क्रियाकलाप मानवीय तथ्य में रमण करने वाला हैं वह याग कहलाता है, वह अपने में महान कहलाता है, आज मैं विशेष चर्चा तो नही दूंगा, क्योंकि आज मेरे प्यारे महानन्द जी भी अपना विचार कुछ व्यक्त करेंगें, परन्तु आज का हमारा अभिप्रायः केवल इतना ही है कि मानव अपने में मानवीयता का दर्शन करता रहे, और अपने में क्योंकि देखो, प्रत्येक परमपिता परमात्मा का जितना भी प्रकृति मण्डल है, चाहे वह लोक लोकान्तरों के रूप में हो चाहे वह परमाणुवाद के रूप में हो यह ब्रह्माण्ड अपने में मानो देखो, याज्ञिक बना हुआ है, और याग करता रहा है, और याग में प्रतिष्ठित रहा है।

तो आओ, मेरे प्यारे! देखो, आज का हमारा विचार वेदमन्त्र कहता है कि हे मानव! तू पवमान बन, वेद का मन्त्र कहता है, पव वर्णानं ब्रह्मा रथं पवमानसुतप्रव्हे लोकां क्या हे मानव! तू पवमान बन करके अपनी धाराओं में सदैव रत्त होता चल, तो मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक मानव श्रेष्ठतम क्रियाकलापों में तत्पर हो जाता है, तो यह बेटा! जगत महानता की वेदी पर रत्त हो जाता है। तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, केवल यह कि हम अपने में अपनेपन याज्ञिक बन करके वह हमारा एक प्राण है अपान है प्राण और अपान दोनों का मिलन होता है, तो याग हो रहा है, तो मानो जब

यह प्राण समान में वह प्राण से समन्वय कर ले, तो वह भी एक याग बना हुआ है, और वह जो उदान नाम का प्राण है, जो यज्ञशाला के रूप में साकल्य बन करके बेटा! हूत कर रहा है। तो विचार आता है कि मानवीय तथ्य और ब्रह्माण्ड दोनों का एकोकीकरण हो जाएं तो हमारा जीवन सार्थकता को प्राप्त हो जाता है। तो मेरे प्यारे महानन्द जी अपने विचार व्यक्त करेंगें। क्योंकि इनकी बड़ी पिपासा बनी रहती है।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् सर्वाणि मां भद्रं मना वाचश्वञ्जना यमा आ पा रथं दधि ब्रह्मा। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! भद्र समाज! अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मानवता की चर्चा कर रहे थे और परमपिता परमात्मा के याग को, वह मानवीय याग से उसका समन्वय कर रहे थे। वास्तव में देखो, यह संसार विकासवाद है, और शून्य बिन्दु हैं, बिन्दु से ही विकास है, और विकास में वह रत्त हो जाता है, जिससे मानव का जन्म होता है, पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में वर्णन कराया, यह जो बाल्य का जन्म होता है, उसकी जो प्रारम्भिकता है, शून्य बिन्दु है, और उसका जो अन्तिम चरण है, वृद्धावस्था का और वृद्ध हो करके भी संसार की प्रत्येक भावनाओं से मानव तृप्त हो जाता है, और वे परमपिता परमात्मा का संसार में सदैव रमण कर जाता है।

तो विचार आता है कि वह संसार क्या है, यह संसार मानो देखो, शून्य बिन्दु हैं, यह संसार शून्य बिन्दु से बनी है, और विकासवाद मध्य है, और अन्त में देखो, शून्य बिन्दु में ही प्रवेश हो जाता है, तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे इस प्रकार की वार्त्ताएं प्रगट कराते रहते हैं, परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र और पूज्यपाद गुरुदेव का जो अन्तिम चरण का का जो उपदेश है, वह केवल मानवीयता कहलाती है, मैं पूज्यपाद गुरुदेव को मानो अपना परिचय देने आया हूँ, और समाज को भी अपना परिचय देना चाहता हूँ, और वह परिचय यह है कि यह समाज मानो देखो, ब्रह्मणे देखो, कुछ वार्त्ताओं में ले जाना चाहता हूँ, आज हमारा बडा सौभाग्य है और हम बड़े सौभाग्यशाली हैं, और देखो, जिस स्थली पर हमारी यह आकाशवाणी जा रही है, वहाँ मानो देखो, चतुर्थ वेदां भू वर्णनं एक पारायण याग का सम्पन्न हो रहा है। उस सम्पन्न के गर्भ में जो भी मेरा

यज्ञमान है, क्योंकि मेरी अन्तर्भावना यज्ञमान के साथ रहती है, और मैं यह कहता रहता हूँ कि यज्ञमान का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, वह उनकी प्रवृत्तियां विचित्र बनी रहें, और यागां भू वर्णनं देखो, प्रत्येक रूप में जो मानव याग करना चाहता है, उनका याग मानो द्यौ को प्राप्त होता है, ऐसी मेरी भावना रहती है, मेरा अन्तरात्मा सदैव यज्ञमान के साथ रहता है। हे यज्ञमान! तेरे जीवन की प्रतिभा बनी रहे। तू अपने में तारतम्यवादी बना रहे। इस प्रकार मानो देखो, आशीष देते हुए, देखो, अमृतां ब्रह्मणे ब्रहा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह उद्गीत गवाते रहते हैं। मैं उसमें रत्त रहता हूँ, वह गान गाना मानव का कर्तव्य है, क्योंकि देखो, वे परमपिता परमात्मा भी सृष्टि का जो गान गाया जाता है, वह भी एक मानवीयतव में रत्त रहता है।

बरनावा भूमि

तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी गागर में सागर की कल्पना की हैं, और कई समय हो गएं है, वह नाना दर्शनों की चर्चा करते हुए, परन्तु देखो, यह जो स्थली धार्मिक रही है, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव का तो कोई दोषावृत नही, मानो यह सदैव देखो, यह विचारों की स्थली रही है, और यह देखो, मुझे वह काल स्मरण आता है, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब मैं अपने में रत्त होता हूँ, यह वह स्थली है, जहाँ भीम और घटोत्कच्छ दोनों की विज्ञानशाला रही है, और वह विज्ञानशालाएं नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण भी होता रहा है, और वह कोई वह समुद्रों से मिलान करते हैं, उन यन्त्रों का और देखो, लोक लोकान्तरों में जाने वाले उड़ान करने वाले यन्त्रों का भी निर्माण होता रहा है, इसी प्रकार देखो, यहाँ वह स्थली है, जहाँ पाण्डव देखो, महाराजा दुर्योधन ने देखो, पाण्डव पुत्रों को माता कुन्ती को जब देखो, हस्तिनापुर से और उन कुरू स्थली में देखो, पर्व के लिए लाया गया, तो एक मानो देखो, एक षडयन्त्रं अमृतं ब्रहे एक पामर देखो, उन्होंने स्थली रचाई, और वह रचाना क्या थी, उसे नष्ट करने की एक भावना बनी, क्या जिससे यह नष्ट हो जाएं, और वह राष्ट्रीय पद्धति हमारी बनी रहे, यह भावना जब देखो, उनके हृदयों में रही, तो यह देखो, पाण्डव पुत्र उस स्थली पर मानो देखो,

अपने में वास करते रहे, और वास करके उन्होंने देखो, महाराज भीम ने अपने यन्त्रों से अपने भुजो से देखो, अग्नि का व्यवधान किया, और वह मानो देखो, जो सुरंग बनी थी। उसमें वह दूरी हो गएं वह जो देखो, अन्तर्वृतियों में रत्त रहने वाला विचार आता रहता है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को क्या वर्णन करा सकता हूँ? क्योंकि यह जो जानते हैं स्वतः क्या वह स्थली है, जहाँ पाण्डव अपनी आभा को ले करके आए कुछ समय पर देखो, यहाँ नष्ट हो गया, और अग्नि के मुखारबिन्दु में उसके पश्चात देखो, यहाँ अमृतं उसके पूर्व काल में भी नष्ट होने से पूर्व काल में यहाँ दोर्णाचार्य का विद्यालय था, जिस विद्यालय का जिसमें लगभग देखो, जिस विद्यालय में मुझे तो ऐसा स्मरण है कि उस विद्यालय में लगभग पांच हजार विद्यार्थी अध्ययन करते थे, और वह अध्ययन शाला रही है, यह देखो, अमृतां भू देखो, वह जो अग्नि के मुखारबिन्दु में चली गई, और देखो, कुछ नदी के तटों ने मानो देखो, उसको प्राप्त कर लिया, इसी प्रकार अमृतां देखो, यहाँ बड़े क्रियाकलाप होते रहे, और किसी समय हमारे द्वारा भी देखो, यागों की स्थली बनी देखो, याज्ञिक पुरूष यहाँ याग करते थे, महाराजा दोर्णाचार्य मानो पाण्डितव की आभा को ले करके मानो ब्रह्मचारियों की पंक्ति लगा करके, वह याग करते थे, और वह जहाँ देखो, देव याग करते थे, जहाँ वह धनुर्याग करते थे, वह देव याग में परणित हो करके देवताओं की पूजा का व्यवधान भी है। अग्नि होत्र करना और देव अमृतां में व्रत रहना, यह सदैव उनका क्रियाकलाप रहा है, और जहाँ देखो, यन्त्रों का निर्माण किया जाता हो, ये निर्माणशालएं रही हैं। तो विचारना है कि मध्य काल में जब पुरा देखो, कुछ काल आया, और काल आने पर यहाँ महाराजा परीक्षित का न्यायालय भी रहा है, किसी काल में यहाँ न्याय भी होता रहा है, न्यायधीश बन करके देखो, न्याय करते रहें हैं, इसी प्रकार समय आता रहा वह भी समय चला गया, वाममार्ग काल आया वाममार्ग काल में देखो, अशुद्धियां आनी प्रारम्भ हो गयी, धर्म के देखो, रहस्यों को न जान करके, नाना कुरीतियों में रत्त होते रहे, तो विचारने में यह है कि नाना प्रकार के यन्त्रों के द्वारा पाण्डव यहाँ से चले गये, उनके प्राणों की रक्षा हो गयी, और देखो, यहाँ परीक्षित का न्यायालय रहा, न्यायालय भी देखो, यहाँ वह आते और न्याय

भी करते रहें हैं, इसी प्रकार जब इस प्रकार का काल जब आ गया, तो वाममार्ग आ गया, वाममार्ग भी चला गया, अन्तिम परिणाम यह हुआ, कि देखो, यहाँ यवन और देखो, मोहम्मद के मानने वाले जब आये, तो इसको भ्रष्ट करना प्रारम्भ कर दिया, यह भ्रष्ट होता रहा, देखो, यहाँ शिवालय था, देखो, यह न्यायालय था, शिवालय था, एक महात्मा ने और देखो, सुरा वृत्तियों में महात्मा बुद्ध के काल में देखो, उसका निर्माण हुआ, देखो, शिवालय का निर्माण हुआ, वह उनको भी परास्त किया गया, परास्त करने के पश्चात मुनिवरों! देखो, यहाँ क्या क्या हुआ इसके ऊपर मैं अपनी टिप्पणी नही दूंगा। केवल विचार विनिमय यह कि यह स्थली बड़ी भव्य रही है, तो यह महापुरूषों की स्थली रही है, यहाँ महात्मा जमदग्नि मुनि महाराज के इस स्थली पर रहे हैं, क्योंकि जमदग्नि का आश्रम देखो, यहाँ से कुछ ही दूरी पर जमदग्नि का आश्रम था, और वह आश्रम में भी रहते और यहाँ भी आ करके रहे है। तपस्या स्थली यह बनी रही है। उसके पश्चात महात्मा जैमिनी ने भी देखो, कुछ दर्शनों की लेखनी का बद्ध किया है, यहाँ नदी का तट था, और यह देखो, यह स्थली बड़ी भव्य रही मानो देखो, तपस्वियां की स्थली रही है और वेदमन्त्रों का उद्घोष होता रहता था पाण्डितव यहाँ समय समय पर आ करके अपने में अपनेपन को चिन्तन में लाते रहे और यह द्रव्य अप्रतम बड़ी भव्य स्थली रही है उस स्थली का परिणाम क्या मानम ब्रव्हे देवा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई कालों में वर्णन कराया परन्तु देखो, जब यहाँ ध्रष्टता आ गई और ध्रष्टता में जो मानो देखो, पिण्डाकार जो ब्रह्माण्ड का पिण्ड बन करके देखो, देवतव की पूजा करते रहे हैं, अथवा वह भी जो उसको भी दूरी करा दिया गया देखो, उसके पश्चात यहाँ देखो, और भी नाना प्रकार के देखो, देखो, निर्मम हत्यांए भी होती रही हैं, मानो देखो, मृत्यु दण्ड भी दिए गएं हैं।

तो आज मैं इस सम्बन्ध में कोई विचार देना नही चाहता हूँ, यह तो मानव को मानव का ह्रासतम होना है। विचार केवल यह कि अमृतं देखो, कन्यं ब्रहे यहाँ नाना कन्याओं का भी ह्रास हुआ है, देखो, वह एक कूप है, उस कूप में देखो, मृतक अप्रतियों में हनन करने में नष्ट किया गया, तो आज मैं इस क्षेत्र में न जाता हुआ, केवल विचार विनिमय

क्या अब हमारा क्या देखो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आपको कुछ परिचय दे रहा हूँ। उसके पश्चात देखो, पुनः से समय आया, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहाँ से उत्पन्न हो गयें? परन्तु किस स्थली से आ गये, पुनः से यहाँ यागों का व्यवधान होने लगा, और यहाँ मानो देखो, यागां वेदमन्त्रों को पुनः से क्योंकि जो भूमि किस प्रकार की होती है, अन्त में में उसी प्रकार को ले करके ही भूमि के परमाणुवाद का जन्म हो जाता है। मैने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल में कहा है। आज भी मैं उद्गीत गा रहा हूँ कि वेदों की ध्वनियां जब अन्तरिक्ष में इस वायमण्डल में प्रवेश होती है, तो यह हमारा सौभाग्य जागरूक हो जाती है। यह भूमि का वह पुण्य उदय हो जाता है। जब महात्मा देखो, वह अमृतं देखो, ब्रहे कृतं देवत्वां महात्मा दोर्णाचार्य के समय में जहाँ देखो, इस प्रकार की स्थली रही, और दोर्णाचार्य देखो, अपने ब्रह्मचारियों को वेदज्ञ ध्वनि का अध्ययन कराते रहें हैं। जहाँ वह मानो देखो, धनुर्याग में पारायण थे, वहाँ वेदमन्त्रों की ध्वनि में भी बड़े पारायण थे, जब भीष्म जी किसी किसी काल में यहाँ देखो, आते रहते थे, तो देखो, समय समय पर वह भी वेदमन्त्रों का उद्घोष करके यहाँ तपस्या करते रहे हैं और देखो, उनका ब्रह्मचर्य सजातीय बन गया था। विचार आता रहता है, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन कराने जा रहा हूँ, कि जो भीष्म जी और वह दोर्णाचार्य की पाण्डु पुत्रों की महान स्थली रही है, तो देखो, वह महात्मा व्यास अम्ब्रहे व्यास मुनि भी यहाँ तपस्या में परणित रहे हैं, आज मैं इन विषय में विशेषता नही केवल यह साहित्यिक विचार हमारा है, साहित्य कहता है, आचार्यजन कहते हैं, कि यहाँ वेदज्ञ ध्वनि होती थी, आज भी मैं साहित्य में प्रवेश करना चाहता हूँ, क्या पूज्यपाद गुरुदेव का वह जन्म जन्मान्तरों का जो वह संस्कार हैं, वह यागों के माध्यम से देखो, वह प्रगट होने जा रहा है, और वह जो प्रगट हुआ, वह यागों के रूप में ही प्रगट हो सकता था। क्योंकि अन्तःकरण में इस प्रकार के अंकुर विद्यमान थे। जन्म जन्मान्तरों के उनमें याग का एक एक अंकुर देखो, स्थली पर याग कर रहा है। हृदय में जो एक एक परमाणु याग कर रहा है, वह याग देखो, जन्म जन्मांतरों की आभा में रत्त हो करके पुनः से वह उपजने लगता है। इसी प्रकार मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के अन्तर्हृदयों में वह उपजने लगा, और

उपज करके मानो देखो, ध्वनियों का प्रसार हो रहा है, ध्वनित होता हुआ, अपने में ध्वनित हो रहा है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव की प्रशंसा करने नही आया हूँ, मैं केवल वास्तविक जो स्वरूप है, उसको मैं वर्णन करता रहता हूँ, समय समय पर वर्णन करता रहता हूँ।

परन्तु देखो, यह जो काल है, यह ऐसा काल है, जिस काल में मानव की प्रवृत्ति वाममार्गी बन गई है और वाममार्ग उसे कहते हैं, जो सुरापान करने वाले हों, और मांस का भक्षण करने वाले हैं, जो मानो देखो, वनचरों को गमन करने वाले प्राणियों को अपने शरीरो में जिनको स्थान दिया जा रहा है, और वह परमाणु अशुद्ध हो करके बुद्धि को भ्रष्ट करते जा रहे हैं, मैं जब यह विचार देखो, जब मेरे हृदय में उपलब्ध होते हैं, अरे, कहीं संसार में याग होने लगे, तो याग में देखो, अपने में अभाव और कहीं देखो, नृतिका आ जाएं, तो मानो देखो, लाखों की संख्या में प्राणियों का आगमन होने लगता है, जब मानो देखो, यहाँ भ्रष्ट यहाँ राष्ट्रवेत्ता हो जाते हैं, और राष्ट्रवेत्ता में भ्रष्टता आ जाएं, तो भ्रष्ट प्राणी को राष्ट्रवेत्ताओं के साथ में मानो देखो, लाखो प्राणियों का व्यवसाय हो जाता है, तो विचार आता रहता है, कि मैं कठोरता में नही जाऊंगा, पूज्यपाद गुरुदेव कहते हैं, कि कठोर उच्चारण करते हैं, परन्तु मैं कठोर नही कहता हूँ, मेरा विचार देखो, उद्गीत गाने का जो अभिप्रायः है, वह वास्तविकतव में रमण करता रहता है, मैं विचारता रहता हूँ, मैं इस संसार को दृष्टिपात करता रहता हूँ कि यह संसार क्या कर रहा है, नाना नृतिकाओं में रमण कर रहा है, और वाममार्ग देखो, यहाँ का राजा है, वाम मार्गी देखो, समाज बनता जा रहा है, उसमें अंकुर रूपों में तो वहाँ महापुरूषों की उत्पतियां होती रहती हैं, और देखो, वहाँ महावृत्तियों में रत्त रहने वाला समाज होता ही है, परन्तु देखो, यहाँ इसके मूल में कौन है, इसके मूल में देखो, स्वार्थी जो प्राणी होते हैं, राजा के राष्ट्र में चाहे वह राजा के रूप में हो चाहे वह प्रजा के रूप में हो चाहे वह पुरोहितों के रूप में हो, चाहे वह पाण्डितव के रूप में हो, जो स्वार्थी तत्त्व होते हैं, वह राष्ट्र को देखो, अग्नि के मुखारबिन्दु के रूप में परणित कर देते

हैं।

आज समाज को देखो, जब मैं मानो देखो, राजाओं की स्थली पर जाता हूँ, तो एक दूसरा राष्ट्र, राष्ट्र को नष्ट करना चाहता है। इसके मूल में क्या है? क्या ईश्वर वाद के ऊपर जो रूढ़ियाँ बन गई हैं? और वह रूढ़ियाँ जो हैं, वही विनाश के मूल परमाणुओं को ले जा रही हैं, देखो, यहाँ यह मानते हुए कि यह मोहमम्द के मानने वालों को नष्ट किया जाएं, यह राम के मानने वालों को नष्ट किया जाएं, यह इशु को मानने वाले इनको नष्ट किया जाएं, अरे, भोले प्राणियों! तुम एक दूसरे में नष्ट क्यों हो रहे हो, तुम एक स्थली पर विद्यमान हो करके तुम वैदिकता में रत्त होते चले जाओ। जिससे तुम्हारा जीवन एक दूसरे की मृतक प्रणाली से समाप्त हो जाएं, देखो, अश्वेमध याग करने लगो, जब राजा और प्रजा मिल करके राजा तपश्चर में परणित हो करके, शुद्ध आहार करने लगता है, और अपनी शुद्ध आहार की प्रणाली को अपनाता है, तो यह समाज मानो देखो, स्वतः ही पवित्र बनता चला जाएगा, एक दूसरे की नष्ट करने की भावना नही होनी चाहिए, जितना भी मानव का देखो, आहार अशुद्ध हो जाता है, उतनी देखो, वह समाज की उत्पतियां विशेष होने लगती हैं। और जब देखो, शुद्ध आहार होता है, माता पिता क्या पति पत्नी सब शुद्ध होते हैं, महापुरूष भी सब शुद्धिकरण में परणित हो जाते हैं, शुद्ध आहार करने से वासना उत्पन्न नही होती, वह केवल अपने कर्तव्य का पालन करता है, और वासना के क्षेत्र में जाने से देखो, समाज में वृद्धि आ जाती है, और समाज की वृद्धि का मूल कारण बनता है, कि संग्राम होने लगता है।

तो मैं यह कहा करता हूँ, कि राजा को चाहिए क्या वह अपने में शुद्ध आहार करने लगे। शुद्ध व्यवहार करने लगें, और शुद्धिकरण जब प्रत्येक मानव का हो जाएगा। तो देखो, यह समाज बलवती नही होगा, यह अज्ञान भी नही रहेगा, ज्ञान में परणित हो करके माताओं के उतनी सन्तान उत्पन्न हो सकेगी, जितनी उनको आवश्यकता है, और यदि मानो देखो, वासना के क्षेत्र में प्रवेश करता हुआ, वाममार्ग बन करके सुरापान कर रहा है कहीं मांस का भक्षण कर रहा है कहीं नाना प्रकार के देखो, अपनी रसना के स्वाद रस में परणित हो रहा है। उसके क्या होता है? उससे क्या होता है कि वीर्य की

उत्पन्नता अशुद्ध हो जाती है, और अशुद्ध होने से देखो, एक एक माताओं के गर्भ से जब सन्तान विशेष देखो, वृद्धि होने लगती है, तो मानो देखो, उसका परिणाम यह होता है, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहते हैं, क्या देखो, विशेष देखो, अधिक सन्तान होने से समाज में ह्रासता आ करके राष्ट्र में अज्ञान आ जाता है। तो विज्ञान का दुरूपयोग होने लगता है, तो देखो, आहार अशुद्ध हो करके इसी को हमारे यहाँ वाममार्ग कहा जाता है।

तो मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आधुनिक वर्तमान के काल की चर्चाएं की हैं, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह परिचय दिया क्या एक समय तो आहार अशुद्ध है, एक समय विज्ञान का दुरूपयोग है, एक समय मानो देखो, सम्प्रदाय की प्रवृत्ति बनी हुई है, मोहमम्द के मानने वाले यह कहते हैं क्या सन्तान में विज्ञान का उपयोग न करो, क्योंकि हमारा राष्ट्र होना है, और देखो, वह अमृत नानक के मानने वाले कहते हैं कि हमारा राष्ट्र होना है, इन्हें सबको नष्ट किया जाएं, तो जब यह प्रवृत्ति समाज में बन जाती है, तो वह तरंगें वायुमण्डल में प्रवेश होती हैं, आज वायु मण्डल को कोई वैज्ञानिक यह कहे कि मैं इसके प्रदूषण को समाप्त कर सकता हूँ। संसार का कोई प्राणी इसके प्रदूषण को समाप्त नही कर सकता। क्योंकि जब तक विचारों में पवित्रता नही आयेगी, जब तक विचारों में एक दूसरे के नष्ट करने की भावना बनी रहेंगी, जब तक देखो, वायुमण्डल अशुद्ध बना ही रहेगा, वह एक समय वह समय समय पर एक दूसरे लोक लोकान्तरों से यन्त्रों का प्रयोग हो सकता है। तो मैं यह विचार कर रहा हूँ सम्भव ब्रव्हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को मैं वर्णन करा रहा हूँ, क्या समय समय पर जब इस प्रकार की प्रतिभा बनती रहती हैं, तो इसीलिए मैं यह कहता हूँ, कि मानव को एक रस रह करके गमन करना चाहिए। परमात्मा का जो ज्ञान और विज्ञान है, वह सबको भी एक ही सिद्ध होता है, उसमें कोई नानक के मानने वाला हो, ईसा के मानने वाला हो, चाहे वह मोहमम्द के मानने वाला हो, परन्तु जब इसमें राष्ट्रीयता रहेगी, जब तक इन रूढ़ियों में यह रूढ़ि विनाश के मूल तक चलती रहेंगीं, तो विचार आता रहता है कि ईश्वरवाद नही रह पाता ईश्वरवाद उसे कहते हैं, जहाँ ईश्वर का चिन्तन होता है,

ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ी जाती हैं, ज्ञान और विज्ञान का सदुपयोग होता है, जहाँ एक दूसरा मानव विज्ञान को रहस्यों में प्रवेश कर जाता है। आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन कराना चाहता हूँ, क्या विज्ञानवेत्ता यह विचारते रहते हैं कि द्रव्य होना चाहिए और विज्ञान के माध्यम से द्रव्य होना चाहिए, परन्तु विज्ञान के माध्यम से द्रव्य होता ही है, इसमें कोई द्वितीय विचार नही हैं, परन्तु देखो, विज्ञान का दुरूपयोग जब होने लगता है, वृत्तिका का मानो देखो, उसमें वृत्तियाँ आने लगती हैं, तो वह विज्ञान समाज और राष्ट्र को दोनों को नष्ट कर देता है, तो मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से विज्ञान वह कहलाता है, जिस विज्ञान में मानव देखो, एक एक परमाणु में ब्रह्माण्ड का दर्शन करता है, मानो देखो, अब तक वह ब्रह्माण्ड का दर्शन भी वह विज्ञान में नही आ पाया है, एक एक विज्ञान ऐसा है, जो पुरातन काल में देखो, जब उस विज्ञान के ऊपर जाता हूँ, तो यह वाक् गुरुदेव प्रगट कराते हैं, कि अपने पूर्वजों के मानो देखो, उसके चित्र अन्तरिक्ष में रमण करते रहते हैं, और वह यन्त्रों देखो, वह विज्ञान भी अब तक नही आ पाया है, जो एकोकीकरण करने वाला जहाँ शब्द इसमें विज्ञान की सूक्ष्मता है। वह विज्ञान भी नही आ पाया है, जिस विज्ञान में देखो, यज्ञशाला में तरंगें उत्पन्न हो करके, स्वाहा स्वाहा कह करके वह द्यौ मण्डल में प्रवेश करके वही उस मानव को प्राप्त होते हैं, वह कैसे प्राप्त होते हैं? इसके ऊपर भी मानव ने अब तक विचार विनिमय नही किया जब मैं विज्ञान के क्षेत्र में जाता हूँ, वह विज्ञान भी अब तक नही आ पाया है, जब चन्द्रमा पृथ्वी के मध्य में यन्त्र विद्यमान करके जब देखो, महाराजा शिव और मार्कण्डेय लोक लोकान्तरों को दृष्टिपात करते रहे हैं, वह भी विज्ञान अब तक नही आ पाया है, परन्तु देखो, विज्ञान में इतनी सूक्ष्मता रही है वह भी विज्ञान नही आया है कि एक यन्त्र देखो, आज परमाणु शक्ति का प्रयोग होने जा रहा है, परन्तु देखो, वह प्रयोग हो जाता है, मानव श्वास लेने से समाप्त हो जाएगा।

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जब महाभारत काल था और महाभारत में जब परमाणु शक्ति का संग्राम हुआ, तो एक यन्त्र मानो देखो, यन्त्र था, घटोत्कच्छ के द्वारा भी जलाश्यों से बना हुआ, चन्द्रमा की सहायता से परमाणु ले करके यन्त्रों का निर्माण

हुआ, वह अग्नये अस्त्र वही समाप्त हो जाते हैं, वह विज्ञान मानो देखो, चन्द्रयाति यन्त्र कहलाया जाता है, आज का मानव देखो, समुद्रों के तटों पर आधुनिक काल का विज्ञान विद्यमान हैं, एक समुद्र के ऊपर छाया आती है, उस छाया के छाया के नीचे देखो, जो भी यन्त्र आ जाता है, वह यन्त्र नष्ट हो जाता है, उसका एक परमाणु भी अब तक मानव को प्राप्त नही हुआ है, परन्तु देखो, यह घटोत्कच्छ और भीम का देखो, उनकी विज्ञानशाला में महात्मा देखो, महाराजा घटोत्कच्छ ने देखो, जो यन्त्र अन्तरिक्ष में स्थिर कर दिया था, जिसकी मानो देखो, एक लाख पिच्चासी हजार वर्षों का आयु हैं, और वह यन्त्र जब तक रहेगा, समुद्र की उस स्थली पर देखो, मानव जा नही सकता यन्त्र समाप्त होते रहे हैं। आज का विज्ञान कहता है, आधुनिक काल का वैज्ञानिक कहता है, यह तो प्रेत आत्मा है, या मानव आत्मा है, इसके ऊपर अन्वेषण चल रहा है परन्तु देखो, इसका विचार विनिमय अब तक नही किया गया, यह भी विज्ञान देखो, आधुनिक काल का देखो, अधुरे पन में रमण कर रहा है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आधुनिक काल के विज्ञान की चर्चा नही, केवल देखो, यहाँ का वैज्ञानिक अपने में यह स्वीकार कर रहा है कि मैंने बहुत कुछ जाना है। परन्तु जो विज्ञान के यन्त्रों को जान लिया है, वह यन्त्र एक वर्ष के पश्चात मानो उसमें निष्क्रियता आ जाती है, द्वितीय यन्त्र का निर्माण करने लगता है, जब मैं इस विचारो में जाता हूँ, तो विज्ञान के ऊपर तुम्हें नही ले जा रहा हूँ, केवल मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय करा रहा हूँ कि आधुनिक काल का यह जो जगत है, यह बड़ा विचारणीय है। यह बड़ा अशुद्ध कहलाता है एक मानव देखो, मानव का ह्रास कर रहा है, एक यन्त्र देखो, राजा रावण के काल में देखो, एक यन्त्र राम ने त्यागा था जिस यन्त्र में देखो, उसमें परमाणु शक्ति मेघनाथ ने देखो, परमाणु शक्ति को देखो, प्रहार रूप में लाए तो उन्होंने देखो, चन्द्रमा की सहायता से और महर्षि विश्वामित्र के आश्रम में जो यन्त्र का निर्माण हुआ था, वह यन्त्र चन्द्रवासकेतु यन्त्र था, जिसको त्यागने थे देखो, मेघनाथ की जितनी परमाणु शक्ति थी, वह सब दमन हो गई थी, तो विचार आता रहता है, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कराता रहता हूँ, अब तक चन्द्रमा पर किसी का अन्वेषण नही हुआ, पूज्यपाद गुरुदेव ने कई विचार

दिए हैं, एक पदा, द्विपदा का भी वर्णन किया है, परन्तु आधुनिक काल का विज्ञान उस चन्द्रमा के ऊपर विचार विनिमय करने में ईकाई में रमण कर रहा है, ईकाई में रमण कर रहा है, जहाँ विज्ञान की चर्चा नही केवल यह क्या हे मानव! तू मृत्यु के लिए न चल, तू एक दूसरे को मानव को जीवन देने के लिए तत्पर हो। जब एक दूसरे को जीवन देने लगेगा और जीवन में स्पष्टीकरण करोगे, हे राजन्! यदि तू अपने समाज और राष्ट्र को उन्नत बनाना चाहता है, तो ब्रह्म ज्ञान और उपनिषदों का अध्ययन कर वेद का अध्ययन कर। जहाँ सामान्य ज्ञान और आत्मा का ज्ञान है, आत्मा की प्रतिभा में रत्त हो करके और तू मानो देखो, रूढ़िवाद का अपने में निराकारण कर सकेगा। रूढ़िवाद का खण्डन न कीजिए, रूढ़िवाद तो विचारने से प्रतीत होगा, उसका चिन्तन करके यदि वह मानवीय दर्शन है, तो वह रूढ़ि श्रेष्ठ है, यदि देखो, मानव दर्शन का उसमें अंकुर नही प्राप्त होता, तो उस रूढ़ि को दमन कर देना चाहिए, यह रूढ़िवाद दमन हो जाना चाहिए। जिसमें मेरी पुत्रियों का श्रृङ्गार हनन होता हो, अथवा जिसमें कोई अस्तित्व न हो, माता का जिस रूढ़िवाद में न हो उस रूढ़िवाद का राजा को चाहिए, कि राजा उस रूढ़िवाद का दमन करता हुआ, और वह वैदिक ज्ञान और प्रकाश के विवेक से अपने राष्ट्र करे तपाने वाला हो, ऐसा मेरा मन्तव्य बना रहता है, परन्तु जहाँ मानव मानव को ह्रास करता रहा है। उसे आत्म चिन्तन नही कर रहा है, वह उसकी सूक्ष्मता है, यह राष्ट्र की सूक्ष्मता है, और राष्ट्र पदों की लोलुपता में उसके जीवन को समाप्त कर रहा है। वह कार्य अपने में कार्य रत्त नही हैं। वह कार्य रत्त इसीलिए नही है, किसको हमें गिराना है किसको ऊर्ध्वा में ले जाना है, हम जैसे ऊर्ध्वा में जाएंगें, परन्तु देखो, इसीलिए देखो, उसके जीवन की प्रतिभा समाप्त हो रही है। कोई काल था, जब महापुरूष विद्यमान हो करके यह विचारते रहे कि तप करो तपं ब्रव्हे कृतं वेद का वाक् कहता है, पूज्यपाद कहते हैं कि तपं ब्रव्हे तपं देखो, ब्रह्मचारी तपें, माताएं तपें, राजा तपस्वी हों, प्रजाएं तपस्वी हों और तपस्वी क्या यह कर्तव्यवाद का नाम ही तप कहलाता है। इन्द्रियों के ऊपर सयंम करने का नाम ही तप है। जब इस प्रकार का ज्ञान और विज्ञान देखो, हमारे जानने में सदैव तत्पर रहता है, तो मानो देखो,

एक दूसरे के नष्ट करने की भावना नही आती है। भावना जब आती है, जब मानव की आवश्यकता बलवती हो जाती है, और आवश्यकता के लिए मानव को द्रव्य की और देखो, वह अप्रतियों में, हृदयों की तृप्ति नही होती, तो मानो देखो, वह ह्रास आता है। द्रव्य के लिए मान अपमान के लिए एक दूसरे को ह्रास करता रहता है। परमात्मा को नही जाना जाता कि परमात्मा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहते हैं, क्या परमात्मा निरभिमानी है, इसीलिए मानव को निरभिमानी रहना चाहिए, राजा को निरभिमानी रहना चाहिए। तो परमात्मा की सृष्टि के जगत चलायमान हो रहा है अरे, जब देखो, मार्ग में गमन करते समय जब मृत्यु का भय बना रहता है, तो उसको राष्ट्र नही कहा जाता राष्ट्र वह कहा जाता है, जहाँ राजा निर्भय हो करके विचरण करता है, ब्रह्मज्ञानी महात्मा की भांति जब वह भ्रमण करता है, देखो, सूक्ष्म शरीर से हम जैसे प्राणी भ्रमण करते है, राजा इस प्रकार भ्रमण करता है, तो वह राष्ट्र देखो, श्रेष्ठ कहलाता है। वह राजा भी महान होता है। मुझे स्मरण है कि राम जैसे सखा के द्वारा कोई रक्षक नही था, जब वह स्वतः भ्रमण करते रात्रि काल में तो वह निर्भय हो करके और वह अमृतं ब्रह्मे देखो, अमृतियो में रत्त रह करके प्रजा के देखो, जो प्रजाएं हैं, देखो, अन्तर्गृहों में जो वार्त्ता प्रगट करते थे, देखो, उनको श्रवण करते और देखो, दिवस काल में उनका न्याय करते रहे हैं। आधुनिक काल में देखो, न्याय क्या है? मैं इनके ऊपर टिप्पणी नही देना चाहता हूँ, यह तो केवल मैं अपवाद में चला गया हूँ, विचार विनिमय देखो, राष्ट्र को ऊँचा बनना है, तो देखो, उसे किसी रक्षक की आवश्यकता नही हैं, रक्षा की वही होती है देखो, जिनके हृदयो में देखो, वाममार्ग की भावना होती है, जिनके हृदयों में एक दूसरे में रक्षा वह नही कर पाता, वह रक्षा कराने का उसे कोई अधिकार नही होता, संसार का यह प्रकृति का नियम कहलाता है। क्या हम रक्षक बने और रक्षक बन नही सकते तो हमारी कौन रक्षा कर सकता है।

मुझे बहुत सा काल स्मरण है, मैं उसके द्वारा जाना नही चाहता हूँ, केवल विचार विनिमय मेरा यही रहता है कि रक्षा परमपिता परमात्मा उसका तप करता है, मानव, मानव की रक्षा नही कर सकता, उसका जो मानवीय जो तप है, वह उसकी रक्षा करने

के लिए तत्पर रहता है, और जब राजा में यह संदेह बना रहता है, कि मेरी मृत्यु न हो जाएं और मानो देखो, तेरी रक्षा होनी चाहिए। अरे, भोले प्राणी! देखो, ज्ञान है, राजा बन करके तू ज्ञान को अपने में धारण करके मृत्यु में तो तुम्हारे पिता, महापिता सब चले गएं हैं यह संसार गति कर रहा है अरे, यह चलता रहेगा और तुझे एक समय जाना है, परन्तु जब तुझे जाना है ईकाई से तेरा जन्म हुआ है, और ईकाई में तुझे जाना है, शून्य बिन्दु में यह ब्रह्माण्ड मानो देखो, यह ब्रह्माण्ड रहता है, और शून्य बिन्दु से विकास होता है, और पुनः देखो, शून्य बिन्दु को प्राप्त हो जाता है, तो इसी प्रकार यह मानव का जीवन है, इसके ऊपर देखो, विचार विनिमय करना है, और जहाँ कर्तव्यवाद की प्रतिभा में जो मानव रत्त रहता है, उसका जीवन है, और जो इन्द्रियों के ऊपर संयम करता है, वह तपस्वी है, तो मानो देखो, जो एक दूसरे के प्राणों की रक्षा करने के लिए अपने प्राणों की नही देखो, दूसरें के प्राणों की रक्षा करो दूसरों की रक्षा करो, तो स्वतः अपनी होती चली जाएगी। और जब तक अपनी ही नही दूसरों की रक्षा नही होगी, तो तुम्हारी रक्षा कौन कर सकेगा। वे परमपिता परमात्मा भी तुम्हारी रक्षा नही करेगा। परन्तु देखो, हे राजा! जब तू दूसरों की रक्षा करेगा, मानो देखो, ऐसे नियम बनाएगा और तेरा हृदय निर्भय हो जाएगा, तो देखो, राष्ट्र पवित्रता की वेदी पर आ जाएगा और रूढ़िवाद वहाँ से स्वतः चला जाएगा। तो अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा बहुत समय लिया, परन्तु देखो, मेरे विचारों का अभिप्रायः यह क्या यह जो स्थली है, यह बड़ी भव्य रही है, परम्परागतों से महान तपस्वी रहे हैं, वह परमाणुवाद देखो, वायुमण्डल में गमन कर गएं हैं, मेरे पूज्यपाद का जो संस्कार है, वह जागरूक हुआ परन्तु देखो, आज मैं अपने यज्ञमान को आशीष देना कि देखो, उनके जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। उनके त्याग और तपस्या की प्रतिभा बनी रहे तो यह आज का विचार अब हमारा सम्पन्न होने जा रहा है, पूज्यपाद गुरुदेव।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी अभी मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने बड़े भव्य विचार दिए इनके विचारों में राष्ट्र और समाज के प्रति बड़ी दाह रही है, बड़ी एक विडम्बना है, और वह विडम्बना भी यथार्थ रूप में रहती है, आज का विचार मेरे प्यारे

महानन्द जी ने अपना भव्य विचार दिया, और इनके विचारों में एक भव्यता रहती है, और एक दाह होती है राष्ट्र और समाज ऊँचा बने धर्म ऊँचा बने, तो यह धर्म और राष्ट्र प्रभु कृपा करेंगें, यह समाज पवित्र बनेगा, आज का विचार समाप्त अब वेदों का पठन

२३ 30 03 1991 निर्वाचन प्रणाली (याग चयन)

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं और उसका जो अनन्तमयी ब्रह्माण्ड है, वह प्रायः अनन्तमयी निहित हमें दृष्टिपात आ रहा है, क्योंकि एक एक परमाणु में ब्रह्माण्ड है, और ब्रह्माण्ड अपनी आभा में सदैव निहित रहा है।

आन्तरिक बाह्य जगत् समन्वय

सृष्टि के प्रारम्भ ये ले करके वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता परमपिता परमात्मा के इस अनन्तमयी जगत् में विद्यमान हैं, और उसी के ऊपर अपने वे अन्वेषण करते रहे हैं। अपने में चिन्तनीय विषय बना करके अपने को और ब्रह्माण्ड को, प्रायः बाह्य जगत् और आन्तरिक जगत् दोनों का समावेश करने का प्रयास करते रहे हैं, क्योंकि यही मानवीयतव कहलाता है। जो बाह्य जगत् है, वही अन्तर्जगत् है। तो बाह्य जगत् को जो आन्तरिक जगत् में दृष्टिपात करता है, मानो वह अपने में मनन वृत्तम् वह मनन कर रहा है और वह अपने में स्वीकार कर रहा है कि मैं परमपिता परमात्मा के जगत् में निहित हूँ।

चित्त मण्डल

मुनिवरों! देखो, एक मानव अपनी एकान्त स्थली में विद्यमान हो करके और अपने मनस्त्व, जो चित्त के मण्डल में वह अपने को ले जा रहा है, क्योंकि चित्त उसे कहते

हैं, जहाँ नाना संस्कार अपने में विद्यमान रहते हैं तो इसीलिए वह आन्तरिक जगत् को बाह्य जगत् में उनको दृष्टिपात करने का प्रयास करता रहा है। तो मानवीय क्षेत्र में, बेटा! सृष्टि के प्रारम्भ से ही प्रायः यह क्रियाकलाप चल रहा है। मानो कहीं से यह स्वप्न भी हुआ है, कई जन्म जन्मान्तर भी व्यतीत हो जाते हैं उसी धारा में, परन्तु प्रयास भी करता रहा है, कि मैं परमात्मा के अनूठे जगत् और अनूठी यह जो प्रक्रिया है, मैं उसको जानने का प्रयास करता रहूँ।

वैदिक प्रकाश में संसार अन्वेषण

मेरे प्यारे! हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार की प्रतिभा में मानव सदैव अपने में गमन करता रहा है और उसके मनोनीत हृदय में यह भावना रहती है कि मैं अन्धकार को त्याग करके प्रकाश में चला जाऊँ। प्रायः यह भावना प्रत्येक मानव की अथवा प्राणीमात्र की रही है, कि मैं अन्धकार में न जाऊँ। वह प्रकाश में रत्त रहना चाहता है और विचारता है कि, यह संसार क्या है? जब भी दार्शनिक अपनी आभा में विद्यमान रहते हैं, और दार्शनिक बन करके दार्शनिकत्व में रत्त हो जाते हैं तो वह अपनी दार्शनिकता से यह विचारते हैं कि यह संसार क्या हैं? क्या यही संसार है? एक ही माता के गर्भस्थल से हमने जन्म लिया और जन्म ले करके बाल्यकाल में हमने अपनी जीवन को इस पृथ्वी माता की, वसुन्धरा की गोद में व्यतीत किया उसके पश्चात् युवा हो गये, तो मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार के क्रियाकलापों में रत्त हो गये, मानो वृद्धपन आ गया तो शैय्या पर विद्यमान हो गये। तो ऋषि अपने प्रश्न करते रहते हैं कि यही संसार है?

गर्भ शिक्षा और ब्रह्मचर्याश्रम

मेरे प्यारे ऋषिवर! दूसरे स्वरूप में इसका निरूपण करते रहे हैं। वे कहते हैं कि वास्तव में संसार तो वह है कि माता भी इतनी बुद्धिमान हो कि अपने गर्भस्थल में शिशु को शिक्षा देनो वाली हो और वह बाह्य जगत् में आ जाएं तो अपनी विद्या अध्ययन में इतना ज्ञान हो जाएं कि उसे प्रत्येक इन्द्रियों का ज्ञान हो जाएं। विद्या अध्ययन को अभिप्रायः केवल यह नहीं है कि हमने केवल अक्षरों का बोध कर लिया है। अक्षरों के

बोध को मानो शिक्षा नहीं कहते। शिक्षा उसे कहते हैं जो आचार्यों के चरणों में विद्यमान हो करके अपने में वे क्रियाकलाप करना है।

देव पूजन

आचार्य के चरणों की वन्दना करता हुआ और वह देव पूजन कर रहा है, वह देवताओं के पूजन में लगा हुआ है। क्योंकि पूजन का अभिप्रायः यह है कि प्रत्येक देवताओं के रहस्यों में रत्त रहना और उसे क्रियात्मक स्वरूप देने का नाम ही मानो देखो, वही हमारे यहाँ देवपूजा का अभिप्रायः होता है। पूजा का अभिप्रायः है कि उसके गुणों का हमें गुणाधान, अपने में धारण कर लेना चाहिए। मानो देखो, उसी का नाम पूजा है। जब इस प्रकार का देखो, पूजन प्राणी करता है और वह अपने में ब्रह्मवर्चोसि बन करके मानो देखो, श्वास की गतियों को वह प्रकृति के श्वास में परणित कर देता है तो मानो देखो, विचार आता है कि यह संसार क्या है? मानो देखो, इसी का नाम संसार है।

गृहपथ्याग्नि चयन

आगे चल करके गृह में प्रवेश हो गया है। गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन कर रहा है, मानो देखो, गृह को स्वर्ग बनाने में लगाहुआ है। वह स्वर्ग बनाता है। अपने में, अपने में ही मानो देखो, द्रव्य का सुदपयोग करता है और द्रव्य के सदुपयोग होने से मानो देखो, वह गृहपथ्य नाम की अग्नि कही जाती है। उस अग्नि का चयन करने वाला अपने में चयन करता रहा है।

वैश्वानर अग्नि पूजन और वानप्रस्थाश्रम

तो विचार आता है कि यह संसार का द्वितीय अमृत कहलाता है उसके पश्चात् गृह से उपराम हो गया तो अग्नि की पूजा कर रहा है वह अग्नि क्या है, बेटा! जिसका वह पूजन करना चाहता है? पूजन का अभिप्रायः, मानो देखो, अग्नि का चयन है। तो हमारे अन्तर्हृदयों में अग्नि प्रदीप्त हो रही है, उस अग्नि को जानने का नाम, देखो, उसकी पूजा है। जैसे माता के गर्भस्थल में एक अग्नि है और वह अग्नि, मुनिवरों! देखो, बाल्य को गृह में तपायमान करती है और तपायमान करके उसको अखण्डमयी ज्योति कहा गया

है। जैसे, परमपिता परमात्मा के इस अनूठे जगत् में, मानो देखो, बाह्य और आन्तरिक जगत् में, एक अग्नि प्रदीप्त हो रही है, उस अग्नि को हमारे यहाँ वैश्वानर बन करके, और गृहपथ्य बन करके, वही अग्नि, मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्माग्नि बन जाती है।

ब्रह्माग्नि पूजन और सन्यासाश्रम

ब्रह्माग्नि को ही अधिपति माना गया है, तो विचार आता रहता है, वही अग्नि, मेरे प्यारे! ब्रह्माग्नि बन करके अपने में चयन करती रही है। वही अग्नि, मेरे प्यारे! मानव को तपायमान करती रहती है। वही अग्नि, मानो देखो, ब्रह्मज्ञान की धाराओं में रत्त रहती है।

एक मानव कहता है, अहं ब्रह्मः, अहं वरणस्सुतं ब्रह्मः । वेद का वाक्य कहता है कि अहं ब्रह्मः, मानो देखो, मेरे अन्तर्हृदय में जो अग्नि जागरूक हो रही है, वही अग्नि मानो देखो, ब्रह्माग्नि कहलाती है और, ब्रह्माग्नि का जब मैं चयन करूंगा तो मेरा अन्तरात्मा और मेरी अन्तर्भावना मानो देखो, अग्नि में परणित होती चली जाएगी। मेरे प्यारे! देखो, इसका नाम एक मानवी आभा में जीवन माना गया है, जिस जीवन के लिए मानव प्रायः प्रयत्नशील रहता है। एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके चिन्तन कर रहा है कि परमपिता परमात्मा का जो अनूठा जगत् है, मानो वह जगत् वह कहलाता है, जहाँ आत्मा और परमात्मा के मिलान की चर्चा करने लगता है, आत्मा परमात्मा का मिलान करने के लिए वह सदैव तत्पर रहता है, वही उसका पूजन है, वह उसकी एक मनोनीत धारणा है और, वही आन्तरिक जगत् से बाह्य जगत् में आना है और आन्तरिक जगत् से बाह्य जगत् में प्रवेश करना है। मेरे प्यारे! देखो, वेद का मन्त्र हमें यही तो कह रहा है, प्रब्रव्हा कृतं देवत्वां चित्रो , मेरे प्यारे! देखो, यही तो चित्रण है। जब मानव ऐसा करने लगता है, तो अपने में प्रकाश के लिए, वह कल्पना करता है। और वेद का मन्त्र कहता है, मानव तू प्रकाश में जाने का प्रयास कर और वही जो प्रकाश है, वही तो तेरे

जीवन की महानता और पवित्रता मानो गई है।

ब्रह्मचारी के मस्तिष्क का अध्ययन

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष क्षेत्रों में नहीं ले जा रहा हूँ, मुझे स्मरण आ रहा है, बेटा! मैं महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में तुम्हें ले जाना चाहता हूँ। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज, मेरे पुत्रो! देखो, अपने आसन् पर विद्यमान थे। शान्त मुद्रा में विद्यमान हैं, मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि और ब्रह्मचारी सुकेता दोनों ब्रह्मचारियों को उनके पिताजन मानो देखो, विद्यालय में वेदारम्भ के लिए उन्होंने उन्हें आवृत्त करा दिया और यह कहा कि प्रभु! ये हमारे दोनों ही बाल्य हैं, हमारी इच्छा यह है कि मानो देखो, यह अंगिरस गोत्र का है और यह मानो दद्दड़ीय गोत्र का है, इन दोनों ब्रह्मचारियों को मैं तुम्हारे विद्यालय में प्रवेश कराना चाहता हूँ। भारद्वाज मुनि बोले बहुत प्रियतम! तो भारद्वाज मुनि ने देखो, दोनों के मस्तिष्क का अध्ययन किया , क्योंकि जब मस्तिष्क का अध्ययन किया जाता है, तो वह जो अध्ययन है, वही तो महान् कहलाता है। मानो देखो, इस विद्या को जानने वाले, जब विद्यालयों में ब्रह्मचारी होते हैं तो यह राष्ट्र और समाज अपनी आभा में सदैव नृत्य करता रहा है और महानता में यह समाज आ जाता है।

रावण के मस्तिष्क का अध्ययन

मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहा है, मैं बहुत समय की वार्त्ता तुम्हें प्रगट कर रहा हूँ, जिस समय महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज के हृदय में यह कामना जागरूक हुई कि, मैं मानो देखो, वरुणकेतु ब्रह्मचारी को इस लंका का स्वामीतव निधित्व कराना चाहता हूँ। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनियों की और राष्ट्रवेत्ताओं की बड़ी एक भव्य सभा हुई और उस सभा में, मुनिवरों! देखो, वहाँ ऋषि मुनियों का पदार्पण कराया तो महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज को उस सभा का सभापति नियुक्त किया गया और जब सभापति नियुक्त किया गया तो उसमें यह वाक्य आया कि देखो,

इस ब्रह्मचारी का देखो, राष्ट्र ब्रह्मः देखो, इनका राज्याभिषेक होना चाहिए।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भूः वर्णम् जो वेद के मर्म को जानने वाले हैं, जो मानव का अध्ययन करने वाले हैं, वे विशेषज्ञ कहलाते हैं, तो उस समय महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज ने विशेषज्ञता की और उन्होंने वरुण के मस्तिष्क का अध्ययन किया। मस्तिष्क का अध्ययन करके उन्होंने विचारा कि एक नाड़ी है और वह सुषुम्मा के द्वार को होती हुई ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश कर रही है और वह मानो देखो, वही दूसरी नाड़ी है जो ब्रह्मरन्ध्र में जा करके ओझल हो रही है।

रावण के अयोग्य होने का वाचन

मानो देखो, इसी प्रकार उन्होंने नाना प्रकार की नस नाड़ियों के ऊपर विचार विमर्श किया और महात्मा कुक्कुट ने कहा कि यह जो नाड़ी मानो ब्रह्मरन्ध्र में जा करके लुप्त हो रही है, इसका अभिप्रायः यह है कि राष्ट्र का इसे अधिकार नहीं है, मानो देखो, दूसरी नाड़ी है, जो ब्रह्मरन्ध्र से होती हुई मानो देखो, रीढ़ के विभाग में परणित हो रही है, उसमे मिलान हो गया है। इससे यह सिद्ध हुआ कि यह विज्ञानवेत्ता बहुत प्रबल है। मानो देखो, जब तीसरी नाड़ी का अध्ययन किया कि सुषुम्ना के द्वार से होती हुई नाड़ी के द्वारा वह गुणान कर रही है तो इसका अभिप्रायः यह है कि इसको आगे चल करके अभिमान हो सकता है।

मेरे प्यारे! देखो, इन नस नाड़ियों का अध्ययन करने वाले मानो देखो, ब्रह्मवेत्ता कहलाए जाते हैं। और ब्रह्मवेत्ताओं ने जब यह वर्णः महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज से महात्मा पुलस्त्य ने कहा कि भगवन्! आप देखो, इनका राज्याभिषेक कीजिए। उन्होंने कहा प्रभु! मैं इनका राज्याभिषेक नहीं कर पाऊँगा। उन्होंने कहा प्रभु! क्यों? उन्होंने कहा कि मैं इसीलिए नहीं कर पाऊँगा कि इसे अधिकार नहीं है राष्ट्र का। क्योंकि राष्ट्र का जिसे अधिकार होता है तो उसमें अपनी प्रबलताएं होती हैं। मानो देखो, एक योगी योग करना चाहता है, योग में प्रवेश करना चाहता है,? जब वह योगी के समीप आता है, जिज्ञासु बन करके तो उसी जिज्ञासा से यह ज्ञान हो जाता है, योगी को कि यह मानो देखो,

महान् जिज्ञासु नहीं हैं, यह केवल अपना नामोकरण चाहता है, वह अपने नामोकरण के लिए आया है, उसे अभिमान आ जाता है, और उससे धर्म और मानवता की मर्यादा नष्ट हो जाती है।

मेरे प्यारे! महात्मा कुक्कुट ने कहा इसीलिए ऋषिवर! आज मैं मानो देखो, अप्रहे आप बड़े तपस्वी हैं, जिज्ञासु हैं और आप मानो देखो, इसमें वृणां ब्रहे आप व्यर्थ ही अपने जीवन को समाप्त कर रहे हैं, क्योंकि आपको तो तपस्या करनी चाहिए। आप मानो कुटुम्ब के मोह में न आईए। क्योंकि जो महात्माजन हो करके विवेकी नहीं बनते हैं और वे केवल एक कुटुम्ब और आवृत्तियों को ले करके अपने को मोह ममता में परणित कर लेते हैं, जाना उनकी तपस्या अतपस्या में परिवर्तित हो जाती है। हे ऋषिवर! आप तो तपस्वी हैं और आपका ऋषि मुनियों में बड़ा नामोकरण है, मानो तुम्हारा उज्ज्वलता में स्थान है, परन्तु इस बात के मोह में मत आईए, क्योंकि राष्ट्रीय मोह तो उन्हें होता है, जो नामों की इच्छा में लगे रहते हैं, मानो देखो, नामोकरण की इच्छा में आप मत आईए। परन्तु महात्मा महात्मा पुलस्त्य मुनि महाराज मौन रहे।

मेरे प्यारे! महात्मा कुक्कुट ने यह कहा कि प्रभु! मैं इसका राज्याभिषेक नहीं कर सकूंगा, क्योंकि एक नाड़ी इसकी कहती है कि इसको अधिकार नहीं है, दूसरी नाड़ी कहती है, विज्ञानवेत्ता है और तीसरी नाड़ी यह कहती है कि यह आगे चल करके अभिमान में परणित हो जाएगा, तो हे प्रभु! मैं ऐसे राजा का राज्याभिषेक नहीं कर पाऊंगा।

राष्ट्र का अधिकारी

देखो, जब भी निर्वाचन प्रणाली ऋषि मुनियों के मध्य में प्रायः होती रही है, तो उसी समय, मुनिवरों! देखो, राष्ट्र एक ऊर्ध्वा में गमन करता रहा है। और, राष्ट्रीयता एक मानो देखो, वह कहलाती है, जो स्वतः अपने में कटिबद्ध रहने वाला हो, अपनी इन्द्रियों का संयम करने वाला हो, आत्मा परमात्मा की आभा में जो रत्त रहने वाला हो, परन्तु

वही राष्ट्र का अधिकारी होता है।

अभिमान का मूल

मानव को अभिमान किसको नहीं होता, अभिमान उसको नहीं होता जो धर्म के मर्म को जानता है। धर्म के मर्म को जानने वाले को अभिमान नहीं होता और सांसारिक मानो देखो, जो अधुरे ज्ञान में रमण करता है, उसे यह अभिमान हो जाता है कि तू महान् बुद्धिमान है, तू वेदज्ञ है, तू राष्ट्रवेत्ता है। परन्तु इस प्रकार की जो धारणा बन जाती है,? उस धारणा में ही मानो देखो, अज्ञान निहित रहता है और तब अज्ञान में परणित हो करके वह अभिमान में परणित हो जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज ने कहा, हे राजन्! मैं राज्याभिषेक नहीं कर सकूंगा। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा पुलस्त्य अपने में मौन हो गएं और जब वह मौन हो गएं तो उन्होंने कहा, सम्भवम्, मैं इन्हीं का राज्याभिषेक चाहता हूँ। मेरे पुत्रो! देखो, महात्मा कुक्कुट ने कहा, हे ऋषिवर! आप इनका राज्याभिषेक कराईए, परन्तु देखो, यह राष्ट्र एक समय अग्नि का काण्ड बन करके रहेगा। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा कुक्कुट यह अपना निर्णय दे करके पिछले भाग में विद्यमान हो गए। वह मानो देखो, उस अध्यक्ष पद को त्याग करके निचले भाग में विद्यमान हो गये।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा पुलस्त्य ने विचारा कि महात्मा कुक्कुट से अधिक योग्य और विवेकी महात्मा महान् पुरूष नहीं है और राज्याभिषेक कौन कर सकता है? मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भुंजु जो तपस्वी थे, वह भी आसन् पर विद्यमान हैं, परन्तु देखो, उन्होंने उनका आह्वान किया और यह कहा आईए, ऋषिवर! आप देखो, राज्याभिषेक कीजिए। उन्होंने कहा, प्रभु! जब महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज मानो देखो, निचले विभाग में विद्यमान हो गएं और आप मेरा आह्वान करना चाहते हैं, आप मुझे सभापति बनाना चाहते हैं! मैं उनका राज्याभिषेक करूं, तो आप मेरे नामों का यशोऽमृत गान गाते रहना चाहते हैं? मानो देखो, जब उन्होंने कहा, नहीं, तुम राज्याभिषेक करो।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भुंजु विद्यमान हो गएं और महात्मा भुंजु ने उस मानो

अधिपथ्य, इस सभापतित्व को अपने में ग्रहण कर लिया और ग्रहण करके उन्होंने कहा, कहो कि क्या सब महापुरूषों की इच्छा है कि मैं इनका राज्याभिषेक करूँ? सबने एक ही स्वर में हो करके कहा कि जब महात्मा पुलस्त्य की इच्छा इन्हें राजा बनाने की है, तो राज्याभिषेक किया जाएं मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भुंजु ने कहा, समाधानं ब्रव्हे कृतम्। वेद का मन्त्र उद्गीत गा करके **मंगल ब्रह्व वर्णास्सुतं देवत्वं ब्रह्मः वर्णास्सुतं वाचस्सुतं देवत्वाम्** मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने यह उद्गीत गाते हुए वेदमन्त्रों का उन्होंने उनका राज्याभिषेक किया। राज्याभिषेक करके वह अपने में विद्यमान हो गएं और विद्यमान हो करके उन्होंने अपना उपदेश दिया और यह कहा कि मैंने आज राज्याभिषेक किया है, मेरी इच्छा यह है कि राष्ट्र अपनी आभा में गमन करता रहे और राजा अपने कर्त्तव्य का पालन करता रहे मानो देखो, हमारी यह सर्वत्रता की कामना है, हमारी यही इच्छा है।

राज्याभिषेकानन्तर वरुण का संदेश

मेरे प्यारे! देखो, उस समय वरुण का एक उपदेश, एक संदेश हुआ उस सभा मंच पर विद्यमान हो करके। मुनिवरों! देखो, वरुण ने कहा कि जैसा ऋषि मुनियों ने मेरा राज्याभिषेक किया है, मैं उनका बड़ा आभार प्रगट करता हूँ, क्योंकि राष्ट प्रियता जब होती है, देखो, जब हमारे यहाँ एक कुलपति हो और वह राष्ट्रवेत्ता हो और मानो देखो, वह हमारे पुरोहित के रूप में विद्यमान हो, जैसे परमपिता परमात्मा सर्वत्र ब्रह्माण्ड के पुरोहित हैं और वह पुरोहित बन करके पराविद्या को देने वाले हैं। क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ में जिस परमपिता परमात्मा ने पराविद्या को दिया है और अपरा और परा दोनों को ही उन्होंने प्रदान किया तो मैं दोनों प्रकार की विद्या का अध्ययन करता रहूँगा। मानो दोनों प्रकार की विद्याओं का प्रभु के संरक्षण में चिन्तन करता रहूँगा। एक पराविद्या होती है, एक अपरा होती है। तो अपरा विद्या में रत्त रहने वाला महान् कहलाता है, अपरा में देखो, यह संसार है और परा में ब्रह्म है, चेतना है, ज्ञान है और विज्ञान है। परन्तु देखो, उसमें मुझे रत्त रहना है, जहाँ परमात्मा एक एक परमाणु से गुथा हुआ दृष्टिपात आता है। मेरे प्यारे! उन्होंने अपना संदेश दिया कि मैं राष्ट्र को मानो देखो,

अपने अश्वमेध याग से, वाजपेयी याग से, गो मेध और यहाँ अश्वमेध यागों से राष्ट्र को सजातीय बनाता रहूँगा।

गोमेध याग

क्योंकि देखो, राजा जब बनता है तो गो मेध याग होना चाहिए। गो मेध उसे कहते हैं, जिस राजा के राष्ट्र में दुग्ध देने वाला, पशु हो और वह दुग्ध देने वाला पशु हो, गो धन हो। क्योंकि राष्ट्र की सबसे प्रिय देखो, वह गो धन सम्पदा होती है। उसके पश्चात् देखो, उसके प्रति हमें याग करना चाहिए। अमृतां भूः वर्णाम् और देखो, अन्य धन होना चाहिए। यहाँ याग का अभिप्रायः है कि गो के द्वारा, गो दुग्ध और घृत के द्वारा प्रत्येक गृह में देखो, सुगन्ध याग की होनी चाहिए, जिससे राष्ट्र अपने में पवित्र बनता रहे। देखो, उन्होंने, वरुण ने कहा, मेरी इच्छा यह भी है कि यहाँ गो धन की पूजा हो। पूजा का अभिप्रायः यह है कि उसका उपयोग किया जाएं। मानो देखो, उसकी सेवा का अभिप्रायः यह है कि वह प्रसन्न रहे मानो जिस राजा के राष्ट्र में गो धन प्रसन्न रहेगा और दुग्ध देने वाला पशु होगा उस राजा का राष्ट्र पवित्र कहलाता है।

मेरे प्यारे! देखो, वरुण ने कहा कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब राष्ट्र की चर्चा करते थे तो प्रायः यह कहते थे कि गो घृत के द्वारा, दुग्ध के द्वारा ही याग होने चाहिए। प्रातःकालीन् प्रत्येक गृह में अग्नि प्रचंड करते हुए वेदमन्त्रों की ध्वनि से जब यागों की सुगन्ध आती हो, यागों की ध्वनियाँ आती हो और स्वाहा शब्द का मानो वहाँ प्रतिपादन किया जाता है, वे मानो देखो, राष्ट्र और गृह दोनों ही पवित्र होते हैं। उस राजा के राष्ट्र में महानता की प्रतिभा सदैव रत्त रहती है।

स्वाहा ध्वनि के रूप में राष्ट्रीय सहयोग

इस प्रकार जब उस ब्रह्मचारी ने यह कहा तो सर्व सभा मानो देखो, शून्यवत् हो गई और उन्होंने कहा मेरा तुम सहयोग दो। प्रजा से कहा, हे प्रजाओ! तुम मेरा सहयोग दो और सहयोग क्या है राजा के लिए कि प्रजा, प्रत्येक प्रजा अपने कर्त्तव्य का पालन करती रहे और राजा स्वतः याग करे तो प्रजा अपने में भी याज्ञिक बने और देखो,

प्रातःकालीन् वेद ध्वनि की मानो ध्वनियाँ होती रहें। वे मुनिवरों! देखो, प्रत्येक गृह में गुंजायमान रहें। ऐसा मुनिवरों! देखो, उन्होंने अपनी दीक्षा अमृतम् देखो, उन्होंने अपना संदेश दिया राष्ट्र को और यह कहा कि मेरा यही मानव अग्नि की धाराओं में अपने गृह को सुगन्धित करेगा मानव समाज अपने में मानवीयता के लिए सदैव तत्पर रहेगा और अपने में मानवीयता के लिए सदैव तत्पर रहेगा और मानवीयता का उत्सुक रहेगा और जहाँ मानवीयता आ जाती है, वहीं राष्ट्र और गृह दोनों पवित्र बन जाते हैं।

अश्वमेध याग

मेरे पुत्रो! देखो, उस समय, जब वरुण ब्रह्मचारी ने यह कहा तो प्रजा आनन्दित हो गई और उन्होंने कहा, मैं गो मेध याग ही नहीं, अश्वमेध यागों में भी परणित होना चाहता हूँ। गो मेध याग का अभिप्रायः तो यही है कि उनकी सेवाओं से उनकी रक्षा होनी चाहिए और देखो, अश्वमेध याग की पूजा होनी चाहिए, क्योंकि अश्व नाम, राजा का है, मेध नाम, प्रजा का है। पर्यायवाची शब्दों में जब जाएंगे तो बहुत पर्यायवाची हमें सिद्ध होंगे, परन्तु विचार केवल यही है कि हम अश्वमेध यागी बनें और अश्वमेध उसे कहते हैं, मुनिवरों! देखो, अश्व नाम घोड़े का है, और अमृतम् अश्व नाम यहाँ राजा का माना गया है। राजा अश्व है और मेध नाम प्रजा का है। जब राजा और प्रजा दोनों सम्मिलित हो करके और प्रीतिपूर्वक अपने कर्त्तव्यवाद में संलग्न हो करके मुनिवरों! देखो, राष्ट्र के और समाज के लिए क्रियाकलापों में सदैव रत्त रह करके याग करते हैं, तो मानो देखो, वह अश्वमेध याग कहलाता है। राजा कोई भी कार्य ऐसा न कर पाए, जिससे समाज से विपरीत हो जाएं या समाज में अशान्ति हो जाएं यही तो अपने में शान्ति का आ जाना है। वरुण ब्रह्मचारी ने राज्याभिषेक होने के पश्चात् यह प्रजा को और राष्ट्र को अपना संदेश दिया और वह संदेश यह है कि प्रत्येक मानव अपनी अपनी आभा में रत्त रहे।

पिण्ड में ब्रह्माण्ड

मानो देखो, विज्ञान तो प्रत्येक मानव का मौलिक गुण है, क्योंकि परमपिता परमात्मा

ने जब मानव के शरीर को रचा तो इस मानो बहुत सूक्ष्म शरीर में ब्रह्माण्ड को रच दिया है और ब्रह्माण्ड एक शरीर में नहीं, मानो इस शरीर में नाना ब्रह्माण्ड हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया। एक समय बाल्यकाल में मानो मध्यरात्रि में वेदमन्त्रों का चिन्तन कर रहे थे और वेदमन्त्र यह कह रहा था, ब्रह्माण्डं ब्रवे कृतं देवः कि हे प्रभु! इस ब्रह्माण्ड में तो अनन्त ब्रह्माण्ड हैं, परन्तु तुम यह कहते हो कि पिण्डो ब्रह्माण्डे तो इस पिण्ड में कितने ब्रह्माण्ड हैं? उन्होंने कहा, इस पिण्ड में भी अनन्त ब्रह्माण्ड हैं। पिण्ड में परमाणु हैं। वे बाह्य जगत् में भी हैं। उस परमाणु का विभाजन करने से और योग में जाने से हमे यह सिद्ध होगा कि उस एक ही परमाणु में ब्रह्माण्ड है, अणु में ब्रह्माण्ड है। तो यह ब्रह्माण्ड अपनी आभा में अभ्योदय हो रहा है। तो विचार आता है कि ऐसा जो ब्रह्माण्ड है, ऐसी जो प्रतिभा है वह पिण्डो ब्रह्माण्डे में गमन करने वाला है। इसी प्रकार यह जो जगत् है, परमात्मा का अनुपम जगत् है, यह नाना ब्रह्माण्ड वाला है। ऐसी ही मानव का शरीर भी एक एक परमाणु से गुथा हुआ है और प्रत्येक परमाणु में ब्रह्माण्ड है।

मेरे पुत्रो! देखो, वरुण ब्रह्मचारी ने कहा मेरे पूज्यपाद गुरुओं ने जब मुझे यह वर्णन कराया तो मानो देखो, मैं अत्यन्त प्रसन्न हो गया और मैंने अपने में यह स्वीकार कर लिया कि प्रभु! के संरक्षण में हूँ। प्रभु के संरक्षण में हमें रहना चाहिए, क्योंकि प्रभु! का संरक्षण ही हमारे लिए देखो, मानवीयता की आभा में रत्त रखने वाला है।

मेरे पुत्रो! देखो, इस प्रकार उनका संदेश राष्ट्र के लिए प्रियतम रहा। उन्होंने यह कहा कि अश्वमेध याग होना चाहिए। और अश्वमेध याग जो है वही, मुनिवरों! देखो, राष्ट्र और समाज को पवित्र बनाता है। तो इस प्रकार नाना प्रकार के यागों का चयन हमारे वैदिक साहित्य में प्रायः आता रहा है। तो वरुण ब्रह्मचारी ने अन्त में अपना यह उपदेश दिया कि संसार में देखो, मात् अप्रण प्रणोति मानो देखो, माताओं का हमें पूजन करना चाहिए। माताओं का पूजन क्या है? मानो देखो, उनका साहस पवित्रता में रत्त रहना चाहिए, और विद्यालयों में ऐसी मानो कक्षाएं होनी चाहिए, जिससे योग में, प्राण में, प्राण और अपान में रत्त रहने वाली शिक्षा हो। देखो, विद्यालय उससे महान् बनते हैं,जब

मेरी पुत्रियों को गृह सूत्रों का अध्ययन, देखो, वैदिक मन्त्रों का अध्ययन कराया जाता है, उसका प्रभाव होता है और उसका क्रियात्मक चयन कराया जाता है। तो इस प्रकार, मुनिवरों! देखो, उन्होंने कोई भी ऐसी स्थली नहीं त्यागी, जिसको वह उद्गीत न गा सके, विज्ञान क्या और देखो, वह राष्ट्रवाद क्या क्योंकि राष्ट्रवाद ही इसे कहते हैं।

राष्ट्रवाद

राष्ट्रवाद कहते हैं,? अनुशासन को। जब मानव अपनी इन्द्रियों पर अनुशासन कर लेता है और उनके अनुसार बर्तने लगता है। इस प्रकार, राष्ट्र भी अनुशासन का नामोकरण कहा गया है। प्रजा और राजा दोनों सम्मिलित हो करके अश्वमेध यागी बनें और देखो, धनुर्यागी बनें, जिससे धनुर्विद्या हो। धनुर्विद्या भी राजा के राष्ट्र में बहुत अनिवार्य है। धनुर्विद्या उसे कहते हैं, जहाँ देखो, ब्रह्मचारियों को धनुर्विद्या में सुयोग्य बनाया जाता हैं। अणु और परमाणु के माध्यम से उन्हें यन्त्रों में मानो प्रविष्ठ कराया जाता है। और वही, मुनिवरों! देखो, अपने में यन्त्रमार्गी बन करके सागर से पार होने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं।

इस प्रकार वरुण ब्रह्मचारी ने अपना उपदेश दिया और यह कहा कि राजा को समय समय पर मानो पुरोहित की आज्ञा होनी चाहिए और पुरोहित के संरक्षण में जो राजा राष्ट्र का पालन करते हैं या कर्त्तव्य का पालन करते हैं, उससे राष्ट्र पवित्र बनता चला जाता है। मेरे पुत्रो! देखो, यह वाक्य उच्चारण कर, यह संदेश दे करके वह अपने में मौन हो गये। महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज उपस्थित हुए और पुलस्त्य ने कहा, मेरी यह मनोकामना ही है कि राष्ट्र, देखो, जब भी ऊँचा बनता है, देखो, यौगिकता से ऊँचा बनता है। राष्ट्र मानो द्रव्य की लोलुपता वाले राष्ट्रवेत्ताओं से कदापि ऊँचा नहीं बनता। राष्ट्र ऊँचा जब भी बनता है जब राजा यौगिक हो। क्योंकि राजा को बलिष्ठ कहते हैं, जो पुरूषों में बलिष्ठ होता है। मानो देखो, इस प्रकार पुरोहित उन्हें कहते हैं, जो पराविद्या को देने वाले हों। इस प्रकार, देखा राष्ट्र और समाज अपने में पवित्रता की धारा को और यौगिक क्षेत्र में रमण करता रहे। वह भी अपनी स्थली पर विद्यमान हो

गये।

मेरे प्यारे! देखो, विचार विनिमय क्या? मैं बहुत दूरी चला गया विचार तो मैं कुछ और ही देने जा रहा था, परन्तु देखो, वह विद्यालयों की चर्चाएं और राष्ट्रवेत्ताओं की चर्चा में चला गया। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा ब्रह्मे देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में, बेटा! ब्रह्मचारी अपने में शिक्षा अध्ययन करने लगे। ये चर्चाएं, मैं तुम्हें कल प्रगट कर सकूंगा कि वह किस प्रकार की शिक्षाओं में रत्त रहे हैं। तो बेटा! देखो, आज का हमारा वाक्य क्या कह रहा है? वाक्य यह कह रहा है कि परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में देखो, अयोग्यता में सुयोग्यता नहीं होनी चाहिए। जब अयोग्यता में सुयोग्यता आ जाएगी, उसी समय देखो, समाज में अशान्ति आ जाएगी और अशान्ति यहाँ तक बलवती हो जाएगी कि उसमें स्वार्थपरता आ जाएगी। क्योंकि समाज जब भी ऊँचा बना है, वह जब बना है, जब निस्वार्थ आ गया है और निस्वार्थ में प्रेम होता है और स्वार्थपरता में मानो देखो, विभाजन की प्रतिक्रिया होती है। यह विभाजन की प्रतिक्रिया मानव के जीवन में नहीं होनी चाहिए।

तो विचार विनिमय क्या? आज का हमारा वाक्य क्या कह रहा है? कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। बेटा! आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद दोनों ही मानो देखो, पारायण रहने चाहिए। दोनों की गतियाँ एक ही सूत्र में रहनी चाहिए। क्योंकि एक ही सूत्र के दोनों मनके हैं। ये मनके एक सूत्र में पिरोने से ही महान् बनते रहें, इस समाज और मानव का तब अपने में अभ्योदय होता रहेगा। तो आज का वाक् अब समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन होगा, क्योंकि आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ राष्ट्र के सम्बन्ध में अनुशासन के सम्बन्ध में विवेचितकर रहा था। तो आज का विचार यह सम्पन्न। अब वेदों का पठन पाठन। नई सड़क, दिल्ली 6 दिनांक 30 03 1991

२४ 16 04 1991 पुष्प 61

राम ने कहा हे भरत मेरी यह आकांक्षा ओर उत्सुकता है तुम अयोध्या के राजा ओर धिराज बनो क्योंकि धिराज बन करके मैं तुम्हारा सहयोग दूंगा। उन्होंने कहा नहीं

प्रभु मैं अनधिकार चेष्टा नही करूंगा। संसार में दो प्रकार की चेष्टायें होती हैं, एक अधिकार होता है, एक अनधिकार होता है। जो अधिकार को वस्तु प्रदान की जाती है वह वस्तु अपने में बड़ी विचित्र होती है ओर जो अनाधिकारी को अधिकार दे दिया जाता है तो प्रभु! वह उस काल में प्रणाली को नष्ट कर देता है। हे प्रभु! इसीलिए राष्ट्र का भी अपना अपना अधिकार होता है क्योंकि वह अधिकार ही तो राष्ट्र को उन्नत बनाता है। ओर अनाधिकारी को जब राष्ट्र की प्रणाली परणित कर दी जाती है तो वह राष्ट्र को विनाश के मार्ग पर ले जाता है हे प्रभु! आपने यह दृष्टिपात कर लिया होगा। कि रावण को राष्ट्र का अधिकार नही था ओर अधिकार न होने से आज लंका का विनाश हो गया है अग्नि के मुखारबिन्दु में चली गई है। इसी प्रकार प्रभु, यदि हम भी अनधिकार चेष्टा करेंगें क्योंकि अनधिकार ही संसार में पापाचार है हे प्रभु! हम उस पापाचार में नही जाएंगें। राम ने कहा तो प्रभा वर्णम ब्रहे मैं अपनी वार्त्ता ऋषि मुनियों के समक्ष उदित करूंगा। तुम ऋषि मुनियों की सभा करो।

मेरे प्यारे! भरत ने राम की आज्ञा का पालन किया ओर उन्होंने सब ऋषि मुनियों को निमन्त्रित किया। निमन्त्रित करके एक समय नियुक्त किया गया । उस समय पर बारी बारी सब ऋषि मुनियों अपने आसनो पर आकर विद्यमान हो गए। महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलभ, महर्षि दालभ्य, महर्षि वैशम्पायन महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज िद सर्वत्र ऋषियों का आगमन होने लगा। हिमालय के धिराज शिव ओर ब्रह्मचारी कवन्धि महर्षि पणपेतु भारद्वाज इत्यादि ऋषियों का आगमन हुआ। महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, महर्षि विश्वामित्र महर्षि कागभुषुण्ड जी, महर्षि लोमश ओर भी नाना ऋषियों का आगमन हुआ। महर्षि विभाण्डक महर्षि वैशम्पायन ओर महर्षि व्रिच्चिका मुनि ओर भी उद्दालक गोत्र के बहुत से ऋषि विद्यमान थे मुझे ऐसा स्मरण आ रह है जैसे आज ऋषि मुनियों के मध्य में हम भी विद्यमान हों। मेरे पुत्रों! देखो, राजा जैसे महाराजा अश्वपति वेत्ताम् भू वर्णनं महाराजा शिव ओर महर्षि श्वेका, नाना ऋषि मुनियों का आगमन हुआ ओर अपने अपने आसनो पर विद्यमान हो गए। बेटा! मुझे वह भव्य सभा आज पुनः से स्मरण आ रही है कि मानो ब्रह्मवेत्ताओं का आसन भिन्न है राष्ट्र वेत्ताओं का आसन राष्ट्रवेत्ताओं का आसन

भिन्न है ओर राजाओं के आसन भिन्न हैं वे सब विद्‌यमान हो गए। सबसे ऊर्ध्वा आसन पर क्योंकि राजपुरोहित का अधिकार होता है वे राजपुरोहित महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज विद्‌यमान हैं उसी सभा में लक्ष्मण, शत्रुघन, ओर भरत ओर राम भी अपने आसन पर विद्‌यमान हैं। देखो, जितनी भी राजलक्ष्मियां थी वे भी सब अपने अपने आसनों पर विद्‌यमान है। ओर राष्ट्र के जितने भी कृषका ऊर्ध्वा में गमन करने वाले हैं ओर ज्ञान ओर विज्ञान में रमण करने वाले सबके ऊर्ध्वा में आसन विद्‌यमान हैं उन आसनों पर सब विद्‌यमान हो करके अपनेपन में अपने में ही निहित हो रहे हैं।

महाराजा भरत ने उपस्थित हो करके कहा महाराजा शिव को अपना सभापति बनाने की उनसे आज्ञा ली परन्तु महाराजा शिव ने कहा कि मेरे विचार में तो सभापति महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज को नियुक्त किया जाएं वशिष्ठ ने कहा कि नहीं मैं पुरोहित हूँ और पुरोहित को इतना अधिकार नही होता है परन्तु तुम राजा हो और राजा को राज सभा में वह नियुक्त लेने का अधिकार होता है मेरे प्यारे! उन्होंने कहा कि नहीं, राजा जो होता है वह ब्रह्मवेत्ता से सूक्ष्म होता है, वह आसन ब्रह्मवेत्ता को ही ले लेना चाहिए क्योंकि वह चुनौती प्रदान करता है। महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि वह चुनौती प्रदान करता है यह तो तुम्हारा वाक्य यथार्थ है परन्तु यदि कहीं ब्रह्मवेत्ता में भी विकृति आ जाएं तो उसका निवारण उसका शोधन करने वाला राजा होता है इसीलिए राजा को ही राज सभा में सभापति बनाना चाहिए। देखो, जब यह वाक् आया तो उन्होंने सब वार्त्ताओं को स्वीकार किया। महाराजा अश्वपति ने कहा कि भगवन! आप आसन को लाईए। और उन्होंने सौमिक नाम के राजा से भी कहा राजा ने कहा प्रभु! आप आसन ग्रहण कीजिए क्योंकि आप भी तपस्वी हैं और राजा है ओर वैज्ञानिक हैं प्रभु कोई ऐसा गुण नही हैं जो आप में हमें दृष्टिपात न आता हो मानो आपका राष्ट्र प्रायः सूक्ष्म है परन्तु आप राजा हैं हिमालय जैसी आपकी प्रजा है जैसे हिमजालय पर्वत बहुत ऊर्ध्वा में उड़ाने उड़ता रहता है इसी प्रकार है जिस राजा की प्रजा इस प्रकार के ऊँचे विचारों वाली हो, अपने कर्तव्य का पालन करने वाला समाज हो, ऐसा राजा तो पूज्य होता है। ऐसा महाराज अश्वेतकेतु ने भी कहा। ओर भी

आचार्यों ने और राजाओं ने अपनी स्वीकृति प्रदान की।
मेरे प्यारे! महाराजा शिव अपने आसन पर विद्‌यमान हो गए, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज उनके संग विद्‌यमान हो गए, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज उनके संग विद्‌यमान हो गएं क्योंकि वही तो राष्ट्र का निर्णय देने वाले थे। जब सभापति का निर्वाचन हो गया, ब्रह्मवेत्ता अपने अपने आसन पर विद्‌यमान हो गए। तो महाराजा भरत अपने में उपस्थित हुए। भरत ने सब को नमः करते हुए कहा कि प्रभु मेरी इच्छा यह है कि मैं यह कामना ले करके उपस्थित हुआ हूँ कि मुझे मेरा अधिकार प्राप्त होना चाहिए। महात्मा वशिष्ठ ने कहा कि तुम्हारा अधिकार क्या है उन्होंनें कहा मेरा अधिकार है सेवा करना ओर मैं राष्ट्र की सेवा करूं। राम राजा हों ओर मैं उनका सेवक होऊं यह मेरा अधिकार है लक्ष्मण ने भी यही कहा कि मैं भी अपने अधिकार को चाहता हूँ। ओर मेरा अधिकार यही है कि मैं चरणों की वन्दना करता रहूँ अपने कर्तव्य का पालन करता हुआ मैं सेवक बन करके अपने जीवन को व्यतीत करता रहूँ। शत्रुघन ने भी इसी प्रकार अपने विचारों को व्यक्त किया। ओर इसके बाद वह अपने अपने आसन पर विद्‌यमान हो गए।

२५ 17 04 1991

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का पठन पाठन कर रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया हमारे यहाँ, परम्परागतों से उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा गुणगान गाया जाता है। जो परमपिता परमात्मा तपों में निहित है। मानो वह जो हमारे अन्तर्हृदयों में विद्‌यमान हैं। उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का गुणवादन करते रहते हैं। क्योंकि हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, ऋषि मुनि अपने में एकान्त स्थलियों में विद्‌यमान हो करके अपने में विचार विनिमय करते रहे हैं, और उस परमपिता परमात्मा जो अग्निमयी स्वरूप है, जो यज्ञोमयी स्वरूप है, जो तपोमयी स्वरूप माना गया है मानो उस परमपिता परमात्मा की महती का हम सदैव गुणगान गाते रहें, और एकान्त स्थलियों में विद्‌यमान हो करके अपने

में वह अपनेपन का मनन और वह चिन्तन करते रहें, क्योंकि परमपिता परमात्मा का जो समन्वय है। वह गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो करके चिन्तन करना है, और चिन्तन उसे कहा जाता है। जो परमपिता परमात्मा के अपने विचारों में उड़ाने उड़ता रहता है, वह अग्निमयी स्वरूप कैसे है? यह विचारों का एक मूलक माना गया है। कि हम परमपिता परमात्मा को अग्निमयी स्वरूप वर्णन करते रहते हैं, क्योंकि वह अग्निमयी स्वरूप है, वह अग्नि ही कृत में रत्त रहने वाली है। तो आओ, मेरे पुत्रों! देखो, विचार क्या मानो उस परमपिता परमात्मा की महती को हमें जानना है। क्योंकि संसार में जब भी हम आए हैं, मानव क्या प्राणी मात्र आया है, तो परमपिता परमात्मा की सर्वत्र सृष्टि को सजातीय बनाने के लिए क्योंकि विजातीय नही बनाना चाहिए, सजातीय बनाना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, सजातीय उसे कहते हैं, जो परमपिता परमात्मा की जो नियमावली है, अथवा वेद का जो वाक् कहता है, उसके अनुसार जो मानव जीवन में उसे जो धारण करता है। अथवा उसके ऊपर अनुसरण करता है, तो वह मेरे प्यारे! परमपिता परमात्मा के अमूल्य जगत में यह सजातीय बनाना है। क्योंकि प्रत्येक मानव को उस परमपिता परमात्मा के राष्ट्र और समाज में अथवा उसके जगत में जो भी रत्त रहना चाहता है, वह अपने उस परमपिता परमात्मा के अनुसार अपनी अन्तरात्मा के अनुसार अपने क्रियाकलापों को करना ही मानो इस ब्रह्माण्ड को और मानवीयतव को सजातीय बनाना है। प्रत्येक मानव अपने को सजातीय बनाने में लगा रहता है, परन्तु अपने को सजातीय नही बनाना है। प्रकृति परमात्मा के अनुसार ही मानो अन्तरात्मा के अनुसार अपने को जो सजातीय बनाता है, वह महान और पवित्र कहलाता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! देखो, सजातीय किसे कहते हैं, जो प्रकृति का एक नियमावली मानो गतिवान हो रही है। उसी गति के आधार पर हम अपने जीवन को गतिवान बनाते हैं। तो वही गति श्रेष्ठ कहलाती है। तो आओ, मेरे प्यारे! इस सन्दर्भ में मैं तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, विचार विनिमय क्या आज का हमारा वेदमन्त्र बेटा! तप की महिमा का वर्णन कर रहा है। वेदमन्त्र कहता है तपं ब्रव्हा शरणसुतं प्रत्येक मानव को यहाँ तपस्या करनी चाहिए। तपों में रहना चाहिए। मेरे प्यारे! तप की

मीमांसा करने वाला तपों में निष्ठ कहलाता है। तो आओ, मेरे प्यारे! जैसे परमपिता परमात्मा ने परमात्मा स्वतः अपने में तपायमान है, और वह तपाने से ही मानो देखो, प्रकृति के भिन्न भिन्न स्वरूपों का निर्माण करता रहता है। यदि वह तपों में नही रहेगा, तो इसका विभक्त क्रियाओं में रत्त नही हो सकेगी, तो वेद का मन्त्र कहता है कि तपं ब्रव्हो तरण ब्रीहि प्रत्येक प्राणी मात्र जब तपों में बन जाता है, तो परमपिता परमात्मा के सन्दर्भ में जाने के लिए अथवा तप की आवश्यकता है। मेरे प्यारे! इसीलिए मानव को तपों में निष्ठ रहना है, तो विचारना यह है कि प्रत्येक मानव को अपने में तपस्वी बनना है, मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण आता रहता है बहुत काल बहुत समय हो गया है, जब बेटा! देखो, ऋषि मुनि अपने में तपों में निष्ठ रहते मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जब बेटा! विद्यालय में ब्रह्मचारी तप रहा है, और विद्यालय में ब्रह्मचारी तपों में निहित रहने वाला वह तप कहलाता है। मानो देखो, वह अपने में ब्रह्म वर्णसुतं ब्रव्हा विद्यालय को अपने में सजातीय बना रहा है, कोई समय ब्रह्मचारी के द्वारा ऐसा नही जो मानो शान्त मुद्रा में मुद्रित हो जाएं, वह केवल अपने क्रियाकलापों में सदैव रत्त रहता है, और उस मानो उस अग्नि का चयन करता है। जो मानो अग्नि अपने अन्तर्हृदय में प्रदीप्त हो रही है, और उस अग्नि का चयन करता हुआ मानो देखो, उसी के प्रकाश में वह रत्त रहता है। क्योंकि वह ज्ञान है, वह मानवीयता का एक विचित्र मार्ग है, जिसको प्राप्त करके देखो, मानव अपनी मानवीयता में ही शान्त हो जाता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! देखो, विचार आता है कि तप क्या है मुझे वह काल स्मरण है जो मैं तुम्हें चर्चाएं कर रहा था राजा भी अपने में तपायमान है, प्रजा भी तपायमान है, मेरे पुत्रां देखो, राजा तो वह तपस्वी कहलाता है, जो शान्त मुद्रा में विद्यमान हो करके प्रभु का चिन्तन करता है, और वह मानो देखो, उसका तप कि राष्ट्र का इदन्नम् कुछ नही चाहता। **वह राष्ट्र के लिए अपने जीवन के लिए न्यौछावर करता है परन्तु राष्ट्र से कुछ नही चाहता ऐसा जो अपरिग्रह राजा होता है। वह महान कहलाता है**। मानो देखो, उसका जीवन तपों में है मुझे वह काल स्मरण आता रहता है मेरे प्यारे! देखो, महाराजा ज्ञानश्रुति अयोध्या के राजा थे महाराजा ज्ञानश्रुति यह

सतोयुग की वार्त्ता है, महाराजा ज्ञानश्रुति मानो देखो, अयोध्या के राजा थे और मनु वंशलज में उनका जन्म हुआ मेरे प्यारे! देखो, वह ज्ञानश्रुति अपने में ज्ञान की पिपासा में लगे रहते थे और वह मुनविरों देखो, स्वयं अपने में कला कौशल करते थे, मेरे प्यारे! उनका जो गृह है उनके अंग संग रहने वाली पृथ्वी है, और उस भूमि में अपनी देवी से यह कहते रहते हैं कि हे देवी! मानो देखो, हे देवी! आओ, हम यहाँ पुरूषार्थ करें और देखो, पुरूषार्थ करके इसमें अन्न उत्पन्न होगा, उसे हम पान करेंगें, हमारा बुद्धिबल पवित्र बनेगा और बुद्धि के पवित्र बनने से मन पवित्र बनेगा और मन के पवित्र बनने से ही मेरी प्रवृत्ति ऊँची बनेगी। इसीलिए हम राष्ट्र का ऊर्ध्वा में हम कार्य कलापों में परणित हो जाएं। मेरे प्यारे! देखो, देवी ने कहा भगवन! बहुत प्रियतम है, क्योंकि संसार का यह नियम बना हुआ है, परम्परागतों से कोई मेरी पुत्री यह नही चाहती कोई देवी यह नही चाहती क्या मेरा पति तपस्वी न हो, चाहे वह राष्ट्रवेत्ता हो, चाहे वह साधारण प्राणी हो, परन्तु पुत्री यही चाहती है, सदैव कि मेरे पति मे सर्वत्र गुण होने चाहिएं। मानो देखो, वह कैसा उद्गीत गा रहा है, पुरूषार्थ अपने स्वामी के साथ में वह पुरूषार्थ करने के लिए सदैव तत्पर रहती हैं। मेरे प्यारे! देखो, राजा जब महाराजा देखो, ज्ञानश्रुति बेटा! देखो, अपनी क्रियाओं से अपने पुरूषार्थ से निवृत्त होते तो उसके पश्चात अध्ययन करते और अध्ययन में वह अपनी देवी से वह यह कहते कि हे देवी! क्योंकि संसार हमारा जब ही ऊँचा बनेगा, जबकि हम दोनों अपने में तपस्वी और अध्ययनशील होंगे क्योंकि अध्ययन करना हम दोनों के लिए बहुत अनिवार्य है, यदि तुम्हारा अध्ययन देखो, ऊर्ध्वा में गमन कर गया है, तो मेरा अध्ययन भी देखो, ऊर्ध्वा में गमन करता रहेगा और दोनों का जब समन्वय हो जाएगा। तो मानो देखो, हम संसार को ऊर्ध्वा में गमन करा सकते हैं, हमारा जीवन हमारा राष्ट्र हमारा गृह पवित्र हो सकता है क्योंकि हमारे गृह में वह अन्नाद होना चाहिए। जो तपस्वी आ करके निर्द्वन्द हो करके हमारे गृह में भोजन कर सकें क्योंकि यदि किसी के गृह में ऐसा भोज्य बनता है, कि यदि कोई अतिथि आ गया है, तपस्वी आ गया है, और वह समय पर उसे भोज्य प्राप्त नही होता तो हे देवी! हमारा गृह कलंकित हो जाता है, क्योंकि देखो, अतिथि का भोज्य होना बहुत अनिवार्य

होता है, और यदि भोज्य हमारा सात्विक होगा हमारे भोज्य में मानो देखो, बुद्धि वर्धक पदार्थ होंगे तो वह अतिथि आने वाला उस पदार्थों को पान कर लेगा हमारा गृह तपों में निष्ठ हो जाएगा तो मेरे प्यारे! देखो, राजा ने यह कहा ज्ञानश्रुति ने कि हे देवी! हम प्रातःकालीन मानो देखो, ब्रह्म का चिन्तन करने वाले हों ब्रह्म का चिन्तन करने वाला ही मानो देखो, तपस्वी कहलाता है। क्योंकि देखो, वह ब्रह्म है, वर्णसुतं ब्रह्मे वह जो हमारे अन्तःकरणों को जो पवित्र बना देता है। जैसे प्रातःकाल का सूर्य है, और प्रातःकाल का सूर्य देखो, नेत्रों का प्रकाशक बन करके आता है, नेत्रों को प्रकाशमान बना देता है। हमारी जठराग्नि को देखो, वह प्रकाश में ला देता है। उसमें बल देता है, और देखो, उसे ऊर्ज्वा दे करके परिपक्व बनाता रहता है, मानो देखो, इसी प्रकार अमृतां भू वर्णनं ब्रव्हे कृतं देखो, वह जो हमारा असुतं सूर्य है, वह हमारे जीवन में एक द्यौतक बन करके रहता है। मानो देखो, वह सूर्य प्रकाश ले करके आता है, और वह ऊर्ज्वा ये हमें प्रकाश में पंहुचा देता है। तो हे ब्रहे हे देवी! इसी प्रकार देखो, जब हमारे जीवन में बुद्धि और मन दोनों पवित्र बनेंगे। तो हम राष्ट्र को पवित्र बना सकेंगें और वह देखो, राष्ट्र अपने में यौगिकवाद में यौगिक कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, दोनो स्वयं अपने में पुरूषार्थ करना और अध्ययनशील रहना, क्योंकि ब्रह्मयाग में परणित होना है, और ब्रह्मयागी वह पुरूष कहलाता है जो ब्रह्म की आभा में रत्त रहता है, और ब्रह्म का चिन्तन करता है, वह ब्रह्मवादी कहलाता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मवादी बन करके ही हम अपने गृह को ऊँचा बना सकते हैं, जैसे ब्रह्मचारी विद्यालय में आचार्य और विद्यालय में देखो, ब्रह्मचारी का दोनों का समन्वय रहता है। मेरे प्यारे! देखो, राष्ट्र उसी काल में ऊँचा बनता है, जब राजा मानो स्वतः पुरूषार्थी होता है, राजा उद्गम होता उद्गम करने वाला होता है, तो प्रजा भी उन्ही के अनुसार बरतने लगती है, और जब प्रजा का और राजा का दोनों का परस्पर मानो देखो, समन्वय हो जाता है। तो वह राजा अपने राष्ट्र को उन्नत बनाने

में लगा रहता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं तप की महिमा का वर्णन कर रहा था, तप कहते किसे हैं? तप कहते हैं, पुरूषार्थ को तप कहते हैं, अध्ययन को तप कहते हैं, मानो देखो, अन्नाद हमारा पवत्रि हो जिससे हमारी मनो की प्रवृत्ति मानो किसी के अनधिकार के ऊपर हमारी मानो देखो, न जाने न पाए हमारा मानवीयतव स्थिर रहने वाला हो, तो मेरे प्यारे! देखो, आज मैं तुम्हे दूरी नही ले जा रहा हूँ, विचार विनिमय क्या मनिवरों देखो, मैं उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, त्रेता के काल में देखो, जहाँ राम अयोध्या से विजय हो करके और अपने राष्ट्र में देखो, भिन्न भिन्न सभाओं में मानो उनका स्वागत किया, और उन्होंने अपने विचार व्यक्त किए कि मैं तप करने जा रहा हूँ। तो प्रजा अपने मे बड़ी प्रसन्न हो रही है, क्योंकि प्रजा भी यह चाहती है कि हमारा राजा श्रेष्ठ हो हमारा राष्ट्रवाद जब ही ऊँचा बनेगा, जब मानो देखो, राष्ट्रवेत्ता पवित्र होगा। तो मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार के उदगार जब मानतव में मानो देखो, गृह को त्याग करके देखो, राम ने यह कहा हे भरत! प्रजा को किसी प्रकार का कष्ट न हो जाएं, प्रजा को मानो देखो, स्वतः अपने को ऊँचे बनाते रहना तो प्रजा तुम्हारा अनुशरण करती रहेगी यदि तुम्हारा जीवन अशुद्ध हो गया तो प्रजा तुम्हारे अनुसार बरतेगी और देखो, वह प्रजा अशुद्ध हो सकती है इसके विचारों में मानो अशुद्धियां आ जाएगी तो राष्ट्र मानो देखो, हमारा भ्रष्ट हो जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, राम ने इतना उद्गीत और अतने विचार दे करके वहाँ से उन्होने बेटा! देखो, अपने राष्ट्र गृह में पंहुचे, जब पह राज गृह में पंहुचे, तो वह अपनी देवी से बोले कि देवी! मैं तप करने जा रहा हूँ। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम भगवन! मैं भी तपस्वी ही बनना चाहती हूँ। हे प्रभु! मेरा जीवन देखो निराशा में परिणत रहा है। कहीं मेरे जीवन में नाना प्रकार की आशा की किरणों से उदगीत गाने लगती थी देखो, मानो मैं निराशा में परणित होती रही हूँ हे प्रभु! ये मेरा बड़ा सौभाग्य आप तप करने जा रहे हैं। मेरे प्यारे! मैं भी अमृतं उन्होंने कहा कि मैं तपस्वी बनना चाहती हूँ। मेरे पुत्रों! देखो, वहा ब्रहमणां ब्रहे व्रतप्प्रव्हा जब मानो देखो, माता सीता ने तप के लिए कहा, तो राम बड़े

प्रसन्न हुए और राम ने कहा देवी! धन्य है। क्योंकि संसार में वही पुरूष मानो तपस्वी बनता है, जिसकी मानो देवियां मानो तपस्वी होती हैं, और मानो देखो, उसी के अुनसार जब वह बरतने लगती हैं, तो गृह पवित्र बन जाता है, और मनोनीत भावनाएं पवित्रता में रमण करने लगती है। मेरे पुत्रों! यह वाक् जब सीता ने कहा कि प्रभु! मैं अपनी एकान्त स्थली में गायत्राणि छन्दों का और वेदमन्त्रों के आधार पर आत्मा के अनुसार मैं अपने विचारों को ऊर्ध्वा में ले जाने का प्रयास करूंगी और आप तप कीजिए भगवन! देखो, प्रभु! मुझे स्मरण नही कीजिए क्योंकि संसार में मानो देखो, मन की तरंगों का मानो देखो, मिलन होता रहता है। हे प्रभु! जब मैं आचार्य कुल में अध्ययन करती थी, तो आचार्य ने मुझे ये वर्णन कराया आचार्य ने कहा है कि मन की तरंगें तरंगित होती रहती हैं। मानो यदि मोह की तरंगे मोह में परणित हो जाती हैं, तो द्वितीय को मोह की तरंगें एक दूसरे में मिलन करके, मानो उसे मोहित कर देती हैं, उसे स्मरण शक्ति में जागरूक कर देती हैं इसी प्रकार भगवन! मेरी इच्छा यह है कि आप स्मरण न कीजिए जिससे मेरा मन भी तुम्हें स्मरण करने लगे, और देखो, मैं भी तुम्हें स्मरण नही करूंगी। क्योंकि आपका मन देखो, मेरे अन्तर्हृदय में समाहित रहा, तो उसमें भी तप के खण्डित होने का एक संदेह बना रहता है। मानो देखो, जैसा मुझे याज्ञवल्क्य मुनि ने वर्णन कराया और भी मानो देखो, माता अनूसुया ने भी तप के लिए अपना उपदेश दिया था, हे प्रभु! वह मुझे वह स्मरण है, मेरे प्यारे! राम बड़ेप्रसन्न हुए, और राम प्रसन्न हो करके मानो देखो, अपने भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण इत्यादि को सबको सन्तुष्ट करके वहाँ से उन्होंने गमन किया। और भ्रमण करते हुए मुनिवरों! देखो, वह भंयकर वनों में जा करके, मानो तप करने लगे और विचारने लगे, कि तप कहते किसे हैं? मानो देखो, यह प्रसंग तो प्रत्येक मानव के अन्तर्हृदय में समाहित हो जाता है, क्या तप है क्या, वह भी एक तप है, और तप की मीमांसा है क्या? मानो देखो, मैंने अपने गृह को त्यागा है, और मैं मानो देखो, इस भंयकर वन में, दण्डक वनों में आ गया हूँ, तप करने के लिए मेरे प्यारे! देखो, वह परमात्मा का चिन्तन करने लगे, और न्यौदा में वेदमन्त्रों का अध्ययन करने

लगे।

मेरे प्यारे! वह शान्त मुद्रा में थे, भ्रमण करते हुए कहीं से महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराज का आगमन हुआ महर्षि वैशम्पायन का दोनों का जब मिलन हुआ, तो राम ने उनके चरणों की वन्दना की उन्होंने कहा कहो राम! शान्त क्यों हो? उन्होंने कहा प्रभु! मैं न्यौदा में वेदमन्त्रों का विचार विनिमय कर रहा हूँ, और विचार यह कर रहा हूँ कि तप कहते किसे हैं? क्योंकि मेरे अन्तर्हृदय में यह प्रश्न बना हुआ है क्या तप क्या है? जिस तप के लिए मानो देखो, मैंनें अपने गृह को त्याग दिया और अपने में तपस्वी बनने के लिए मैं तत्पर हो गया हूँ, मानो देखो, मेरे तप की बड़ी आकांक्षा बनी हुई है। तो मुनिवरों! देखो, महर्षि वैशम्पायन बोले क्या हे राम! तप को नही जानते? तुम उन्होंने कहा प्रभु! जानता तो हूँ, परन्तु तप कहते किसे हैं? मेरे हृदय में मानो यह आकांक्षा बनी हुई है, यह विचार बना हुआ है, उन्होंने कहा तप उसे कहते हैं मानो देखो, अन्नम् ब्रव्हा मानो देखो, जिससे मन का पवित्र निर्माण होता हो, और जिस क्रियाकलापों से मन पवित्र बनेगा वही तप कहलाता है। क्योंकि मन को ही तप में लाना है, क्योंकि मन संस्कारों का समूह कहलाता है। तो इसीलिए हे भगवन! आप मानो देखो, उस मन को पवित्र बनाने के लिए अन्नाद की आवश्यकता रहती है। अन्नाद को प्राप्त कीजिए। जिससे तुम्हारा अन्तर्हृदय पवित्रता की वेदी पर आ जाएं, और वह अन्तःकरण जब तुम्हारा पवित्र बनेगा तो मानो अन्नाद भी ऊँचा बनेगा, मेरे प्यारे! राम ने कहा बहुत प्रियतम, तो महर्षि वैशम्पायन ने वह शिक्षा दे करके वह वहाँ से उन्होंनें वहाँ से गमन किया परन्तु राम ने यह विचारा कि मन कैसे पवित्र होगा, और अन्न कहाँ से पवित्र आयेगा।

तो मुनिवरों! देखो, वह खेचरी मुद्रा से मानो शीतली प्राणायाम से वह अन्न को अन्तरिक्ष से लेना उन्होंने प्रारम्भ किया। और जब अन्तरिक्ष से लेने लगे तो एक माह हो गया वह खेचरी मुद्रा से बेटा! देखो, अन्तरिक्ष से वे अन्न को लेते रहे उससे बेटा! देखो, अन्न क्या है? अमृतं सूक्ष्म देखो, जो वायुमण्डल में मानो देखो, जो परमाणु रूप में तरंगों के रूप में जो तरंगित हो रहा है, उसे प्राण के माध्यम से वह अपने में सिंचन कर रहे हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, राम जब इस प्रकार खेचरी मुद्रा में

और जल की आवश्यकता हुई तो मानो देखो, शीतली प्राणायाम से जल को अपने में ग्रहण करते थे, मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार उन्होंने एक माह तक इस प्रकार अभ्यास किया और अभ्यस्त हो करके, मन देखो, पवित्र होने लगा मन विष्णु रूप बनने लगा मुनिवरों! देखो, पवित्र सात्विक बनने लगा इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, उन्होंनें भयंकर वनों से अब देखो, कुछ पतियों को पान करने लगे, जैसे बेटा! देखो, एक बेल का वृक्ष होता है, उस बेल के वृक्ष के जो पत्र होते हैं वह मानो देखो, शरीर के लिए और मन को सजातीय बनाने के लिए पवित्र होते हैं। मेरे प्यारे! देखो, राम ने वे कुछ समय पान किए मानो देखो, जैसे पीपल का पत्र है, वट वृक्ष का पत्र है मानो देखो, उसमें छाला वृत्तियां है, तो मुनिवरों! देखो, उसको जल मे तपा करके उन्होंने एक माह तक उसका पान किया मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार अपने में अभ्यस्त हो गएं, मेरे पुत्रों! देखो, उन्हें अमृतं ऋषि मुनि दृष्टिपात करने के लिए आने लगे, तो मेरे प्यारे! देखो, वह इस प्रकार का अन्न ग्रहण करते और वह तपों में निहित रहते मानो देखो, इन्द्रियों से वह इन्द्रिय अप्रतं इन्द्रियाँ प्रहा वह अपनी लेखनी में मानो देखो, अपनी लेखनी बद्ध करते रहे। भगवान राम की लेखनी चलती रहती। मेरे पुत्रों! देखो, तप उसी को कहते हैं जो अपने उदगार देता है, जो अपने उदगार देता है कि यह मैंने अमुक क्रियाकलाप किया, तो इसमें मुझे यह प्राप्त हुआ और यह मैंने देखो, अमुक क्रियाकलाप किया तो इसमें मैने यह प्राप्त हुआ। तो बेटा! मन की पवित्रता के लिए देखो, उन्होंने बारह वर्ष तक इस प्रकार का तप किया किसी काल में बेटा! देखो, अन्न को ग्रहण करते और कहीं कहीं बेटा! शिलस्थ अन्न को एकत्रित करते रहते थें। बारह वर्षों में बेटा! उन्होंने एक लेखनी का निर्माण किया मानो देखो, जिसको मानो देखो, सोभनी विचारक एक पोथी कही गई, मानो देखो, लेखनी उन्होनें बद्ध की तो उन्होनें विचारक और तपों में एक पोथी का उन्होने निर्माण किया, जिस पोथी में केवल यही था कि मानव को तप कैसे किया जाना चाहिए। मन कैसे पवित्र बनता है, मेरे पुत्रों! देखो, इसमें चित्त की वृत्तियों का निरोध कैसे किया जाता है। तो यह सर्वत्र बेटा! देखो, उन्होंने अपनी लेखनी में बद्ध किया

और राष्ट्र में देखो, राष्ट्रीयता को राष्ट्रीय विचारों को लाने के लिए मुझे क्या करना है, मैं मानो यह विचार तो मेरे मानो यौगिक बन गएं हैं, और यौगिक विचारों में मुनिवरों! देखो, अनुशासन है, और यौगिक विचारों में ही बेटा! चित्त की वृत्तियो का निरोध है। और उसी में बेटा! देखो, जन्म जन्मान्तरों के संस्कार मेरे अन्तर्हृदय में विद्यमान हैं, अथवा चित्त के मण्डल में विद्यमान रहते हैं, बेटा! वही चित्त का मण्डल बेटा! देखो, जो मानव के अन्तर्जगत में होता है वही चित्त का मण्डल बेटा! देखो, बाह्य जगत में होता है, बाह्य जगत में मेरे प्यारे! देखो, सहपाठी हैं, और मित्र हैं और देखो, अपना कुटुम्ब है, वह सर्वत्र उनके क्रियाकलाप बेटा! देखो, जागरूक के मानो देखो, दृष्टिपात करता है, यह जागरूक बेटा! चित्त का मण्डल कहलाया गया है, वही चित्त का मण्डल बेटा! देखो, आन्तरिक जगत में बेटा! देखो, चित्त में संस्कार बनते हैं उन्हीं संस्कारों से स्वप्नवत् बन सकता है। उन्हीं संस्कारों से मानव बेटा! अपनी क्रियाओं में मानव रत्त रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, आन्तरिक जगत और बाह्य जगत दोनों का निर्माण होता रहता है, और वही चित्त में बेटा! विद्यमान हो करके मानव का आवागमन बनता रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, हमें वह क्रियाकलाप करना है, योग में जाना है, तो हमारी अन्तरात्मा में किसी प्रकार की अन्तर्जगत में कोई संस्कार उपलब्धि न हो यदि संस्कार बनते चले गएं, तो जन्म भी बनता रहेगा, और यदि मानो देखो, जन्म नहीं संस्कार नही रहेंगे, मानो संस्कारों से विहिन हमारा चित्त मण्डल बन जाएगा, तो आवागमन से ही मानो देखो, हम निहित हो सकते हैं। अन्यथा हमारे चित्त में जब तक संस्कार है, जब तक मुनिवरों! देखो, आवागमन बना ही रहेगा, तो इसीलिए बेटा! हमारा कर्तव्य है कि हम संस्कारों को न होने दें, जिससे हमारा जीवन मानो देखो, पुनरूक्ति मरणं और पुनरूक्ति जीवन की आभा में रत्त हो जाएं।

तो आओ, बेटा! मैं तुम्हें बहुत सूक्ष्मतम रहस्य में ले जाना नही चाहता हूँ, यह बड़ा सूक्ष्मतम रहस्य है, मेरे पुत्रों! देखो, राम ने मानो देखो, अपनी एक पोथी का निर्माण किया जो पोथी बेटा! देखो, प्रत्येक राष्ट्र में मान्य मानी गई जिसमें देखो, अध्ययन

करना बहुत अनिवार्य है उसमें तपों की महिमा का वर्णन था तो मेरे प्यारे! देखो, राम के द्वारा जब तपस्या कर रहे थे, तो नाना ऋषि मुनियों का आगमन होता रहा और ऋषि मुनि बहुत सी चर्चाएं करते रहें हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, राम ने एक समय कहा था महर्षि मुद्गल ऋषि से क्या हे प्रभु! मैं तपस्या में सदैव निहित रहता हूँ। परन्तु मुझे वह तप अब तक स्मरण नही आया है, जिससे मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में मैं तपस्वी बना था, वह मेरा बाल्यकाल था, और बाल्यकाल का जो तप होता है, वह पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में, मानो देखो, जो मैंने पान किया है, एक एक वेदमन्त्र का अध्ययन करना, उसको ऊर्ध्वा में ले जाना, और अपने जीवन में क्रियात्मक बनाना यह कर्तव्य बन गया था। वह तप मानो देखो, मेरे जीवन में स्मरण आता रहता, एक तप मैंने बाल्यकाल में वशिष्ठ मुनि के चरणों में प्राप्त किया, और द्वितीय जो मैने तप किया वह देखो, महाराजा विश्वामित्र के आश्रम में, और उनके चरणों में विद्यमान हो करके और सहपाठियों के मध्य में विद्यमान हो करके, जो मैंने तप किया अथवा वह तप अद्वितीय था जिसमें धनुर्विद्या का अभ्यास कराया जाता। जिसमें ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ाई जाती, उस ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने अब तक मेरे मन मस्तिष्क में विद्यमान हैं, मानो देखो, मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, मैं अब देखो, वह अप्रणं ब्रहा तपस्या का यही परिणाम है, कि मैं अपने में पवित्र बनना चाहता हूँ। क्योंकि संसार में जितना भी राष्ट्र है, अथवा जितना भी यह मानो देखो, वैभव है, यह संसार में मानव को मानवीयता का दूरी ले जाने वाला है। तो मुनिवरों! देखो, भगवान राम ने यह कहा तो बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है। कहीं मुनिवरों! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज एक समय उनके आश्रम में आ पंहुचे और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा कहो राम! तुमने क्या पान किया है, उन्होंने कहा प्रभु! मैं तपस्या में तल्लीन हो गया हूँ। अथवा मेरे अन्तःकरण के जो संस्कार है वह उदबुद्ध हो गएं हैं, और दूरिता के संस्कार मानो देखो, मेरे नष्ट होने लगे हैं। हे प्रभु! यही मुझे पाना था उसी को प्राप्त करने के लिए मैंने राष्ट्र और देखो, द्रव्य वैभव को त्यागा है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होने महात्मा वशिष्ठ ने कहा हे राम! तुमने अब तक देखो, ब्रह्मज्ञान को भी जाना है अथवा नहीं।

उन्होंने कहा प्रभु! मैं ब्रह्मज्ञान को तो इतना रूपेण नही जान पाता, क्योंकि ब्रह्मज्ञान तो अथा सागर है उन्होंने कहा कि जितना भी जाना है, उतना जाना है, कि हाँ प्रभु! जिससे मैं राष्ट्र के क्रियाकलाप को ऊँचा बनाँऊ, मैने केवल इतना ही अध्ययन किया है क्या जिससे राष्ट्र को मैं रूढ़िवाद में न जाने दूं, क्योंकि राजा के राष्ट्र और समाज में जब रूढ़ि बन जाती है, तो राजा का राष्ट्र और समाज दोनों अशुद्ध हो जाते हैं। तो हे प्रभु! देखो, मैंने इतना ब्रह्मज्ञान के ऊपर अपना अध्ययन किया है, जिससे मेरा राष्ट्र रूढ़िवाद में न परणित हो जाएं, क्योंकि रूढ़िवाद किसे कहते हैं? रूढ़िवाद कहते हैं क्या मानव के भिन्न भिन्न प्रकार के विचारो को, और उन विचारों में अशुद्धियां आ जाना ही मानो देखो, उसको रूढ़ि कहते हैं। जैसे देखो, अप्रतं ब्रह्म, मैं ईश्वरवादी हूँ, ईश्वरवाद के ऊपर मेरा तप, मेरा मानवीय विज्ञान, एक ही धारा में परणित हो जाएं। तो वह रूढ़िवाद समाप्त हो जाता है। और यदि मानो देखो, उसमें ये क्रियाकलाप नही हो पाता, रूढ़ि उसे कहते हैं जिस वस्तु को मानो देखो, उसको व्यापक रूप से न विचारना और विचार करके संकीर्णता में ईश्वर को उसमें स्वीकार करने का नाम रूढ़ि कहलाता है। रूढ़ि कहते हैं, जो देखो, सुन्दर अच्छाईयों को स्वीकार नही करता। मानो जो प्रियवाद में, इनको स्वीकार न करे, और वह अपने में मानो वह दीक्षा अंकृत बन जाएं, तो उसको वह रूढ़ि कहते हैं क्योंकि उसमें विशालता का विनाश हो जाता है, तो मेरे प्यारे! देखो, महात्मा वशिष्ठ ने कहा क्या मानो देखो, यदि तुम राष्ट्रवेत्ता बन गएं हो, और राष्ट्रवेत्ता बन करके, कहीं कोई संकट आ जाएं और धर्म ब्रह्मणे देखो, धर्म को किस रूप में स्वीकार करोगे देखो, भगवान राम ने कहा हे प्रभु! हे ऋषिवर! मैं धर्म को मानो देखो, आत्मा का विषय स्वीकार करता रहा हूँ। आपके चरणों में भी जब विद्यमान रहा हूँ, तो आत्मा का जो विषय है, उसी का नाम देखो, धर्म है। उन्होंने कहा आत्मा का विषय क्या है? उन्होंने कहा आत्मा का विषय है, मानो देखो, क्रिया करना आत्मा का विषय है, ज्ञान और प्रयत्न को अपने में जानना मानो देखो, वह जो आत्मा से प्रेरणा उत्पन्न होती है। उसी प्रेरणा के आधार पर जो अपने में क्रियाकलाप करता है, और देखो, विज्ञान और आत्मीयता की आभा मे स्थिर हो जाता है। उसका नाम ही मानो धर्म माना गया है, धर्मणं ब्रव्हे धर्मसुतं ब्रह्मा धर्म

उसी को कहते हैं जो अन्तरात्मा की पुकार है, जहाँ अन्तरात्मा मानो देखो, क्रियाकलापों से घृणित होता है। वही पापाचार है, और जिस क्रियाकलापों से अन्तरात्मा प्रसन्न होता है, आत्मा में प्रसन्नता आती है, और उसमें विज्ञान स्थिर होता है, और वही मानो देखो, उसका धर्म है, वह धर्म की अवृत्तियां मानी जाती हैं। मेरे प्यारे! उन्होनें कहा कि जब तुम राष्ट्र को अपनाओगे तो सबसे प्रथम कौन से विचार को तुम राष्ट्र में लाना चाहोगे, मेरे प्यारे! देखो, भगवान राम ने कहा प्रभु! जब मैं राष्ट्र को अपनाऊंगा तो राष्ट्र में सबसे प्रथम मैं यह घोषणा करूंगा, कि प्रत्येक मानो देखो, मातृ शक्ति जितना भी मानो देखो, राष्ट्र में मानो देखो, मानव रहता है, वह सुगन्धित होना चाहिए। उन्होंने कहा सुगन्धि किसे कहते हैं? उन्होंने कहा सुगन्धि उसे कहते हैं, जो एक प्राणी प्राणी से मिलन होता है, तो वह मिलन होते उसके हृदय में से एक मानो प्रसन्नता की तरंगे उत्पन्न हो जाती हैं। और वह एक दूसरें में प्रसन्न हो जाएं तो उसका नाम सुगन्धि कहलाता है। विचारों में सुगन्धि हो, विचारों में दर्शन हो, और विचारों में मानवीयतव होना चाहिए। तो देखो, राष्ट्र को यदि ऊँचा बनाना है, तो इस प्रकार बन सकता है भगवन! तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि हे राम! मानो क्या मानो देखो, धर्म से यह प्रश्न किया जाएं क्या राष्ट्र को तुम सुगन्धित कैसे बनाओगे? मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा प्रभु! जो ऋषि मुनियों का जो परम्परा से एक क्रियाकलाप चला आ रहा है, उसी से सुगन्धित हो सकता है, क्योंकि वेद के वाङ्गमय में पंहुचूंगा और वेद का जो वाङ्गमय है, मानो जो उसका एक मानवीयतव विचार है, उसको ला करके समाज में प्रत्येक गृह में देखो, याग होना चाहिए। ब्रह्मचारी अपने विद्यालयों में याज्ञिक बनने वाला हो, और देखो, गृह स्वामी और गृह स्वामिनी दोनो परस्पर मानो देखो, याग करने वाले हों, गृह में जब सुगन्धि होती है, जब वेदमन्त्रों का आह्वान किया जाता है वेदमन्त्रों का मानो जब प्रत्येक गृह में वेदमन्त्रों की ध्वनि होती हो, और वह ध्वनित होने वाला, जो उसके गृह में जो शब्द गुंजायमान होता है, मानो देखो, और साकल्य की सुगन्धि होती है, और अग्नि का पूजन किया जाता है, अग्नि क्या मुखारबिन्दु ही क्योंकि देवताओं का मुख कहलाया गया है। और अग्नि के मुख में जब स्वाहाः की ध्वनि आने लगती है, तो

जब स्वाहाः से जब गृह और राष्ट्र गुंजायमान हो जाएगा, तो प्रभु! मैं राष्ट्र को उन्नत बना सकूंगा।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा वशिष्ठ मुनि बोले क्या तुम मानो देखो, पाण्डितव को क्या जानते हो, उन्होंने कहा भगवन! पाण्डितव वह होता है, जो मानो देखो, वेदज्ञ ध्वनि एक ध्वनि से मानो देखो, अपने जीवन से गुंजायमान करने वाला हो, वेदमन्त्रों से कुछ जटा पाठ में, घन पाठ और माला पाठ में गान गाने वाला हो, और गान गा करके जहाँ भी वह विद्यमान हो वहीं उसी प्रकार का गान हो, तो इसीलिए पाण्डितव का राष्ट्र में देखो, उसका पूजन होना चाहिए। क्योंकि राष्ट्र में पाण्डितव का पूजन होना चाहिए, अपाण्डितव का पूजन नही होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले क्या हे राम! तुम मानो तो देखो, जब राष्ट्र का निर्धारित करोगे तो समाज को कितना भागों में इसे विभक्त करोगे? उन्होंने कहा कि मैं समाज को जो विभक्त करूंगा वह मानो वह तीन भागों में विभक्त होता चला आया है, यह सर्वत्र जगत है, यह चार भागों में विभक्त होता रहा है, मानो देखो, चार भागों में ज्ञान है, ज्ञान, कर्म और उपासना यह चार भागों में विभक्त है। तीनं ब्रह्मा वर्णसुते मानो एक विज्ञान काण्ड लगा दिया जाता है, इसीलिए चतुर्थ भाग हैं, अथवा त्रैतवाद में ही यह संसार निहित रहता है। मानो देखा एक ही ज्ञान है, एक ही प्रकाश में से तीन भागों की उत्पति होती है, और वह सबसे प्रथम मानो देखो, उसमे ज्ञान और कर्म और उपासना के रूप में वह रत्त हो जाते है। इसी प्रकार मानो देखो, समाज को मैं जब विभक्त करूंगा, तो मानो देखो, ज्ञान के द्वारा और वह अव्रतं कर्म काण्ड के द्वारा और उसी प्रकार देखो, उपासना होती रहेगी। क्योंकि प्रत्येक मानव क्रियाकलापों मे तत्पर रहना चाहिए। सबसे प्रथम ज्ञानी होना चाहिए ज्ञान का उपार्जन होना चाहिए। देखो, विद्यालयों में ज्ञान हो .... इसका नाम कर्मकाण्ड है, और भगवन! कर्मकाण्ड का मानो देखो, उपासना उसे कहते हैं, जिस कर्म को करने से उपासना होती है, उपासना का अभिप्रायः यह है उपासना उसे कहते हैं, कि हमें उपयोग करना है मानो जिसको हमने जाना है, कर्म से उसे बाहृय कर्म में लाए हैं, तो उसे उसके पश्चात मानो उसका उपयोग करना है, उपयोग करने का नाम ही मानो देखो, हमारे यहाँ उपासना मानी

गई है। इस प्रकार देखो, दोनों गुरु शिष्यों का परस्पर देखो, अपने में विचार विनिमय हो रहा है, उन्होंने कहा प्रभु! इसी प्रकार मैं समाज को, चार भागों में विभक्त करना चाहता हूँ। जो हमारे पूर्वजों ने भगवान मनु ने उसको निर्माणित किया, और चार भागों में जब समाज अपने में विभक्त होगा, तो यह अपने में राष्ट्र मेरा पवित्र बनेगा, मानो देखो, इसी प्रकार की नियमावली भी होगी। तो मेरे प्यारे! देखो, राम का और वशिष्ठ को दोनो का विचार विनिमय चल रहा है। तो इसी प्रकार बेटा! देखो, अमृतं ब्रह्मा उन्होंने कहा हे राजन्! हे राम! मैं तुम्हे एक वाक् और तुमसे जानना चाहता हूँ, जब तुम राजा बनोगे, और राजा बन करके तुम शासन करोगे, क्योंकि शासन करना बहुत अनिवार्य है, अनुशासन कैसे होगा? उन्होंने कहा प्रभु! मेरी जो दशों इन्द्रियाँ हैं, सबसे प्रथम मेरी दस इन्दियों पर मेरा शासन होना चाहिए, जब मेरी दसों इन्द्रियों पर शासन नही होगा, और ग्यारवें मन पर अनुशासन नही होगा, तो प्रजा को अनुशासित नही बना सकता। मेरे प्यारे! देखो, वह जनक कहलाता है, जो अपनी इन्द्रियों पर अनुशासन करने वाला होता है, और मन की उसमें पुट लगा देता है बेटा! वह जनक कहलाता है इसी प्रकार देखो, भगवान राम ने कहा प्रभु! मैंने जनक बनना चाहता हूँ हे मेरे पूज्यपाद आप तो ब्रह्मवेत्ता हैं आप ब्रह्मनिष्ठ होने से मानो देखो, मेरी सहायता करेंगे, हे भगवन! आप पुरोहित है, बिना पुरोहित के राजा राष्ट्र को ऊँचा नही बना सकता मानो देखो, मेरा जो अन्नाद होगा वह प्रजा के इस राष्ट्र में से नही होगा मेरी जो माता वसुन्धरा है पृथ्वी जो माता है जिसे वसुन्धरा कहते हैं इसके गर्भ से अन्न का मुझे उपार्जन करना है, और उसे पान करना है, और उसे पान करके मानो देखो, राष्ट्र को उन्नत बनाना है जैसे मेरे महापिता सगर करते थे मेरे महापिता सगर का भी यही मानो देखो, क्रियाकलाप रहा मानो देखो, मेरे पूर्वज जो मेरे देखो, दिलीप जी रहे हैं उन्होंने भी इसी प्रकार मानो देखो, अपने राष्ट्र को संचालित किया है। मैं भी इसी प्रकार अपने राष्ट्र को संचालित करना चाहता हूँ। तो मेरे प्यारे! देखो, महाराजा सगर स्वतः देखो, स्वयं कला कौशल करते अन्न को पृथ्वी से लेते और उसे पान करते परन्तु राष्ट्र को उन्नत बनाने में लगे रहते। तो मेरे प्यारे! देखो, राष्ट्र वैसे ही उन्नत नही होता है, राष्ट्र को यदि राष्ट्र को देवताओं का

बनाना है। उन्नत बनाना है। तो मानो देखो, स्वयं अनुशासित होना होगा और ब्रह्मज्ञानी देखो, विज्ञान राजा के राष्ट्र में होना चाहिए। परन्तु विज्ञान देखो, विज्ञान से गुथा हुआ देखो, ब्रह्मज्ञान से गुथा होना चाहिए। यह चर्चाएं बेटा! मैं तुम्हें कल प्रगट करूंगा। आज नही कर पाऊंगा, क्योंकि विचार विनिमय क्या मुनिवरों! विचार विनिमय यह कि हमारा राष्ट्र कैसे उन्नत हो? क्योंकि राष्ट्र में सुगन्धि होनी चाहिए। विचारों की सुगन्धि हो, साकल्य की सुगन्धि हो, मेरे प्यारे! देखो, इसी के अनुसार यह अप्रम ब्रव्हा कृतं राष्ट्र में स्वार्थवाद नही रहना चाहिए। जब राजा स्वार्थवादी बन जाएगा, पद की लोलुपता वादी बन जाएगा, उसी समय राष्ट्र नष्ट हो जाएगा। तो मेरे प्यारे! देखो, यह राम ने अपने उद्‌गीत गाए और वशिष्ठ मुनि और इत्यादियों की चर्चाएं बेटा! समय समय पर होती रहती हैं, आज मैं वेद के मन्त्रों का उद्‌गीत गा रहा था वेदमन्त्र अपने में कितना विचित्र है। वेदमन्त्रों में बेटा! नाना प्रकार के तप की महिमा का वर्णन आता है, वेद कहता है तपं ब्रव्हो कृतं वायु सम्भवा वेद का वाक् कहता है कि वायु तप रहा है, और तपने के पश्चात वह गतिवान बना रहा है, वह प्राणों के रूप में रत्त हो जाता है, इसी प्रकारी अग्नि तपायमान है। वह उष्ण बनाती रहती है। इसीलिए देखो, यह पृथ्वी तपती है। और तपने के पश्चात ही नाना प्रकार के अन्नाद और खनिज पदार्थों को प्रदान करती है, इसी प्रकार यह प्रत्येक परमाणु तप रहा है। तपायमान हो रहा है, अणु तप रहा है, और यह तपायमान हो करके बेटा! तपों में निष्ठ हो रहा है। कल मुझे समय मिलेगा तो कल बेटा! मैं तुम्हे यह चर्चा करूंगा क्या राम के राष्ट्र में मानो देखो, विज्ञान विज्ञान से मानो देखो, यह कर्म काण्ड देखो, अमृतं ब्रह्मा देखो, राष्ट्र कैसे आध्यात्मिकवाद में पिरोया जाता है। यह चर्चाएं बेटा! देखो, मैं तुम्हें कल प्रगट करूंगा, आज का वाक् अब यह समाप्त होने जा रहा है। आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की आरधना करते हुए, और देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। क्योंकि राजा को जब तक ब्रह्मज्ञान नहीं होगा, वह अपने राष्ट्र को उन्नत नही बना सकेगा, और ब्रह्मज्ञानी उसके क्या क्या क्रियाकलाप होते हैं? यह चर्चाएं बेटा! कल प्रगट करेंगे क्योंकि महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज और राम

का दोनों का विचर विनिमय होता रहता था, तो बेटा! वह विचार मैं तुम्हें कल प्रगट करूंगा, आज का वाक् मुनिवरों! देखो, यह सम्पन्न होने जा रहा है। समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें, शेष चर्चा मुनिवरों! देखो, तप से हमें क्या क्या वस्तु प्राप्त होती है, और तप कहते हैं बेटा! मन को पवित्र बनाना और मन देखो, पवित्र होगा और क्रियाकलाप पवित्र होगा, और क्रियाकलाप पवित्र होगा तो इन्द्रियाँ पवित्र होंगी। इसीलिए हम अनुशासित हो करके दूसरों को अनुशासित बना सकते हैं। यह है बेटा! आज का वाक्, अब समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मना वाचन गता । ओ३म् तनु रथ श्वञ्जना आ पा रथं देवाः याश्चरी गतं मानाः। ओ३म् रथं माहं आ पा इदं ब्राहा गतं स्वर्णं आ

२६ अतिथि 012 पुष्प 60

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा वरणीय माने गएं हैं और जो भी मानव उसको अपना वरण बना लेता है अथवा उसे वर लेता है वह प्रायः उसी को प्राप्त हो जाता है। इसीलिए हमारा वेदमन्त्र यह कहता है कि हे मानव! तू प्रभु को अपना वरणीय बना। क्योंकि उसका वरण करना बहुत अनिवार्य है उसको अपनाने वाला प्राणी संसार में महान और पवित्र बन जाता है। आने वाला जो जगत है उसमें उसकी महान कृतियों में प्रायः दर्शन होता रहता है। तो इसीलिए हमारा वेदमन्त्र कहता है हे मानव! तू परमपिता परमात्मा को अपना वरणीय बना क्योंकि उसको वरण करने वाला याज्ञिक पुरूष कहलाता है उसको अपनाने वाला बेटा! आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता कहलाता है आध्यात्मिकता में मानव की प्रतिष्ठा निहित रहती है तो आओ मेरे प्यारे! हम परमपिता परमात्मा की अपना वरणीय स्वीकार करें। उसको अपने में धारण करते हुए महान और पवित्रता की उस पगडण्डी को ग्रहण करने वाले बनें। उस पगडण्डी को

ग्रहण करने वाले नाना ऋषिवर अपने प्रभु के आंगन में बेटा! विज्ञानमयी धारणा में रत्त हो गएं है।

आज का हमारा वेदमन्त्र हमें यह उच्चारण कर रहा है कि हम उस देव की महिमा का गुणगान गाने वाले बनें। हम उस महान जगत को जो आन्तरिक और बाह्य जगत में दोनों में प्रतिष्ठा में निहित रहता है हम उसे अपने प्रभु का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार होना चाहते हैं। जो नाना प्रकार का यह संसार सागर के रूप में हमें दृष्टिपात आता रहता है। इसमें नाना प्रकार के उद्घोष होते रहते हैं। और वह उद्घोष बड़े उच्च विचित्रता के आंगन में प्रवेश करते रहते हैं आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा है? आज का हमारा वेदमन्त्र याग के सम्बन्ध में और प्राण के सम्बन्ध बड़ी ऊँची वार्त्ता कह रहा था क्योंकि वायुमण्डल को पवित्र बनाते हुए हम आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता बनें। और विज्ञान में हम परणित हो जाएं जिस विज्ञान के लिए मानव परम्परागतों से ललायित हो रहा है और जिस विज्ञान के लिए मानव ऊँची ऊँची उड़ान उड़ रहा है हम उस विज्ञानवेत्ता के श्वास में अपने को ले जाते चले जाएं जिससे मानव समाज का वास्तव में कल्याण हो जाएं।

वेद का वाक् कहता है कि मानव को प्राणायाम करना चाहिए। प्राण की प्रतिष्ठा में रत्त रहना चाहिए। जैसे प्राण अपने में गतिशील है गति देने वाला है तो मानव उस प्रभु को अपना गतिशील स्वीकार करते हुए अपने मनोनीत हृदय को ऊँचा बनाना चाहते हुए सागर की प्रतिभा में हम इसमें प्रतिनिधित्व करने वाले बनें। जिससे हमारे जीवन की धारायें एक महानता में परणित हो जाएं। मैं आज तुम्हें पुनः से उस क्षेत्र में ले जा रहा हूँ जिस क्षेत्र की चर्चा बेटा! मैं पुनः पुनः प्रगट करता रहता हूँ।

मुझे भगवान राम का जीवन प्रायः स्मरण आता रहता है उनका जीवन एक महान आदर्शवादी रहा है उनके जीवन में एक महानता की प्रतिभा रही है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में भगवान राम पञ्चवटी में अपने समय को व्यतीत कर रहे थे। वह अपने आसन पर विद्यमान रहते। उनके समीप एक समय मगध राष्ट्र के राजा सामब्राह्म तथा और भी कुछ राजा अपनी अपनी स्थलियों से एकत्रित हुए एक

स्थल पर और विचारा कि राम को वन गएं हुए बहुत समय हो गया है चलो उनके दर्शनार्थ के लिए उनसे कुछ वार्त्ता प्रगट करें। सब राजाओं ने इन वाक्यों को स्वीकार कर लिया। अगले दिवस प्रातःकालीन वे सब राजा धिराज भगवान राम के समीप उस पञ्चवटी में आ गये। जहां देखो, नाना ऋषिवर पहले ही विद्यमान थे। और नाना प्रकार के भोज्यों का वहां प्रयास होता रहा है। परन्तु जैसे ही राजा इत्यादियों का आगमन हुआ तो ऋषि ने अपने हर्षध्वनि की और हर्षध्वनि करके कहा कहिए आईए राजन और वह विद्यमान हो गये। तो उन्होंने कहा कहो भगवन! कैसे इस आसन को पवित्र किया है। तब राजाओं ने कहा हे राजम ब्रहे हम अपने में राजकुमार कुछ शंका लेकर के आए हैं। राम ने कहा बोलो तुम्हारी शंका क्या है? तुम्हारी शंकाओं का निवारण करने के लिए मैं प्रयत्नशील हूँ और उन्होंने कहा उच्चारण करो तुम क्या चाहते हो। राजाओं ने कहा प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि राजा किसे कहते हैं हम अब तक नही जान पाए हैं कि राजा कौन होता है। हम स्वयं शासन करते हैं राजा के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न उड़ान भी उड़ी गई हैं परन्तु हमें कुछ प्रतीत नही हुआ। भगवान राम ने कहा कि यह जो याग है यह यज्ञ मानो यह दोनों प्रकार से अपने में प्रतिष्ठित रहता है राम वहां ऋषियों के वाक्यों के ऊपर कुछ विचार विनिमय करने लगे। भगवान राम ने कहा कि तुम राष्ट्र को जानना चाहते हो तो राष्ट्र दो प्रकार का होता है एक राष्ट्र वह होता है जिसमें राजा का जन्म माता के गर्भ से होता है एक राष्ट्र वह होता है जिसमें राजा का निर्वाचन प्रजा द्वारा होता है। तो इस प्रकार दोनों प्रकार के राज्यों पर अथवा राजाओं परमानव को ऊँची कल्पना करनी चाहिए। राजा राम ने कहा हे राजाओं तुम यह जानना चाहते हो कि राजा किसे कहते हैं राजा उसे कहते जो जो प्रातःकालीन अपनी स्थलियों को तयग करके अपने जीवन के क्रियाकलापों में निहित हो जाता है। और क्रियाकलापों में निहित हो करके मानो राष्ट्र में शुद्धिकरण उसके समीप होता है। राजा के राष्ट्र में धर्म में एकोकी रूढ़ि नही रहनी चाहिए। मुझे महानन्द जी ने कई काल में वर्णन कराया कि रूढ़ियों का विनाश होना चाहिए। रामा ने कहा राजा वही होता है तो प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके, प्रभु में ध्यानावस्थित हो करके अपने अन्य

क्रियाकलापों में प्रायः परणित हो जाता है। अपने क्रिकलापों से निवृत्त हो करके उसे राष्ट्र की प्रतिभा में उसं संलग्न हो जाना चाहिए। वह प्राणायाम करने वाला होना चाहए। वह यह विचारता रहे कि मेरा प्राण ही निस्वार्थ है तो इसीलिए राजा को मुनिवरों! संसार में प्राण की भांति निस्वार्थ रहना चाहिए। जैसे प्राण निस्वार्थ है वह चेतनाबद्ध है तो ऐसे ही राजा अपने में प्रतिपादित हो करके अपने राष्ट्र और समाज में एक महानता की समदर्शिता का अपना निर्णय दें। जब इस प्रकार का राजा होता है तो उस राष्ट्र में कोई त्रुटि नही होती। उस राजा के राष्ट्र में धर्म और मानवता का प्रसार होता है। और यह मानो कि मानवता ऊँची बन रही है। तो मेरे प्यारे! वह जो माहन वृत्तियां ब्रह्म लोकाम् समिधा अग्नेः देखो, वही तो समिधा बन करके रहती है जो राजा के हृदय में प्रजा के मध्य में वह दीपमालिका अकृतियों में रत्त हो जाती है।

विचार यह चल रहा था कि हम अपने प्रभु का गुणगान गाने वाले बनें। अपने प्रभु की निहारिका मानो उसके विज्ञान में रत्त रहना चाहिए। वह कितनी विशाल ज्ञान विज्ञान की धाराये हैं जिन्हें मानव अपने में धारण करके अन्तर्मुखी बन जाता है तो राम ने कहा राजा वह होता है जो अपने विचारों को गोपनीय बना लेता है और जो गोपनीय जो विषय होते हैं वही मानव के जीवन का उद्धार करते हैं इसीलि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए राष्ट्र का पालन करते चले जाएं। राष्ट्र दूसरों के वैभव को संग्रह करने के लिए नही हैं राष्ट्र तो इसीलिए निर्धारित किया जाता है कि उसकी प्रतिभा बनी रहे, उसका मानवतव, उसका ऋषितव ज्यों का त्यों बना रहे। ऐसी धारणा राजा के हृदय में निहित रहनी चाहिए। तो देखो, जब यह वाक्य राजाओं ने श्रवण कर लिया कि बुद्धिमान, बुद्धिजीवी प्राणियों की रक्षा होनी चाहिए। ऐसा जब भगवान राम ने वर्णन किया तो इतने में कुछ जिज्ञासु आ पंहुचें। उन जिज्ञासुओं ने यह प्रश्न किया कि महाराज! आप प्राण के सम्बन्ध में तो जानते ही हो राम ने कहा देखो, मैं प्राण के सम्बन्ध में इतना नही जानता परन्तु देखो, तुम मेरे से जानना चाहते हो मैं प्रायः इसका प्रयास करता रहूँगा। वह आसन पर शान्त मुद्रा में विराजमान हो गएं और अपने मे यह कहा कि प्राण के सम्बन्ध में मैं इतना तो नही जानता परन्तु मैं इतना अवश्य जानता हूँ

कि जो गुरुओं के चरणों में विद्यमान हो करके मैंने प्राण की कुछ सूक्ष्म की क्रिया का अध्ययन अवश्य किया है।

हमारे इस मानव शरीर में नाना प्रकार के प्राण अपना क्रियाकलाप कर रहे हैं यह जो प्राण की प्रतिष्ठा है उसको जान करके हमें यह निर्णय हो कि यह प्राण स्वरूप कहां चला गया। राजा ने कहा भगवन! सम्भूति ब्रह्मवाचम् ब्रहे लोकां हिरण्यम् रथः देवाः गतः प्रवाणाम् ब्रहे वाचम् ब्रहेः अस्वति मुद्रां आचार्य यह कहते हैं कि हम यह और जानना चाहते हैं कि प्राण की प्रतिष्ठा क्या है राम ने कहा इसको महर्षि लोमश जी जो भयंकर वनों में हैं बहुत अच्छी प्रकार जानते हैं उनके एक सहपाठी कागभुषुण्ड जी है वह भी प्राण के सम्बन्ध में विशेष जानते हैं। ऐसा कहा जाता है कि कुछ समय के पश्चत दोनो भी कहीं से विचरण करके राम के आश्रम में आ गये। उन्होंने उनके नाना प्रकार की वार्त्ताओं को उदबुद्ध कराया। परन्तु वह उस वार्त्ता को अच्छी प्रकार से जानते थे तो देखो, प्राण अपान की वार्त्ता चल रही थी। प्राण किसे कहते हैं अपान किसे कहते हैं, तो सब भ्रमण करते हुए कागभुषुण्ड ऋषि के द्वार पर पंहुचें। ऋषि ने कहा कि महाराज! यह वाक्य हम से दूरी जा रहा है। कृपया इस पर अपना निर्णय दीजिए। ऋषि ने कहा कि क्या जानना चाहते हो।? उन्होंने कहा प्राण को हम सखा बनाना चाहते हैं। उन्होंने कहा कि प्राण सखा तो संसार के प्रत्येक आंगन में क्रीड़ा कर रहा है तुम्हारी वाण में भी क्रीड़ा कर रहा है तुम्हारे शब्दों में देखो, अशुद्ध विज्ञान की प्रतिभा का न्म हो रहा है तो वहां से कुछ ने गमन किया। कागभुषुण्ड जी से नाना प्रकार की गम्भीरता से प्रश्न होने लगें उन्होंने कहा प्रभु! क्या जानना चाहते हो उन्होंने कहा सम्भूति ब्रह्मे ब्रह्मा वाचः प्रमाणां लोकाम् वायु शरणाम् वृही वृचाम् देवोः शत्रुतः भगवान राम ने और ऋषियों से अपना निर्णय लिया कि मानव प्राण को अपान में अपान को समान में और समान को व्यान में व्यान को उदान में निहित करता रहता है, इन पांचों का एक तारतम्य लग जाता है इन प्राणों का तारतम्य ही मानो यह सिद्ध कर रहा है यह किसी स्थान में परिवर्तनशील होने जा रहे हैं परन्तु इससे हमें यह सिद्ध हो गया कि यह प्राण जब एक दूसरे की आभा में निहित हो जाता है तो यह इन्द्रियों का वहां वाचक विषय कहलाया

जाता है जितने प्राण को तुम सखा बना करके उस के साथ भ्रमण करोगे तो वहीं अपान प्राण में व्यान में और व्यान देवदत में इस प्रकार यह प्राणों की प्रतिभा प्रायः वर्णन आता रहता है। कि मैं प्राणायाम करना चाहता हूँ।

तो भगवान राम बेटा! प्रातःकालीन अपने आसन से निवृत्त हो करके प्राणायाम करते थे। वह प्राण के सम्बन्ध में अच्छी प्रकार जानते थे कि जो प्रकृतिवाद को जानने लगता है वह नाना प्रकार के और भी रूपों में रत्त हो जाता है।

मैं विशेष विवेचना देने नही आया हूँ भगवान राम प्रातःकालीन पञ्चवटी पर याग करते थे। नाना प्रकार का साकल्य एकत्रित करना, उस साकल्य में रत्त रहना, उस साकल्य को अपने में, अनुवृत्तियां में रत्त करके उस आभा में निहित रहना जानते थे। विचार केवल यह कि प्राण अपान दोनों का मेल मिलाना है दोनों का संगतिकरण करना है दोनों को एक दूसरे में पिरोने की चर्चायें आती रहती है। परन्तु जब मैं यह विचारता रहता हूँ कि हे प्रभु! तू कितना महान और पवित्रतम् कहलाता है। तू कितना ओजस्तव और आभा में नियुक्त होने वाला है, परमात्मन् तू महान सखा है, भगवान राम प्रातःकालीन यह प्रार्थना करते रहते थे। निस्वार्थ हो रके वह विचरण करते रहते थे। मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक मानव के हृदय में, प्रत्येक प्राणी के हृदय में एक महानता की अनुपम ज्योति जागरूक हो जाती है और अन्त में वह ज्योति मानव के जीवन का मूल बन ककरे इस सागर से पार करा देती है।

भगवान राम का जीवन में प्रारम्भ कर रहा था भगवान राम की प्रतिभा में रत्त रहने के लिए नाना राजा उनके समीप आते। उन्होंने राष्ट्र के संविधान की चर्चायें भी की हैं। उन्होंने कहा है कि राष्ट्र अपने में जब महान बन करके रतहा ै यदि प्राणी मात्र के हृदय में एक हृदयग्राही अपनी अनुपम ज्योति आभा में जब निहित हो जाती है तो देखो, आभा ब्रहे वाचन्नमं ब्रह्म राजब्रहः राजा को प्राणायाम करना चाहिए क्योंकि प्राण एक सखा है। प्राण को महर्षि लोमश मुनि जानते थे कि प्राण का कितना महत्व है बाल्यकाल में विद्यालय में भगवान राम जब अध्ययन करते थे तो बेटा! विद्यालय में प्राण की पवित्र विद्या उनके समीप आती रहती और उसमें वह अपने को प्राप्त करते

रहते। प्राण देखो, एक ऐसी विचित्र आभा में नियुक्त रहने वाला एक अनुपम सखा हैजिसको जानकर मानव अमरावती को प्राप्त हो जाता है। आज मैं क्या उच्चारण करने चला हूँ कि राजा कौन है। बेटा! राजा के राष्ट्र में विज्ञान होना चाहिए। विज्ञान की नाना प्रकार की तरंगें होनी चाहिए। जिस विज्ञान का आयु प्रबल होता है वही अपने मे सार्थक होता है अधिक विवेचना न देता हुआ आज मैं तुम्हें उस क्षेत्र में ले जा रहा हूँ जिस क्षेत्र में हमें राष्ट्रीयता और मानवता का प्रायः दिग्दर्शन होता रहा है। भगवान राम अपने में विचारते रहते थे। कि हिंसा नही होनी चाहिए। मैं अहिंसा की चर्चा उनके जीवन काल की चर्चायें प्रगट कर रहा था। परन्तु पुनः पुनः वह वाक्य मुझे स्मरण आते रहते हैं। कि भगवान राम का जीवन सदैव आज्ञाकारी रहा है उनके जीवन में एक महानता की ज्योति अपने में प्रतिष्ठित होकर के आत्मतत्व की आभा में निहित रहती है।

तो मुनिवरों! राजाओं ने यह प्रश्न किया कि राजा कौन है। जिस राजा के राष्ट्र में विज्ञान पराकाष्ठा पर हो, और विज्ञान का सदुपयोग होता हो उस राजा का राष्ट्र पवित्र होता है। वह राजा पवित्र होता है मानो देखो, उस जिस राजा के राष्ट्र में विज्ञान अपनी पराकाष्ठा पर निहित रहता है। वह विज्ञान के वांगमय में प्रवेश हो जाता है और वह विज्ञान मानव का राष्ट्र का मौलिक गुण बन कर रहता है। मौलिक गुण क्योंकि राष्ट्र को ऊँचा बनाने वाला यह मानव देखो, स्वीकृत कहला है। तो देखो, राष्ट्र और मानवीयता दोनो ही अपने में तत्पर रहने चाहिएं जिससे समाज में एक महानता की ज्योति उत्पन्न हो जाएं। तो आओ मेरे प्यारे! देखो, राजाओं ने कहा प्रभु! क्या राजा के राष्ट्र में विज्ञान होना अनिवार्य है? भगवान राम ने कहा कि अनिवार्य नहीं परन्तु विज्ञान होना चाहिए। उसका सदुपयोग होना चाहिए उसके जीवन में एक महानता की ज्योति होनी चाहिए। देखो, विज्ञान अपने में अभिमान बन करके, विज्ञान अपने में निरुत्सुक बन करके राष्ट्र की प्रतिभा नष्ट हो जाती है तो विचार विनिमय क्या मैंने बहुत पुरातन काल में कहा था कि मानव को अहिंसा परमोधर्म अपनाना चाहिए। इसको अपनाने से ही समाज में एक महानता का प्रदर्शन होता है मुझे भगवान राम का जीवन स्मरण आता रहता है। भगवान राम रात्रि के समय वह प्रभु का चिन्तन करते रहते थे जहां सिंहराज अपनी

ध्वनियां कर रहा हो मानो प्रत्येक प्राणी अपनी ध्वनियां कर रहा हो उसमें वह ध्वनित हो रहा हो इसी प्रकार प्रत्येक राजा जब अपने में ध्वनित बनने के लिए विवेकामृत पान करता है उससे विवेक जागरूक हो जाता है और वह विवेक ही मानव का जीवन कहलाया गया है। तो इसीलिए प्रत्येक मानव के हृदय में विवेक होना चाहिए जिस विवेक के द्वारा राष्ट्र और प्रजा दोनों पवित्र बनते हैं। भगवान राम के जीवन की गाथा मुझे स्मरण आती रहती है। एक समय बेटा! वह प्रातःकालीन भ्रमण कर रहे थे भ्रमण करते करते कुछ समय व्यतीत हो गया। भ्रमण करते करते अपने को आभा में नियुक्त करने लगे। वह अपने में अपनी कृतिका को ऊँचा बनाते हुए सिंहराज के आंगन में उससे खिलवाड़ करने लगे भ्रमण करते करते। जब सिंहराज से खिलवाड़ कर रहे थे तो कहीं से लक्ष्मण भी भ्रमण करते हुए आ गये। वह सिंहराज से खिलवाड़ कर रहेथे और यह कह रहे हैं तू अहिंसा में परणित होने वाला है तू कितना महान है वह सिंहराजों से खिलवाड़ करते रहते थे। समय व्यतीत होता रहता। इसी प्रकार जब मानव प्रत्येक प्राणीमात्र से स्नेह करने लगता है तो देखो, वह खिलवाड़ करता रहता है सर्पराज से भी खिलवाड़ होता रहता । सर्पराज एक वायु में गुथा हुआ प्राणी है। जब अपने में वह रत्त हो जाता है अपने में धारयामि बन जाता है याज्ञिक बन जाता है तो देखो, उसके जीवन में अहिंसा परमोधर्म की एक आभा का जन्म हो जाता है और वही जन्म वृत्तियों में रत्त हो करके वह मानव के जीवन का मानसिक रूप बन करके उनके हृदयों में निहित हो जाता है।

प्रातःकालीन भगवान राम पञ्चवटी में याग करते थे। नाना राजा और ऋषिजन उनके दर्शनार्थ को प्रायः आते रहते थे। मानव के जीवन में एक सार्थकतता का दिग्दर्शन तभी हो सकता है जब वह मानव अपने में अहिंसा परमाधर्मी बन जाएं। भगवान राम जब पञ्चवटी पर रहते थे तो उनके यहां नाना प्राणी क्रीड़ा करते रहते थे सर्पराज जैसे प्राणी भी क्रीड़ा करते रहते थे और भी नाना प्राणी क्रीड़ा करते रहते। परन्तु जब वह अपनी भव्यता में आते तो अपने में मृगराज से वार्त्ता प्रगट करते रहते । हमें याग दो ही वस्तुओं का निर्णय दे रहा है कि हे मानव! तू याज्ञिक बन। तू अपने में निर्भय बन और

विष्णु बन और ब्रह्मा बन करके मानव तू परमपिता परमात्मा की नेति को जान। उसकी प्रतिभा को जान। उसके ज्ञान और विज्ञान को जानने वाला बन। वह अपने में यह उपदेश देते रहते थे। यह अपने में सार्थक बनाने वाला वाक्य है। हम अपने जीवन में प्रत्येक समय में अहिंसा परमोधर्म को अपना करके निर्भयता का पठन पाठन करते मानो उसकी कृतिका को हम अपने मे ध्यानावस्थित हो करके, हम स्वतन्त्र हो रके विचरण करने वाले बनें। राजा वही होता है जो निर्भय रहता है। वह प्रभु की गोद में चला गया है। वह प्रभु के राष्ट्र में रत्त करता रहता है।

विचार विनिमय यह कि प्रत्येक मानव अपने में महानता का सदैव दिग्दर्शन करता हुआ अपने जीवन को ऊँचा बनाता रहे। मैं भगवान राम की यह अनूठी चर्चाएं कर रहा हूँ जहां उनके यहां नाना ऋषिवरी अपने में अध्ययनशील बने हुए हैं। वेदों का पठन पाठन चल रहा है। भयंकर वनों में भगवान राम अपने में प्रतिभाषित हो रहे है। नाना ऋषिवर अध्ययन कराने वाले अध्ययन कराते रहते, वेदों की प्रतिभा में रत्त रहते। क्योंकि वेदामृत का पान करने वाला प्राणी ही प्राणायाम करता है और प्राणायाम करके अपने सखा के द्वार पर चला जाता है जहां सखा विद्यमान है। भगवान राम पञ्चवटी पर रह करके नाना प्रकार के प्राणियों के द्वारा उद्धार के उनके कर्तव्य पारायण के सम्बन्ध में वह विचारते रहते थे, अपना अन्वेषण करते रहते थे, विचार विनिमय करते रहते थे भयंकर वनों में भी। कुछ समय के पश्चात वहां कहीं से प्रातःकालीन एक व्याघ आ गया व्याघ के आने पर माता सीता ने कहा भगवन! यह व्याघ आ गया उन्होंने कहा कोई प्रेमी होगा, कोई प्राणी वन्दना करने के लिए आया होगा। भगवान राम जब व्याघ के समीप पंहुचें तो व्याघ अपने वाक्यों में अपनी वाणी में वाक्य उच्चारण करने लगे। बेटा! प्रत्येक मानव के हृदय में यह आशंका बनी रहती है कि पशु की वार्त्ता को राजा कैसे स्वीकार करता है परन्तु इसके सम्दर्भ में भगवान राम एक याग करा रहे है। और याग हो रहे हैं उनकी अवहेलना में प्रतिपादित होने वाला अप्रवः वाप्रवहे लोकाम् मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने अपने में धारह प्रहे रघुह सम्भूति ब्रह्म वाचा प्रहे वस्तुतै जब व्याघ वहां पंहुचा तो भगवान राम अपने में वेदों का अध्ययन कर रहे थे। उनके अध्ययन से जो स्वर ध्वनियां

हो रही थी उसको वह अपने में श्रवण करने लगे। तो राम बड़े प्रसन्न हुए उन्होंने व्याघ से प्रीति की और व्याघ से कहा कि हे व्याघ तेरा जो वनचर है यह तेरा राष्ट्र है तेरी राष्ट्रीयता इसमें रहती है मानो यह हमें बड़ी प्रसन्नता है कि तुम्हारे राष्ट्र में हम भी भ्रमण कर रहे हैं। परन्तु तुम भी प्राणी हो, हम भी प्राणी हैं और प्राणी, प्राणी अपने में प्रीति करने वाला बने। तो बेटा! देखो, उनके जीवन की बहुत सी घटनायें इस प्रकार की आती रही हैं जो बेटा! मुझे जब स्मरण आती हैं तो मेरा हृदय गदगद हो जाता है वेद ध्वनि हो रही है उस ध्वनि को श्रवण करने के लिए हिंसक प्राणी भी आता है अपनी हिंसा को त्याग रहा है अहिंसा में परणित हो रहा है अपने अपने कर्तव्य में निहित हो करके मानो अपने जीवन को ऊँचा बनाता है समय समय पर चर्चाएं होती रहती हैं।

एक समय कहीं से भ्रमण करते हुए महाराजा अश्वपति आ पंहुचें राम के समक्ष वह नाना प्रकार के यागों में परणित रहते थें। उन्होंने राम के समीप पंहुचकर कहा भगवन! कुशल हो। उन्होंने कहा कुशलता का उत्तर दिया सम्भूति ब्रहः दोनों ने परस्पर अपनी चर्चा प्रारम्भ की। राम ने कहा कहो महाराज मेरे वनचन के समीप तुम्हारा आगमन कैसे हुआ। यह मुझे नही पता तुम्हारा आगमन क्यों हुआ। महाराजा अश्वति ने कहा प्रभु! मैं अपने आसन पर विद्यमान था। यह प्रेरणा हुई चलो राम से अपना मिलन करेंगें। वह वन में कहीं प्राप्त हो जाएंगें। तो राम से अपना मिलन करेंगें तो हम भगवन! आपके समीप आ पंहुचें। उन्होंने कहा तो तुम क्या चाहते हो। उन्होंने कहा प्रभु! मैं कुछ नही चाहता मैं इदन्नममः है मेरा जो जीवन है वह आपकी भांति रहता है मेरी कोई इच्छा नही हैं, परन्तु मैं कुछ वार्त्ता प्रगट करने के लिए आया हूँ। उन्होंने कहा बोले क्या वार्त्ता चाहते हो। उन्होंने कहा मुझे अपने राष्ट्र में ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे राष्ट्र में कुछ क्रान्ति के अवशेषों का जन्म होने जा रहा है अब मैं उसमें क्या करूं। भगवान राम ने कहा उसमें प्रीति की प्रतिभा लाने का प्रयास करो क्योंकि जिस राजा के राष्ट्र में प्रजा में क्रान्ति जाती है तो वह राजा का ही दोषारोपण होता है, वह राजा दोषी होता है। तो तुम देखो, अपने में दूषित हो। तो उन्होंने कहा मैं तो प्रातःकालीन कृषि उद्गम करके अपना अन्न ग्रहण करता हूँ और विज्ञानवेत्ताओं के मध्य में विद्यमान हो

करके वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण होता रहता है और यज्ञशाला में प्रातःकालीन मैं याग करता हूँ। ओर याग में भी मेरी निष्ठा रहती है। परन्तु और भी नाना प्रकार के क्रियाकलाप मेरे समीप होते रहते हैं। परन्तु मैं आपसे यह जानना चाहता हूँ भगवन! यह मेरे साथ क्या खिलवाड़ होने जा रहा है। तो उस समय उन्होंने कहा नही कोई वाक् नहीं उन प्रजाओं को शिक्षा दो, उन प्रजाओं को महान अपना उपदेश दो ओर यह कहो प्रजाओं मैं तुम्हारा कर्तव्य है ओर सेवा का अभिप्रायः यह है कि राष्ट्र के जो क्रियाकलाप हैं, नियमावली है उसके आधार पर क्रियाकलाप करना है तो राष्ट्र में एक महानता की ज्योति अपने में प्राप्त हो जाती है भगवान राम ने जब यह कहा तुम अपने वाचन्नम ब्रह्मे वाचोः उन्होंने कहा यह तो मैंने तुम्हारा वाक्य स्वीकार कर लिया। परन्तु तुम उन प्रजाओं को ब्रह्म ज्ञान कितना देते हो अश्वपति ने कहा प्रभु! मैं ब्रह्म ज्ञान तो नही दे पाता हूँ उन्होंने कहा नैतिक वाक्य कितने उच्चारण करते हो। अश्वपति ने कहा प्रभु! यह भी मैं नही करता हूँ तो राम ने कहा कि जाओ तुम प्रजा की नैतिकता की शिक्षा दो। तुम प्रजा को दर्शनों की आभा में रत्त कराओ ओर उसके पश्चात मानो निस्वार्थ हो जाओ। तो महाराजा अश्वपति ने भगवान रो के इन वाक्यों को पान तो कर लिया परन्तु उनके विचार में यह आया कि यदि वह मेरे विचार को स्वीकार न करें तो उस समय क्या कर सकता हूँ भगवान राम ने अश्वपति से कहा हे अश्वपति जिस समय तुम्हारे पुत्र तुम्हारी अवहेजना करें क्योंकि अवहेलना की कोई सीमा होती है जब सीमा से पार हो जाएं तो तुम त्यागने का प्रयास करो प्रजा में तुम स्वतः अपने राष्ट्र को त्याग करके ओर ब्रह्मवेत्ता बन करके अग्नि के समान तुम भयंकर वन में तपस्या करने चले जाओ।

तो विचार विनिमय क्या? भगवान राम का जीवन कितना विचित्र रहा है। विभिन्न राजा महाराजा उनके दर्शनार्थ विचारार्थ उनके समीप आते रहते। एक समय सुबाहु राजा भगवान राम के दर्शनार्थ पञ्चवटी में आए ओर यह विचार विनिमय करने लगे कि प्रजा में संग्रह की प्रवृत्ति निवारण कैसे हो। उन्होंने राम से कहा कि मैं कृषि उद्गम द्वारा अपने उदर की पूर्ति करता हूँ। गृह स्वामिनी से भी यही कहता हूँ परन्तु मैं प्रजा की उस संग्रह की प्रवृत्ति बनी हुई है। मानो जब संग्रह की प्रवृत्ति प्रजा में आती जा रही है तो

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि रक्तभरी क्रान्ति का सञ्चार हो जाएगा। भगवन! मेरे राष्ट्र में सम्प्रदायों का एक स्रोत बह रहा है प्रभु के नाम पर नाना सम्प्रदाय हैं, नाना प्रकार की क्रान्तियां बनी हुई हैं। भगवान राम ने कहा राजन! तुम चाहते क्या हो? उन्होंने कहा प्रभु! मैं अपने राष्ट्र को महान बनाना चाहता हूँ तो उस समय भगवान राम ने यह कहा कि तुम्हारे राष्ट्र में वैदिकता होनी चाहिए। सबसे प्रथम तो प्रजा में धर्म के नामों पर प्रभु के नामों पर नाना प्रकार के स्वादन की स्थलियां नही रहनी चाहिए क्योंकि नाना प्रकार के स्वादनों की स्थलियां बनी रहेंगी तो उसका परिणाम यह होगा कि तुम्हारे राष्ट्र में रक्तभरी क्रान्ति में संचालित हो जाएगा। तुम्हारा एक वैदिक प्रसार होना चाहिए हमारे ऋषि मुनियों ने एक पद्धति का निर्माण किया है उन्होंने कहा है कि राजा के राष्ट्र में प्रजा में समाज में पांच प्रकार के पञ्चीकरण परमात्मा के नामों पर होना चाहिए। वह पञ्चीकरण कौन सा है। प्रातःकालीन देखो, प्रत्येक गृह में ब्रह्म का चिन्तन होना चाहिए। पति पत्नी ब्रह्म का चिन्तन करने वाले हों उसके पश्चात प्रातःकालीन देवपूजा होनी चाहिए, सुगन्धि होनी चाहिए। प्रत्येक गृह में वेद ध्वनि होनी चाहिए। और देखो, अग्न्याधान करके याग होना चाहिए। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम और तृतीय यह है कि अतिथि सत्कार होना चाहिए। कोई भी अतिथि आए उसको भोज कराना और बलि वैश्व याग करना भोजनालय में मेरी प्यारी माता प्रत्येक प्राणी को भोज निर्धारित कर देती है। तो मानो वह पञ्चीकरण कहलाता है इस पञ्चीकरण में राजा के राष्ट्र में प्रत्येक गृह है पति है पत्नी है बाल्य है वह सब इस सूत्र में पिरोऐ हुए होने चाहिए। प्रभु का चिन्तन तो प्रायः करना चाहिए परन्तु जब भी समय मिले तो स्वाध्याय करे, समय मिले ब्रह्मचर्य व्रतों का पालन करें समय मिले तो देखो, ब्रह्मवर्चोसि बन जाएं। तो ब्राह्मण का क्रियाकलाप होना चाहिए। रही प्रजा के संग्रह की प्रवृत्ति राजा को अपने संग्रह प्रवृत्ति को त्याग देता है वह प्रातःकालीन ब्रह्म का चिन्तन कर रहा है, प्रातः अग्नि के समीप जा करके अग्न्याधान करके वह अग्नि में साकल्य प्रदान करता है, अपनी भावनाओं से। उसके पश्चात उसी पञ्चीकरण में कोई अतिथि आ गया है उसकी सेवा करनी है उसको अन्नादि देना है। कोई पुरोहित गा जाएं तो उसके उपदेश लेना प्रारम्भ करे। मानो सत्संग की प्रतिभा

तुम्हारे हृदयों में रहनी चाहिए। इसी प्रकार देखो, अतिथि सेवा, पंचीकरणों में मानव का राष्ट्र का परिवर्तित होना चाहिए। संग्रह की प्रवृत्ति को जब राजा त्याग देता है राष्ट्र त्याग देता है एक मानव है जो वृक्ष के नीचे अपना स्थान बना लेता है उसकी छाया में रहता है मानो वह राजा है। वह अपने में संग्रह करने की प्रवृत्ति न रहने का प्रयास करता है। एक स्वयं क्रियाकलाप करने वाला, स्वयं कृषि का उद्गम करने वाला है, वह उस अन्न को पान करता है वह जो पवित्र अन्न है उस अन्न को ग्रहण करना है जो द्वितीय अन्न को ग्रहण करता है वह मानो पाप के मूल में ले जाता है पवित्र अन्न को ग्रहण करना है।

जब राजा इस प्रकार का बन जाता है तो प्रजा में संग्रह की प्रवृत्ति मानो समाप्त हो जाती है वितरण प्रणाली पवित्र बन जाती है। जब वितरण प्रणाली पवित्र बन जाती है तो मानो राजा के राष्ट्र में रक्तभरी क्रान्ति कहां से आयेगी तो भगवान राम की यह उपदेश मंजरी प्रारम्भ रहती थी तो देखो, सुबाहु राजा ने यह वाक्य स्वीकार कर लिया और उन्होंने चरणों की वन्दना की प्रभु यह वाक्य आपने यथार्थ कहा है। परन्तु मैं क्या करूं अब। उन्होंने कहा जाओ तुम सबसे पहले धर्म के नामों पर रूढ़ि समाप्त करो। राजा एकोकी धर्म वाला रहना चाहिए। परमात्मा सर्वज्ञ है, परमात्मा सर्वशक्तिमान रहता है सबके हृदयों में वास करने वाला है उस परमपिता परमात्मा को स्वीकार करते हुए नाना रूढ़ियों में समाज नही रहना चाहिए। विद्यालयों में तपे हुए आचार्य होनें चाहिएं। रूढ़ि का निराकरण विद्यालयों में हुआ करता है। तुम्हारे विद्यालयों में जब तपे हुए आचार्य होंगें तो मानो ब्रह्मचारी उसके अनुसार बर्तने वाले होंगें तो रूढ़ि विद्यालयों में समाप्त होती है। और जब रूढ़ि विद्यालयों में नही रहेगी तो देखो, राजा के राष्ट्र में भी नही रहेगी। और राजा के राष्ट्र में नही रहेगीं तो प्रजा में नही रहेगी। क्योंकि विद्यालयों में याग करना प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके याग करना उसके ऊपर वेद के मन्त्रों का भावार्थ करना मानो देखो, उसके अनुकूल हमें अपने विचारों को बनाना है और बना करके अग्रणीय बन करके मेरे पुत्रों! कार्य करना है। तो राष्ट्र की प्रतिभा ऊँची बनेगी। मुनिवरों! देखो, राजा ने यह वाक्य स्वीकार कर लिया। राम को धन्यवाद

दे करके उनके चरणों की वन्दना करके उन्होंने वहां से गमन किया।

बेटा! उच्चारण करने का हमारा अभिप्रायः क्या है? बेटा! देखो, तुम्हें यह वाक् प्रगट कर रहे थे कि हमारे जीवन में एकोकीकरण होना चाहिए। नाना रूढ़ियां नही होनी चाहिए। जैसे मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी ने प्रगट कराई थी कई काल में उनके लिए आज इतना समय आज्ञा नही दे रहा है क्योंकि भगवान राम के जीवन को विद्यालयों से लेकर वनचरों तक की झलकियां जब हमारे समीप आती हैं उनका वही क्रियाकलाप प्रारम्भ रहता दृष्टिपात आता है आज का हमारा यह वाक्य कह रहा है कि हम परमतिपा परमात्मा की आराधना करते हुए, यागों में परणित रहते हुए अपने जीवन को ऊँचा बनाते चले जाएं। मान अपमान वाले सागर से पार हो जाएं। यह है बेटा! आज का वाक् समय मिलेगा शेष चर्चायें कल प्रगट करेंगें। आज के वाक्यों का अभिप्रायः यह मुनिवरों! देखो, वह जो परमपिता परमात्मा है वह हमारा वरणीय है और उसको जो भी मानव वरण कर लेता है उसी को वह प्राप्त हो जाता है देखो, चाहे राष्ट्र हो समाज ही योगेश्वर हो, प्राण की प्रतिभा में क्यों न हो परन्तु इनके एकोकीकरण की चर्चा तो मैं कल ही प्रगट करूंगा। आज का वाक् अब समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा।